

पद्मपुराण भाषा

द्वितीयभूमिखण्ड

जिसको

श्रीयुत महाशय श्रीमान् मुन्शी नवलकिशोरजी
ने बारहबंकी प्रदेशान्तर्गत गोमत्युत्तर तटस्थ
धनावली ग्रामनिवासि पण्डित महेशदत्तसुकुल
जी से संस्कृत पद्मपुराणद्वारा प्रतिश्लोकका
अनुवाद हिन्दीसरलभाषामें बनवाया-

भगवद्भक्ति भूपित दोषादूषित पितृभक्ति मातृभक्ति गुरुभक्ति
भार्यातीर्थ पुत्रतीर्थादि नानाप्रकारके धर्मोंके जिज्ञासुओं
के अनुमोदन के लिये अतिशुद्धतापूर्वक

मुन्शी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखानेमें छपा

सितम्बर सन् १९०९ ई० ॥

भूमिका ॥

उस परमशक्तिमान् करुणावान् को असंख्यनाद धन्यवाद है जिसने सर्वोपकारक दीनप्रजोद्धारक शुभधर्मप्रचारक विधर्मनिवारक परमप्रकाश व्यास जीका अवतारलेकर वेदोंके भागोंको अवलोडितकर अल्पज्ञ लोगोंके उपकारके लिये अष्टादशपुराण व इतनेही उपपुराण बनाये जिनमें ढूँढ़ २ वेही कथायें लिखी हैं जिनको सुनकर धर्मकरनेमें रुचि व अधर्म करनेमें अरुचि तुरन्तही होजाती है उन पुराणों में सब से संख्यामें स्कन्दपुराण बड़ा है उससे नीचे यह पद्मपुराण पचपनसहस्र श्लोकोंका है उसका यह द्वितीयभूमिखण्ड है इसमें प्रथम माता पिताकी भक्ति व सेवा पुत्रको कैसे करनी चाहिये इस विषयमें शिवशर्माकी अतिविचित्र कथा बड़ीयुक्तिसे निरूपित है फिर उसके चार पितृभक्त पुत्रोंकी कैसी विचित्रकथा व सुव्रतचरित व दुष्टता करने से अवश्य दण्ड मिलता है चाहे कैसाही बलवत्तर क्यों न हो इसविषयमें वृत्रासुरकेवधकी कथा कही है कैसाही पापी व दुष्टपुरुषहो पर सुपुत्रके होनेसे तरहीजाता है इस विषय में राजावेन व उनके पुत्र महाराजाधिराज पृथुजीका परमपावन चरित्र कहागया है फिर वेनकी माता सुनीथा का वृत्तान्त इसलिये कहागया है कि चाहे कैसे प्रतिष्ठित व सर्वोपरि गरिष्ठकी सन्तति क्यों न हो पर महात्माओंका अपकार करनेसे उसे अवश्य दुःख भोगने पड़ते हैं पतिव्रतास्त्रीके समान अन्य कोई प्रधान धर्म नहीं होता इसविषयमें सुकलाकी अत्यद्भुत कथाकही है फिर ऐसी पतिव्रताको छोड़कर अकेले तीर्थादि करनेजानेसे धर्मकाफल नहीं होता इसविषयमें अपूर्वही धर्मका आख्यान वर्णित है पुत्रको पिताके वचन अवश्यही करने चाहिये इसविषयमें राजानदुष की कथा है फिर ययातिजी की कथा है जिसमें गुरुलोगही तीर्थ हैं इसका निरूपण है फिर राजाका व जैमिनि उनके पुरोहित का महाअपूर्व संवाद है फिर अशोकसुन्दरी की कथा इस विषयमें है कि पतिव्रता का पातिव्रत जो भंगकरना चाहता है वह आप भंग होजाता है जैसे हुण्डदैत्य मारागया व इसीविषय में उससे भी अद्भुत कामो-

दाख्यान है जिसमें पतिव्रता से ही दुष्टता करने के कारण विहुण्ड दैत्य का वध हुआ फिर अद्भुत ज्ञान के विषय में कुञ्जल नामशुक्र व महात्मा च्यवन जी का अतिविचित्र संवाद है फिर एक सिद्ध का अतीव विचित्र आख्यान है बस ऐसी ही नाना प्रकार के धर्मों के उपकारों की कथाएँ इस भूमि खण्ड में हैं यदि व्यास जी वर्णन न करते तो प्राणियों का निस्तार इस अपार संसार से कैसे होता व फिर भाषानुवाद न होता तो बेचारे हमारे प्यारे संस्कृतानभिज्ञ इस अभिप्राय के विज्ञ कैसे होते इससे लालसा है कि लोग इसे आदरपूर्वक ग्रहण करके यह कहें कि ॥

दो० सुखकारक दुखियान के मुन्शी नवलकिशोर ॥

यशतनु सों युगयुग जियो कियो हमें सुख ओर ?

इसके सिवाय इस यंत्रालय में और भी बहुत से ग्रंथ प्रत्येक विषय के उल्था होकर मुद्रित हुये हैं वह संपूर्ण महाशयों की विज्ञप्तिके लिये निम्न लिखित हैं ॥

पुराणों में—श्रीमद्भागवत, श्रीमहाभारत, शिवपुराण, विष्णुपुराण, लिंगपुराण, मार्कण्डेयपुराण, भविष्यपुराण, नृसिंहपुराण, वामनपुराण, वाराहपुराण, जैमिनिपुराण, गणेशपुराण और आदिब्रह्मपुराण सुंदरदेशभाषा के लालित्यपदों में हैं ॥

काव्य में—रघुवंश, कुमारसंभव ॥

धर्मशास्त्र में—मिताक्षरा तीनों काण्ड और मनुस्मृति इनकी उत्तमता देखने से विदित होगी ॥

वैद्यक में—निघण्टु रत्नाकर, भावप्रकाश, सुश्रुत, भैषज्यरत्नावली, रसरत्नाकर ॥

वेदान्त में—योगवाशिष्ठ और श्रीमद्भगवद्गीता शंकरभाष्यादि इन ग्रंथों को जो विद्वज्जन अवलोकन करेंगे वह प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करेंगे—और ग्रंथकर्त्ता तथा यंत्रालयाध्यक्ष को धन्यवाद देंगे ॥

महेशदत्तशर्मा ॥

पद्मपुराण भाषा द्वितीय भूमिखण्ड का सूचीपत्र ॥

अध्याय	विषय	अध्याय	पृष्ठ
१	शिवशर्माकी कथा और उसके पांचों पुत्रोंको पिताकी सेवाकरना ॥	१	६
२	धर्मशर्माकी कथा जिनका वेदशर्माने निज तपस्याके साथ जीवनीकिया ॥	६	८
३	विष्णुशर्माकी कथा तिसपीछे उनके चारभाइयों का हरिपुरमें गमनहोना वर्णन ॥	८	१३
४	पिताकी सेवासों सोमशर्माके निर्मल यशका वर्णन ॥	१३	१७
५	सोमशर्माका फिर तप और इन्द्रजन्म प्रस्ताव और अदितिका तपस्या करना ॥	१७	२५
६	दनुका पुत्रों का वध और इन्द्रका राज्यदेखके विलापकरना और दितिसों वार्त्तालाप और कश्यपकरके समझाना वर्णन ॥	२५	२७
७	कश्यपका दितिसों आत्मज्ञान और पंचभूतकी कथा कहकर विज्ञान समझाना ॥	२८	३३
८	कश्यपकरके आत्माके गर्भवास दुःखोंका वर्णन ॥	३३	४०
९	कश्यपजीका अच्छीभांतिसे दितिका समझाना ॥	४०	४२
१०	कश्यप का दैत्योंको शिक्षादेकर तपस्याकरने को भेजना ॥	४२	४५
११	सोमशर्माका धन और पुत्ररहितहोनेसे शोककरना और उनकी स्त्री सुमनाका समझाना ॥	४५	४८
१२	सुमनाका अपनेपति सोमशर्माजीसे ऋणसम्बन्धी पुत्र तथा धर्म, दम, शौच, नियम, व्रत, दान, क्षमा, दया, मति, शांति मुखकी कथाका वर्णन ॥	४८	५७
१३	धर्म, दम, ब्रह्मचर्य, दानादिक और क्षमा, शांति नियमादिके लक्षण ॥	५८	६०
१४	सुमनाका निजपतिसों धर्मकारी पुरुष जिसभांति मरताहै तिसका वर्णन ॥	६०	६३
१५	पापकारी पुरुष जिसभांति सों मरताहै तिसका वर्णन ॥	६३	६५
१६	पापीपुरुष जिस मार्गसे जाता है अरु जिसप्रकार नरक भोगताहै तिसका वर्णन ॥	६५	६६
१७	सोमशर्मा ब्राह्मणका अपनी स्त्री सुमनाके सम्मतसे वशिष्ठजीके पास जाकर पूर्वजन्मका सब वृत्तांत सुनना ॥	६७	७१
१८	वशिष्ठमुनिका सोमशर्मा ब्राह्मणसे उन्हींके कियेहुये पहले के धर्मोंका वर्णन ॥	७१	७४
१९	स्त्रीसहित सोमशर्मा ब्राह्मणका अनेकप्रकारसे तपस्या करना ॥	७४	७६
२०	सोमशर्माके हरिकृपासे पुत्रहोना व धर्म पुण्य करना ॥	७६	८३
२१	सुव्रतका बालचरित्र ॥	८३	८६
२२	सुव्रतके पूर्वजन्मकी कथा और तहांपर धर्मांगद व रुक्मांगदका चरित्र वर्णन ॥	८६	९०
२३	दैत्योंका वधलखि दितिजीने बहुत उदासहोकर देवताओंको त्रासदेनेवाला बलनाम पुत्र उत्पन्न किया पश्चात् अदितिकी आज्ञासे इन्द्रका वधकरना ॥	९०	९३
२४	वृत्रासुरकी उत्पत्ति व वृत्रासुर और इन्द्रकी मित्रता ॥	९३	९६
२५	वृत्रासुरका रम्भा अप्सरापर मोहितहोना व इन्द्रका छलकरके वधकरना ॥	९६	९९
२६	दितिकेपुत्र जिसप्रकार उच्छ्वास पवनहोगये जिनको इन्द्रने दितिके गर्भहीमें काटाथा ॥	९९	१०१
२७	ब्रह्माजीकी आज्ञासों सब अधिपति जिसप्रकारहो सुख भोगतेहैं तिसका वर्णन ॥	१०१	१०३
२८	पृथुचरित्र कथनमें वेनके अवगुणोंका वर्णन ॥	१०३	१११
२९	पृथुकरके पृथ्वीका दोहना ॥	१११	११८
३०	पृथु और वेनके अनेक प्रकारके चरित्रोंका वर्णन ॥	११८	१२३
३१	अंगको अत्रिजीने उपदेशदिया तब वे इन्द्रसदृश पुत्रके लिये तपस्याकरनेको पर्वतपर चलेगये ॥	१२४	१२६
३२	मेरुगिरिका वर्णन और अंगका तपकर हरिसों वाञ्छित वर प्राप्तकरना ॥	१२४	१३०
३३	सुनीथाका पिताकी वाणीसुनकर फिर वनमें जाना ॥	१३०	१३२
३४	सुनीथाका अपनी सखियोंसे सुशंख गन्धर्वने जिसप्रकार शापदियाथा तिसका वर्णन ॥	१३२	१३६

अध्याय	विषय	पृष्ठ
३५	सुनीथा और उसकी सखी रंभाका वार्त्तालाप ॥	१३
३६	अंगमुनि और सुनीथाका व्याहोना और उसके वेननामक पुत्रका पैदाहोकर अच्छे प्रकार से राज्य करना ॥	१३
३७	राजावेनको पापरूप एक मनुष्यका आकर जैनमनकी शिलाकरना कि आप वैश्वर्म छोड़कर जैनमत ग्रहण कीजिये ॥	१४
३८	राजावेनके दुष्कर्मोंको देखकर ऋषियोंने उसको बहुततरह सम्झाकर उसके अंग मथकर पृथुजीको उत्पन्नकिया ॥	१४
३९	राजावेनका तपकरना और हरिजीका दर्शन देकर वरदानदेना और दानकाल सत्पात्र और तीर्थोंके लक्षणों का वर्णन ॥	१४
४०	श्रीहरिजीका राजा वेनसे नित्यनैमित्तिक सम्पूर्ण दानोंका वर्णन करना ॥	१५
४१	कुकलवैश्य और सुकला उसकी पतिव्रता स्त्रीका वृत्तान्त ॥	१६
४२	राजाइच्चाकु का शिकारखेलना और वहाँपर शूकर शूकरी की कथा और सुकला का सखियों से वार्त्तालाप होना ॥	१६
४३	शूकरशूकरीका लुब्धकों और राजाइच्चाकुसे घोरयुद्धकरना और शूकरशूकरीका वार्त्तालाप ॥	१७
४४	इच्चाकुमहाराजने शूकर को वधकर स्वर्गपठाया ॥	१७
४५	शूकरीका अपने चारपुत्रलेकर राजाइच्चाकुसे युद्धकरना और उसके चारोंपुत्रोंका वधहोना ॥	१७
४६	शूकरीका राजाइच्चाकुसों अपनी युक्ति और अपने पतिके पूर्वजन्मके चरित्रोंका वर्णनकरना ॥	१८
४७	शूकरी का रानीसों पूर्वजन्म की निज कथा का वर्णन करना ॥	१८
४८	सत्यकेतु की कन्या उग्रसेन की स्त्री पद्मावती की कथा ॥	१८
४९	पद्मावती का सखियों के साथ एक पर्वत में जाकर वहाँ तालमें जलक्रीड़ा करना वहाँपर उसके पतिको रूपधरकर गोभिलदैत्य का उसके संग विहार करना ॥	१९
५०	गोभिल का धर्मकहना और पद्मावतीके कर्म कहके पुंश्चलीभाव आरोपणकरना ॥	१९
५१	शूकरीका रानीसों पद्मावतीकेपुत्र कंसका उत्पन्नहोना फिर सुदेवात्यागकी कथा वर्णन ॥	१९
५२	शूकरी का रानीसों नरकगत दुःखों का वर्णनकर रानीको पुण्यलेकर स्वर्गमें जाना ॥	२०
५३	इन्द्रका सुकलाकी दृढ़ता सुनके कामदेव के सम्मतसे दूतीको भेजकर उसको समझाना परंतु उसने वेदान्तसे दूतीके वचनों को काटदिया ॥	२०
५४	इन्द्रका दूतीके वचन सुनके कामदेव और रतिको संगलेके सुकलाके देशमें जाना ॥	२१
५५	इन्द्रका पतिव्रताओं की कथा कहके कामदेव को समझाना और कामदेव का अपनी सेना को प्रचारकरना ॥	२१
५६	सुकलाकाधर्म और सम्पूर्ण ज्ञानकथन और इन्द्रकी कुमति और कामकी कुगति वर्णन ॥	२१
५७	कामसे प्रेरित क्रीड़ा का सुकला को वनमें इन्द्रके पास लेजाना ॥	२२
५८	इन्द्र और गणोंसहित कामदेव का सुकला सों हारके निजघरको जाना ॥	२२
५९	धर्म का रूपधारकर कुकल के पितामहने कुकल से कहा कि स्त्री को आप घरमें छोड़ गये थे इससे आपकी तीर्थयात्रा सकल नहीं हुई है क्योंकि स्त्री के बिना कोई कर्म ठीक नहीं होता है ॥	२२
६०	कुकल का सुकलासहित श्राद्धकरना तिससे ब्रह्मादिकों को मुदित है अपराध क्षमाकर वरदेना ॥	२२
६१	पुत्रों के तारने में पितृतीर्थ का कथन तिसमें कुण्डल नाम ब्राह्मण के पुत्रकी पिता में भक्ति और पिप्पल का तप वर्णन ॥	२३
६२	पिप्पल का सुकर्मा नाम कुण्डलके पुत्र के पासआकर उनसे पितामाता की भक्ति सुनना ॥	२३
६३	माता पिता की सेवा विधान जिससे पुत्र के सकल मनोरथों की सिद्धि वर्णन ॥	२४

पद्मपुराण भाषा द्वितीय भूमिखण्ड का सूचीपत्र ।

५

अध्याय	विषय	पृष्ठ	तक
६४	नहुषके पुत्र राजा ययाति का वृत्तान्त और मातलि सों वार्तालाप ॥	२४३	२४८
६५	ययाति और मातलि का संवाद वर्णन ॥	२४८	२४९
६६	ययाति सों मातलि का वार्तालाप और पिप्पल और सुकर्मा ब्राह्मण का अनुपम संवाद वर्णन ॥	२४९	२६६
६७	मनुष्यों के पापकर्म के विपाक का वर्णन ॥	२६६	२७३
६८	जो बहुत दानमान से ब्राह्मणों को आदर करता है वह यमराज के मार्ग में सुखपाता है ॥	२७४	२७६
६९	स्वर्ग के उपयोगी सब धर्मों का वर्णन ॥	२७६	२७८
७०	पापी पुरुषों को अनेक प्रकार की यमयातनाओं का वर्णन ॥	२७८	२७८
७१	बहुत लोकों के गुणों तथा विष्णु और शिवलोक के गुणों का भी वर्णन ॥	२७९	२८१
७२	ययाति का मातलि से यह कहना कि हम स्वर्ग न चलेंगे यहीं निस्तन्देह स्वर्ग करेंगे ॥	२८१	२८३
७३	ज्ञानाश्रित सुन्दर स्तोत्रका वर्णन जिसके पढ़ने से मनुष्य विष्णुलोकही को जाता है ॥	२८३	२८६
७४	ययाति की राज्य में सब प्रजा और राजा एकरूप होकर विष्णुहीजी का पूजन और भजन करनेलगे जिससे यमराज चुपरहगये अर्थात् किसी को दण्ड देने का अवसर न मिला ॥	२८६	२८७
७५	ययातिकी राज्य में सब प्रजाओं और राजाको एकरूप होके हरिजीके भजनसे अशोकहोना ॥	२८७	२८९
७६	यमराजका राजाययाति का उरहना लेकर इन्द्र के पास जाना व इन्द्र का ययाति के मोहने के लिये कामादिकों को भेजना ॥	२८९	२९१
७७	राजा ययातिको दो युवास्त्रियोंको देखकर कामवशहो उनका वृत्तान्त पूछना व अपना कहना ॥	२९२	२९९
७८	राजा ययाति का अपने पुत्रों से जिसप्रकार अपनी वृद्धावस्थादे और उनकी तरुणावस्था को याचना करना और पाना ॥	२९९	३०३
७९	राजाययाति का मदनसुता के संग अनेक क्रीड़ा और अश्वमेध यज्ञ करना ॥	३०३	३०६
८०	नई सौतिको देखकर देवयानी व शर्मिष्ठाका आपस में मिलकर तिससे वैरकरना ॥	३०६	३०७
८१	कामकन्याका राजाययातिको अनेकप्रकार से समझाकर इन्द्रलोक चलने को कहना ॥	३०७	३१२
८२	राजाययाति का अपने पुत्र पूरु को अनेक प्रकार से उपदेश कर निजराज्य देना ॥	३१३	३१४
८३	राजाययाति का अपनी प्रजा को अनेकप्रकार समझानुभाकर यहीं रहने की आज्ञा देना व प्रजाका न मानना पश्चात् राजा रानी प्रजासमेत इन्द्रलोक शिवलोक होतेहुये हरिलोक जाना वर्णन ॥	३१६	३२०
८४	पिप्पलका सुकर्मा सों पिता व गुरु आदिकी सेवा सुनकर स्वर्गगमन कथा वर्णन ॥	३२१	३२२
८५	दिवोदास की कन्या दिव्यादेवी के इक्षीसवार विवाह वर्णन ॥	३२२	३२७
८६	दिव्यादेवी के पूर्वजन्म के पाप वर्णन ॥	३२७	३३४
८७	श्रीहरिका शतनाम स्तोत्र वर्णन ॥	३३४	३३७
८८	दिव्यादेवीका उज्ज्वलसों पूर्वजन्म स्वकर्म सुनि हरिभजनकर हरिपुरगमन कथा वर्णन ॥	३३७	३४१
८९	चारि हंस व दो व्याधों का मानसर में स्नानकर दिव्यरूपहो वैकुण्ठ गमन व चारि स्त्रियों का स्नान करतेही मृत्युहोना वर्णन ॥	३४१	३४४
९०	इन्द्रका सम्पूर्ण तीर्थन को बुलाकर पापनाशनकी शक्ति पूछना वर्णन ॥	३४५	३४८
९१	चारपापियों का एकठौर होकर एक दूसरे की कथा पूछना वर्णन ॥	३४८	३५१
९२	चारोंपापियों का काशी आदि क्षेत्रों में स्नानकर शुद्धहोना वर्णन ॥	३५१	३५४
९३	वन में एक तालाव पर दो मनुष्यों का लीसहित आकर परस्पर एक दूसरे का मांस भक्षण करना वर्णन ॥	३५४	३५७
९४	कुञ्जल अपने पुत्र विज्वल से पूर्वकर्मों को वर्त्तमान में कर्मकी प्रधानता दर्शाना व कुञ्जलके व्याख्यान में चोलदेश के राजासुबाहु की कथा जिसमें जैमिनि पुरोहित करके राजासुबाहुको अन्नदानका उपदेश करना वर्णन ॥	३५७	३६१

अध्याय	विषय	पृष्ठ	पृष्ठ
९६	राजासुबाहु के प्रश्न में जैमिनिको स्वर्ग के गुण वर्णन करना व दानकी प्रशंसावर्णन ॥	३६१	३६३
९७	जिस कर्म से स्वर्ग व नरक होता है उसका वर्णन ॥	३६४	३६७
९८	राजासुबाहु व वामदेवमुनि का संवाद व हरिपुर गमन और फिर आगमन वर्णन ॥	३६७	३७६
९९	विष्णु का स्तोत्र व वासुदेवका नाम प्रज्वल करके सुबाहु से कथन वर्णन ॥	३७६	३८०
१००	राजाप्रज्जल को भगवान्का दर्शन पाना और स्तोत्र सुन देवताओंको आनन्द वर्णन ॥	३८०	३८४
१०१	तीसरे पुत्रकरके कैलास व एक नारी व पुरुषकी कथा वर्णन ॥	३८४	३८६
१०२	कुञ्जल कापिञ्जल संवाद वर्णन ॥	३८६	३८८
१०३	पिता करके सुतसे नन्दनवनकीकथा शिवके सङ्ग पार्वतीप्रकट व एकल्लिका सनाथकरना वर्णन ॥	३८८	३९३
१०४	हुण्डशैलकी कन्यासे तातपदैत्यकी वार्त्ता और दैत्यको अत्रिसुतसे आयु राजा की तपस्या पूर्वक वर पाना वर्णन ॥	३९३	४०२
१०५	शौनककरके रानी के स्वप्नका प्रभाव राजा से वर्णन करना ॥	४०३	४०४
१०६	कुञ्जल करके नहुषराजाका जन्महरण व पालन करना वर्णन ॥	४०४	४०८
१०७	नहुषका विद्यापठन फिर माता पिता का घोर विलाप करना वर्णन ॥	४०८	४१०
१०८	नारद करके नहुषकी आयु व पुत्रका आगमन सुन रानीसहित राजाका आनन्द वर्णन ॥	४१०	४११
१०९	वशिष्ठ करके नहुषजीसे शिवकी सुता व हुण्डदैत्य का वृत्तान्त वर्णन ॥	४११	४१४
११०	विद्वरकरके शिवकी कन्यासे नहुषका गुण व यश और वंश वर्णन ॥	४१४	४१८
१११	देवताओं करके नहुषराजा का हुण्ड दैत्य के वध के लिये अस्त्र शस्त्र देना वर्णन ॥	४१८	४२०
११२	नहुषराजाका युद्ध में जाते देख देवताओं और ब्रह्मों को आना व विलाप वर्णन ॥	४२०	४२१
११३	शिवकी सुता को नहुषराजा के पास आना वर्णन ॥	४२१	४२२
११४	रम्भा करके ज्ञान व अशोकसुन्दरीका चरित सुनकर नहुषराजाका प्रमाणकरना वर्णन ॥	४२२	४२६
११५	हुण्डदैत्य राजा नहुषको जानकर व क्रोधकरके युद्धका करना वर्णन ॥	४२६	४२७
११६	नहुष राजाकरके व हुण्डदैत्य के युद्ध में दानवों को मरना वर्णन ॥	४२७	४३०
११७	राजानहुष लीको लेके मुनिवशिष्ठकी आज्ञा से मन्दिरमें आना व पिताका प्रेमकरना वर्णन ॥	४३०	४३२
११८	नहुषराजा का अभिषेक होना व ज्ञानसहित माता पिताको स्वर्गगमन वर्णन ॥	४३२	४३४
११९	नहुषराजा करके हुण्डकी माया में हरिरूप देख मोहित होने का वृत्तान्त वर्णन ॥	४३६	४३७
१२०	राजा नहुष करके विहुण्डकी दुष्टता करना व देवताओं की ब्रह्मा दुष्टता देख के नहुष को पुष्टता के लिये वस्तु भोजना वर्णन ॥	४३७	४४०
१२१	नारदमुनि करके कामोदासे सम्पूर्ण स्वप्नों का वृत्तान्त वर्णन ॥	४४०	४४३
१२२	देवीजीका मायारूप धरिके विहुण्ड दैत्यका मारना वर्णन ॥	४४३	४४७
१२३	च्यवन मुनि के पूँछने से कुञ्जल को अपने पूर्वजन्म की कथाका वर्णन ॥	४४७	४४९
१२४	कुञ्जलकरके ज्ञानकी उत्पत्ति और पृथु व राजा वेनका चरित वर्णन ॥	४४९	४६३
१२५	पृथुका अपार तप करना व ब्रह्मा से वरदान पा घरआना ॥	४६३	४६६
१२६	राजावेनका स्वर्गवास व पृथुजी का राज्यकरना और फल स्तुति वर्णन ॥	४६६	४६८
	इति ॥		

पद्मपुराण भाषा ॥

द्वितीय भूमिखण्ड ॥

शार्दूलविक्रीडितम् ॥

जानक्याप्रिययासमंस्वसदनेसौधेसरयवास्तटे ।
पर्यङ्केमणिनिर्मितेस्थितमहन्ध्यात्वाकुजेशम्प्रभुम् ॥
कुर्वेपद्मपुराणभूमिशकलस्यप्रीतयेश्रीमता ।
प्रोक्तोन्मूलकिशोरनामसुधियाभाषानुवादंसताम् १

दो० जनकमुता दशरथ तनय सनय विनयकरि आज ॥

भूमिखण्ड भाषा रचत पुरवाहिं लघुरघुराज १

कहव प्रथम अध्याय महँ शिवशर्मा की गाथ ॥

जासु पञ्चसुत पितु चरण सेवा पाय सनाथ २

सृष्टिखण्डकी कथा सुनकर ऋषियोग सूतजी से बोले कि हे म-
हाभाग ! व सब शास्त्रों के निश्चय के जाननेवाले विद्वान् सूतजी
ब्राह्मण लोग बड़े सन्देहको प्राप्तहुये हैं इससे उनकी बुद्धिकी कुछ
न्यूनता होगई है १ क्योंकि कोई कोई तो द्विजोत्तम ऐसा कहते हैं
कि पुराणों में लिखाहै कि प्रह्लादजीकी जब पांचवीं वर्षकी अवस्था

२ पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

थी तभी उन्होंने केशवभगवान् को सन्तुष्ट किया २ व कोई कहते हैं कि देवासुर संग्राम में प्रह्लाद व श्रीहरिका युद्धहुआ उसमें श्रीवासु-देवजी ने उनको मार डाला इससे वे श्रीविष्णुजी के शरीरमें प्रविष्ट होगये ३ यह सुनकर सूतजी बोले कि यही प्रश्न पूर्वकाल में धी-मान् श्रीव्यासजीने ब्रह्माजीसे किया था तब ब्रह्माजी ने अपने आप व्यासजी के आगे इसका उत्तर दिया था ४ सो हे ब्राह्मण लोगो ! वही हम आप लोगोंके आगे कहेंगे जिसप्रकार व्यासजी को संदेह हुआ व ब्रह्माजी ने उसका निवारण किया ५ श्रीवेदव्यासजी सूतजी से बोले कि हे महाभाग सूत ! प्रह्लादजी का जो वृत्तान्त पुराण में तुमने अन्य प्रकार से सुना है वह हम ब्रह्माजी का कहा हुआ तुमसे कहते हैं सुनो ६ भगवद्दासों में श्रेष्ठ देवताओं से भी पूजित प्रह्लाद जी उत्पन्न होतेही महावैष्णवभावको आश्रितहुये ७ व अपने पुत्र-केसाथ श्रीविष्णुजी के सङ्ग युद्धकरने केलिये समर में गये इससे श्रीविष्णुजी के हाथोंसे मारेगये व विष्णुके शरीर में प्रवेश करगये ८ अब तुम इन महात्मा प्रह्लादजीकी प्रथम हमसे उत्पत्तिनुो फिर जैसे वीर्यवान् वे महात्मा विष्णुभगवान् से समरमें लड़े ९ व अपने तेजसे श्रीविष्णुजीके तेजमें प्रह्लादजी प्रविष्टहुये सबसुनो पूर्वकल्प में जिसप्रकार वीर्यवान् प्रह्लादजी उत्पन्नहुयेथे १० वह वृत्तान्त सं-क्षेप रीतिसे तुमसे कहेंगे पश्चिमदिशा में समुद्र के मध्य में सब ऋषियों से युक्त व सब सिद्धियों से समन्वित द्वारका नाम पुरी है उसमें वेदशास्त्र के अर्थों के जानने में महापण्डित व योग योगाङ्गों के जानने में अतिविद्वान् शिवशर्मा इस नामसे प्रसिद्ध एक ब्राह्मण रहताथा उसके पांचपुत्र हुये व सबके सब शास्त्रों के पढ़ने से बड़े पण्डित हुये ११ । १२ एकका यज्ञशर्मा दूसरेका वेदशर्मा तीसरे का धर्मशर्मा चौथेका विष्णुशर्मा नामथा यह महाभाग वि-शेष धर्मकर्म करने में चतुरथा १४ पांचवें का सोम शर्मा नाम था यह अपने पिताकी भक्तिमें रात्रिदिन लगारहता था क्योंकि पिताकी भक्तिको छोड़ अन्य कोई धर्मही वह नहीं कहता था १५ इससे वे सबके सब अपने पिताकी भक्तिमें तत्पर होगये उन सबोंकी

पितृभक्तिदेख द्विजोंमें उत्तम शिवशर्माजीने १६ उन सबोंकी परीक्षा लेनेके लिये अपने मनमें चिन्तनाकी पिताकी भक्ति करने में इन लोगोंके मनमें जैसा भाव टिकाहै वैसा जानने के लिये हम बुद्धिपूर्वक कुछ विचार करके जानें तो अच्छा है क्योंकि श्रीविष्णुजी के प्रसाद से हम सब प्रकार से सिद्धहैं योंभी इनका भाव जानते हैं तथापि विचारपूर्वक इनके हृदयका अच्छा भाव पूजा करने के विषयका जानना चाहिये कि कैसे भक्तहैं १७। १८ यह विचारांशकर अपने तप व तेजके प्रभाव से सब उपाय जाननेवाले उस ब्राह्मण श्रेष्ठ व वेदवादियों में उत्तम ने मायासे यह उपाय किया कि उन अपने पुत्रोंके आगे शिवशर्मा ने यह वार्ता प्रकटकर दिखाई २० कि तुम्हारी माता बड़े ज्वरके रोगसे देखो मृतक होगई वे लोग माताको मरीहुई देख अपने पितासे बोले २१ कि हे महाभाग ! जिन्होंने हम लोगोंको प्रथम गर्भ में धारण करके बढ़ाया वे शरीर छोड़ अब हम सबोंको त्यागकर आप नाशको प्राप्तहुई हे तात ! अब हमलोग क्याकहें यह सुन उनके पिता शिवशर्मा सबोंसे बड़े यज्ञशर्मा नाम अपने पुत्रको बुलाकर उससे बोले कि अतितीक्ष्ण व चोखेशस्त्र से २२। २४ इस अपनी माताके सब अङ्ग काटडालो व दूर कहीं फेंक आओ यह वचन जैसेही पिताके मुखसे सुना कि वैसेही आज्ञाके अनुसार उस पुत्रने सबकिया २५ व फिर पीछे पिता के आगे आकर यह वचन बोला कि हे तात ! जैसी आपकी आज्ञा हुई हमने वैसा सब किया २६ अब और जो कुछकार्य हो उसके करने की आज्ञा दीजिये हे पिताजी ! चाहे बहुत दुर्गम व दुर्लभ कार्य होगा पर हम सब करेंगे २७ उस महाभाग्यवाले को निस्संदेह पिताका भक्तजानकर पिताने दूसरे पुत्रका परम निश्चय जानने केलिये चिन्तनाकी २८ व दूसरे वेदशर्मा नाम पुत्रको बुलाकर उससे कहा कि तुम हमारी आज्ञासे जाकर कहीं से एक स्त्री लाओ क्योंकि कन्दर्प से मोहित होनेके कारण हम विना स्त्री के नहीं जी सकते २९ यह कह उस अपने पुत्रको उन्होंने सब सुन्दरता व सौभाग्यता युक्त मायासे एक स्त्री बनाकर दिखाई व कहा कि पुत्र नि-

इचय करके हमारेलिये यही स्त्री आनदो ३० यह सुन उस पुत्रने कहा बहुत अच्छा ऐसाही होगा तुम्हारा प्रिय करेंगे फिर पिताके प्रणामकर वह पुनजाकर उस स्त्री से बोला कि ३१ हे देवि ! कामके बाणोंसे व्याकुल व पीड़ित वृद्धावस्थाको प्राप्तहमारे पिताजी तुम्हारी प्रार्थना करते हैं इससे प्रसन्नहो उनके सम्मुख चलो ३२ व हे सर्वगसुन्दरि ! हमारे पिताको भजो यह सुन वह शिवशर्माकी मायासे बनीहुई स्त्री बोली कि ३३ वृद्धता से पीड़ित इलेष्मा मुखमें भरेहुये व नानाप्रकार की व्याधियों से युक्त तुम्हारे पिताके पास हम कभी न जायेंगी ३४ क्योंकि अब वेवनाय शिथिल होगये हैं व वनाय वृद्धहोगये हैं उनकी कोई इन्द्रिय भोगके योग्य नहीं है हां तुम्हारे संग भोगकरना चाहती हैं तुम चाहो तो तुम्हारा प्रिय अच्छीतरह करें ३५ क्योंकि तुम रूप सौभाग्य गुण व रत्नादिकों से भूषित हो व सब तुम्हारे दिव्य लक्षण हैं व दिव्यही रूप है व बड़ेपराक्रमी हो ३६ हे मानद ! उस वृद्ध अपने पिताको क्याकरोगे हमारा वचन सुनो हमारे अङ्गोंके भोगके भावसे सब दुर्लभ पदार्थ पाओगे ३७ हे विप्र ! जो तुम चाहोगे हम सब देंगी इसमें कुछभी सन्देह नहीं है यहअप्रिय व पापयुक्त उस स्त्रीका वचन सुन वेदशर्मा ब्राह्मण बोला कि ३८ तुम्हारा यह वाक्य धर्मयुक्त नहीं है व पापसे मिलेहुये के कारण बहुत ही अयोग्य है जो कि हे देवि ! निरपराध पिताकेभक्त हमारे तुल्य पुरुष से तुमने कहा ३९ हे शुभे ! हमने पिताके अर्थ आकर तुमसे प्रार्थनाकी है इससे अब और बात न मुखसे निकालना हे शुभे ! चलकर हमारे पिताजीको भजो ४० हे देवि ! सचराचर तीनोंलोकों में जिस वस्तुकी इच्छाकरोगी वह सब हम तुमको देंगे चाहे इन्द्रादिकों के राज्य सेभी अधिक हो इसमें सन्देह नहीं है ४१ यह सुनकर फिर स्त्री बोली कि जो आप पिताके अर्थ इस प्रकार सब कुछ हमको देनेमें समर्थ हैं तो हमको इस समय इन्द्रादि सब बड़े बड़े देवताओं को दिखाओ ४२ क्योंकि ऐसे दुर्लभ पदार्थों के देनेमें अपने को समर्थ समझतेही तो हे महाभाग ! तुम्हारे कौनसा बल है अपना बल हमको दिखाओ तो ४३ वेदशर्मा

बोला कि हे देवि ! हमारे तपका प्रभाव देखो देखो अभी हमारे बुलाये हुये इन्द्रादि सब देवश्रेष्ठ यहीं आते हैं ४४ इतना कहते ही वेदशर्मा के स्मरण करने से इन्द्रादि देव वहां आकर बोले कि हे द्विजोत्तम ! कहो हमलोग क्या करें हे विप्र ! जिस वस्तुकी इच्छा हो वह हमलोग दें इसमें सन्देह न करना ४५ यह सुन वेदशर्माजी बोले कि हे देवताओ ! यदि प्रसन्न हो व हमारे ऊपर सुमुख हो तो पिताजी के चरणों में हमको निर्मलभक्ति दो बस और कुछ हम नहीं चाहते ४६ ऐसा ही हो ऐसा कहकर सब देवगण अपने २ स्थानों को चले गये तब हर्षित हो वह स्त्री वेदशर्मा से बोली कि तुम्हारे तपका बल हमने देखा ४७ परन्तु देवताओं के आने से हमारा कुछ भी कार्य नहीं है जो तुम पिता के अर्थ सब कुछ हमको दे सकें हो तो जो हम कहें वह हमारा प्रिय करो ४८ हे विप्र ! अपना शिर अपने ही हाथ से काटकर हमको दो यह सुन वेदशर्मा बोले कि हम धन्य हैं जो आज ही तीनों ऋणों से छूटे जाते हैं ४९ केवल शिर ही के देने से जब पिताका कार्य सिद्ध होता है तो हे शुभे ! शिरग्रहण करो ग्रहण करो इतना कह तीक्ष्णधारवाले बड़े चोखे शस्त्र से उस ब्राह्मण श्रेष्ठ ने ५० अपना शिर काट हँसते हुये उस स्त्री को दे दिया व रुधिर टपकता हुआ वह शिर लेकर वह स्त्री वेदशर्मादिकों के पिता शिवशर्मा मुनिके पास गई ५१ व बोली कि ॥

चौ० तव हित वेदशर्म सुत वाडव । पठवा हमें यहां मतिपाटव ॥
पिताभक्त उन निज शिरकाटा । हमें दीन मनखोलि कपाटा ५२
हे द्विज हम आई तव हेतू । करहु भोग मम संग करिचेतू ॥
वेदशर्म साहसलखि ताके । सकल सहोदर रहे सटाके ५३
थर थर कांपत सकल सुश्रंगा । कहे परस्पर वचन सुठंगा ॥
धर्मवती मम सत्यसुबानी । जननीमरी कृपाकी खानी ५४
महाभाग यह धर्मधुरन्धर । पितुहित मरो सुभग पण्डितवर ॥
धन्य २ यह धन्य सुपावा । पितुप्रियकीन सकलविधि भावा ५५
इमिसब भाइन कहा निहोरी । पुण्यकारिता सुयश बहोरी ॥
बोले सूत सुनहु मुनिराया । वेदशर्म यश यह हम गाया ५६

६ पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।
 निजसुत प्रेरित यह शिरलेहू । नारी कद्यो सुनो मुनियेहू ॥
 जानिपुत्र की भक्ति विशेषी । बोल्यहु द्विज ताके गुण देखी ५७

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेशिवशर्मचरिते

प्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय ॥

दो० कहव द्वितीयाध्याय महँ धर्म शर्म की गाथ ॥

वेदशर्मजीवन कियो जो निज तपके साथ १

सूतजी ऋषियों से बोले कि जब वेदशर्माने अपना शिर इस तरह काटडाला तब उसके पिता शिवशर्माजी अपने तीसरे पुत्र धर्मशर्मा को बुलाकर उससे बोले कि हे पुत्र ! यह शिर तुम ग्रहण करो व जैसा करने से यह हमारा बच्चाजीवे हे तात ! वैसाकरो उस शिरको लेकर वह महात्मा धर्मशर्मा अतिवेग से वहां से चल खड़ाहुआ व पिताकी भक्तिसे तप करने सत्य बोलने सरलता रखने से धर्मशर्मा ने धर्मके खींचने की इच्छाकी उस धीमान् के तपो-बलसे खिंचेहुये धर्मजी १ । २ वहां आकर धर्मशर्मा से यह वचन बोले कि हे धर्मशर्मन् ! तुमने हमको क्यों बुलाया है वह कार्य्य हम से तुम कहो हमकरें इसमें कुछ सन्देह नहीं है तब धर्मशर्मा बोला कि हे सुव्रत ! जो हमारे पिताकी सेवाहो निष्ठा और अचल तपस्या हो तो ३ । ४ तिस सत्यता से वेदशर्मा फिर जीउठे तब धर्मने कहा कि हे सुव्रत ! तुम्हारे दम शौच सत्य तपस्या और पिता की भक्तिसे तुम्हारा भाई वेदशर्मा महात्मा फिर जी उठेगा ५ । ६ हे-महामते ! हम तुम्हारे तपसे व पितृभक्ति से बहुत प्रसन्नहुये हैं इस से कोई और वर मांगो जो सब ब्रह्मवादियों में उत्तम लोगों को भी दुर्लभ हो तुम्हारा कल्याण हो ७ जब धर्मशर्मा ने इस प्रकारका सुन्दर वाक्यसुना तो महात्मा धर्मराज जीसे वह महायशस्वी बोला ८ कि हमको पिताजी के चरणारविन्दों में अचल भक्ति दीजिये व यदि प्रसन्नहुये होतो फिर धर्म कर्म करने में हमारी प्रीतिहो व मोक्षमिले ९ यह सुनके धर्मराजजीबोले कि हमारे प्रसादसे ये सब

कार्य तुम्हारे होंगे यह कह धर्मता चलेगये व वेदशर्मा उठखड़े हुये १० मानो शयनही करते थे व उठतेही उस महाबुद्धिमान् ने धर्मशर्मा अपने भाईसे कहा कि हे भ्रातः ! वह देवी कहां है व हमारे पिताजी इस समय कहांहोंगे ११ यहसुन धर्मशर्मा ने संक्षेप रीतिसे सब वृत्तान्त कहा जैसे कि पिताने वेदशर्मा के जिलाने के लिये आज्ञादीर्था उस बातको जान वेदशर्मा अतिहर्षित होके धर्मशर्मासे बोला कि १२ हे महाभाग ! हमारे शिरके जीअने से आजहमारे पिताजी सुखीहोंगे इससे पृथ्वीपर आजहमारे समान और कौनहै १३ पिताके समीप को जानेमें उत्सुक अपने भाई धर्मशर्मा से ऐसा कहकर धर्मशर्मा भाईकेसङ्ग वेदशर्मा अपने घरको चला १४ इस प्रकार देखनेकी इच्छा कियेहुये अपने पिताके समीप वे दोनों गये व पहुँचतेही शिवशर्मा से १५ धर्मशर्मा यह वचन बोला कि हे विप्रेन्द्र ! आपके तेज से यमराज के गृहसे इन वेदशर्मा को हमलाये अब अपने पुत्रको ग्रहण करो धर्मशर्मा की ऐसी भक्तिजान शिवशर्माजी कुछनहीं बोले व फिर चिन्ता करने लगे व आगे हाथजोड़े खड़ेहुये अपने चौथेपुत्र महामति १६। १८ विष्णुशर्मा से बोले कि हे वत्स ! तुम हमारा यह वचन करो आज ही इन्द्रलोक को जाओ व वहांसे अभी अमृतलाओ १९ हम इस स्त्रीके साथ पानकिया चाहते हैं हे सुव्रत ! जो कि सागर से उत्पन्न हुआहै वह सब व्याधि नाशनेवाला अमृतलाओ २० जिससे अभी हमारी वृद्धावस्था नष्टहोजाय व हम नीरोग होजावें हे पुत्र ! यदि हमारे भक्तहो तो ऐसाही करो सोभी शीघ्रता के साथ नहीं तो यह स्त्री हमको छोड़कर और के पास चलीजायगी २१ क्योंकि हमको वृद्धजानकर यह स्वरूपिणी व थोड़ी अवस्था की स्त्री हमें नहीं मानती २२ इससे हे तात ! जिससे प्यारी स्त्रीके सङ्ग हम तीनों लोकोंमें निर्दोष व व्याधि रहित होकर सुखभोगें २३ अपने महात्मा पिताके ऐसे वचन सुनकर प्रकाशित तेजवाले अपने पितासे विष्णुशर्मा बोला २४ कि आपके उत्तम सुखके लिये हम यह सब कार्य करेंगे ऐसा पितासे कह महामति विष्णुशर्मा २५ ॥

८ पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

चौ० तातहिकीन्ह प्रणामबहोरी । कीन्ह प्रदक्षिणमहित निहोरी ॥
बलतप नियम बहुरि मन सेती । सबविधिदृढ़ है चलयहु सचेती २६
अन्तरिज उड़िगयहु तुरन्ता । वायु वेगसों सो बलपन्ता ॥
तुरत महेंद्र भवन नगि बाना । महामहात्मा अरुमीमाना २७

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेशिवरुचिचरिते

द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय ॥

दो० कहीं तृतीयाध्याय महँ विष्णुशर्मा की गाथ ॥

तदनुसहोदर चारि हरि पुरगे भये सनाथ १

सूतजी शौनकादि ऋषियों से बोले कि विष्णुशर्मा अन्तरिज के मार्ग होकर जाय बनाय इन्द्रपुरी के समीप पहुँचे उन्हें सहस्र नेत्रवाले बुद्धिमान् इन्द्रजी ने आतेहुये देखा १ व उनका उद्यम जानकर देवराजजी ने बड़ा विघ्नकिया मेनका नाम अप्सरा से बोले कि हमारी आज्ञासे तू जा २ व हे सुमध्यमे ! जाकर शीघ्रही इस शिवशर्मा के पुत्र विप्रश्रेष्ठका ऐसा विघ्नकर ३ कि जिससे वह हमारे गृहमें न आवे ऐसा वचन सुनकर मेनका शीघ्रही आकाश को गई ४ सूतजी शौनकादिकों से बोले कि रूप उदारतादि गुणों से युक्त व सब भूषणों से भूषित हो एक उड़नखटोले पर चढ़ नन्दन वनके समीप ५ वीणा बजाकर गातेहुये पुरुषोंके अच्छे रागके समान गाती हुई उस विशालनयनी चतुर व मनोहर कटाक्ष करनेवाली को उन महात्मा विष्णुशर्मा ने देखा ६ व उसका व्यवसाय भी जाना कि यह इन्द्रकी भेजीहुई हमारा विघ्न करनेके लिये यहांपर उपस्थित है ७ परन्तु वे द्विजोत्तमजी उसको छोड़ बड़े वेगसे आगे बढ़े तब उन ज्ञानात्मा से उसने कहा कि तुम कहां जातेहो हे महामतिवाले! ८ तब उस कामचारिणी मेनकासे विष्णुशर्मा बोले कि हम अपने पिताके अर्थ बहुत शीघ्रता के साथ इन्द्रलोक को जाते हैं ९ यह सुन मेनका विष्णुशर्मा से फिर अतिप्रिय वचन बोली कि मैं काम के बाणोंसे व्याकुलहूँ इस से तुम्हारे शरण में आईहूँ १० हे द्विज

शार्दूल! जो इसको धर्म जानते हो तो मेरी रक्षा करो हे विप्र! जैसे ही मैंने तुमको देखा है कि मेरा चित्त कामसे व्याकुल होगया ११ व सब मेरे अङ्ग कामसे जलने लगे इससे प्रसन्न व सुमुख होओ जव तक मेरे सङ्ग मैथुन न करोगे तब तक मैं कामाग्नि से जलाकरूंगी इसमें कुछ भी संदेह नहीं है १२ यह सुन विष्णुशर्मा बोले कि हे वरमनने! हे शुभे! हम देव-राजका चरित जानते हैं व आपका भी चरित बहुत अच्छी तरह जानते हैं हम ऐसे नहीं हैं जैसा तुम चाहती हो १३ हे शोभने! आप के रूप व तेजसे विश्वामित्रादिक अन्य मुनिलोग मोहित होते हैं हम शिवशर्माजी के पुत्र हैं १४ जो कि योगसे सिद्ध हैं व तपस्या से भी सिद्ध हैं व कामादि दोषोंको उन्होंने पहिले ही जीत लिया है इससे उनसे वे रहित हैं १५ इससे हे विशालनेत्रवाली! और किसीको जा-कर भज हम तो इन्द्रलोकको जाते हैं ऐसा मेनकासे कह वे ब्राह्मण श्रेष्ठ अपने उसी वायुवेगसे चलखड़े हुये १६ तब निष्फल हो मेनका इन्द्रके समीप पहुँची व उन्होंने जाना कि इसका किया वहां कुछ नहीं हुआ इससे इन्द्रने विष्णुशर्मा को नानाप्रकर की भयंकर वि-भीषिकायें दिखाई १७ हे द्विजा ! जैसे अग्नि से जलनेपर तृणों के ढेर के ढेर एक क्षणमें भस्म होजाते हैं वैसे ही इन्द्रकी कीहुई सब विभीषिकायें नष्ट होगई १८ पिताके परमभक्त उन ब्राह्मण के तेज से बड़ी २ दारुण व घोर व भयंकर जितनी इन्द्रकी कीहुई विभी-षिकायें थीं सब क्षणमात्रमें भस्म होगई १९ क्योंकि महातेजस्वी व यशस्वी ब्राह्मणलोग अपने तेजसे क्या २ नहीं नष्ट कर डालते इस प्रकार महात्मा इन्द्र के बार २ किये हुये बहुत से विघ्न उन मेधावी विष्णुशर्माजीने अपने तेजसे नष्ट करदिये २० । २१ जब वे सब बड़े २ दारुण विघ्न नष्ट होगये व उन सब दारुण आकृतिवाले दारुण विघ्नोंको एक दूसरेके पीछे इन्द्रके किये हुये जाना तब २२ महा तेजस्वी द्विजोत्तम विष्णुशर्माजीने लालनेत्र करके इन्द्र के ऊपर बड़ा भारी कोपकिया २३ सूतजी बोले कि अपने धर्ममें रत पुरुष का जो कोई विघ्नकरे तो उसको अवश्य दण्ड देना चाहिये क्योंकि उसके दण्ड देने में देनेवाला दोषी नहीं होता द्विजोत्तम विष्णुशर्माजी

ने अपने मनमें यह विचार किया कि बस अब हम इन्द्रको इन्द्र लोकसे नीचे गिरा देंगे अन्यथा इन्द्र न मानेंगे व देवताओं के पालने के लिये दूसरा इन्द्र बना देंगे २४।२५ ऐसा विचारांश करके वे ब्राह्मणदेव इन्द्र के नाश करने पर उद्यत हुये तब तक इन्द्रजी वहां आये व नम्रतापूर्वक विष्णुशर्मा से बोले २६ कि हे महाप्राज्ञ विप्रजी ! तुम्हारे तपसे व नियमसे व इन्द्रियों के दमन करने से व शौचाचार करने से तुम्हारे समान अन्य कोई नहीं है २७ व तुम्हारी इस पिताकी अपूर्व भक्तिसे सब देवताओं समेत हम जीत लिये गये हैं सत्तम ! इसमें हमारे सब अपराध आप क्षमा करें २८ व जो मनमें हो वह वर मांगें तुम्हारा कल्याण हो चाहे बहुत ही दुर्लभ होगा पर आपको अवश्य देंगे तब आये हुये देवराज से विष्णुशर्मा बोले २९ कि हे इन्द्र ! ब्राह्मणों का तेज बड़ा रौद्र होता है उसे देवता व दैत्य बड़े दुःखसे सह सकते हैं उसमें भी जो ब्राह्मण अपने पिता का भक्त होता है उसका तेज तो बहुत ही दुस्सह होता है ३० इससे अब आजसे महात्मा ब्राह्मणों के तेज तो कभी न भंग करना क्योंकि जब उत्तम ब्राह्मण कभी रुष्ट होते हैं तो तेज हरनेवाले को पुत्र पौत्र समेत नाश कर देते हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है यदि इस समय आप न आये होते तो यह तुम्हारा उत्तम राज्य ३१ । ३२ अपने तपके प्रभावसे किसी अन्य महात्मा को अनुराग से पूर्णचित्त होके हमने देने की इच्छा की थी ३३ पर आप यहां आगये व वर देना चाहते हैं तो हे इन्द्र ! हमको थोड़ा सा अमृत दीजिये व पितामें अचल भक्ति दीजिये ३४ हे देवराज ! यदि संतुष्ट हुये हो तो ऐसा ही वर दीजिये यह सुन इन्द्रजीने कहा कि बहुत अच्छा तुमको अमृत भी देंगे व पितामें अचल भक्ति भी देंगे ३५ ऐसा उन ब्राह्मणोत्तम से कह इन्द्रने अपने हाथसे ले आकर अमृत दिया सो भी ऐसे प्रसन्न हुये कि एक घड़े का घड़ा उठा कर दे दिया ३६ व कहा कि पितामें तुम्हारी सदैव अचल भक्ति होगी ऐसा कह कर इन्द्रजीने उन ब्राह्मणदेव को विदा किया ३७ और ब्राह्मण के अत्यन्त दुस्सह तेज को देखकर प्रसन्न हुये व विष्णुशर्मा वहांसे आय अपने पिता से बोले कि ३८ व्याधिनाश करनेवाला अमृत

हम इन्द्रसे लाये हे महाभागपिता जी ! इससे अब सदाके लिये रोग रहित होजाइये ३९ व इम अमृतको पानकर परमवृत्ति को प्राप्त हुआ जिये पुत्रका यह पूज्य वचन सुनकर शिवशर्माजी ४० बड़े प्रसन्न चित्तहो सब अपने पुत्रोंको बुलाकर उनसे बोले कि तुम सब लोग पिताकी भक्तिमें तत्परहो व हमारे वचनका परिपालन सदा करतेहो ४१ हेपुत्रो ! अब जो पृथ्वीतलपर दुर्लभहो वह वर हमसेमाँगो ऐसा पिताका वचन सुन सबोंने सम्मतकिया ४२ व विचार करके सब अपने पितासे बोले कि हम लोगोंकी माता जोकि यमराज के मन्दिर को चलीगईहै हे सुव्रत ! वह अब फिर तुम्हारे प्रसाद से जीकर रोग रहित होजावे व जन्म जन्मान्तरमें आप पिता व ये माता हम लोगों की होतीरहें ४३ । ४४ व हम लोगों की सदा पिता मातामें अचल भक्ति बनीरहै वस और कुछ वर हमलोग नहीं चाहते इतना सुन शिवशर्मा बोले कि आजही पुत्रोंके ऊपर करुणा करनेवाली तुम लोगोंकी माता ४५ जीकर अतिहर्षित होकर आवेगी इसमें कुछभी सन्देह नहींहै जब शिवशर्मा ऋषिने ऐसा शुभवाक्य कहा ४६ कि वैसेही उन लोगोंकी माता अतिहर्षितहो वहां आकर बोली कि इसी लिये सुन्दर वीर्यवाले श्रेष्ठ कुल व वंशके तारनेवाले पुत्रके उत्पन्न होनेकी इच्छा मनुष्य व महाभाग्यवती व पुण्य करने में प्रीति करनेवाली स्त्रियां करती हैं ४७ । ४८ कि हमारे सर्वज्ञ पुण्य अंगों से युक्त व पुण्यकरने का साधक पुत्र उत्पन्नहो क्योंकि जिसके गर्भ में पुण्यात्मा पुत्र आताहै उसका गर्भ पुण्यों से सुखसे बढ़ताहै ४९ व वह पुण्यभागिनी स्त्री विना कष्टहीके आनन्द से पुण्य पुत्रोंको उत्पन्न करती है सो कुलका आचार व कुलहीके आधारका व पिता माता के तारनेवाला ५० उत्तम पुत्र विना बहुत पुण्यों के कैसे कोई स्त्री पासकी है हम नहीं जानतीं किन २ पुण्यों से ये महापुण्यात्मा भर्ता हमको मिलेहैं ५१ जिनका वीर्य धर्मयुक्तहै व आप धर्मात्मा व धर्मवत्सल हैं जिनके वीर्यसे महातपस्वी तुम लोगोंको हमने पुत्र पाया ५२ व पुण्य करने में अत्यन्त प्रीति करनेवाले तुम लोग ऐसे प्रभाव से युक्त हुये व हमारे तुम सब पुत्र पिताकी भक्तिमें परायण

हुये ५३ देखो लोकों में बहुत पुण्योंकरके अच्छा पुत्र मिलता है व हमने तो एक दूसरे से अधिक महायशवाले पांचपुत्र पाये ५४ जो कि सब यज्ञों के करने में निपुण व सब अपने स्वभावही से पुण्यात्मा व सब तप तेज व पराक्रम से युक्त इस प्रकार उनकी माताने बार २ अपने पुत्रोंको बढ़ाया ५५ व वे बड़े भारी हर्षसे युक्त होकर प्रणाम करके अपनी मातासे बोले कि हे माताजी ! बड़े सुन्दर पुण्यों से अच्छी माता व अच्छे पिता मिलते हैं ५६ सो हम लोगोंके बड़े भाग्यों से महापुण्यवती अच्छी माता आप मिली हैं व जिनके गर्भमें प्राप्तहोके हम लोग उत्पन्न हुये व पुण्य करते हुये अच्छीतरह बढ़ाये गये ५७ अब यही चाहते हैं कि जन्म २ में तुम तो माता होओ व ये हमारे पिता हों यह सुन उन लोगोंका पिता बोला कि हे हमारे पुत्रो ! तुम लोग सुनो हम पुण्यदायक सुन्दर वर देते हैं ५८ कि हमारे सन्तुष्ट होनेसे अक्षयभोग बहुत दिनोंतक भोगो यह सुन पुत्र बोले कि हे तात ! यदि आप प्रसन्न हैं व वर देना चाहते हैं ५९ तो हम लोगोंको तुम तापरहित श्रीविष्णु के लोक गोलोक को भेजो यह सुन उन लोगोंका पिता फिर बोला कि हे पुत्रो ! निश्चल पिताकी भक्तिसे व तप करने से व हमारे प्रसाद से पापरहित तुम लोग श्रीविष्णुजी के लोकको शीघ्रही जाओ जब शिवशर्मा ऋषिने ऐसे सुवचन अपने पुत्रों से कहे ६० । ६१ तो शंख चक्र गदा हाथोंमें धारणकिये व गरुड़पर आरूढ़ श्रीविष्णुभगवान् आप वहां आये व पुत्रों सहित शिवशर्मा ऋषिसे बार २ बोले ६२ कि हे ब्राह्मण ! पुत्रों समेत तुमने भक्तिसे हमको जीतलिया इससे पुण्यकारी इन चारों पुत्रों समेत व पतिकी इच्छा कियेहुई इस पुण्यरूपिणी अपनी भार्या के साथ तुम आओ हमारे संग चलो तब शिवशर्मा ऋषि फिर बोले कि ये हमारे चारोंपुत्र उत्तम वैष्णवलोकको तबतक जायें ६३ । ६४ व हम अभी कुछ कालतक इस पृथ्वीपर अपनी इस स्त्री के साथ व इस अच्छे अपने अन्तवाले पांचवें पुत्र सोमशर्मा के संग रहेंगे ६५ जब सत्यभाषण करनेवाले उन ऋषिने ऐसा शुभ वाक्य कहा तो ॥

चौ० देवदेवहरिशिवशर्माके । चारिसुतनसोंशुभधर्माके ॥

बोलेचलहु आज गतशोका । प्रलयरहितमोक्षदममलोका ६६
 इमिसुनि सत्यतेज द्विजवारी । विष्णुरूपधरि बहुत सुवारी ॥
 इन्द्रनीलमणि इयाम शरीरा । गदाचक्रदरधर वर धीरा ६७
 सर्व विभूषण भूषित अंगा । विष्णुरूप अनि तेज प्रसंगा ॥
 कंकणहार रत्नकी माला । तासों शोभितरूप विशाला ६८
 सूर्यप्रकाशभाससम भासित । तेजज्वाल आवृत अतिकाशित ॥
 विष्णु काय महँ धायसु पैठे । शिवशर्मा रह देखत बैठे ६९
 जिमि दीपकमहँ दीपक दूसर । जाय मिले एकहोत सुसूथर ॥
 तिमिभेलीन सकत हरिमाहीं । करि पितुभक्ति विप्रवरताहीं ७०
 वैष्णव धामगये इमि चारी । उत्तम द्विज पितृभक्त करारी ॥
 सोमशर्माकर विशदप्रभावा । आगेकहव न अबहिँ बतावा ७१

इति श्रीपाद्मस्ये महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाष नुवांशे शिवशर्मोपा
 ख्याने तृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय ॥

दो० सोमशर्मा कर विशद यश पितुसेवा सों जौन ॥

चौथे महँ कह सूतजू त्याहिसम करिहै कौन १

जब शिवशर्माजी के चार पुत्र श्रीहरिके रूपमें मिलके वैकुण्ठ
 को चलेगये तो वे अपने पांचयें पुत्र सोमशर्मा को बुलाकर उससे
 बोले १ कि हे महाप्राज्ञ पुत्र ! तुम यह अमृत का कलश रखाना
 क्योंकि तुम भी तो हमारे भक्त हो २ हम इस अपनी भर्ग्यासमेत
 तीर्थयात्रा करनेको जायँगे सोमशर्माने कहा एवमस्तु हम इस अ-
 मृत के घड़ेकी रक्षा करेंगे ३ बस वे बुद्धिमान् शिवशर्माजी महा-
 त्मा पुत्रके हाथमें अमृतका कुम्भदे चलेगये व दशवर्ष तक निरन्तर
 तप करतेरहे ४ व यहां धर्मात्मा सोमशर्मा निरालस होके रात्रि
 दिन अमृतघटकी रक्षा करतारहा दशवर्ष के पीछे महापशस्वी शिव-
 शर्माजी फिर आये ५ परन्तु वे महाप्राज्ञ ऐसी माया करके पुत्रके
 समीप आये कि स्त्री समेत कुष्ठरोग से अतीव ग्रसित होके दिखाई
 दिये ६ यहांतक कि दोनों केवल मांसके पिण्डही रहगयेथे कर चर-

णादि बनाय गलकर फूटगये थे ऐसे उस सोमशर्मा के माता पिता होगयेथे ७ जब इस रूपसे अतिदुःखित आयेहुये । महायशस्वी सोम-शर्माजीने अपने परमगुरु माता पिता को देखा तो परम कृपायुक्त होकर ८ बड़ी भक्तिसे शिरझुँकाकर दोनों जनोंके चरणोंपर आगिरे व पितासे बोले कि तपसे आपके तुल्य हम और किसीको नहीं देखते ९ व सुन्दर पुण्यवाले गुणभावों से भी तुम्हारे तुल्य और किसी को नहीं देखते परन्तु नहीं जानते यह आपमें क्या होगया सब देव गण सदैव तुम्हारे दामोंके तुल्यहैं १० जैसेही आपकी आज्ञा पाते हैं वैसेही आपके तेजसे खिंचेहुये चलेआतेहैं पर नहीं जानते किस पापसे तुम्हारे अंगमें यह रोग होगया ११ हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! इसरोग के होनेका कारण हमसे कहो व ये हमारी माता अति पुण्यवती पतिव्रता हैं १२ जोके पतिके प्रभावसे तीनों लोकोंको तरसकती हैं इनको दुःख कैसे मिला क्या इनमें तपका प्रभाव नहींहै १३ जोकि राग व अप्रीति छोड़के कर्मणा मनसा वाचा तीनों प्रकारके कर्मों से अपने पतिकी सेवा करती हैं वे ऐसा दुःख कैसेपावें जो गुरुवत्सला पतिको सदा देवताही के समान पूजती हैं वे कैसे दुःखपावें दुःखों में भी कुष्ठरोगका महादुःख यह सुन शिवशर्माजी बोले कि हे महाभाग्यवाले ! तुम शोच न करो कर्मका फल सब को भोगना पड़ता है १४ । १५ व मनुष्यका शरीर सदा पाप पुण्य दोनों से युक्त होताहै इसमें जो तुम पुण्य चाहो तो हम दोनोंकी शुश्रूषाकरो अन्य कुछ इसमें विचार न करो विचार करने से अच्छा नहीं है जब शिवशर्मा मुनि ने ऐसा शुभ वचन कहा तो महायशस्वी सोमशर्मा बोले १६ । १७ कि पुण्ययुक्त तुम दोनों जनोंकी शुश्रूषा हम अवश्य करेंगे जो हमने माता पिता की पूजा न की तो फिर मुझ पापी दुष्ट कृपण को और कौनसा पुण्यकर्म करना चाहिये ऐसा कहकर व उन दोनों के दुःख से दुःखितहो सोमशर्मा १८ । १९ अपने कोढ़ी माता पिता का थूँक खँखार व मल मूत्र अपने हाथों से उठाने लगे व अपनेही हाथों से दोनों जनोंके पैर धोवें व रात्रिमें उनके चरण दाबें व और भी अंगमीज दाब दियाकरें २० व भक्तिसे उन दोनों को स्नान

कराते उत्तम २ पदार्थ भोजन के लिये देते व महायशस्वी सोम-
शर्मा अपने उन परमगुरु माता पिताको २१ धर्म के लिये अपने
कन्धे पर चढ़ाकर तीर्थादिकों में स्नान कराने को लेजाया करें
व दोनों को अपने हाथ से अच्छेप्रकार स्नान कराकर चन्दनादि
सुगन्धित वस्तु उनके अंगोंमें लगावें स्नानभी वेदके मन्त्रोंसे जैसा
लिखा है वैसाही करावें क्योंकि वे तो सब वेद शास्त्र अच्छी तरह
पढ़ेथे व दोनोंजनों से नित्य देवताओं ऋषियों व पितरोंका तर्पण
व पूजन करावें व होम अपने हाथों से अग्निमें करें व उत्तम भोजन
भी अपने ही हाथों से बनावें २२ । २४ फिर बड़ी प्रीतिके साथ
अपनेही हाथसे दोनोंजनों को भोजन करावें फिर सुन्दर शय्या व
आसन पर उठाकर उनदोनों को बैठादें शयनके समय लपटादें २५
वस्त्र पुष्पादिक सब उन दोनोंको नित्य अपने हाथसे दें बहुत सुगन्धसे
दुक्त ताम्बूल दोनोंको खिलावें २६ तब महाभाग सोमशर्मा उनकी
पूजाकरें मूल दुग्ध दधि आदि सुन्दर भक्षण करने के पदार्थ उन
दोनों को यशस्वी सोमशर्मा नित्य देकर व जो २ उनको वाञ्छित
हो बराबर दिया किया करें इसरीति से नित्य पूजाकरके सोमशर्मा
अपने माता पिताको प्रसन्न कियाकरे व उसके पिताजी सोमशर्मा
को बुलाकर निष्ठुर हो प्रतिदिन उसकी निन्दा करें २७ । २९ व
निष्ठुर वचन कह २ कर बकते झकते रहें जब कोई कार्य्य व पुण्य
कर्म पुत्र करे तो पिता निन्दाही करते रहें व कहें ३० कि हे कुल
नाशनेवाले ! तूने हमारा प्रिय कुछ नहीं किया इसप्रकार नानाप्र-
कारके दुःखदायक निष्ठुर वचन कहकर ३१ दण्ड लठी आदि से
आतुर हो शिवशर्मा अपने पुत्रको माराकरें ऐसा करनेपर भी वह
धर्मात्मा सोमशर्मा कभी रोष न करे बरन सन्तुष्ट ही बनारहे ३२
सो मनसे वचन से व कर्म से सदा सन्तुष्ट ही रहे व सदा पिताकी
पूजाही करता रहै ३३ व उसी प्रकार प्रतिदिन माताकी भी पूजा
सोमशर्मा करता रहै जिसको जानकर शिवशर्मा अपना चरित
देखे ३४ कि हमारे लिये विष्णुशर्मा अमृत लाया था व सदा पु-
ण्ययुक्त हो वह धर्मात्मा पितृभक्तिमें तत्पर रहा इस तरह सेवाक-

रतेहुये सौदिन बीतगये तब पुत्रकी भक्तिदेख शिवशर्मा भी अपने मनमें चिन्तना करके कहने लगे ३५ । ३६ कि हमने प्रथम अपने पुत्र यज्ञशर्मा से कहा कि हे पुत्र ! अपनी माता के शरीर के ये खण्ड जहाँ तहाँ बड़ीदूर फेंक आओ ३७ सो हमारा वचन उसने किया माता के ऊपर कृपा नहीं की फिर उससे भी अधिक दुःख वेद शर्माने किया जिसने उस माया की स्त्रीके आगे हमारे लिये अपना शिरही समर्पण कर दिया उसने तत्कालही बड़ा भारी साहस किया तीसरे ने अपने तपके प्रभाव से हमारे कहने से उसे जिज्ञास ही दिया चौथे ने जानों अपने तपके प्रभाव से इन्द्रपुत्री से अमृत ही ले आन दिया ३८ । ४० परन्तु यह सोमशर्मा सबसे अधिक ठहरा क्योंकि इसकी परीक्षा नाना प्रकार के दुःख दे हमने ही कर ली ४१ ऐसी भक्ति इसने की कि नाना प्रकारके दुःखों से जानो यह पुत्र यहीं मृत नहीं होनायगा व हम ने माया से अपने अंगों में कुष्ठरोग भी दिखाया ४२ तो भी खँखार मूत्र मलकी घिनघिनी कुछ भी इसने न की व यह महा यशस्वी नित्य विष्ठा अपने हाथों से ही उठाकर अलग बहाता है ४३ सब अङ्ग अपने ही हाथों से मीजता रहता है व शौच भी अपने ही हाथों से करता है व हमारा दुस्सह महादारुण वचन नित्य सहता है ४४ नाना प्रकार की निन्दा व ताड़न सहता हुआ यह पुत्र सर्वत्र अपने कन्धोंपर चढ़ाकर हमको पहुँचाता है इस प्रकार के दुःखके सहने के समाचार इस महाबुद्धिमान् मेरे पुत्रके हैं ४५ कहाँ तक कहें नाना प्रकारके क्लेशों से दुःखों के समुद्र में यह पुत्र पतित है परन्तु अब श्रीविष्णु भगवान् के प्रभाव से इस के सब दुःख हम दूर करेंगे ४६ ऐसा बहुत समय तक अपने मनमें चिन्तना कर महामति शिवशर्माजी ने फिर यह माया की कि कहीं उस घड़ेसे अमृतही उड़ा दिया ४७ व पीछे सोमशर्मा को बुलाकर उससे यह वचन कहा कि तुम्हारे हाथपर व्याधिताशक अमृत हमने दिया था ४८ वह हमको शीघ्रही दो कि हम उस को पीवें व विष्णुशर्मा के प्रसाद से नीरोग हों ४९ जब शिवशर्मा ऋषिने ऐसा वचन कहा तो सोमशर्मा बड़ी शीघ्रतासे उठे व उस

अमृतपात्र के पासगये ५० देखा तो वह घड़ा अमृतसे खाली था
बिन्दुमात्र भी उसमें अमृत न था कहनेलगे कि किस पापीका यह
कर्म है किस ने यह हमारा विप्रिय किया ५१ इसप्रकार चिन्ता में
तत्पर हो सोमशर्मा अतिदुःखित हुये व अपने मनमें कहने लगे
कि जो हमजाकर पिताजीके आगे यह वृत्तांत कहेंगे ५२ तो व्याधि
से पीड़ित हमारे पिताजी बड़ा कोप करेंगे इसप्रकार बड़ी देरतक
चिन्ताकर महामति सोमशर्माजी यह अपने मन में कहनेलगे ५३
कि यदि सत्य २ निश्चल होके हमने अपने गुरु माता पिताकी
सेवा की हो व पूर्व समयमें जो हमने शुद्धचित्त होके तपकियाहो
५४ व इन्द्रियों के दमन करने व शौचादि नियमों से सत्य २ धर्म
हीका पालन कियाहो तो यह घड़ा अभी अमृत से पूर्णहोजाय इस
में कुछभी संशय न हो ५५ उन महाभागने जैसेही ऐसी चिन्तना
करके घड़ेको देखा कि वैसेही फिर वह घट अमृत से पूर्ण होगया
५६ उसे देख महायशस्वी सोमशर्माजी अतिहर्षितहुये ॥

चौ० गुरुपहँजाय कीन्ह परनामा । लै घट करमहँ युतसबसामा ॥
कह लीजे यहघट पीयूषा । पूर्ण भलीविधि तनिक न शूषा ॥
करियहि पान रोग बिनहोऊ । महाभाग तुम सम नहिं कोऊ ॥
सत्यधर्मयुतयह त्यहिवचना । सुनिप्रसन्न भे मुनि लखिरचना ॥
शिवशर्मासुत माधुरबानी । सुनिनिजमन अतिशयसुखमानी ॥
हर्षित ह्वै बोले मृदुवचना । लखतप्रशंसततनयसुरचना ५७।५९

इति श्रीपाद्मेमहापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे

शिवशर्मोपाख्याने चतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पांचवाँ अध्याय ॥

दो० कह पँचयें अध्याय महँ सोमशर्म तप फेरि ॥

इन्द्रजन्म प्रस्ताव सब अदिति तपस्या ढेरि १

शिवशर्माजी अपने पुत्रसे बोले कि हे पुत्र ! आज हम तुम्हारे
तप दम शौच गुरुशुश्रूषा व भक्तिसे सन्तुष्टहुये १ अब हमसे उ-
त्तम विष्णुमन्त्र ग्रहणकरो व सुख पाओ यह पुत्र से कह ब्राह्मण

देवताने अपना प्रथमवाला शरीर दिखाया २ जैसे प्रथम थे वैसे ही अपने माता पिताको पुत्रने देखा दोनों दीप्तिमान महातेजस्वी सूर्य के बिम्बके समान प्रकाशित देखपड़े ३ तब बड़ीभक्तिसे पुत्र ने दोनोंके चरणोंमें प्रणामकिया व बड़े हर्षसे उनके पिताने विष्णु-सूक्त ग्रहणकराया ४ व श्रीविष्णुजी के प्रसाद से अपनी भार्या समेत धर्मात्मा शिवशर्माजी तो अपने पुण्य व योगाभ्याससे विष्णु को प्राप्त होगये ५ श्रीविष्णु भगवान्के तेज में लीन होगये जोकि मुनियोंको भी दुर्लभहै जो न यज्ञोंसे मिलता है न तपोंसे न पुण्यों से उस अक्षय तेजको शिवशर्माजी गये ६ क्योंकि जैसे विष्णुके ध्यानसे प्राणी उनके लोकको जाताहै वैसे दान तीर्थयात्रा व स्तोत्रादिकों के पाठ करने से दुर्लभ परमपदको नहीं जाता ७ जिस प्रकार वह ब्राह्मण विष्णुके ध्यानसे वैष्णवी शरीरमें प्रवेश करगया वैसा तो यज्ञ पुण्य योगाभ्यास व दान करनेसे कोई नहीं प्राप्तहोते ८ सतजी शौनकादिकोंसे बोले कि पिता माताके वैकुण्ठवासी हो-जाने के पीछे मिट्टीका ढीला पत्थर व सुवर्णको समान समझते हुये ९ आहारको जीत उनधर्मात्मा सोमशर्माने निद्राको भी जीतलिया व नानाप्रकारके विषयोंको छोड़ एकान्तकी सेवा करनेलगे १० केवल योगासनपर आरूढ़हो भोजनरहित होके सब पदार्थ उन्होंने छोड़ दिये इस प्रकार तप करते २ सोमशर्मा के मरणका समय आया उसी समयमें वहां एक दानवों की सेना आई जब उस ऋषियों के मान बढ़ानेवाले शालग्राम नाम महाक्षेत्र में सोमशर्मा मरनेपर उद्यतहुये कि वैसेही वे दैत्य आपहुँचे वे कोई २ दानव तो कहतेथे मारो २ कोई २ दैत्य कहतेथे निकालो निकालो ११ । १३ इस प्रकारका महाशब्द मरण समय में सोमशर्माके कानोंमें पड़ा तब विप्रों में श्रेष्ठ सोमशर्माजीका १४ ज्ञान ध्यान जातारहा व उनके चित्तमें दैत्योंका भय पैठगया इससे उनके प्राण दैत्यरूप होगये व उन महात्मा के प्राण तुरन्त निकलगये वस वे दैत्यभाव को प्राप्तहो मृत्युके वशीभूत हुये १५ । १६ इसीसे वे आकर हिरण्यकशिपु नाम दैत्य के गृहमें हिरण्यकशिपुके पुत्र उत्पन्नहुये व देवा-

सुर नाम महायुद्ध में श्रीविष्णु भगवान् के हाथसे मारे गये १७ जब सोमशर्मा दैत्यहुये तो उनका प्रह्लाद नाम हुआ सो जब महात्मा प्रह्लाद विष्णुजी से युद्ध करने लगे तो उन्होंने विश्वरूपसमन्वित भगवान् वासुदेवजीको देखा १८ तब पूर्व योगाभ्याससे उन महात्माको ज्ञान हो आया जिससे कि पूर्वजन्मके शिवशर्मा नाम पिताका सब चरित स्मरण हो आया १९ व विचारा कि हम वेही सोमशर्मा हैं अब दानवी शरीरको प्राप्त हुये हैं अब इस शरीरको छोड़ कब केवल पुण्यधामको प्राप्त होंगे २० सोभी मोक्षदायक ज्ञानोंसेही यों नहीं जब समरमें मरने लगे तो महात्मा प्रह्लादजीने ऐसी चिन्ताकी यह सर्व सन्देह नाशन वृत्तान्त तुमसे हमने वर्णन किया अब और क्या श्रवण किया चाहते हो सो पूछो २१ २२ सूतजी फिर शौनकादिकोंसे बोले कि जब इसप्रकार प्रह्लादको देवदेव वासुदेवजी ने मारा तब पुत्रनाश होनेवाली कमला रोती भई २३ प्रह्लाद की माता हिरण्यकशिपु की भार्या प्रह्लादके महाशोकों से दिन रात्रि शोच किया करती थी २४ बड़ी पतिव्रता व भाग्यवती थी कमला उसका नाम था सो बड़ी दुःखित हो दिन रात्रि जब रोदनही किया करे तो नारदजी आकर उससे बोले कि २५ हे महाभाग्यवाली व पुण्यवाली ! तू पुत्रके अर्थ शोच न कर जिस तेरे पुत्र को वासुदेवजी ने मार डाला है वह फिर तेरे यहां जन्मलेगा २६ उसी तरह का रूप व लक्षण उसका होगा व तेरेही उदर से उत्पन्न होगा व फिर भी उस महाबुद्धिमान् लड़के का प्रह्लादही नाम होगा २७ पर उसका आसुरभाव कुछ भी न होगा पूरे सब वैष्णवीभाव उस में होंगे व वह इन्द्रत्व को भोग करेगा तब सब देवगण उसके नमस्कार करेंगे २८ हे महाभाग्यवाली ! उस पुत्रसे सदा सुखिनी हो परन्तु हे देवि ! यह वार्ता तू किसी से न कहना २९ इसको अपने ज्ञानभावसे सदा गुप्तही रखना ऐसा कह मुनियों में श्रेष्ठ श्रीनारदमुनि चले गये ३० फिर उसी कमला के उदरमें उन्हीं प्रह्लादका उत्तम जन्म हुआ व उन महात्माका फिर भी प्रह्लादही नाम हुआ ३१ वे बाल्यावस्थाही से कृष्णचन्द्रही का स्मरण किया करें इसी से नरसिंहजी के प्रसाद से

वे देवताओं के राजा इन्द्रहोगये ३२ इससे उत्तम इन्द्रपद भोगते हुये वेभी देवरूपही होगये व महाज्ञानी होकर फिर वे महात्मा मोक्ष को प्राप्तहोंगे ३३ हे महाभागो! सृष्टि असंख्यप्रकारकी है इससे ज्ञानवान् महात्माओं को कभी मोह न करना चाहिये ३४ हे द्विजोत्तमो! यह तुम्हारे प्रश्नका उत्तर हमने दिया हे महाभागो! अब और कुछ पूछो तुम्हारे सन्देहको हम काटेंगे ३५ देवताओं का विजय व दानवोंका महानाश श्रीविष्णु भगवान् करके तीनोंलोकों को स्थापित करते हैं ३६ इतना सुन ऋषिलोग फिर सूतजी से बोले कि प्रह्लाद देवताओं के इन्द्र जैसे हुये वह कथा हमलोगों से विस्तारसहित आप कहें ३७ सूतजी बोले कि हे ब्राह्मणो! जिसप्रकार से उन अत्यन्त सज्जन पुण्यात्मा ने इन्द्रता पाई वह हम विस्तारसहित वर्णन करेंगे ३८ जब महात्मा श्रीगोविन्दजीने उन सब महादैत्योंको उस महादेवासुर संग्राम में मारडाला तो सब पापी बनाय नष्ट होगये ३९ तब सब देवता गन्धर्व्व नाग विद्याधरादि सब देवयोनि हाथजोड़ श्रीमाधवजी से बोले कि ४० हे भगवन्! हे देवदेवेश हर्षिकेश! तुम्हारे नमस्कार हैं जो कुछ हमलोग तुमसे जनाते हैं उसे विचार कीजिये ४१ हे केशव! अब हमलोगोंका शासन करनेवाला ऐसा कोई इन्द्र बनाइये जो पुण्यात्मा हो व हमलोगोंकी रक्षा अच्छे प्रकारकरे ४२ ऐसा पुण्यात्मा राजा इन्द्रहो कि तीनोंलोकोंकी प्रजा जिसका आश्रयण करके अत्यन्त सुखीहो यह सुन श्रीभगवान् वासुदेवजी बोले कि हे महाभाग्यवालो! हमारे लोकमें आजकल वैष्णव तेजसे युक्त एक ब्राह्मण बहुत दिनों से निवास करता है व उस महात्माका काल हमारे लोक में बसने का पूर्ण होचुका है ४३ । ४४ हे देवसत्तमो! वह विप्र हमारा बड़ा भक्त है सो वैष्णव तेजसे वह तुमलोगोंका पालक होगा ४५ क्योंकि बड़ा धर्म्मात्मा व धर्म्मा का अनुरंजन करनेवाला होगा वह ब्राह्मणसत्तम तुमलोगों का पालक व धारकहोगा ४६ व तुमलोगों की सदा रक्षा बड़े धर्म्म के साथ कियाकरेगा वह अदितिका पुत्रहोगा सुव्रत उसका नामहोगा ४७ महाबली व महावीर्यवान् होगा बस वही इन्द्रहोगा सूतजी शौ-

नकादिकों से बोले कि इसप्रकार सब देवताओं को वरदे ४८ श्री विष्णु भगवान् विजय करनेवाले सब देवताओंको संगले पिता कश्यप व माता अदितिके देखने को गये ४९ व वहां जाकर उन महात्मा देवताओंने सुखपूर्वक आसनपर बैठेहुये दोनोंके प्रणामकिया व सबके सब बड़े आनन्द से युक्त हाथ जोड़के बोले ५० कि तुम दोनोंजनों के प्रसादसे हमलोग देवत्व को प्राप्त हुये तब बड़े आनन्दयुक्त कश्यपजी देवताओं से बोले ५१ कि तुमलोग सदा सत्य धर्म से वर्तमान रहना इससे हम दोनोंके प्रसाद से व तपके प्रभाव से ५२ अब अक्षयपद देवत्व को प्राप्तहोओगे यह व और भी वर तुमलोगों को देते हैं कि तुमलोग बहुत प्रीतिसे युक्त ५३ अमर व निर्वर्जर होओगे अर्थात् न कभी मरोगे न वृद्ध होओगे व तुमलोगों के सब काम अर्थ सिद्धहोंगे व सबसिद्धियां तुम्हारे आगे खड़ी रहेंगी ५४ सो तुम्हीं को यह वर नहीं देते सब नाग गन्धर्व भी हमारे प्रसादसे बड़ेदेव होंगे जब देवताओं से कश्यपजीने ऐसा कहा तब श्रीविष्णुभगवान् अदितिजी से बोले कि हे यशस्विनि देवताओं की माता अदितिजी ! तुम्हारा कल्याणहो हमसे वरमांगो ५५ जो तुमको मनसे वाञ्छित होगा वह हम सब देंगे यह निश्चय करके कहते हैं यह सुन अदितिजी बोलीं कि हे माधव ! तुम्हारे प्रसादसे हम पूर्वकाल में पुत्रवती हुईथीं ५६ व हमारे सबपुत्र अमर व निर्वर्जर हुये और सबके सब पुण्य करने में वत्सल हुये हे मधुसूदन ! सुनिये ये पुत्र हमने पायेहैं ५७ और हे गोविन्द ! आप सदैव सबकाम समृद्धिके देनेवाले हमारे गर्भमें होकर हमारे पुत्रहों ५८ कि जिसमें हे केशव ! आपको पुत्रपाय हमनित्य आनन्दितरहें हे नाथ ! इस प्रकारका महोदययुक्त हमारा मनोरथ आप पूर्णकरें ५९ यह सुन श्रीभगवान्जी बोले कि देवकार्यके लिये मनुष्य देहमें जाना योग्य होगा तब हम तुम्हारे गर्भमें निश्चय वासकरेंगे ६० हे देवि ! बारहई चौयुगी के त्रेता में पृथ्वी का भार हरनेके लिये जमदग्नि जीके पुत्रहो सब ब्राह्मणों में उत्तम होकर प्रताप व तेजसे युक्तहो सब दुष्ट क्षत्रियों के मारनेके लिये रामनाम से प्रसिद्धहो सब शस्त्र

धारियोंमें श्रेष्ठ तुम्हारे पुत्र हम होंगे ६१ । ६२ फिर एक कल्प में सत्ताइसई चौयुगी के त्रेतायुग की सन्ध्या में श्रीरामचन्द्र के नामसे प्रसिद्ध होकर तुम पतिव्रता के हम पुत्र होंगे ६३ इसके पीछे फिर भी पुण्यबुद्धि तुम्हारे हम पुत्रहोंगे उसको सुनो बताते हैं अष्टादसई चौयुगी के द्वापरके अन्त में हम तुम्हारे पुत्र होंगे उसमें सब दैत्यों को मारेंगे व पृथ्वीका भारउतारेंगे क्षत्रियवसुदेवके यहां उत्पन्नहोनेसे वासुदेवके नामसे प्रसिद्ध तुम्हारेपुत्रहोंगे इसमें सन्देहनहीं है ६४।६५ हे कल्याणि! हे सब देनेवाली ! हे देवि ! इस समय अब हमारा धर्म युक्त यह वचनकरो कि सर्व लक्षणसम्पन्न सत्यधर्मयुक्त सर्वज्ञ एक सुन्दरपुत्र उत्पन्नकरो उसको हम इन्द्रत्व देंगे इससे वह इन्द्रहोगा ६६।६७ ऐसा सुनकर कि देवदेव श्रीविष्णुजीके प्रसादसे हमारा पुत्र इन्द्र होगा अदितिजी अत्यन्त हर्षित हुई ६८ व श्रीहरि से बोलीं कि हे महाभाग ! बहुत अच्छा ऐसाही हो हम तुम्हारा वचनकरेंगी पुत्र उत्पन्न करेंगी इसके पीछे सब देवगण अपने २ स्थानोंको चलेगये ६९ व श्रीहरि भी उन्हीं के संग चलेगये देवगण इस बात से अत्यन्त प्रसन्नहुये व सब कहीं से निर्भय होगये सूतजी शौनकादिकोंसे बोले कि जब मनस्विनी अदितिजीने ऋतुस्नान किया तो वे अपने पति कश्यपजी से बोलीं ७० कि हे भगवन् ! तुम हम को इन्द्रपद भोगनेवाला पुत्र अबकी दो इस बात को सुनकर एक क्षणभर चिन्तनाकर कश्यपजी अतिमनस्विनी अदितिजी से बोले ७१ कि हे महाभागे ! ऐसाही हो तुम्हारे पुत्रहोगा जोकि तीनोंलोकोंका कर्ता व यज्ञोंके भोगनेवाला होगा ७२ ऐसा कह व अदिति के शिरके ऊपर अपना हाथ रखकर द्विजों में श्रेष्ठतम तेजस्वी कश्यपजी सत्यधर्मयुक्त होकर जाय तप करनेलगे ७३ तब जो महा तेजस्वी सुव्रत नाम ब्राह्मणोत्तम श्रीविष्णुलोक में सदा निवास करताथा उसका पुण्य विष्णुलोक से क्षय होगयाथा ७४ इससे कर्म के वश से उस सुव्रत द्विजोत्तमका वहांसे पातहुआ व वही महातपस्वी ब्राह्मण आकर अदितिके पुण्यगर्भमें आया ७५ कि जिससे सत्य पुण्यके कर्म से इन्द्रत्व का भोगकरे तब पुण्यों से व तपके प्रभाव

से अदितिजी ने गर्भ को धारण किया ७६ व निरालस हो वन में जाकर वे तप करने लगीं तप करते करते उनको देवताओं के सौवर्ष बीत गये ७७ उसमें ऐसा तीव्र तप अदितिने किया जो देवता और असुरों को भी बड़े दुःखसे करने के योग्य था उन के उस तेजसे व तपके प्रभावसे बड़ी प्रभा से युक्त ७८ व सूर्यके तेजके समान प्रकाशित मानों दूसरे भास्करही के तुल्य तेजसे वे अदितिजी ध्यान करती हुई अतिदीप्तिसे शोभित हुई ७९ व तप और तेजके कारण रूप में और भी अधिक होगई बस वे तपध्यान में युक्त हो केवल वायु पान करके रहती थीं ८० इस कारण दक्षकी कन्या देवी अदितिजी अधिक शोभित हुई उस तप करने के समय में सब महाभाग्यवाले सिद्ध ऋषि महापराक्रमी सब देवगण ८१ उन महाभाग्यवती की रक्षा किया करते थे व सब स्तुति भी करते थे जब तप करते २ पूर्ण दिव्य सौवर्ष बीत गये तो श्रीविष्णु भगवान् वहां आये ८२ व तप करती हुई महाभाग्यवती उन अदितिजी से बोले कि हे देवि ! गर्भ अब बनाय अच्छे प्रकार पूर्ण होगया व प्रसूतिका समय आगया है ८३ व तुम्हारे ही तप से और तेजसे पुष्ट हुआ व बढ़ा भी है इससे हे यशस्विनि ! अब आज ही इस गर्भको छोड़ो ८४ ऐसा कह देवेश श्रीविष्णु भगवान् अपने स्थानको चले गये अदितिजीने जब महोदयवाला सुन्दर काल आया तो दूसरे सूर्यही के समान तेजस्वी महादीप्तिमान् पुत्रको उत्पन्न किया उस पुत्रके सुन्दर तो भुज थे व सब अंग मनोहर सब शुभ लक्षणों से युक्त ८५।८६ चार भुजा बड़ा भारी शरीर था इसीसे वह तीनों लोकों का नाथ व देवताओं का ईश्वर हुआ तेजकी ज्वालासे घिरा था चक्र पद्म हाथोंमें लिये था ८७ मुख उसका चन्द्रबिम्बका अनुकरण करता था व वह महाप्राज्ञ वैष्णव तेजसे प्रकाशित होता था ८८ अन्य भी सब दिव्य लक्षण व भावों से युक्त था सब लक्षणों से सम्पूर्ण चन्द्रवदन कमलसम नयन था ८९ जब ऐसा पुत्र अदितिजी ने उत्पन्न किया तब वहां सब देवता लोग व वेदवेदाङ्गपारगामी ऋषिलोग आये गन्धर्व नाग सिद्ध विद्याधर ९० व सात देवर्षिलोग व बड़े २ तेजस्वी पूर्व के

आचार्य बृहस्पत्यादि सब आये औरभी पुण्य मंगल देनेवाले पुण्य रूप मुनिलोग आये ९१ सबके सब जो वहां आये अत्यन्त हर्ष से सबों के मन भरेहुये थे भाग्यवान् महापराक्रमी उस पुत्र के उत्पन्न होने पर ९२ सब देवगण व सब पर्वतलोगभी देवरूप धारण करके वहां आये व सब तपस्वीलोग व क्षीरादि सातोसमुद्र देवरूप धारण किये व सब विमल जलवाली नदियां भी दिव्यमूर्तियों से आईं ९३ व अन्य भी जो चर व अचर जो कोई थे सब सुन्दर मूर्ति धारणकिये वहां आये व सबोंने आकर वहां बड़ा भारी मंगल महोत्सव किया ९४ अप्सरादि सबस्त्रियां नाचनेलगीं व गन्धर्वलोग ललित गानेलगे व वेदपारगामी ब्राह्मणदेव वेदमंत्र पढ़ २ कर ९५ कश्यपजी के उन महात्मापुत्रकी स्तुति करनेलगे ब्रह्मा विष्णु रुद्र व साङ्गोपाङ्ग सब वेद उन महात्मा महापराक्रमी के उत्पन्न होने पर आये व हे सत्तम ! तीनोंलोकों में जितने पुण्यरूप प्राणी थे ९६।९७ उन महापराक्रमी के उत्पन्न होनेपर सब वहां आये व सबों ने पुण्यगीतों से तथा महोत्सवों से अतिमङ्गल किया ९८ व मारे हर्षके आनन्दित सबों ने उनकी पूजाकी ब्रह्माजी श्रीविष्णुजी व महादेवजी कश्यप व बृहस्पतिजी ९९ इनलोगोंने उन महाप्रतापी पुत्र के नामकर्म किये कहा कि वसुदेने के कारण एक तुम्हारा वसुदत्तनामहोगा व दूसरा वसुदनाम होगा १०० तीसरा आखण्डल नाम फिर चौथा मरुत्वान्नाम पांचवां मघवान् व मघवा छठां विडौजाः सातवां पाकशासन १०१ आठवां शक्र व नववां इन्द्रनाम होगा हे अदितिजी ! बस ये तुम्हारे पुत्रके सब नाम होंगे सब येनाम इन्हीं महात्मा के हैं १०२ तब हर्षित होके सब देवताओंने उस पुत्र को स्नानकरा फिर अन्य संस्कार कराया १०३ विश्वकर्मा को बुलाकर उनसे उस महात्मा पुत्रको नाना प्रकारके दिव्यभूषण दिलाये १०४ इसप्रकार जब महात्मा देवराज उत्पन्नहुये तो महापराक्रमी सब देवगण इसरीति से अतिहर्षितहुये १०५ व जब पुण्य तिथि शुभमुहूर्त व लग्नआया तब माङ्गलिक पदार्थों से स्नान कराय देवताओंने इन्द्रजीको इन्द्रपदवीपर स्थापित किया १०६ ॥

चौ० इमि श्रीहरिप्रसादसों नीके । इन्द्र इन्द्रपद लह्यहु सुठीके ॥
तब वसुदत्तकीन्ह तपजाई । अतिविचित्रजोसबसुखदाई १०७
वज्रपाश अंकुशकर लीन्हें । उग्रतेज युत वरमति कीन्हें ॥
नानाविधितपकीन्ह अपारा । वर्णनहार कौन संसारा ॥
बोलेसूत सुनहु मुनिराजहु । इन्द्रतपस्यासुनि भृगुभ्राजहु ॥
निजपुरमहँ इमिवचन उचारा । को वसुदत्त तुल्य संसारा १०८।१०९
विष्णु प्रसाद तपोबल पाई । ऐन्द्रपदहि पायहु हरषाई ॥
यहिममानलोकनमहँ आना । तपप्रभाव नहिँ अपरमहाना ११०

इति श्रीपाद्मे महापुराणे भूमिखण्डे भाषानुवादे देवासुरेन्द्राभिषेकोनाम
पञ्चमोऽध्यायः ५ ॥

छठवां अध्याय ॥

दो० छठयें महँ सुतवध निगखि सौतिपुत्र कर राज ॥

लखिदनुकहदितिसों विलपि दितिकइयपसों काज १

सूतजी शौनकादिकोंसे बोले कि इन्द्रके देवराज होने की वार्त्ता
सुनकर कइयप मुनिकी अति प्रिय भार्या परम तपस्विनी दनुनाम
अपने पुत्रोंके शोकसे सन्तप्त हो दितिके मन्दिरमें पहुँची १ व रोदन
करतीहुई बड़े दुःखसे चिचड़तीहुई मानो मरीहीजाती थी दितिके
चरणकमलोंके प्रणामकर फिर चरणोंपर गिरपड़ी उसको इसप्रकार
दुःखितदेख दिति उसकी दूसरीसपत्नी समझातीहुई बोली २ कि हे
महा भाग्यवाली ! तुम्हारे रोदन करनेका क्या कारणहै लोकमें एकपुत्र
के होनेसे स्त्रियां पुत्रवती कहाती हैं ३ हे भामिनि ! हे कल्याणि ! तु-
म्हारे बड़े महात्मा गुणी शुम्भादि पुत्रहैं इससे ऐसे पुत्रों की माता
कहाती हो ४ फिर तुमको किससे दुःख मिला इसका कारण हमसे
कहो इसके विशेष महात्मा महाबली हमारे पुत्र हिरण्यकशिपु व
हिरण्याक्ष राजा हैं तुमको किससे दुःख हुआ हे सखि ! अपने
दुःखका कारण अवश्य हमसे कहो इस प्रकार महा दुःखित उस
दनुसे दितिने बार २ ऐसा कहा ५।६ कि हे देवि ! तुम क्यों
रोती हो अपने रोनेका कारण सब हमसे विस्तार सहित कहो इतना

दनुसे कह परम तपस्विनी दिति विश्राम कर रही ७ तब दनु बोली कि हे महा भाग्यवाली ! देखो २ देवदेव श्रीविष्णु ने हमारी तुम्हारी सबसे बड़ी सौति अदिति का मनोरथ कैसे पूर्ण किया है ८ हे देवि ! जिसप्रकार पूर्व समयमें अदितिको उन्होंने वरदिया है उसका वृत्तान्त कहती हैं सुनो जैसे वरदिया था वैसेही इस समय वसुदत्तनाम पुत्रभी अदिति को दिया ९ वह पुत्र कश्यपजी से अदिति में जो हुआ है तीनों लोकों का पालक नियत किया गया व उसको तुम्हारे पुत्रों से छीनकर इन्द्रत्व दिया है १० इससे अदिति अपने मनोरथोंसे अच्छी तरह परिपूर्ण हुई व सब सुखोंसे बड़ी क्योंकि उसका सबसे छोटा वसुदत्तनाम पुत्र आजकल ११ इन्द्रपद भोगता है जो कि बड़े बड़े दुःखोंसे नहीं मिलता परन्तु वह सब देवताओंके संग वसुदत्त भोगता है तब दिति बोली कि हमारा महा बुद्धिमान् पुत्र कैसे पदसे भ्रष्ट हुआ १२ अन्य दानवोंके तेजोभ्रष्ट होनेका कारण हमसे विस्तारसे कहो १३ इतना दनुसे कहकर परमदुःखित होकर दिति चुप होरही तब दनु बोली देवता व सब हमारे तुम्हारे पुत्र दानव दैत्य क्रोध युक्त होकर संग्राम करनेको गयेथे १४ वहां दैत्यके नाश करनेवाला बड़ा युद्ध हुआ देवदेव श्रीविष्णुजी ने समर में आकर हमारे पुत्रोंको मार डाला १५ जैसे सिंह वनमें गजोंको मार डालता है वैसेही चक्रपाणिने तुम्हारे सब पुत्रोंको मार डाला १६ काल नेमिआदि जितने सैन्यके स्वामी थे जिनको देवता दैत्य कोई भी नहीं जीत सक्ते थे १७ उनको नाशित मर्दित व द्रावित करके विकल कर दिया बचे बचाये इधर उधर भाग गये जैसे अपनी इच्छाहीसे अग्नि वनमें तृणोंको जला देता है १८ वैसेही ये केशव दैत्यगणोंको भस्म कर डालते हैं हे देवि ! बहुतसे हमारे पुत्र मारे गये व बहुतसे तुम्हारे मारे गये १९ जैसे अग्निको पाकर सब शलभ भस्म हो जाते हैं वैसेही सब दानव दैत्य हरिको पाकर क्षयको प्राप्त हुये २० इसप्रकार का दारुण वृत्तान्त सुन कर बहुत व्याकुल हो दिति बोली कि हे भद्रे ! यह वज्रपातके समान वचन तुमने हमसे कैसे कहा २१ इतना कह दिति मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़ी तब बड़ा भारी हाहाकार शब्द हुआ जो कि बहुत दुःख और

तापकारक था २२ पुत्रशोकसे दुःखितहो दिनि बड़े उन्ने पुत्रसे विलाप करनेलगी तिसको देखकर मुनियों में श्रेष्ठ कश्यपजी यह शुभ वचन बोले कि २३ हे महाभागे ! रोदन न करो तुम्हारा कल्याण हो तुम्हारे ऐसे लोग शोक नहीं करते जो लोग सत्त्ववान् होते हैं वे लोभ मोहसे बाहर रहते हैं २४ हे देवि ! संसार में किसके पुत्र व किसके बान्धव लोग हे प्रिये ! सुनो किसीका किसी के साथ कुछभी सम्बन्ध नहीं है २५ तुम सबजनी दक्षकी कन्याहो व सहोदर भगिनियां हो नाम केवल तुम लोगों के और २ हैं व तुम सबोंके भरण पोषण और कामना पूर्ण करनेवाले भर्त्ता हम हैं २६ हे वरानने ! सो पोषण पालन व रक्षाकरनेके लिये अबभी उद्यतहैं तुम्हें पुत्रोंसे क्या प्रयोजन है फिर उन दुष्ट अजितेन्द्रिय अशान्तात्माओंने क्यों देवताओंसे वैर किया २७ व हे महाभागे ! हे शुभे ! तुम्हारे सब पुत्र सत्य धर्म से रहित थे उस दोषसे व तुम्हारे भी दोष से २८ वासुदेव भगवान् जी ने मारडाला व देवताओंसे भी बहुतोंको मरवाडाला इससे अब शोक न करो क्योंकि शोक करनेसे सत्य और मोक्ष का नाश होता है २९ शोक पुण्यको नाश करडालता है व पुण्य के नाशसे प्राणी आप नष्टहोजाता है इससे हे वरानने ! विघ्न रूप इस शोकको छोड़ आनन्दित होओ ३० ॥

चौ० आत्मदोषसों सबदानवगण । मृतकभये सबजायएकक्षण ॥
देव निमित्तमात्र तिन केरे । निजकर्महिं सों मरे घनेरे ३१
इमिगुनिमनमहँकरहुविचारा । शान्त चित्त लहुसुख संसारा ॥
वृथा मरहुजनिकरिबहुशोका । सुमिरिवचनममहोहुअशोका ॥
इमि दुःखिनी प्रियासोंभाषी । महायोगनिधिमुनिगुणलाषी ॥
भयहु विषादनिवृत्त तुरन्ता । महाबुद्धि पूजित भगवन्ता ३२

इति श्री पाद्मे महापुराणे भूमिखण्डे भाषानुवादे

देवासुरे दिति विलापोनामषष्ठोऽध्यायः ६ ॥



सातवां अध्याय ॥

दौ० सतयें महँ कश्यप कद्यो दिति सों आत्मज्ञान ॥

पञ्चभूत की कहि कथा समुक्तायहु विज्ञान १

कश्यपजी के ऐसे वचन सुन दिति बोली कि हेनाथ ! तुमने सब सत्य कहा इस में कुछ भी सन्देह नहीं है परन्तु तुम्हारी भक्तिको छोड़ अब हमको सपत्नी अर्थात् सौतिकी भक्तिकरनी पड़ेगी १ हे सत्तम ! अबतक हम अपने अभिमान में बैठीरहती थीं सो अब मानभङ्ग होनेके दुःखसे महादुःखपाकर अपने प्राणछोड़ेंगी २ यह सुन कश्यप जी बोले कि सुनो जैसे तुम्हारी शान्तिहोगी वैसा हम तुमसे कहेंगे हे शुभे ! कोई किसीका पुत्र नहीं होता न कोई किसी की माता न कोई किसी का पिता होता है ३ न कोई किसी का भ्राता न बान्धव न कोई किसी का स्वजन यह संसार का सम्बन्ध केवल माया मोह से युक्त है ४ हे देवि ! आपही अपना पिता है व आपही माता आपही बान्धव व आपही स्वजनवर्ग व आपही सनातन धर्म ५ हे देवि ! आचारकरने से मनुष्य सुख को प्राप्तहोता है व अनाचार व पापके करनेसे नष्टताको प्राप्तहोता है ६ हे देवि ! ऐसेही अनाचारादि करने से मनुष्य क्रूरयोनिको प्राप्तहोजाता है इसमें कुछभी संशयनहीं है व सत्यहीन महापापकर्म से मोहितहो ७ मनुष्य औरोंसे शत्रुता करने लगता है व मनुष्यों से महावैर करनेलगता है फिर जिन के सङ्ग वह वैरकरता है उसके सङ्ग वे भी वैरकरनेलगते हैं इसमें सन्देहनहीं है ८ हे भामिनि ! हे प्रिये ! हे शुभे ! जोलोक में सब के सङ्ग मैत्री करता है उसके सब मित्रहीहोते हैं कहीं कोई उसका वैरीही नहीं दिखाईदेता ९ हे देवि ! जैसे किसान लोग जिसखेतमें जैसा बीजबोते हैं वैसाहीफलभी पाते हैं १० सो तुमने व तुम्हारे पुत्रोंने साधु देवगणों के साथ निष्प्रयोजन वैर किया उसकर्म का यह फल हुआ उसे भोगो जो जैसा करता है वह वैसा भोगताही है ११ हे महाभागे ! तुम्हारे सब पुत्र तप व शांति सेहीनथे उसीपापसे सब बड़ेभारी इन्द्रपदवी के अधिकार परसे गिरपड़े १२ ऐसा जानकर शान्तहोओ दुःखछोड़ो

सुखको प्राप्तहोओ कौन किसकेपुत्र व कौन किसके मित्र कौन किस के स्वजन बांधव १३ सब जीव अपने कर्म के अनुसारसे फलको भोगते हैं हे देवि ! तत्त्वज्ञानसे पण्डित महात्मा लोग पराये अर्थ चिन्ता व्यर्थ नहीं करते इस में सन्देह नहीं है यह शरीर केवल पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश पांचतत्त्वों से बना है पर महाजर्जर है इसमें कुछ शक्ति नहीं है १४ । १५ सुखकी अशासे आत्मा इसमें आजाता है वही इसका मित्र है जिसका आत्मा नाम है वह महापुण्य है व सब जगह जाता है सब को देखता है १६ सब प्रकारसे सिद्ध है व सर्वात्मा सत्त्वगुणी व सर्वसिद्धिदायक है इसप्रकार सर्व मय अकेला माया रहित आत्मा भ्रमण किया करता है १७ व निर्जन में भ्रमतेहुये उसआत्मा ने मूर्तिमान् चार ब्राह्मणोत्तम देखे जोकि बड़े तेजस्वी उत्तम मूर्तियोंको धारणकिये थे १८ उनमें पांचवां पवन सम्मत करने के लिये आमिला तब ज्ञानको सङ्गलेकर आत्मा वहां आया १९ उनसबों को एकत्रदेख महात्मा आत्मा ज्ञानसे बोला कि हे ज्ञान ! देखो ये पांचोपरस्पर सम्मत करते हैं २० जाकर तुम इनसे पूछो कि तुम लोग कौनहो जब तिसमहात्मा आत्माका ऐसा श्रेष्ठ वचन सुना २१ तो ज्ञान आत्मासे बोला कि इन पांचों से पूँछने से आपका क्या प्रयोजन है हे देव ! निश्चयकरके यह बात हमसे कहो तुम सदा शुद्धहो २२ आत्मा बोला कि इनके पूँछने से यह प्रयोजन है कि देखो ये पांच महाभाग रूपवान् और मनस्वी हैं परस्पर मिलापकरने के लिये आये हैं वैरकरने के लिये नहीं आये इससे हे ज्ञान ! तुम हमारे दूत बनकर उनके पासजाओ क्योंकि तुम दूतताके कर्म में बड़े कुशल हो २३ । २४ यह सुन ज्ञान बोला कि हे आत्माजी ! हम सत्य कहते हैं हमारा वाक्य सुनो हे तात ! इनकी सङ्गति तुम कभी न करना २५ हे शुद्धात्मन् ! इस से शुभकी इच्छा करनेवाले आपका इनपांचों से कुछ प्रयोजन नहीं है हे महामतिवाले ! यह केवल आपका मोहमात्र है जो इनके संग मैत्री किया चाहते हो २६ यह सुन आत्माबोला कि इनलोगों की संगति को ज्ञानआप क्यों रोकते हैं हे पण्डित ! इसका कारण हमसे तुम

यथातथ्य बताओ २७ तब ज्ञान बोला कि हे तात ! इनसबों के स-
 झमसे तुम बड़े दुःखी होगे क्योंकि ये पांचो दुःखकेमूल व शोक स-
 न्तापके करनेवाले हैं २८ तब आत्माने कहा कि अच्छा हे महाप्राज्ञ !
 हम तुम्हारा वचन करेंगे इनकासंग न करेंगे ऐसा कहकर आत्माध्या-
 नके संग रहगया २९ कश्यपजी यही कथा दितिसे कहनेलगे कि जब
 आत्मा व ध्यान दोनों एकत्र रहे उन पञ्चमहाभूत पृथिव्यादिकों के
 समीप न गये तो उन पांचोने अपनेआप आत्माका ध्यान किया व
 बुद्धिको अपने समीप बुलाकर उससे उन्होंने ने कहा कि तुम आत्मा
 के पास जाओ ३० हे कल्याणि ! हमलोगों के व आत्माके मध्यकी
 दूतता तुम करो हम पांचोतत्त्व हैं व महात्मा हैं तथा सब विश्वभरके
 सुन्दर आधार हैं ३१ व आपसे मैत्री किया चाहते हैं इसप्रकार महा
 मति से कहकर फिर कहा कि हे बुद्धे ! बस आपजाकर हमलोगोंका
 यह कार्य करें यहां से जायें ३२ तब महाबुद्धिने कहा कि बहुत अच्छा
 ऐसाही होगा तुमलोगोंका वचन हम करेंगी ऐसा उन सबों से कह
 कर वह आत्म के समीप जाकर बोली कि ३३ हे महाभाग ! मैं बुद्धि हूँ
 आप के निकट दूतता करनेकेलिये आई हूँ जिनकी ओर से आई हूँ
 उनके वचन सुनो ३४ अग्निआदि पंचमहाभूत तुम्हारे साथ नाश
 रहित मैत्री किया चाहते हैं इससे हे महाप्राज्ञ ! उनकेसंग आप मैत्री
 करें ध्यानको दूरसे त्यागकर दीजिये ३५ यह सुन ध्यानबोला कि हे
 आत्मन् ! तुम इनकासंग न करना इनके संसर्ग मात्र से बड़ा दुःख
 होगा ३६ क्योंकि हम ज्ञान के विना कौन कर्मोंको करेगा यह ऐसा
 है तुम इसका वचन न कगे हमारा वचन सुनो ३७ जैसेही आप
 हमको छोड़ उनके समीप जायेंगे वैसेही वे आपको गर्भवास करा-
 देंगे व सुभ्र ज्ञानसेहीन हो आप अज्ञानी हो जायेंगे यह निश्चय है
 ३८ ज्ञान आत्माजी से ऐसा कह चुपहोगये तब आत्माजी बहुत
 विचारपूर्वक बुद्धिसे यह वचन बोले कि ३९ हे बुद्धे ! ज्ञान और
 ध्यान महात्मा हमारे सुन्दर मंत्री हैं वहांका जाना हमको उचित
 नहीं है हम क्या करें ४० ऐसा सुन परमयशस्विनी बुद्धि उन पृथि-
 व्यादिकों के पास गई व ज्ञान आत्मा दोनोंका कहाहुआ सब उन-



लोगों से उसने कहा ४१ तब वे पांचोमिलकर आप आत्माके पास गये व बोले कि हमलोग सदा आपसे मैत्री किया चाहते हैं ४२ परन्तु जिसे कि आप शुद्ध हैं हे लोकेश ! इससे हमलोग तुम्हारे पास आये हैं अब आपही अपने विचारकरके हमलोगोंको उत्तर दें ४३ यह सुन आत्माजी बोले कि तुमलोग पांचही हमारे पास मैत्री करने के लिये आये हो अब अपने गुण प्रभावभी हमारे आगे तुम लोग कहो ४४ यह सुन उन पंचमहाभूतों में से भूमिबोली कि सर्व कार्यों का संस्थान चर्म मांस अस्थि इन सबोंका दृढ़ता नख लोम ४५ ये सब पदार्थ शरीरमें हमारे प्रभावसे होते हैं नासिका नाभि गुद इनकीद्वारा हमारे पदार्थोंका मल सदा निकला करता है ४६ फिर आकाशबोला कि हे परब्रह्मजी ! हम आकाश हैं व शरीरमें हमारा प्रभाव सुनो सब आपसे कहते हैं ४७ बाहर वा भीतर जितने शून्यस्थान हैं वहां हम बसते हैं व शरीरमें हमारे मन्त्री कान हैं जो कि सब कुछ सुननेके लिये वहां रहते हैं ४८ फिर वायु बोला कि हे आत्मन् ! हमारा गुण सुनो हम शरीरमें पांच स्थानों में प्राण अपान उदानादि के नामोंसे प्रसिद्ध होकर बसते हैं व शुभ अशुभ कर्मों को करते हैं ४९ फिर तेजबोला कि हम शरीरमें टिके हुये सदा नाना प्रकारके पदार्थ प्राणी को दिखाया करते हैं व भीतर बाहर देखी विनादेखी वस्तु हमारे प्रभावसे दिखाई देती है ५० फिर जल बोला कि धीर्य मज्जारास इन सब स्थानों में हम शरीरमें बसते हैं और रक्तको पहुँचाया करते हैं ५१ व शरीरमें हमारे मन्त्री नेत्र हैं वे हमारे द्रव्य लविके साधक हैं यह अपना व्यापार हमने आपके आगे कहा ५२ हे प्रिये ! अमृतरूप होकर जिलाते हैं यह हमारा व्यापार और कोई नहीं करता हम अपने आप करते हैं ५३ रसके स्वादु करनेवाली श्रेष्ठ जीभको मंत्री जानो फिर नासिकाबोली कि हम सुगन्धसे शरीरकी परम पुष्टि कराती हैं ५४ व दुर्गन्धिको छोड़ शरीर में सुगन्ध दिखाती रहती हैं व बुद्धिके साथ युक्त हो स्वामी के कार्य के लिये इस शरीर में निश्चल होकर सदा टिकी रहती हैं जो दो प्रकार का सुगन्ध है वह हमारा गुण जानो ५५ ५६ फिर दोनों कान बोले कि हम दोनों जने कार्य

अकार्यके लिये शुभ वा अशुभ लोगों के कहेहुये वचन सत्य असत्य प्रिय अप्रिय सना करते हैं ५७ शब्द हम लोगों का गुण है सो जब बुद्धि उस शब्द में हम लोगों को भरती है तो उसी शब्द से अपना व्यापार करते हैं ५८ फिर त्वचा बोली कि पांच प्रकार का पवन इस शरीर में सदा भरा रहता है ५९ उन पांचों की चेष्टा बाहर भीतर हम सदा जानती हैं शीत उष्ण घाम वर्षा वायु का लगना ६० अंगों में श्लेष्मा अदिका लग जाना हम सब स्पर्शमात्र से जान लेती हैं व स्पर्श ही हमारा गुण है यह सत्य कहती हैं ६१ इस प्रकार हमने अपना सब व्यापार आपसे कहा फिर नेत्र बोले कि हे सत्तम ! संसार में जितने उत्तम वानपृथक् हैं ६२ उनको जब बुद्धि प्रेरणा करती है तभी हम लोग देखते हैं यों नहीं हम लोग भी शरीर में बसते हैं व रूप हम दोनों का गुण है ६३ हे महामतिवाले ! इस प्रकार शरीर के मध्य में हम लोगों का व्यापार है फिर जिह्वा बोली कि हे तत्त ! बुद्धियुक्त होने से हम सब रसों का विचार करती हैं ६४ क्षार खट्टा रसहीन व स्वादुयुक्त इन सबको विचारती हैं बस इसी व्यापार से युक्त होकर नित्य सुख में बसी रहती हैं ६५ व सब इन्द्रियों की नायिका केवल एक बुद्धि ही है हे प्रिये ! इस प्रकार पांचो इन्द्रियों ने आकर आत्मा से कहा ६६ सब इन्द्रियां अपना २ कर्म वर २ सदा आकर आत्मा से वहती हैं तब बुद्धि भी वहां आकर उन महामतिवाले आत्म जी से बोली ६७ कि जब प्राणी बिना हमारे के हो जाना है तो तुरन्त नष्ट हो जाता है इससे हे महामते ! हममें धिक्कर आग वर्त्ताव करें ६८ इसके पीछे कर्म आकर आत्मा जी से यह वचन बोला कि हे महाप्राज्ञ ! मैं कर्म हूं तुम्हारे पास आया हूं ६९ इससे तुमको जहां हम प्रेरणा करें तुम वहीं जाओ इस प्रकार सबों की वार्त्ता सन आत्मा उन सबों से बोले ७० कि सर्वसाधारण तुम पांचों एकत्र होकर क्यों नहीं कार्य कर लेते हमारी मित्रता की इच्छा क्यों करते हो ७१ हमारे मिलने की इच्छा करने का कारण तुम लोग हमसे बतओ कि ठीक २ तुम लोगों ने क्या विचार है यह सुन वे पांचों एकत्र होकर बोले कि हम लोगों के संग के प्रसङ्ग से अपने २ बल के अनुसार प्रक्षेपण करते हैं तो एक पिण्ड हो जाता

है ७२ उस पिंड में जब आपभी आकर बसते हैं तब आपके प्रसा-
दसे हमलोग भी उसमें अच्छे प्रकार ठहरसके हैं ७३ इसीकारण
से नित्य आपकी मैत्रीचाहते हैं यह सुन आत्माजी फिर बोले कि हे
महाभाग्यवालो ! ऐसाही हो हम आपलोगों का प्रियकरेंगे ७४ व
प्रीति के कारण तुमलोगों की मैत्री करेंगे हे महाभागो ! यद्यपि हम
को महात्मा ज्ञान रोकताहै ७५ तथापि हम अपने ध्यानसे तिनका
संग करते हैं व उन पांचों से मोहित होके राग द्वेषादिकों से युक्त हो
७६ पञ्चतत्त्वों में मिलकर वह पुनः आत्मा शरीरत्वको प्राप्तहोगया व
जब विष्ठा मूत्रसे पूरित गर्भ में प्रविष्टहुआ ७७ तब उन्हीं सबोंके
संग उस दुर्गति में आनपड़ा व अङ्ग से व्याकुल होकर उन पांचों
में मिलगया व सबों से कहनेलगा ७८ कि हे २ सब पंचात्मको !
हमारे वचन को सुनो आपलोगोंके संगके प्रभाव से हम महादुःखसे
मोहितहोकर इस महाभयरूप चीकने व घोरस्थान में आकर पतित
हुये ७९ यह सुन एक में मिलेहुये वे पांच महाभूत बोले ॥
चौ० महाराज तबलगयहँवसिये । जबलग गर्भपूर्ति है लसिये ॥
पीछे तब निष्क्रमण यहाँते । होइहि संशय करत कहाँते ॥
आप हमनके अरु सब केरे । हैं स्वामी तनु बसत सुनेरे ॥
राज्यकरहु सुख भोगक आपू । हैहहु सत्य न मृषा अलापू ॥
तिनके सुनि इमिवचन अभाये । आत्मादुःखितभो अकुलाये ॥
चलनचह्योतहँसोंअतिव्याकुलाभयहुपलायनपरजिनिवातुल ८० ८३

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेदेवासुरेशरीर

कथनं नाम सप्तमोऽध्यायः ७ ॥

आठवां अध्याय ॥

दो० कह अठयें महँ आत्मके गर्भवासमुख दुःख ॥

जिन्हें विचारत अजहुँ नर पावत सिंगरे सुख १

कश्यपजी दितिसे बोले कि आत्माजी दुःखसे आक्रांत व सर्वा-
ङ्गोंमें पीड़ायुक्तहो वे धर्मात्मा गर्भवास में व्याकुलहो प्रतिदिन चि-
न्ता करनेलगे १ क्योंकि गर्भ में नीचेको मुखकिये मोहजाल से

बंधेहुये आधि व्याधियोंसे व्याकुल मूर्च्छितहो हाहाकार करते थे २ कि जब बड़े २ दुःखों से आत्माजी पीड़ितहुये तो ज्ञानसे बोले कि हे महाप्राज्ञ ! तुम्हारा वचन हमने उससमय नहीं किया ३ व ध्यान नेभी हमको रोंका था परन्तु हम आकर इस मोहके सङ्कटमें पतित-ही होगये अब हे महाप्राज्ञ ! इस महादारुण गर्भवाससे हमारीरक्षा कीजिये ४ तब ज्ञान बोला कि हे आत्माजी ! हमने आपको रोंका परन्तु आपने हमारा कहा न माना इन महाक्रूर पञ्चात्मक पृथि-व्यादिकोंने गर्भके सङ्कट में आपको गिरादिया ५ अब इससमय तुम ध्यान के समीप जाओ उससे तुम सुख पावोगे व गर्भवास से तुम्हारी मुक्ति होजायगी इसमें सन्देह नहीं है ६ जब आत्माने ज्ञानके ऐसे वचन सुने तो ज्ञानकी तत्त्वता जानकर फिर ध्यानको बुलाकर कहा कि तुम हमारा वचन सुनो ७ हे ध्यान ! अब हम तुम्हारे शरण हैं नित्य हमारी रक्षाकरो तब ध्यानने कहा कि हे महाप्राज्ञ ! बहुत अच्छा ऐसाही करेंगे हमारे समीप आओ ८ इस वचन के सुनतेही आत्मा ध्यानके पास गये व ध्यानके साथ मोह रहितहो गर्भमें बसनेलगे ९ जब आत्मा ध्यानको प्राप्तहुये तब उनको गर्भसे उत्पन्नभय भूलगया अब ध्यानके साथ होजानेसे आत्मा मोहरहित होगये १० व नित्य अपने सुखकी चिन्तना करनेलगे कि बस जैसे यहां से बाहरहोंगे हम यह अपना शरीर छोड़देंगे ११ इसप्रकार गर्भवासमें प्राप्त वह प्रभु नित्य चिन्तना किया करताहै कि कब यहांसे निकलें व कब इस शरीर को छोड़ें ऐसा विचारते २ जब पूजापति का नियमित प्रसूति होनेका काल प्राप्तहोताहै १२ तब बलवान वायु व प्राणगर्भको चलायमान करता है उससमय योनि चौबीस अंगुलकी फैली होजाती है १३ व गर्भ भी चौबीसही अंगुल का उससमय होताहै इससे बाहर आने में दोनोंको पीड़ा होती है इससे सम्पीड्यमान होने के कारण गर्भ मूर्च्छितहो १४ ज्ञान व ध्यानके सङ्ग पृथ्वीपर गिरपड़ताहै पूजापत्य दिव्यवायु से अलग होजाताहै १५ भूमिके स्पर्शही मात्र से ज्ञान और ध्यान भूलजाते हैं संसार बन्ध से संदिग्ध

आत्मा प्रियता से स्थित होता है १६ फिर नानाप्रकारके गुण व दोषोंसे युक्त हो व महामोहसे भी युक्त होके प्रतिदिन माताके स्तन पानादिककी इच्छा करने लगता है १७ इस प्रकार आत्माको पृथिव्यादि पंचमहाभूतों के संग पुष्ट होते हुये देखकर पापकारी सब इन्द्रियां उसको विषयोंका भोगकराने लगती हैं १८ बान्धवों के मोह से व भार्यादिकों के भी अतिमोहसे हे देवि ! प्रतिदिन वह आत्मा आकुल व्याकुल होता है १९ इस प्रकार महामोह से जलता हुआ आत्मा मोहजालमें ऐसा बँधजाता है जैसे कहारके जालसे मछली बँधजाती है २० बस आत्मा ऐसा बँधजाता है कि किसी प्रकार अपने को इस जाल से छुड़ायेही नहीं सक्ता क्योंकि मोहके बड़े दृढ़ जालों के बन्धनों से आत्मा व पृथिव्यादि पांच महाभूत सब बँध जाते हैं इस प्रकार सर्वत्र व्यापक इस प्रपञ्च से आत्मा व्यापित होजाता है व राग द्वेषादिकों से हतहोकर ज्ञान विज्ञानसे अष्ट होजाता है २१ । २२ फिर काम क्रोधसे पीड़ितहो प्रकृति व कर्म से ऐसा बँधजाता है कि महामूढ़ होजाता है २३ सूतजी बोले कि जब काम क्रोध के वशीभूतहो यह आत्मा ऐसा मूढ़ होजाता है तो दुष्टात्मा लोभ रागादि सबों से व्यापित होजाता है २४ यह हमारी भार्या यह पुत्र यह मित्र व यह गृह ऐसा कहता हुआ संसारके जालमें महा मोहसे बन्धित होजाता है २५ व पुत्रशोक आदिक नानाप्रकार के दुःखोंसे तिससमयमें व्याकुलहोजाता है बुढ़ापा व आधि व्याधियोंसे होते २ ग्रसित होजाता है २६ इस प्रकार दारुण दुःख मोहोंसे सन्तप्त आत्मा अभिमान व मानभङ्गादि नानाप्रकारके दुःखों से भलीभांति खण्डितहोता है २७ हे देवि ! वृद्धताके कारण चलने फिरनेकी शक्ति न रहनेसे अत्यन्त पीड़ित होता है व वृद्धता में और भी सब पदार्थों की चिन्तासे हाहाकार किया करता है २८ रात्रिमें स्वप्नोंको देखता है व दिनमें बनाय चैतन्यतासे रहितहोजाता है हे देवि ! इसप्रकार अंगोंकी विकलतासे युक्तरहता है २९ फिर कभी संसारमें घूमतेहुये एकनग्न निःशंक बन्धुहीन अत्यन्त शांत और प्रसन्न विरागीको देखकर वह आत्मा बोलता है कि आप कौन हैं जो नग्नरूप से घूमते और मित्रों

से लज्जित नहीं होते ३० । ३१ जहाँ कि सब लोग वृद्ध स्त्रियां माता व अन्य स्त्रियां विद्यमान हैं इन सबोंके मध्य में आप नग्न नहीं डरते हैं ३२ यह सुन वह वीतराग बोला कि यहाँ कौन नङ्गा दिखाई देता है हम तो कभी नङ्गे नहीं रहते हमको तो उसीके नग्न होनेमें सन्देह है जो वस्त्रादि धारण किये रहता है ३३ इससे हम तो कभी नहीं नग्न रहते आपही हमको नग्न दिखाई देते हैं जो कि इन्द्रियों के अर्थों के वशीभूत हैं व मर्यादासे रहित होगये हैं ३४ यह सुन आत्मा बोला कि हे सुव्रत ! हे महाप्राज्ञ ! पुरुषकी कौनसी मर्यादा है हम से तुम कहो सो यों नहीं यदि निश्चित होकर जानते हो तो विस्तार पूर्वक कहो ३५ तब महाप्राज्ञ महामति वीतरागजी बोले कि मर्यादा वह है कि चित्त जिसे स्वस्थ हो भजे व सुख दुःख से सदा अलग रहे ३६ व सब भावों से चित्त आर्द्र बनार है व सब भावोंको त्यागे किसी में लीन न हो अब लज्जा बताते हैं जिसमें मन अत्यन्त न प्रवेश करे ३७ व वह गुप्तस्थानमें भी कुकर्म करनेपर उसमें पैठ जाती है व चित्तको पश्चात्ताप करनेसे लीन कर लेती है वही लज्जा कहाती है ३८ सो लज्जा किसकी करे संसारमें दूसरा तो कोई है नहीं एक वही दिव्यपुरुष रहता है वह किसीको भारता है नहीं है ३९ अब लोग कहते हैं जिनको तुमनेही कहा था जैसे कुम्हार चाकपर मिट्टीका पिण्ड स्थापित करता है ४० व फिर दंड से उसको घुमाकर व सूत्रसे काटकर नाना प्रकारके भेद करता है जिनसे सहस्रों प्रकार के पात्र अपनी मति व इच्छा से बनाता है ४१ ऐसेही विधाता इस संसार में नाना प्रकार के रूप बनाता है व फिर वे कालपाकर जिस किसी हेतुसे नष्ट होजाते हैं ४२ जो सदा बने रहते हैं वे सनातन लोक कहाते हैं व लज्जा उनकी करनी चाहिये जो वहाँ विद्यमान न हों ४३ आकाश वायु तेज पृथ्वी व जल वस इन्हीं पांचों को लोक कहते हैं सो ये सर्वत्र स्थित रहते हैं ४४ प्राणिमात्र के प्रत्येक अङ्गमें ये पांचों स्थित रहते हैं तो ये सब एकही हैं फिर लज्जा किसकी करे ४५ अब स्त्रियोंका रूप बताते हैं हे तात ! इस समय चित्त लगाकर सुनिये जैसे जलभरे हुये सहस्रों घड़ों में एकही च-

न्द्रमा पृथक् दिखाई देता है वैसेही आप अकेले सब स्त्रियों में व
पुरुषों में विराजमान हैं व मोहसे बँधे हुये अनेक जन्तुओं में वर्त-
मान रहते हैं ४६ । ४७ ऐसेही सब स्थावरों में व जङ्गलों में भी सदा
आपही रहते हैं व पापरूप योनिके होनेसे जो एक मायामात्र है
४८ व दोकुच और नितम्बों के होनेसे जो कि अवस्था के कारण बड़े
ऊँचे होआते हैं वास्तवसे त्वचा व मांसकी अधिक वृद्धि होजाने से वे
बनजाते हैं इसमें सन्देह नहीं है ४९ सो उनको देख विधाताने सब
लोगोंके गिराने के लिये एकमोहरूप दिखाया है बस जिसको तुम
ने कहा था वह नारी नहीं है ५० केवल लीलामात्रके लिये विधाताने
बनादिया है नहीं तो जैसे स्त्री वैसे पुरुष जीव सबमें विद्यमान है ५१
जो कुचों और योनिसे रहितहों वे सदैव जीवन्मुक्त हैं व नर पुरुष
कहाता है नारी प्रकृति कहाती है ५२ बस उसी के सङ्ग क्रीड़ा किया
करता है मुक्त कभी नहीं होता सो आपही प्रकृतिसंयुक्त होकर सब पुरुषों
में दिखाई देते हैं ५३ फिर कहो कौन किसकी लज्जा करे ऐसा जानकर
सुखको प्राप्त होरहिये अब हम वृद्धा स्त्री मदावृद्धा बताते हैं ५४ वे नहीं
हैं जिनकी त्वचा बनायजर्जर होजाती है व केश बनाय श्वेत होजा-
ते हैं व सब अंगोंपरका चमड़ा सिकुर जाता है ५५ व बलसे हीन दी-
न और बलिसे व्याप्त होजाती हैं ऐसी को वृद्ध नारी कहने लगते हैं
पर वह वास्तवमें वृद्धानहीं कहीजाती अब हम वृद्धास्त्री के लक्षण
कहते हैं सुनो जो ज्ञान से नित्य बढ़तीहुई जीवके पास जाकर उसी
में मिलकर स्थित होती है ५६ । ५७ व सुमति उसका नाम है बस वृद्धा
स्त्री उसका नाम है वह नारी पुरुषलोगोंमें सदा टिकीरहती है ५८ बस
उसीकी लज्जा करनी चाहिये और भी तुमसे कहते हैं जोकि तुमने
कहाथा कि माता यहां विद्यमान है सो हम माता बताते हैं ५९ जो
पाणियों के सब अंगों में सदैव चेतनायुक्त है व परमउत्कृष्ट ज्ञानको
देवे उसको प्रज्ञा कहते हैं ६० बस प्राणियों के पालन करनेके लिये
यही प्रज्ञामाता है व सब लोगोंके पोषण करने तथा हितकरने के
लिये स्थित रहती है ६१ व जो सुमति नाम कहा है वहभी माता है व
जो संसारमें आनेके लिये द्वाररूप नित्य बहुतसी माता दिखाई देती हैं

ये सब तो बड़े दुःखों के दिखानेवाली हैं वस माताका भी रूप तुमसे हमने कहा अब और क्या कहें ६२ । ६३ यह सुन फिर आत्मा बोला कि आप कौन हैं जो आकर हमारे सन्तापके नाश कहिये अब अपना स्वरूप विस्तारसे हमसे अपने आप कहो ६४ यह सुन वीतराग बोला कि जिससे निराश सब कामना होकर निवृत्त हो जावें और दुष्टभाव से ये कर्म जिसको न देखें और प्रकार नहीं ६५ आशा जिसके पास कभी न आवे क्रोध लोभ और मोह जिसके भयसे नाश हो जावें ६६ ऐसा वीतराग मैं हूँ तुम्हारा कल्याण हो विवेक हमारा भाई है तब आत्मा बोला कि यह विवेकनाम तुम्हारा भाई कैसा है ६७ तिस अपने भाई के लक्षण आकर हैं तब वीतराग बोला तिसका लक्षण व रूप हम अपने आप तुम्हारे आगे न कहेंगे ६८ हे महाभाग ! हम अपने भाई को बुलाते हैं यह कह बोलें कि हे हमारे भाई विवेक ! हमारे वचन सुनो ६९ हे महाभाग ! हे महामते ! हमारे स्नेह से यहां आओ कश्यपजी दितिसे बोले कि वीतरागका वचन सुन क्षमा व शान्तिनाम अपनी स्त्रियोंसमेत विवेक वहां आया ७० जो कि सर्वदर्शी सर्वगामी सर्वत्रव्यापी व सर्वतत्त्व परायण है व जो सब सन्देहोंका पूरा वैरी व ज्ञानके ऊपर वत्सल है ७१ जिस महात्माकी धारणा व धी दो कन्या हैं जिसके ज्येष्ठपुत्रका योगनाम है व मोक्ष जिसका महागुरु है ७२ व आप निर्मल अहंकाररहित निराश परिग्रहहीन सब समय में प्रसन्नात्मा सुख दुःखादि द्वन्द्वों से रहित महामति ७३ विवेक वहां इन गुणों से विभूषित आगया जिसके मंत्री महात्मा महामतिवाले धर्म व सत्य हैं ७४ व क्षमा शान्तिसे भी समेत ही आया व वीतरागसे बोला कि तुम्हारे बुलाये हुये हम आये ७५ इससे हे भाई ! तुम हमारे आगे सब कारण कहो जिसलिये हमको तुमने यहां बुलाया है ७६ तब वीतराग बोला कि हे भाई ! महापाशों से बँधे हुये ये आगे आत्मा खड़े हैं ये मोह के बाण संसारके बन्धनों से बँध गये हैं ७७ हम सब संसारके व्यापक स्वामी ये आत्मा हैं पंचमहाभूतों के वश में पड़ गये हैं व ज्ञान ध्यान को छोड़ दिया है ७८ आप तो तत्त्वोंके जानने में बड़े पण्डित हैं इससे इनसे पूछें वीतरागके वचन सुन विवेक

यह वचन बोला कि ७९ हे देव आत्माजी ! हे विश्वके उत्पन्न कर-
नेवाले ! आप सुखसे तो हैं संसार में आकर आपने क्या २ सुख व
भोग किया ८० यह सुन आत्माजी बोले कि हे महाप्राज्ञ ! ज्ञानसे
हीन होकर हमने इस गर्भवास में सदैव दारुण असह्य महादुःख भोग
किये ८१ अहो ज्ञान से भ्रष्ट होकर हम इस संसार में अनेक प्रकारसे
आये व बाल्यावस्था में हमने नाना प्रकारके करने न करने के योग्य
कर्म किये ८२ फिर युवावस्था में क्रीड़ा की अनेक स्त्रियों के संग
भोग किया फिर वृद्धताको प्राप्त होकर पुत्रादिकों के बहुत शोकों
से सन्तप्त हुये ८३ व भार्यादिकों के वियोगों से रात्रि दिन बराबर
जलते रहें ऐसे अन्य सम्बन्धियों के अनेक दुःखों से प्रतिदिन सन्तप्त
रहे ८४ हे महाप्राज्ञ ! दिनरात्रि कहीं न सुख पाया ऐसे दुःखों से
पीड़ित हैं हे गहामतिवाले ! अब हम क्या करें ८५ वह उपाय हम
से कहो जिससे सुख पावें इस संसारजाल समूहसे हमको छुड़ाओ
हम बड़े भारी बंधनों में बँध गये हैं ८६ तब विवेक बोला कि हे ज-
गन्नाथ ! आप तो शुद्ध हैं सुख दुःखादि द्वन्द्वोंसे रहित व अपाप हैं
अब सुख देनेवाले इन महात्मा वीतरागको प्राप्त हों ८७ जिन्हें आ-
पने नग्न आचारसे हीन और निःसंशय देखा था ये सुखके दिखला-
नेवाले और सब संताप नाश करनेहार हैं ८८ विवेक के ऐसे वचन
सुन शुद्धात्मा आत्माजी फिर वीतरागके समीप गये व उनसे दीन हो-
कर बोले कि हमारा वचन सुनो ८९ जिससे हम सुख पावें वह मार्ग
हमको दिखाओ यह सुन वीतरागने कहा हे महाप्राज्ञ ! अच्छा आप
का वचन करेंगे ९० अब फिर आप विवेकके पास जायें क्योंकि आप
ने सुखकी वार्ता की है सुखमार्गके बतानेवाले तुमको यही होंगे ९१
पुण्य वीतराग के भेजे हुये प्रभु आत्मा वहाँ गये व उन महात्मा शुद्धस-
त्तम विवेकसे बोले ९२ कि हमको सुख दिखाओ वीतराग ने तुम्हारे
पास भेजा है व आपके शरणमें आये हैं इससे इस संसार दारुण से
हमारी रक्षा करो ९३ तब विवेक बोला कि हे महाप्राज्ञ ! ज्ञान के पास
जाओ वह आपसे सब कहेगा उसके कहने से आत्माजी वहाँ गये
जहाँ ज्ञान स्थित था ९४ जाकर कहा भो महातेजवाले व सब भावों के

दिखानेवाले ज्ञान ! हम तुम्हारे शरणमें आये हैं हमको सुखमार्ग दिखाओ ९५ तब ज्ञानबोला कि हे लोकेश ! मैं तो आपका सेवक हूँ हे सुव्रत ! आप मुझको नहीं जानते मैंने व ध्यानने बार २ आपको रोंका था ९६ हाय इन पंचमहामूर्तों के संगसे आप महाआपदाका प्राप्त हुये हे महाप्राज्ञ ! अब आप ध्यान के पास जायँ वह आपको सुखदेगा ९७ ज्ञानके भेजने से आत्मा जाकर ध्यान के पास संस्थित हुये व बोले कि हे ध्यान ! तुम हमको अत्यन्त सिद्ध सुखका मार्ग दिखाओ ९८ हम आपके शरणहैं हमारी आप रक्षाकरें इसप्रकार आत्माका कहाहुआ वचन जब ध्यानने सुना ९९ तब वह हर्षित होकर उन आत्माजी से बोला कि हे तात ! सब कर्मों में आप हमें न छोड़ें जो कर्म करने लगे ध्यान करके विचारलें १०० सो तुम वीतराग व विवेक तीनों हम ध्यानको कभी न छोड़ो व ध्यानयुक्त होकर तुम आत्माको देखो १०१ व आत्मामें स्थिरहोके आतंकरहित व विकल्पना से रहित होजाओगे ॥ चौपाई ॥

जिमिनिवातधिरदीपकजोती । धिरहै कज्जलउगिलतहोती ॥
 तिमिसब दोषधोय महराजा । लहिहहु पदनिर्व्वणसुसाजा ॥
 निराहार एकान्त विराजी । अमिताशनकरिगुणगतभ्राजी ॥
 शब्दहीन निर्द्वन्द्वाचलहु । धिरआसनकरिसब सुखलहहु ॥
 आत्माकहँआत्मासों ध्यावहु । सुस्थिरमतिकरि अतिहर्षावहु ॥
 पैहहु परमधाम धिर होई । विष्णु परमपद जो नहिं गोई १०२।१०५

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेऽध्यात्मवर्णनेऽष्टमोऽध्यायः ८

नवां अध्याय ॥

दो० नवयें महँ समझाय मुनि दितिहि प्रबोध्योनीक ॥

जासों सुस्थिर है बहुरि नहिं प्रलपी है ठीक १

कश्यपजी दितिसे बोले कि जब ध्यानादिकोंने आत्माको इस प्रकारसे समझाया तो उन बुद्धिमान् ने उन पञ्चमहामूर्तों का सङ्ग छोड़ना चाहा १ वे सब प्रार्थनाही करतेरहे परन्तु उनके हेतुओंको देखकर हँसकर फिर उन्होंने शरीरकी ओर देखाही नहीं २ क्योंकि

जब एकही साथ बड़ेहुये देह व प्राणहीका सदाके लिये कोई सम्बन्ध नहीं है तो धन पुत्र स्त्री के साथ किस हेतुसे सम्बन्ध होसकताहै ३ ऐसा जानकर हे सुप्रिये ! इस व्याकुलताको छोड़ो शान्तचित्त होओ यह आत्मा परब्रह्महै व यही सनातनहै ४ यही आत्मा अपने रूप से दैत्यों और देवों के देहों में टिकाहै व यही ब्रह्मा है यही रुद्रहै यही सनातन श्रीविष्णु है ५ यही आत्मा सब प्राणियों को उत्पन्न करताहै व यही सबोंको पालताहै व यही धर्मरूपी होकर सब का संहारकरताहै क्योंकि धर्मरूपी श्रीजनार्दन भगवान् हैं ६ उन्हीं जनार्दनजी ने देवताओं को उत्पन्नकिया है व उन्हीं ने दानवोंको भी हे प्रिये ! परन्तु देवलोग धर्मयुक्त हैं व तुम्हारे पुत्र दानवलोग धर्महीन हैं ७ व धर्म श्रीविष्णुका अंगहै इसी से सब देवलोग धर्मका पालन करते हैं हे देवि ! इससे सदा धर्मही की चिन्तना व धर्मही का पालन जोकरै ८ तिसके ऊपर धर्मात्मा विष्णुभगवान् सदैव प्रसन्न रहते हैं धर्म सत्य तपसे देवता वर्तमान रहते हैं ९ वस जिससे वे लोग सदा धर्मकापालन करते हैं इससे विष्णु उनके ऊपर प्रसन्न रहते हैं विष्णुका शरीर धर्म है व सत्य उनका हृदयहै १० इससे जो कोई इनदोनों का पालन करता है उसके ऊपर श्रीविष्णु प्रसन्न होते हैं इसीप्रकार जो धर्म व सत्य को दूषित करता है वह पाप को पालन करता है ११ उसके ऊपर विष्णु कोप करतेहैं व उसकानाश करदेतेहैं क्योंकि वे अतिवीर्यवान् हैं सो तप व सत्य में टिककर वैष्णवों ने धर्म का पालन किया है १२ इससे उनके ऊपर धर्मात्मा विष्णुजी भी प्रसन्नहैं इसलिये उनकी रक्षा करतेहैं व तुम्हारे पुत्र दैत्य व दनुके पुत्र दानव सिंहिका के सुत सैहिकेय ये सब १३ सदा अधर्म व पापही करते रहते हैं इससे उनका चित्त पापमय होगया था इसीसे वासुदेव चक्रपाणिजीने समर में उनको मारडाला १४ व जो आत्मा है जिसे हमने तुम्हारे आगे प्रथम कहा है वे विष्णुही हैं क्योंकि धर्मात्मा सर्वपालक हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है १५ दैत्यों के शरीर में स्थित उन आत्मा श्रीविष्णुने देख लिया कि ये सब सदा अधर्मही करतेहैं व दानव भी अधर्मही

करते हैं यह देख महामति श्री विष्णु कुद्वहोगये १६ बस भीतर तो
 थेही बाहर भी होकर व बाहर भीतर दोनों ओर से जोर करके तु-
 म्हारे पुत्रों को उन्होंने ने मार डाला हे देवि ! जिनसे उत्पन्न हुये थे
 उन्हीं से नाशभी होगये १७ इससे अब तुम उन अपने पुत्रों का
 शोक न करो हमारा वचन सुनो जो पाप करताहै वही मरताहै १८
 इससे मोहको छोड़ सदा धर्मका आश्रयणकरो यह सुन दितिने कहा
 हे महाभाग ! बहुत अच्छा हम तुम्हाराही वचन करेंगी १९ ॥
 चौ० कश्यपसोईभिकहिदितिरानी । दुःखितहै अतिशय अकुलानी ॥
 समभावा मुनि बहुत प्रकारा । दुखतजि थिरहै रहीं अपारा २०

इति श्रीपाद्मयेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेदितिसंवोधनं नाम
 नवमोऽध्यायः ६ ॥

दशावां अध्याय ॥

दो० दशयें महँ कश्यप बहुरि दैत्य सिखावन दीन ॥

जासों सबगे तपकरन तजि अधर्म मन खीन १

इतनी कथा सुन शौनकादि ऋषिलोग सूतजी से बोले कि हे
 महामतिवाले ! जब युद्ध से हारे व मारे से बचे उन हिरण्यकशिपु
 आदि दैत्य दानवों ने क्या उपाय किया १ उन लोगों का उत्तम
 वृत्तान्त हमसे विस्तार से कहिये हमलोग तुमसे इससमय सुनाचा-
 हते हैं २ सूतजी बोले कि जब संग्राम से सब भागे तो बलहीन
 तो होही गये थे इस से अहङ्कारहीनहो अतिदुःखित सब दैत्य
 दानव अपने पिता कश्यपमुनिके पासगये ३ व भक्तिसे कश्यपजी के
 प्रणामकर सब बोले कि हे द्विजसत्तम ! आपही के वीर्य से देवताओं
 की व हमलोग दानवों की उत्पत्ति है उनमें हमसब दानव बलवीर्यप-
 राक्रम से युक्त हुये ४ । ५ व उपाय नानाप्रकार के जानते हैं सुन्दर
 धीरहैं उद्यमसे युक्तहैं हे तात ! हमलोग बहुतहैं और देवता थोड़े
 हैं ६ इससे देवता कैसे जीतजातेहैं और बल और तेज से युक्त हम
 लोग संग्रामसे भग्न होजाते हैं इसका क्या कारणहै ७ हे महामते !
 एक २ दैत्यके किरोड़ २ हाथियों का बल है ऐसा देवताओं में बल

नहीं है ८ परन्तु हे तात ! संग्राम में बहुधा जीत देवताओंकीही होतीहुई दिखाई देती है इस विषय में हमलोगोंको बड़ा सन्देह है आप निवारण करें ९ कश्यपजी बोले कि हे पुत्रो ! जयका कारण सबजने सुनो जिससे समर में बहुधा देवतालोगही विजय पाते हैं १० पिता बीजका बोनेवाला होताहै व माता खेतरूप होतीहै इससे धारण पालन पोषण करनेमें सदा लगी रहती है ११ परन्तु और कुछ पुत्र के साथ न माताही करसक्ती है न पिताही कुछ करसक्ता है इस विषय में कर्मकी प्रधानता है हमारी इसप्रकार आश्रित बुद्धिहै १२ पाप व पुण्यसे उत्पन्न होनेके कारण कर्मका सम्बन्ध दोप्रकार काहै व जो कर्म सत्यके आश्रयणसे कियाजाताहै वह उत्तम धर्म होताहै १३ व जो तप व ध्यानके साथ कियाजाताहै वह करनेवाले को तारता है व पापकर्म सदा पतितही होनेके लिये होताहै इस में कुछभी सन्देह नहींहै १४ हे पुत्रो ! बाल्यावस्था से अपने परिवार व जातिके लोगोंके संग जो पुरुष पापही करता है उस पुण्य हीन पुरुष का सब बल विफल होजाता है कभी समयपर काम नहीं आता १५ जैसे पर्वतों के दुर्गम स्थानोंपर बड़ेपुष्ट व ऊँचेवृक्ष होते हैं पर पवनके वेगसे जड़सहित उखड़ पड़तेहैं १६ ऐसेही सत्यकर्म से हीन पुरुष यमराज के स्थानको जातेहैं इससे हे पुत्रो ! साधारण रीतिसे सब पुरुषोंका बलधर्मही है १७ जिससे प्राणी यहांभी तरताहै व परलोक में भी जाकर उसीके बलसे तरता है सो तुमलोगों ने उस सत्यधर्म को छोड़दिया १८ व हे पुत्रो ! सत्यरहित अधर्मही करने लगे इसीसे सत्यधर्म और तपसे अष्टहोगये व दुःखसागर में आपड़े १९ व देवतालोग सत्यसे सम्पन्न कल्याण संयुक्त व तप शांति दमसे युक्त सब पुण्य कर्म करने में तत्पर व पापरहितहैं २० बस जहां सत्य धर्म तप पुण्यहै व जहां श्रीविष्णु हैं वहां विजय सदा दिखाई देताहै २१ उन देवताओं के सहायक सदा भगवान् वासुदेव रहते हैं इसीसे व सत्यधर्मसे युक्त होनेके कारण सदा देवगणही जीततेहैं २२ व हे पुत्रो ! तुम लोगोंको सहायक बल व पौरुष से क्या होसक्ता है क्योंकि तप व सत्यसे तो रहितहो २३ धर्मवादी

लोगोंने यही निर्णय कररक्खा है कि जिसके सहायक विष्णुहैं व
 तपकाभी बलहै वस उसीकी जीति सदा होतीहै २४ तुमलोग धर्म
 से विहीन व तपस्या व सत्यसे रहितहो भला बल से कहीं कोई इन्द्र-
 पद पाताहै २५ विना तप किये विना धर्म यशकिये हे पुत्रो ! बल
 अहङ्कारादि गुणोंसे कहीं इन्द्रपद मिलता है २६ इन्द्रपद पाकर भी
 तिससे भ्रष्टहोजाते हैं इससे पुत्रो तुमलोग विरोधरहित ज्ञान और
 ध्यानसे युक्तहो जाकर तपकरो व केशव भगवान्के संग वैरभी कभी
 न करो २७। २८ जब ऐसे पुण्यात्मा तुमलोग होंगे तो धन्य होजा-
 वोगे और परमसिद्धि को पाओगे इसमें कुछ भी संशय नहीं है २९
 जब महात्मा कश्यपजीने दैत्योंसे ऐसा कहा तो उनका वाक्य सुन-
 कर महापराक्रमी दानवलोग ३० शीघ्रतायुक्त उठकर बड़ीभक्तिसे
 कश्यपजी के प्रणाम करके सबोंने आपस में सम्मत किया ३१ फिर
 राजा हिरण्यकशिपु उन सब दानवोंसे बोला कि वस अब हम सब
 कार्य्योंका साधक तपही करेंगे ३२ फिर हिरण्याक्ष बोला कि हम
 भी अतिदारुण तप करेंगे व तपोबल से तीनोंलोक लीलेंगे इसमें
 कुछभी सन्देह नहीं है ३३ संग्राममें विष्णु व उस पापी इन्द्रको जीत-
 कर व सब देवताओंको मारकर इन्द्रपदलेंगे ३४ तब बलिनामदैत्य
 बोले कि हे दानवेश्वरो ! तुम लोगोंको ऐसा करना योग्य नहीं है
 क्योंकि विष्णुके साथ जो वैरहै वह नाशका कारणही है ३५ दान
 धर्म पुण्य तप व यज्ञोंसे उन हर्षिकेशजीकी आराधनाकरके मनुष्य
 सुखको प्राप्त होतेहैं ३६ तब हिरण्यकशिपु बोला कि हम ऐसा
 कभी न करेंगे कि हरिकी आराधनाकरें क्योंकि अपना भाव छोड़-
 कर इसमें शत्रुकी सेवा करनी पड़ेगी ३७ शत्रुकी सेवा मरणसे भी
 अधिक होतीहै यह पण्डितों ने कहाहै विष्णुकी सेवा न हमी करेंगे
 न औरही कोई दानव करेंगे ३८ तब अपने महात्मा पितामह से
 बलि फिर बोले कि धर्मशास्त्रों में तत्त्वज्ञानी मुनियों ने जो देखा
 है ३९ उसमें यह लिखाहै कि शत्रुको जैसे बने साधलेना चाहिये
 यही राजनीतियुक्त मतहै अपने को हीन जान व शत्रुको बलीजा-
 नकर ४० उसके पास जाकर अपने जीतने के समयतक वहींरहना

चाहिये जैसे जब दीपक जलता है तो सब अन्धकार सदैव जाकर अपने शत्रुदीपक की छाया में होरहता है ४१ व दीपक के तेल का शत्रु बत्ती है पर जब बत्ती जलाई जाती है तो तेल अपनी वैरिणी बत्ती में होकर उसे अतिवेगसे प्रकाशित करके अन्त में उसे जलाय ही देता है ४२ ऐसे ही शत्रुको स्नेह करके प्रथम प्रसन्न करना चाहिये फिर अपना कार्य होजाने पर अलग होजाना चाहिये इस से देवताओं के संग स्नेह करने के लिये चलना चाहिये व वहां पहुँचकर धर्मभाव दिखाना चाहिये ४३ व यही मन्त्र कश्यपमुनिने भी पहले कहा है कि देवदेव विष्णुसे वैरभाव छोड़कर तपकरो बस जैसा उन्होंने सम्मत दिया है हे राजेन्द्र ! उसी के अनुसार अपना कार्य करो बलिके ऐसे वचन सुन प्रतापी दैत्यराज बोला कि हे पौत्र ! हम ऐसा अपना मानभङ्ग कभी न करेंगे ४५ तब और सब हिरण्यकशिपु के बान्धव तिस नीति में पण्डित से बोले कि बलिने जो पुण्य कही है वह देवताओं को प्रिय करने वाली है ४६ इन्द्र के मान करने हारी और दानवोंको भयङ्कर है हां उत्तमतप हम सब भी करेंगे ४७ बस तपसे देवताओंको जीतकर आप ऐन्द्रपद ले लेंगे ऐसा सम्मत कर व बलिका निरादर करके सबके सब ४८ ॥

चौ० करिहरिसङ्ग वैर मनमाहीं । चले सकल जिय संशय नहीं ॥
गिरिकानन दुर्गमथल देखी । करन लगे दारुणतप पेखी ४९
कामक्रोध मद लोभ विहाई । निश्चल है दानव समुदाई ॥
है एकमनतप विविध प्रकारा । कीनभलीविधिसहित विचारा ५०

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे तपश्चर्यावर्णननाम

दशमोऽध्यायः १० ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

दो० ग्यारहवें मैं दम्पती सोमशर्म सुमनाउ ॥

न्यासाहारी सुतचरित दयिता पतिहिसुनाउ १

ऋषिलोग इतनी कथा सुनकर फिर सूतजी से बोले कि हे सूत !
दैत्यों व दानवों के संग्राम की कथा हम लोगों से सर्वज्ञ आपने कही

अब इस समय महात्मा सुव्रतका चरित सुनने की इच्छा है १ वह महाबुद्धिमान् किसके पुत्रहुये व किसके गोत्रमें उत्पन्नहुये तिस विप्रने क्या तपस्या की और कैसे हरिजीको आराधन किया २ तब सूतजी बोले कि हे विप्रो ! बुद्धिके प्रभावसे पहले कथा जैसे सुनी है तैसे सुव्रत महात्मा को चरित कहेंगे ३ यह चरित पावन दिव्य कल्याणदायक व वैष्णव है सो तुम्हारे आगे विष्णुभगवान् के प्रसादसे सब कहते हैं ४ हे महाभाग्यवालो ! पूर्व के कल्प में पापनाशन सुन्दर क्षेत्र नर्मदानदी के पुण्य तटपर वामन संज्ञक तीर्थ में ५ कौशिक के कुलमें एक द्विजों में उत्तम सोमशर्मा नाम ब्राह्मण हुआ वह पुत्र से हीनहोने से बहुत दुःखोंसे युक्त रहता था ६ व दारिद्र्यके दुःखसे सदैव पीड़ित रहता इससे पुत्र व धनकेपाने का उपाय दिनरात्रि सोचा करता था ७ एक समय सुमनानाम उसकी पतिव्रता स्त्रीने अपने पतिको चिन्तायुक्त नीचेको मुखकिये लक्षित किया ८ व अपने कान्त की ओर देखकर वह तपस्विनी उससे बोली कि असंख्य दुःखों के जालोंसे तुम्हाराचित्त व्याकुल दिखाई देता है ९ सो हे महामति वाले ! इस मोहसे तुम बनाय मूढ़से होगये हो अब चिन्ता छोड़ दो हमसे अपना दुःख कहो व स्वस्थ होकर सुखीहोओ १० क्योंकि शरीर सुखाने केलिये चिन्ताके समान और कोई दुःख नहीं है जो चिन्ता छोड़कर वर्तमान होता है वह पुरुष सुखपाय हर्षित होता है ११ हे विप्र ! चिन्ता का कारण हमारे आगे कहो अपनी प्रिया का वचन सुन सोमशर्माजी उससे बोले कि १२ हे भद्रे ! जो तुमने चिन्तन किया सो हम अपनी चिन्ता व दुःखका सब कारण कहेंगे उसे सुन विचारपूर्वक धारण करो १३ हे सुव्रते ! नहीं जानते कि किसपापसे हम धनसे व पुत्रसे विहीन हैं बस यही हमारे दुःखका कारण है १४ यह सुन सुमना बोली कि सुनिये हम सब सन्देहनाशन वचन कहती हैं वह उपदेश का स्वरूप है व सब विज्ञानों को दिखाता है १५ लोभ पापका बीज है व मोह उसका मूल है असत्य उसका स्कन्ध व मायारूप बहुतसी शाखाओं से फैला है १६ दम्भ व कुटिलता उस वृक्षके पत्र हैं और कुबुद्धि से वह सदा फूला रहता

है मिथ्याबोलना उसका सुगन्ध है व अज्ञानफल है १७ छल पाखण्ड चोरी ईर्ष्या क्रूर और कूट स्वभाव के सब पापी ये सब उस मोहवृक्षके पत्ती हैं वे मायाकी शाखाओं पर बैठे रहते हैं १८ अज्ञान जानों उसका अच्छा फल है व उसफलका रस अधर्म है तृष्णारूप जलसे उसकी वृद्धि होती है हे प्रिय ! उसकी अश्रद्धा द्रव है १९ व अधर्म उसका सुन्दर रस है वह कहतेही मधुरसा विदित होता है लोभवृक्ष भी है २० इस वृक्षकी छाया में जाकर जो मनुष्य प्रसन्न होता है और दिनदिन में तिसके अच्छे फलों को खाता है २१ वह फलोंके रस अधर्म से पालित सन्तुष्ट मनुष्य नरकको जाता है २२ इससे पुरुष को चाहिये कि उसके फलोंको देखकर लोभ न करे व धन पुत्रकलत्रादिकोंकी भी चिन्ता जो विद्वानहो कभी न करे क्योंकि इनकी चिन्ता करना मुखोंका मार्ग है मुखही इस बातकी चिन्ता सदा किया करता है कि हमारे धन कैसे हो २३ । २४ व सुन्दरी भार्या कैसे मिले व पुत्र कैसे पावें इसप्रकार विमोहित हो रात्रिदिन चिन्ता किया करता है २५ कभी कभी उसी चिन्ता में क्षणमात्र बड़ा सुखभी देखने लगता है फिर जैसेही चैतन्य हुआ महादुःखसे पीड़ित होने लगता है २६ इससे द्विज ! चिन्ता व मोहको छोड़कर वर्तमान हो हे महामतिवाले ! इस संसारमें किसीके साथ कुछ सम्बन्ध नहीं है २७ मित्र बान्धव पुत्र पिता माता नौकर व भार्या ये सब अपने सम्बन्ध से होते हैं २८ यह सुन सोमशर्मा बोले कि हे भद्रे ! वह सम्बन्ध कैसा है जिससे सब धन पुत्रादि बान्धव उत्पन्न होते हैं हम से विस्तार सहित कहो २९ तब सुमना बोली कि कोई २ तो ऋण के सम्बन्धी होते हैं व कोई अपनी धरोहर के हरलेजानेके सम्बन्धी होते हैं कोई लाभके देनेवाले व कोई उदासीन न प्रिय न शत्रु ३० वस चारभेदोंसे पुत्र मित्र व स्त्रियां होती हैं भार्या पिता माता नौकर स्वजन बान्धव ३१ ये सब भूतलपर अपने २ सम्बन्ध से उत्पन्न होते हैं जो कोई किसी का न्यास अर्थात् धरोहर पृथ्वीपर हरलेता है ३२ न्यासका स्वामी गुणवान् रूपवान् पुत्रहोकर हरने वालेके घरमें निस्सन्देह उत्पन्न होता है ३३ व फिर न्यासापहारी

को दारुणदुःख देकर चलाजाताहै इसप्रकार न्यासका स्वामी न्यास हरनेवालेका सुपुत्रहोकर ३४ गुणवान् रूपवान् सबलक्षणयुक्त होता है व पुत्र होकर प्रति दिन उसको बड़ीभक्ति दिखाता है ३५ प्रिय व मधुर वचन कहकर अतिस्नेह दिखाता व रोगीहोता है फिर अपनाधन उससे ले व उत्तम प्रीति उत्पन्न कराके ३६ जैसे पूर्वजन्म में उसने अपना धन बड़े कष्ट से इकट्ठा करके उस के यहां न्यास स्थापित कियाथा व द्रव्यके उपाज्जन करने में प्राणनाशन दारुण दुःख उसे हुआ था ३७ वैसाही दुःख सुहृद्भावसे पुत्रहोकर वह अपने बड़े गुणों से उसे देता है थोड़ेही दिनों में मरजाता है ३८ इसप्रकारका दुःख बार २ देकर चलाजाताहै जब वह पुत्र २ कर के रोदन करने लगता है ३९ तब वह हँसता है कि कौन किस का सुपुत्र व कौन किसका कुपुत्र इसपापी ने हमारा उपकार करनेवाला न्यास हरलिया था ४० द्रव्य हरलेनेसे पूर्वसमयमें हमको महादुःख दियाथा जिस असह्य दुःखको हम किसी प्रकार नहीं सहसके थे महाव्याकुल होगये थे प्राण तो नहींगये थे ४१ सो वैसाही दुःख इसे देकर अपना उत्तम धन इससे लेकर हम चलदिये हम इसके कैसे पुत्रठहरे ४२ न यह पूर्वजन्ममें हमारा पिताथा न इसीजन्ममें है इस दुष्टात्माको हमने पिशाचता दी है ४३ ऐसा कहकर बार बार उसको जन्मलेकर ऐसाही करके चलाजाताहै व फिर इसीमार्गहोकर दारुण दुःख बार २ देकर आताजाता रहता है ४४ हे कान्त ! इस प्रकार न्यासके सम्बन्ध से पुत्र होते हैं व संसार में नानाप्रकार के दुःख जहां तहां दिखाते हैं ४५ ॥

चौ० ऋणसम्बन्धीतनयबखानत । कान्त तुम्हारे सम्मुख भानत ॥
सुनहुचित्तदै बहुरि विचारहु । तब तामहँ निजमन निरधारहु ४६

इति श्रीपाद्ममेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेसुव्रतोपाख्याने
एकादशोऽध्यायः ११ ॥

बारहवां अध्याय ॥

दो० बरहें महुँ सुमना बहुरि सोमशर्मा सों पुत्र ॥

ऋणसम्बन्धी आदि कह सुखद न यहां अमुत्र १

तैसे औरहु धर्म दम शौच नियम व्रत दान ॥

धना दया मति शांति मुख की है कथा बखान २

सुमना अपने पति सोमशर्मा से बोली कि तुम्हारे आगे ऋण सम्बन्धी पुत्र कहती हैं जो जिसका ऋण लेकर मरजाता है १ धनी पुत्र होकर वा भाई होकर वा पिता होकर वा स्त्री होकर ऊपर से तो वह मित्ररूप से दिखाई देता है पर अन्तःकरण से सदैव दुष्टही रहता है २ वह गुण तो देखता नहीं सदा क्रूरस्वभाव व निष्ठुर अपनी आकृति बनाये रहता है व स्वजनों से सदा निष्ठुरही वचन बोलता है ३ आप नित्य मीठे २ पदार्थ भोजन करता व और भी नानाप्रकार के नित्यही भोग भोगता है जुवा खेलनेमें सदा निरत रहता है व चोरी करने की सदा इच्छा रखता है ४ घर से द्रव्य जबरदस्ती लेजाता है व रोकने पर क्रोध करता है पिता व माताकी निन्दा प्रतिदिन किया करता है ५ व ऐसे वचन कहता है जिससे वे भागजायँ वा डर-जायँ व महानिष्ठुर वचन सदा बकता बरबराता रहता है इस रीति से घर से सब धन खींच लेता है व सुखसे रहता है ६ प्रथम जात-कर्मादिकों में भी बाल्यावस्थामें बहुतधन खर्च करादेता है फिर विवाह यज्ञोपवीतादि नानाप्रकारके भेदोंसे अनेकवार द्रव्य उड़वाता है इस तरह द्रव्य क्षीणकराता है व आप लेकर कुछ उसमें मिलाता नहीं घर खेत आदि सब हमारेही हैं और किसीके नहीं इसमें संदेह नहीं है ऐसा सदा कहा करता है ७ । ८ व पिता माताको प्रतिदिन मार-ता पीटता रहता है सोभी सुन्दर दण्डोंसे मूमलोंसे ताड़ित करता है व ऐसे २ दारुणकर्म करता है ९ कि पिता माताके मरजाने पर भी कुछ स्नेह नहीं प्रकट करता बरन महानिष्ठुरताको धारण करता है सब कामोंमें सदा निष्ठुर व स्नेहरहितही रहता इसमें कुछभी संश-य नहीं मानता १० पिताके लिये श्राद्ध दानादिकभी कुछ कभी क-

रताही नहीं ऐसे ऋणपुत्र पृथ्वीपर होते हैं ११ हे द्विजश्रेष्ठ ! अब तुम्हारे आगे शत्रु पुत्रका लक्षण कहती हैं वह बाल्यावस्थाही में सदा शत्रुता करता है १२ पिता माताको खेलताही हुआ मारता पीटता है और मारकर हँसताहुआ चलदेता है फिर आकर मारकर भागजाता है १३ व फिर पिता माताके पास डरताहुआ आता है नित्यक्रोधयुक्तही बना रहता है बारंवार मातापिताकी निन्दाही करता है १४ इस रीतिसे सदा वैरही के कर्म किया करता है बार २ पिताको मारकर फिर माताको मारता है १५ व पूर्वके वैरके प्रभावसे इस प्रकार वह दुष्टात्मा फिर २ आय २ मारता पीटता रहता है अब उस पुत्रका लक्षण बताती हैं जिससे मातापिताको कुछ प्रिय लाभ होता है १६ ऐसा पुत्र उत्पन्न होतेही बाल्यावस्थाहीमें लाड़प्यार व खेलकूदहीसे अपने पिता माता का प्रिय करता है फिर जब कुछ अधिक अवस्था होती है समझने बूझने लगता है तो निरन्तर मातापिता का प्रियही करता है १७ भक्ति से उनको नित्य सन्तुष्ट रखता है व शारीरिक सेवा उन दोनोंकी अपने हाथों से करता है सदा स्नेह करने मधुर वचन बोलने प्रियवाणी कहने से उनकी आज्ञामें रहता व प्रसन्न कराता १८ जब उनको मृतक जानता है तो स्नेहके मारे बार २ रोदन करता है व सब श्राद्ध कर्मादिक बड़ी भक्ति से करता पिण्डदानादि क्रियाओं में अधिक धन लगाता है १९ उनकी क्रिया करनेके समय उनका स्मरणकरके बार २ दुःखित होता है व उनके परलोक की यात्राके लिये नाना प्रकारके दान देता है व स्नेहसे माता पिताको तीनों ऋणों से छुड़ाता है २० हे कान्त ! हे महाप्राज्ञ ! जिस पुत्रसे कुछ लाभ होता है वह इस रीतिसे देता है इस में संदेह नहीं है व पुत्र होकर सदा ऐसेही कार्य करता है २१ हे प्रिय ! अब तुम्हारे आगे उदासीन पुत्रका सम्बन्ध व उसके लक्षण कहती हैं यह पुत्र सदा उदासीनतासे रहता है २२ न कभी कुछ माता पिता को दे न कुछ उनसे ले न कभी उन के लिये क्रोधकरे न सन्तुष्टही रहे न कभी माता पिताको छोड़ कहीं जाय न रहनेपर कुछ उनकी सेवाहीकरे न कुछ वैरभावही रखे २३ हे द्विजसत्तम ! तुम्हारे आगे हमने सब कहा पुत्रोंकी गति ऐसी है

जैसे पुत्र वैसीही भाय्या वैसेही पिता माता व बान्धव लोग २४
वैसेही भृत्यवर्ग व वैसेही घोड़े बैल आदि पशुगण हाथी जैसे
दासी दास सब ग्रहणसम्बन्धी होते हैं २५ सो हमारा तुम्हारा कुछ
किसीने न पूर्व जन्ममें लियाहै न हम दोनों जनों नेही किसी का
कुछ लियाहै न हम दोनोंने किसीके पास कुछ न्यास धराहै २६ न
किसी का कुछ धरायाही है कि किसी का धन कुछ लिया हो वहे
कान्त ! हम दोनोंने पूर्व जन्ममें वैरभी किसीके संग नहीं किया २७
न किसीका परित्यागही किया न और किसीका ग्रहणही किया ऐसा
जानकर शान्त हूजिये व अनर्थकी इस चिंताको छोड़िये २८ किस
के पुत्र प्यारी स्त्री और किसके स्वजन बांधव हैं उस जन्ममें तुमने
न किसी का कुछ हरलिया न किसी को कुछ दिया २९ हे स्वामिन् !
फिर तुम्हारे धन कैसे आवे इस विषयमें विस्मय न करो हे द्विजो-
त्तम ! जो धन मिलनेको होताहै वह मिलताही है ३० विना यत्नही
किये हाथमें आजाताहै व जो जानेवाला धन होताहै मनुष्य उसकी
रक्षा बड़ेही यत्नसे करे पर वह चलाही जाताहै रक्षा करनेवाले के
पास नहीं ठहरता ॥

चौ० इमिमनजानि शान्तचितहोऊ । त्यागहुचिंतासंशयदोऊ ॥

काके सुत काकी प्रियनारी । काके स्वजन बन्धु हितकारी ॥

काहू कर कोई कहूँ नहीं । समझि लेहु अपने मनमाहीं ॥

यह सम्बन्धरहित संसारा । देखिलेहु करि बहुत विचारा ॥

माया मोह मूढ़ नर सारे । पापकरत नित हाथ पसारे ॥

यह ममगृह यहपुत्रहमारो । यहभाय्याइमिवचनउचारो ३१ ३४

अनृतलखात कांतसंसारी । यह बन्धन हमकहतविचारी ॥

जनियामहँ चितदैदुखलेहु । ममवच गुनिये सहितसनेहु ॥

इमिसमझायहुप्राणपियारी । सोमशर्म कहँ बहुत विचारी ॥

तबबोल्याहु सोभाय्यापाहीं । वचनपरमप्रियज्यहिसमनाहीं ॥

जब इस प्रकार उनकी स्त्रीने समझाया तो ब्राह्मणोंमें उत्तम सो-
मशर्मा ज्ञानवादिनी हितकरनेवाली अपनी भाय्यासे फिर बोले कि
हे भद्रे ! तुमने सत्य कहा व जो कहा सब सन्देहोंका नाशनेवालाही

वचन कहा ३५। ३६ तथापि सत्य के पण्डित साधुलोग पुत्रकी इच्छा करते हैं हे प्रिये ! जैसे हमको पुत्र की चिन्ता है वैसी धनकी नहीं है ३७ इससे जिसी किसी उपायसे पुत्र हम अवश्य उत्पन्न करेंगे यह सुन सुमना फिर बोली कि पुत्रसे लोकों को जीतता है व पुत्र कुलको तार देता है ३८ हे महाभाग ! सत्पुत्रसे पिता माता दोनों अच्छे प्रकार जीते ही बने रहते हैं एक गुणवान् पुत्र श्रेष्ठ होता है व निर्गुण बहुत पुत्रों से कुछ नहीं होता है ३९ एक वंशको तारता है व वे सन्ताप कराते हैं पूर्वकालमें ही हमने कहा था कि अन्य पुत्र सम्बन्ध भागी होते हैं ४० पुत्र पुण्यसे मिलता है व पुण्यही से कुल मिलता है व पुण्यहीसे सुन्दरगर्भ मिलता है इससे पुण्य अच्छी तरह करो ४१ जो उत्पन्न होता है उसकी मृत्यु अवश्य होती है व जो मृतक होता है उसका जन्म भी अवश्य ही होता है पुण्य करनेसे सुन्दर जन्म मिलता है व पापसंचय करने से मरता है ४२ व हे कान्त ! पुण्यके कर्मोंसे धनका समूह मिलता है यह सुन सोमशर्मा बोले कि हे प्रिये ! हे भद्रे ! पुण्यका आचरण हमसे कहो व जन्मका भी वृत्तान्त कहो सुपुण्य कैसा होता है हमसे पुण्यका लक्षण कहो तब सुमना बोली कि जैसा हमने पूर्वसमय में सुना है प्रथम पुण्य कहती हैं ४३। ४४ पुरुष हो वा स्त्री हो नीति से कार्य करने से कीर्ति प्रिय पुत्र धन ये सब पुण्योंसे ही मिलते हैं ४५ हे कान्त ! पुण्य का लक्षण सत्य २ कहती हैं ब्रह्मचर्य रहनेसे सत्य बोलनेसे नित्य तप करनेसे दान देने से नियम करने से क्षमा करने से व शौचसे रहने से अपनी शक्तिभर अहिंसा करनेसे व गुरु वेद पुराण शास्त्र ईश्वर को मानने से ४६। ४७ इन दश अङ्गों से पूर्णपुण्य मिलता है इन सबों के करने से पुण्य सम्पूर्ण होता है जैसे दशअंगों से गर्भ पूर्ण होता है ४८ जो धर्मात्मा मन वचन व कर्म तीनों प्रकारसे धर्म करता है धर्म प्रसन्न होकर उसको पुण्यको पहुँचाता है ४९ व वह बुद्धिमान् प्राणी जिस जिस कामको चाहता वह वह दुर्लभ भी पाता है सोमशर्मा बोले कि हे भामिनि ! धर्मकी कैसी मूर्ति है व कैसे उसके अंग होते हैं ५० हे कान्ते ! प्रीतिसे कहो हमारे सुननेकी श्रद्धा है सुमना

बोली कि हे द्विजोत्तम ! लोकमें धर्मकी मूर्ति किसने देखी है ५१ सत्यात्मा धर्म अदृश्य है उसे देवता दानव किसीने नहीं देखा आत्रि के वंश में उत्पन्न अनसूया के पुत्र ५२ दत्तात्रेय के साथ हमने एकबार धर्मको देखा था धर्म तप बलसे वर्तमान उत्तम तपकरते हुये इन्द्र से भी अधिक रूपवान् दत्तात्रेय व दुर्वासा दोनों महात्माओं को हमने देखा था ५३ । ५४ दश सहस्र वर्ष तक मन की स्थिरता करके निराहार केवल वायु पान करते हुये शुभदर्शन देनेवाले दोनों जनों ने काल बिताया ५५ व अच्चे प्रकार आराधना की परन्तु धर्म के दर्शन न हुये उतने काल तक दोनों पंचाग्नि तापते रहे व त्रिकाल स्नान करते थे ५६ । ५७ जल के मध्य में एक समय दोनों जने स्थित थे कि इतने में उन दोनों में से तप से दुर्बल मुनियों में श्रेष्ठ धर्मात्मा दुर्वासा जीने ५८ धर्म के ऊपर क्रोध किया हे महाभाग ! जब मुनियों में श्रेष्ठ दुर्वासा जीने क्रोध किया ५९ तो धर्म विप्र का रूप धारण करके वहां आये ब्रह्मचर्यादि सब अङ्गों से वे बुद्धिमान् धर्मजी युक्त थे ६० जैसे कि ब्राह्मण के रूप से सत्यको सङ्गलिये थे व ब्रह्मचर्य भी विप्र का रूप धारण किये उनके सङ्ग था व तप भी विप्र मूर्ति धारण किये था बुद्धिमान् दम भी द्विजोत्तम ही की मूर्ति धारण किये थे ६१ महाप्राज्ञ दान व नियम भी विप्र रूप धारी थे व अग्निहोत्र भी ब्राह्मण ही का रूप बनाये था इस प्रकार सब दत्तात्रेय जी व दुर्वासा के समीप आये ६२ हे द्विजोत्तम ! क्षमा शान्ति लज्जा अहिंसा व अकलहता ये सब स्त्री रूप धारण करके वहां आई ६३ बुद्धि प्रज्ञा दया श्रद्धा सत्कृति शान्ति व पुण्य पञ्चाग्नि साङ्गोपाङ्ग वेद ६४ ये सब रूप धारण किये धर्म के संग आये व पुण्यात्मा स्वभाव अग्न्याधानादि और अश्वमेधादि यज्ञ सब ६५ अपने २ रूप व सुन्दरता समेत सब भूषणों से भूषित दिव्य माला वस्त्र धारण किये दिव्य चन्दनादि सुगन्धित पदार्थों का अनुलेपन किये ६६ किरीट और कुण्डल से युक्त सुन्दर आभरणों से भूषित दीप्तिमान् सुन्दर रूपवाले व तेज की ज्वालाओं से घिरे हुये ६७ इन सबों के संग धर्म परिवार समेत वहां आये जहां काल के समान क्रोधी दुर्वासा जी थे आकर धर्म जी वचन बोले ६८ कि हे

विप्र ! तपसेयुक्त होके तुमने कोप क्यों किया जिससे कि क्रोध कल्याण का नाशकरता है व तपका नाशकरता है इसमें कुछ संशय नहीं है ६९ व क्रोध सब को विनाशता है इससे क्रोध त्यागना चाहिये हे द्विज-श्रेष्ठ ! स्वस्थ होकर तपका फल भोगो ७० तब दुर्वासाजी बोले कि आप इन द्विजवरों के साथ कौन हैं जो आये हैं व तुम्हारे साथ अति-रूपवती व अलंकारयुक्त ये सात स्त्रियाँ कौन हैं ७१ हे महामतिवाले ! हमारे आगे तुम विस्तार से कहो तब धर्म बोले कि ये ब्राह्मणका रूप धारण किये सब तेजसे युक्त दण्ड हाथ में लिये सुप्रसन्नचित्त कमण्डलु हाथ में लिये तुम्हारे आगे ब्रह्मचर्य हैं आये हैं इनको देखो ७२। ७३ व और इन दीप्तिमान् द्विजोत्तम को देखो जो कपिलवर्ण पीले नेत्र के हैं ये सत्य हैं हे द्विजसत्तम ! ७४ व हे धर्मात्मन् ! उसी प्रकार के वैश्वदेव के समान प्रकाशित इनको देखो जो तप तुम सदा किया करते हो ७५ वे यही हैं अपने पास आये हुये इन महाभाग्यवान् को देखो व प्रसन्नवाणीवाले दीप्ति संयुक्त सब जीवों पर दया करने वाले ७६ ये दम आये हैं जो सदैव प्राणियों का पोषण करते हैं जटाधारे कर्कश स्वभाव पिङ्गलवर्ण अतितीव्र रूप महाप्रभु ७७ पापों के नाशक खड्ग हाथ में लिये अतिशान्त सदा पुण्य करनेवाले नित्य क्रियाओं से संयुक्त ७८ ये नियम हैं हे द्विजोत्तम ! तुम्हारे पास आये हैं व अनिर्मुक्त महादीप्तिमान् शुद्ध स्फटिक मणि के समान ७९ जल का कमण्डलु हाथ में लिये व दन्तधावन करमें किये द्विज ये शौच हैं तुम्हारे पास आये हैं ८० व अतिसाधु महाभाग्यवाली सत्य भूषणों से भूषित सब आभरणों से शोभित अङ्गवाली यह शुश्रूषा है तुम्हारे निकट आई है ८१ व अतिधीर स्वभाव प्रसन्नात्मा गौरंग की हँसती हुई कमल हाथ में लिये सब कुछ सहनेवाली कमलनयनी पद्मिनी के रूपकी ८२ दिव्य भूषणों से भूषित हे द्विजोत्तम ! यह क्षमा प्राप्त हुई है अतिशान्त सुन्दर प्रतिष्ठावाली बहुत मङ्गलों से युक्त ८३ दिव्य रत्न धारण किये दिव्य आभरणों से भूषित हे महा-प्राज्ञ ! तुम्हारे समीप शान्ति आई है ज्ञानरूपिणी ८४ बहुत सत्य से समाकुल परोपकार करने में निरत सदा मित भाषण करनेवाली

यह अकलहता तुम्हारे पास आई है ८५ प्रसन्न क्षमायुक्त सब आभरणों से भूषित कमल आसनवाली स्वरूपवती यशस्विनी श्याम वर्णवाली ८६ महाभागा यह अहिंसा है आपके पास आई है व तपाये हुये पक्के सुवर्ण के रंगवाली रक्तवस्त्रविलासिनी ८७ सुप्रसन्नमुखी सुन्दर मन्त्र जपती हुई ज्ञानभाव से समाक्रान्त पुष्प हाथमें लिये तपस्विनी ८८ मोतियों से जटित भूषणोंकी शोभासे युक्त निर्मल सुन्दर हास करनेवाली हे महाभाग ! यह श्रद्धा है आई है देखो देखो व बहुत बुद्धिसे भरीहुई व बहुत ज्ञान से युक्त सुभोगमें रूप आसक्त किये सुन्दर प्रकारसे स्थित सुन्दर मङ्गलवाली ८९। ९० सब इष्ट ध्यानोंसे युक्त लोककी माता महायशस्विनी सब आभरणों से शोभायुक्त पीनपयोधर पश्चाद्भागवाली ९१ गौरवर्ण माला और वस्त्रों से विभूषित हे महाप्राज्ञ ! ये मेधाजी हैं आई हैं सो तो तुम्हीं में टिकी रहती हैं ९२ हंस व चन्द्रमाके समान प्रकाशित मोतियों का हार पहिने सब आभरणों से भूषित सुप्रसन्न मनस्विनी ९३ सफेद वस्त्र से युक्त कमल के समाननेत्र युक्त पुस्तक हाथमें लिखे कमलपर बैठी सदैव प्रकाशित ९४ यह प्रज्ञा भाग्यवान् तुम्हारे पास आई है व लाख के रसके रंगवाली सदा प्रसन्न चित्त ९५ पीले फूलों की माला पहिने हार नूपुर धारण किये मुँदरी व कंकणसेयुक्त कानों में कुण्डल धारणकिये ९६ व सदा पीतवस्त्र से प्रकाशित तीनों लोकों के उपकार और पोषण करनेमें अद्वितीय ९७ जिसका शील सदैव रहता है हे द्विजश्रेष्ठ ! सो दया तुम्हारे पास आई हैं ९८ व हे महाप्राज्ञ ! ये वृद्धास्त्रीका रूप धारणकिये महादेवजी की भार्या जो महातपस्विनी हैं आई हैं व हे द्विजश्रेष्ठ ! ये हमारी माता हैं व हे सुव्रत ! हम धर्म हैं ९९ यह जानकर शान्त होवो व हमारा प्रतिपालनकरो तब दुर्व्वासाजी बोले कि यदि आप धर्म हैं व हमारे समीप इससमय आये हैं १०० तो आने का कारण कहिये व कौन कार्य्य तुम्हारा हम करें धर्म बोले कि हे विप्रेन्द्र ! तुमने क्रोध क्यों किया तुम्हारा किसने अप्रिय किया १०१ हे दुर्व्वासाजी जो मानो तो इसका कारण हमसे कहो तब दुर्व्वासाजी बोले कि हे देव ! जिस

से हम क्रुद्धहुये उसका कारण सुनो १०२ हमने दम शौचादि महा-
 क्लेशों से अपना शरीर शुद्धकरडाला व लाख वर्षतक हमने तप किया
 १०३ पर तुम्हारे दया न आई कि आकर दर्शनदेते हे देव ! इसीसे
 हमने क्रोध किया व तुमको शाप देनेपर उतारु हुये १०४ यहसुन
 दुर्वासाजीसे महामति धर्म बोले कि हे महाप्राज्ञ ! जब धर्म नष्ट हो-
 जायगा तो लोक नष्ट होगा १०५ दुःखके मूल तो हमी हैं व सबको
 कष्टदेकर उसके अंगों से पापोंको निकाला करते हैं यदि कष्ट पाकर
 प्राणी सत्यको नहीं छोड़ता तो पीछे फिर हम उसे सुखदेते हैं १०६
 पापकरने में सुख प्रथम बहुत मिलता है व पुण्य बड़े दुःखसे मिल-
 ता है पुण्यही करते २ प्राणी अपने प्राणतक छोड़देता है १०७ तब
 हम उसे परलोकमें महामुखदेते हैं इसमें संदेह नहीं है दुर्वासाजी बोले
 कि जब मनुष्यको बहुत सुख मिलता है तो धर्म को छोड़ अधर्मा-
 दि करने लगता है १०८ उसको कल्याण तुम प्रथमही नहीं देदेते हो
 यही बड़ा भारी अन्याय करते हो जिस शरीर से पुण्य वा पापकरे उसी
 से उसका फलभी भोगना चाहिये १०९ । ११० व जो अन्य शरीर
 ने किया व उसका फल अन्य शरीरको दिया गया तो यह कौन सी
 न्याय की वार्ता ठहरी यह तो महा अन्याय विदित होता है १११ अ-
 न्य शरीर से इस जन्म में जिसने तप आदिके क्लेश सहे उसे दूसरे
 जन्ममें तुमने उसका फल दिया यह हमारे मतसे कल्याण की उत्तम
 वार्ता नहीं है ११२ जिस शरीरसे श्रमकरके पुण्यकरे उसी से उसका
 फलभी भोगना चाहिये यह नहीं कि अन्यका किया हुआ पुण्य और
 शरीरभोगे ११३ सुख तो उसी में होता है कि जब आज एक ओर
 पुण्य किया दूसरी ओर आजही पुण्यफल भोगनेको मिला ११४
 बस ऐसेही जिस शरीरसे पापकरे उसीसे दुःख भोगने चाहिये सो
 ऐसा नहीं होता पाप यहां इस शरीर से करता है दुःख उसे परलोक
 में मिलता है जहां करनेवाला शरीर होताही नहीं ११५ यह जान-
 कर कोई हे धर्म ! तुम्हारी ओर देखताही नहीं जैसे महापापी चोर
 लोग अपना पाप भी जिस शरीरसे करते हैं तो दुःख भी उसी से
 भोगकरते हैं ११६ उनको सदा दुःखही कठोर मिलता है सुख नहीं

मिलता ऐसेही यहीं पाप पुण्य करनेवालोंको दुःख सुख क्यों नहीं देदेतेहो धर्म बोले कि पापीलोग जिस शरीरसे जो पाप करते हैं ११७ उसीसे तो पीड़ा भी सहते हैं व पापका फलभी उसी से भोगते हैं पण्डितों ने धर्मशास्त्रों में दण्ड अलवत्ता दूसरे शरीर को लिखा है ११८ जब कि इस शरीर के पातक यहां के राजादिक को नहीं विदितहोते तो दूसरे शरीरको दण्ड दियाजाता है व यही हमारी भी आज्ञाहै दुर्व्यासा फिर बोले कि हे धर्म ! यह हम न्याय नहीं मानते ११९ इससे क्रोधयुक्त हम तुम्हारे इस अन्यायके बदलेमें तीन शाप तुम्हें देंगे धर्म बोले कि हे विप्र ! जो बहुतही क्रुद्धहो अब शापही दिया चाहतेहो क्षमा नहीं करते तो अच्छा ऐसा शाप दीजिये जिसमें हम दासीके पुत्रहों पर शाप देकर कहींका राजा बनाना व चाण्डाल बनाना १२० । १२१ क्योंकि पणतकेऊपर ब्राह्मणलोग प्रसन्न होकर सदैव प्रसाद करतेहैं तब क्रोधयुक्त दुर्व्यासा धर्मको शाप देतेहुये बोले कि धर्म तुम हमारे शापसे राजा दासीपुत्र व चाण्डाल भी अपनी इच्छासे जाकर होवो १२२।१२३ ॥

चौपाई ॥

इमिदै महाशाप मुनिराया । गमन कीन मन तनिक न दाया ॥
यहि प्रसङ्गसों पूरबकाला । धर्महि हम देखा तनुपाला १२४
सोमशर्म बोले कहु प्यारी । फिर सो धर्म कौन तनुधारी ॥
यदि जानततुमताकर जननू । कहहु मोहिं करिकै बहुमननू १२५
बोली सुमना भारतवंशी । भयहु युधिष्ठिर भूप प्रशंशी ॥
दासीपुत्र विदुर भे फेरी । दुइ भे धर्म शाप हियहेरी १२६
जब राजाहरिचन्द्रहि वाड़व । विश्वामित्र कीन अति ताड़व ॥
तब भे धर्म बहुरि चण्डाला । तीनजन्म की कथा रसाला १२७
धर्महु सकल कर्मफलभोगा । लहि दुर्व्यासा शाप सशोभा ॥
यहशुभचरितकहातव आगे । हमहुं यथामतिअतिअनुरागे १२८

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेसोमशर्मख्याने

सोमशर्मसुमनासंवादेद्वादशोऽध्यायः १२ ॥

तेरहवां अध्याय ॥

दो० तेरहवें महँ धर्म दम ब्रह्मचर्य दानादि ॥

सबके लक्षण हैं कहे क्षमा शांति नियमादि १

इतनी कथा सुनकर सोमशर्मा ने फिर पूछा कि ब्रह्मचर्य का लक्षण हमसे विस्तार से कहो यदि जानती हो तो बतावो हे भामिनि ! ब्रह्मचर्य कैसा होता है १ सुमना बोली जो नित्य सत्यबोले पुण्यात्मा होकर स्वच्छ रहें जब अपनी स्त्री रजोदर्शन के पीछे स्नान करके शुद्ध हो तो उसके सङ्ग भोग करे इस समय को छोड़ स्त्रियों के दोषों से वर्जित रहें २ अपने कुल का सदाचार कभी न छोड़े हे द्विजोत्तम ! यह गृहस्थी में टिके हुये ३ ब्रह्मचारी का लक्षण हमने तुमसे कहा व यही गृहस्थों का भी लक्षण है अब यतियों का धर्म कहती हैं वह हम से सुनो ४ इन्द्रियों के दमन करने व सत्यबोलने में सदा युक्त रहें पाप से सदा दूर रहें नारी का सङ्ग बराबर ध्यान धरने व ज्ञान करने में टिके रहें ५ यह सन्यासियों का ब्रह्मचर्य तुमसे हमने कहा अब तप के लक्षण कहती हैं हमसे सुनो ६ आचार से सदा रहें क म क्रोध से वर्जित रहें प्राणियों के उपकार ही के लिये जो कुछ उद्यम करें सो करें ७ यह तप का लक्षण कहा अब सत्य का कहती हैं जिसको परधन व परस्त्री देखकर उसके लेने की चटपटी न लगे उसका सत्य नाम है अब दान का लक्षण कहती हैं जिससे मनष्य जीते हैं ८ १ जो अपना सुख इस लोक में व परलोक में चाहे तो अन्न का महादान करे १० व भूखे को अपने आगे के घास में से भी दे डाले क्योंकि देने पर महापुण्य होता व अन्त में वह अमृतपान करने को सदैव पाता है ११ अपने विभव के अनुसार प्रतिदिन दान करता रहें तृण शय्या मधुर वचन अत्यन्त ठण्ठी घर की छाया १२ भूमि जल अन्न प्रिय व उत्तम वाक्य आसन व कुटिल तारहित वार्त्ता करना १३ अपने जीने के लिये नित्य जो इतने दान करता है व देवताओं पितरों की पूजा करके जो इस प्रकार दान करता है १४ वह इस लोक में भी आनन्द करता है व परलोक में प्रसुद्धित होता है जो दान व पढ़ने से दिन को सफल करता रहता

है १५ वह देवहै मनुष्य नहीं है इसमें संदेह नहीं है अब धर्मसा-
धनका उत्तम नियम कहती हैं १६ जो देवताओं व ब्राह्मणोंकी पूजा
में नित्यरत रहता है व नित्यनियमसे दान व्रत १७ और उपकार करता
है व नियमही से पुण्यके कार्य करता है वस इसीका नियम नामहै
हे द्विजसत्तम ! अब क्षमाका रूप कहती हैं सुनो १८ जब कोई उसे ता-
ड़ितकरे वा उसकी निन्दाकरे तब न उसे लौटकर ताड़ितकरे न क्रोध
करे वैसेही सहले १९ व वह धर्मात्मा कुछ उससे अपना दुःख न
माने वह यहां वहां दोनों स्थानों में सुखही भोगता है २० इस प्रकार
क्षमाका लक्षण कहा अब शौचका लक्षण कहती हैं बाहर व भीतर
से जो शुद्ध रहता है नानाप्रकारके रागोंसे रहित रहता २१ व स्नान
आचमन आदि के साथ सब भोजनादि के व्यवहार करता है इस
प्रकार शौचका लक्षण कहा अब अहिंसाका लक्षण कहती हैं २२
विनाकार्य तृणभी जानबूझकर न काटे व अन्य किसी प्राणीको तो
कभी मारे नहीं जैसे अपना शरीर समझे वैसेही औरों का वस इसी
का अहिंसा नामहै २३ अब शान्ति कहती हैं शान्तिही से सब सुख
मिलते हैं कोई अपने को कष्टभीदे पर आप शान्तिही करे २४ ऐश्व-
र्य देखकर कभी उफला न चले न वैर आदि दुःख देखकर घबरा
उठे वस इसीका शान्ति नामहै अब अस्तेय कहती हैं २५ पराया धन
कभी न हरे न पराई स्त्री हरे सो न वचनसे न मनसे न शरीर से इन
दोनों को हरे इसीको अस्तेय अर्थात् अचोरी कहते हैं २६ हे द्विज-
सत्तम ! अब तुम्हारे आगे दमका लक्षण कहती हैं मनसे इन्द्रियों
का सदा दमन करतारहे २७ क्योंकि इन्द्रियां सबलहोने से उसके
आधे कर्मोंको तो करतेही करते नष्ट करदेती हैं इससे उनका दमन
अवश्य होना चाहिये अब जैसी धर्मशास्त्रोंमें शुश्रूषा लिखी है वैसी
कहती हैं पूर्वके आचार्यों ने जैसे कहा है वाणी देह और मनसे गुरु
कार्यको साधन करै २८ । २९ और जहां पर दयाही उसी का शु-
श्रूषा नामहै ॥ चौपाई ॥

साङ्गधर्म तुमसन द्विजसत्तम । हमभाषा विधिसौगुनिवित्तम ॥
अपर श्रवणकी है का इच्छा । हमसन कहिये करिकै शिक्षा ॥

६० पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

जो नर करु इमि धर्म अचारा । निजवर्णाश्रम सहित विचारा ॥
सो सबसों उत्तम संसारा । जिमितुमसन हमकीनपूचारा ॥
जो यह धर्म करत सो प्रानी । भवसागर तरिजात अमानी ॥
यह गुनि धर्म करहु मतिमाना । जो हम तुमसन कीन बखाना ॥
प्रियावचन इमि सुनिगुनिमनमें । सोमशर्म द्विजवरत्यहिजनमें ॥
बहुत विचारि नैज चितकेरी । कहीं बात तासों हितकेरी ३०।३५

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेऐन्द्रेसुमनो

पाख्यानेत्रयोदशोऽध्यायः १३ ॥

चौदहवां अध्याय ॥

दो० चौदहयें महँ धर्मकृत पुरुष मरत ज्यहि भाँति ॥

सो सुमनानिजस्वामिसों कहुहुलहुहुगुणपाँति १

सोमशर्मा इतनी कथा सुनकर अपनी स्त्री सुमना से बोले कि हे भद्रे ! इस प्रकारका धर्मका उत्तम व्याख्यान तुम कैसे जानती हो व तुमने किससे सुनाहै १ सुमना बोली कि हे महामतिवाले ! हमारे पिता भार्गवों के कुलमें उत्पन्नहुये च्यवन उनका नामहै व सब शास्त्रों के जानने में विशारदहैं २ उन ऋषि के हम एकही प्यारी कन्यार्थी जो कि प्राणों से भी प्यारीथीं इस से जहां कहीं वे तीर्थादिक को जाते थे हमभी उनके सङ्ग जाती थीं ३ मुनियोंकी सभाओंमें जाते थे वा देवताओं के मन्दिरो में जाते थे तब भी हम उन के सङ्ग खेलती सदैव चलीजाती थीं ४ कि कौशिक के वंशमें उत्पन्न हमारे पिताके मित्र बड़े बुद्धिमान वेदशर्माजी भाग्य से घूमते हुये प्राप्त हुये ५ वे बड़े दुःख से वारंवार चिन्तना करते थे तब आये हुये महात्मासे हमारे पिता बोले ६ कि हे सुव्रत ! आपको हम दुःखसे तपे हुये जानते हैं आप दुःखी कैसे हैं तिससे कारण कहिये ७ ये महात्मा च्यवनके वचन सुनकर तिन महात्मा हमारे पिता से वह सुव्रत वेदशर्मा बोला कि हे महाप्राज्ञ ! सब दुःखका कारण सुनिये मेरी स्त्री महासाध्वी और पातिव्रत्यमें परायणहै ८।९ वह पुत्र हीन है मेरे वंश नहीं है जिससे कि आप ने पूछा इसी से आप से

कारण मैंने कहा १० इसी समय हमारे पिता के स्थानपर एक सिद्ध
 आये उनकी हमारे पिता और वेदशर्मा ने उठकर ११ भक्तिपूर्वक
 उपहार भोजन के योग्य अन्न और मीठे वचनों से पूजाकी १२
 और वेदशर्मा के प्रश्नको उन सिद्ध से पूछा तब मित्र वेदशर्मा
 समेत हमारे पितासे धर्मात्मा सिद्धजी १३ सब धर्मका कारण कहते
 भये जो कि मैंने आपसे कहा धर्म से पुत्र धन धान्य और स्त्रियां प्राप्त
 होती हैं १४ तब वेदशर्मा ने सम्पूर्ण धर्म किया तिस धर्म से पुत्र
 समेत बड़ा सुख उत्पन्न हुआ १५ तिसी संगके प्रसङ्गसे हमारे यह
 बुद्धि निश्चय हुई है हे कांत ! मैंने जैसे बहुत शुभ आप से कहा १६
 यह सब सन्देहनाशन मैंने तिस महासिद्ध से सुना है इससे हे विप्र !
 अब तुमभी सदैव ऐसाही धर्म करो सब तुम्हारे मनोरथ सिद्ध होंगे
 १७ यह सुन सोमशर्मा बोले कि धर्म करने से कैसी मृत्यु होती है
 व फिर जन्म कैसा होता है हे कान्ते ! इन दोनों का लक्षण हम से
 कहो १८ सुमना बोली कि सत्य शौच क्षमा शान्ति तीर्थसेवा व
 पुण्यादिक धर्म जो करता है उसकी मृत्युका लक्षण तुम से कहती हैं
 १९ मरणके समय न तो उसके रोग होता है न उसके शरीर में कुछ
 पीड़ा होती है न कुछ उसको श्रम होता न ग्लानि होती है न पसीना
 उसके अङ्गों से आवे न उसके चित्तमें भ्रम होता है २० व दिव्यरूप
 धारण करके वेदपाठी ब्राह्मणलोग व गन्धर्वगण वेद पढ़ २ व गीत
 गाय २ उसकी स्तुति करते हैं व वह अपने आसनपर स्वस्थचित्त
 बैठा हुआ वा लेटा हुआ उन लोगों की स्तुति व गान सुनकर आन-
 न्दित होता है व मरणसमय में देवपूजा करता हुआ रहता है २१ २२
 बहुधा किसी तीर्थ में जाकर धर्म में तत्पर होकर देह छोड़ता है वा
 अग्निशाला में बैठकर प्राण छोड़ता अथवा गोशालामें वा किसी
 देवता के मन्दिरमें २३ वा पुष्पवाटिका में वा किसी तड़ाग के तटपर
 वा पिप्पल वटवृक्ष के नीचे वा ब्रह्मवृक्ष के नीचे वा बिल्वके नीचे
 अथवा तुलसी के समीप २४ वा अश्वशालामें अथवा गजशालामें
 स्थित होकर प्राण छोड़ता है अथवा अशोक आम्रवृक्षके नीचे २५ वा
 ब्राह्मणोंके समीप अथवा राजमन्दिरमें स्थित होकर वा उस रणभूमि

के भागपर प्राण छोड़ता है जहां प्रथम मरा हो २६ ये पुण्य मृत्युस्थान केवल धर्म करनेवालों को ही मिलते हैं अथवा धर्म करनेवाले को मृत्यु कहीं गौवों वा ब्राह्मणों के लिये समर करने में होती है २७ जो कोई धर्मवत्सल मनुष्य शुद्ध धर्म करता है वह मृत्यु के समय किसी न किसी युक्तिसे इन स्थानों पर पहुँच जाता है २८ व उत्तम पुरुष अपनी माता व अपने पिता अपने इष्टमित्र बान्धवों को देखता हुआ सबों के सम्मुख आनन्द से प्राण छोड़ता है २९ व पुण्यात्मा वन्दीजनों से वारंवार स्तुति किया गया पापियों को न देखता हुआ प्राण छोड़ता है ३० गन्धर्वलोग गीत गाते हैं स्तुति करनेवाले स्तोत्रों से स्तुति करते हैं मन्त्र पाठों से ब्राह्मण लोग पूजित करते हैं व माता स्नेहसे पूजती है ३१ पिता व और भी स्वजन वर्ग सब उस बड़े बुद्धिमान् धर्मात्मा की प्रशंसा उस समय करते हैं हे विभो ! इस प्रकारके पुण्य स्थान तुमसे हमने कहे ३२ व प्रत्यक्षमें ऐसे स्थानों में प्राप्त हो स्नेहयुक्त हँसते हुये भगवद्भूतों के दर्शन करते हैं न स्वप्नसे न मोहसे न पसीने के साथ कभी वे प्राणी मरते हैं ३३ दूत जो आते हैं वे उस धर्मात्मा से कहते हैं कि आपको महाबुद्धिमान् धर्मराज बुलाते हैं इससे हे महाभाग ! यहां आवो जहां धर्मराज हैं चलके वहां विराजो इस तरह वह आनन्द से जाता है ३४ न तो उसको मोह हो न भ्रान्ति हो न ग्लानि हो न स्मृतिविभ्रम हो कि किसी को न चीन्हे न कुछ उसे सन्देह हो वैसे ही प्रसन्नात्मा स्थित रहता है ३५ ज्ञान विज्ञानसे सम्पन्न जनार्दन देवका स्मरण करता हुआ सन्तुष्ट व हर्षितमन उन दूतों के संग चला जाता है ३६ एक शरीर में टिका था व एक शरीर को छोड़ दशयें द्वार अर्थात् ब्रह्माण्ड फोड़कर आत्मा निकलकर जाता है ३७ कि तो उसके चढ़ने के लिये पालकी आती है वा हंस वा विमान वा घोड़ा अथवा उत्तम हाथी ३८ उसके ऊपर छत्र लगा होता व चामर व्यजनादिकों से पवन संचार होता है इस प्रकार सेवक लोग पवन करते ३९ व गाता हुआ व पण्डित लोग स्तुति करते हैं वन्दीगण चारण व दिव्य वेदके पारगामी ब्राह्मण ४० साधुलोग सब ओरसे यश गाय २ स्तुति करते

चले जाते हैं व दान करने के प्रभावसे पालकी आदिपर चढ़ाहुआ वह प्राणी वाटिका व पुष्पवाटिका के भीतरही भीतर होकर सुख से छायामेंही जाताहै व दिव्य अप्सरा मंगल वस्तु हाथों में लिये संगर गाती चली जाती हैं ४१ । ४२ व देवता लोग स्तुति करते हैं इस प्रकार जाकर वह धर्मराजजी को देखता है व धर्म संयुत देवता लोग सम्मुख आके कहते हैं ४३ कि हे महाभाग ! यहां आवो व अपने मनमाने भोग भोगो ॥

चौपाई ॥

इमि सो सौम्य मूर्ति मतिमानहि । धर्मराजकहँ लखत अमाहि ॥
निज कृत पुण्य प्रभाव सुखारी । स्वर्ग भोग भोगत हितकारी ॥
भोग नाश पर पुनि सो प्राणी । जन्म लेत भूतल महँ आनी ॥
पुण्य शील ब्राह्मण के गेहा । क्षत्रियके गृह वा करि नेहा ॥
अथवा सधन वैश्य गृहमाहीं । जन्म लेत संशय कछु नाहीं ॥
धर्मकरतप्रमुदित तहँवासी । पुण्यकरतनितसुखीविलासी ४४ । ४७

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेष्ट्रेसुमनो

पाख्यानेचतुर्दशोऽध्यायः १४ ॥

पंद्रहवां अध्याय ॥

दो० पंद्रहवें महँ पापकृत पुरुष मरत ज्यहि रीति ॥

सो सुमना निजस्वामिसों कह्यो बहुतकरि प्रीति १

इतनी कथा सुनकर सोमशर्मा फिर अपनी पत्नी सुमनासे बोले कि हे भद्रे ! पापियोंका मरण किन लक्षणोंसे होताहै हे भामिनि ! यदि जानतीहो तो वह हमसे विस्तारसे कहो १ सुमना बोली कि सुनो हम कहेंगी जैसे कि हमने उस सिद्धके मुखसे पापियों के मरने के लक्षण सुने हैं २ महापापियोंके स्थान व मरणसमयकी चेष्टा कहती हैं विष्ठा मूत्र ख्यँखार आदि अपवित्र वस्तुओंसे लिपीहुई पापयुक्त भूमिपर ३ पापी दुष्टात्मा प्राप्तहोकर बड़े दुःखों से प्राणोंको छोड़ता है व महाचाण्डाल भूमिको पाकर दुःखित होकर मरताहै ४ अथवा

जिसभूमिपर नित्य गर्दभ चरते हैं बँधते हैं वहां मरता है वा वेश्याके गृहमें जाकर मरता है अथवा चमारके घरमें जाकर प्राण छोड़ता है ५ वा हड्डी चमड़ा नख जहां बहुत पड़ा होता अथवा अन्य पापके पदार्थ जहां होते वहां प्राप्त हो वह दुष्टात्मा पापी मरता है यह निश्चित है ६ वा अन्य पाप समाचारसे युक्त पृथ्वी पर पहुँचकर जैसे वेश्यादिकों के घरमें जाकर मरता है अब पापियोंको लेनेकेलिये आयेहुये दूतों की चेष्टा तुमसे कहती हैं सुनो ७ बड़े भैरव दारुणरूप महाघोर अतिकाले बड़े २ पेटवाले पीले नेत्रवाले वा नीले धूसरेरंगके नयनवाले वा अतिश्वेतरंगवाले वा बड़े पेटवाले ८ अतिऊँचे अतिविकराल सूखे मांस और चर्बीवाले भयानक डाढ़वाले कराल सिंहके मुख के समान मुखवाले हाथों में बड़े २ विषधर सर्प लिये ९ ऐसे दूतोंको देखकर वह पापी थरथर काँपने लगता है व बार २ पसीना हो आता है सियारी पर सवार मुखपसारे वे दूत १० आके उसके कान के नीचे सप्योंको छोड़ देते हैं फिर गले व कमर व पेटमें फांसीसे बांधते हैं ११ वह बार २ हाहाकार मचाता ही रहता परन्तु वे जबरदस्ती खींच ले जाते हैं अब जब मरनेपर पापी होता है उसकी चेष्टा बतलाती हैं १२ जिन पापियों ने पराया धन हरलिया है जिन्होंने पराई स्त्रीकी विडम्बना कराई है जिन पापियों ने ऋणलेकर लोभसे दिया नहीं अथवा किसीका सर्वधन हरलिया है इसी प्रकार अन्य महापाप कुदानलेना अन्त्यजोंकी धान्य भोजनकरना आदि जो पाप उसने किये हैं १३ १४ व जोई कोई पाप उससे पूर्व में किये गये हैं वे सब उस महापापीके कण्ठमूल में आते हैं ये सब कफको गले में बढ़ाकर बड़ा दुःख उत्पन्न कराते हैं व दारुण पीड़ाओंसे गला घुघुराने लगता है व माता पिता भाई बन्धुओंकी ओर देख २ रोदन करता व काँपता है व भार्या पुत्र का स्मरण बार बार करता है फिर पीड़ाके मारे मोहित होकर भूल जाता है १५ १८ व उसके पाण बहुत पीड़ासे युक्त नहीं निकलते हैं गिरता काँपता और बारंवार मूर्च्छित होता है १९ चौ० सुनहु कान्त पापीके प्राणा । गुदमारग हैं करत पयाना ॥ यासों दुर्गातिलहत न शङ्का । जिमि तिन कीन पापदै डङ्का ॥

लोभमोहयुत इमिखलप्राणी । यमपुर जात पाप तनु सानी ॥
जिमि यमदूत वहां पहुँचावत । सोदुखअवहमतुम्हें सुनावत २०।२१

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेऐन्द्रेसुमनोपाख्या
नेपापमरणविवक्षानामपंचदशोऽध्यायः १५ ॥

सोलहवां अध्याय ॥

दो० सोलहवेंमहँ पापकृत पुरुषमार्गं ज्यहिजात ॥

अरुतहँभोगतनरकजिमि कहसुमनायहवात १

सुमना फिर अपने पतिसे बोली कि उस दुष्टात्माको यमदूत उस मार्ग में घसीटते हुये लेजाते हैं जिसमें अङ्गारों के ढेरके ढेर बिछे होते हैं इसीसे वह उसमें गिरता पड़ता उछलता बार बार छटपटाताहुआ जाता है १ व जिसमार्ग में बारहो सूर्योंसे तपाया हुआ महातीव्र घाम लगताहै उस मार्गहोकर सूर्यके किरणों से सन्तप्त उस पापीको लेजाते हैं २ व बीचमें छायाहीन नानाप्रकारके दुर्गम पर्वतोंपर चढ़ाते उतारते क्षुधा पिपासासे पीड़ित उस दुष्टमतिवाले पापीको लेजाते हैं ३ व दूतलोग गदा खड्गोंसे व लोहेके दण्डों से पीटते मारते हुये व फरसोंसे काटतेहुये उसकी निंदाभी करते जाते हैं ४ फिर इसप्रकार जलाकर ऐसे शीतल पवनयुक्त मार्ग में होकर लेजाते हैं जहां अत्यन्त शीतकेमारे बनाय ठँठुरजाताहै इससे अतिदुःख पाताहै इसमें संदेह नहीं है ५ फिर वहांसे खींचकर दूत नानाप्रकारके दुर्गम स्थानों में घसीटते हैं इसप्रकार देवताओं व ब्राह्मणोंकी निन्दा करनेवाला दुष्टात्मापापी ६ व और भी नानाप्रकारके पापोंके करनेवाला यमदूतों से इसप्रकार पहुँचाया जाता है व वह दुष्टात्मा काले अञ्जन के ढेरके समान बैठेहुये यमराजको देखता है ७ जिनका बड़ा उग्र दारुण भयङ्कररूप होताहै व भयङ्कर दूतोंके बीचमें बैठे होते हैं व चारोंओर आधि व्याधि आदि सब रोग देहधारणकिये खड़ेहोते हैं बित्रगुप्त सम्मुख खड़ेरहते हैं ८ यमराजकी मूर्ति महिषपर चढ़ीहुई दिखाई देती है जिसके बड़े बड़े दांत व बड़ीभारी चौहड़ी होती है व बड़ाभारी भयानक कालके स-

मान मुख होता है ९ वस्त्र वे पीतओढ़े पहिने होते गदा हाथमें लिये व लालचन्दन लगाये होते हैं लालेही कूलोंके माला पारण किये हाथ में गदा लिये महाभयङ्कर मूर्ति होते हैं १० इसप्रकारके बड़े भारी शरीरमाले यमराजको वह दुर्भेदि देखता है सब धर्म्मा से बाहर किये हुये आये हुये उसे देखकर ११ उस पापी धर्मकण्टक दुष्टको यम-राज बड़ी कड़ी दृष्टिसे देखते हैं व देखतेही आह्लादिते हैं कि नाना प्रकारकी पीड़ाओं से इसे महादुःख दो १२ वस सहस्रयुगपर्यन्त नानाप्रकारके नरकों में बार बार एकमें से निकालकर दूसरे में डालकर पवित किया जाता है १३ फिर वहां से यहां आकर नरककी योनि में उत्पन्न होता है फिर नानाप्रकार के कीटोंकी योनियों में जन्मता है व उसे अपवित्र पापी दुष्टलोग पकाकर खा भी लेते हैं व बार बार इसी प्रकार उस दुष्टात्मा का मरण होता है ऐसेही वह दुर्म्मेति बार बार पापों को भोगता रहता है १४ । १५ फिर जिन २ योनियों में जन्म होता है उनके नाम भी कहती हैं सौ जन्मतक तो कुत्तेकी योनियों में जन्मलेकर पाप भोगता है १६ फिर वह दुष्टात्मा व्याघ्र होता फिर गधा होता है फिर माज्जारयोनि में जन्मपाता फिर शूकरकी में फिर सर्पकी योनिमें १७ इसप्रकार नानातरह की सब तिर्यक् योनिमें उत्पन्न होता है फिर नानाप्रकार के कौवा गीघ आदि पापी पक्षियों की योनियों में जन्म पाता है १८ फिर डोम चमारआदि चाण्डाल जातियों में फिर भिल्ल पुलिन्दआदि वनवासियों की योनियोंमें ॥

चौ० यह तुमसन पापिनके जननू । कहा विचारि चित्त करि मननू ॥

मरण बहुरि चेष्टा तिन केरी । तुमसन भाषी कीन न देरी ॥

पाप पुण्य सब कहे निवेरी । दारुण दुखद सुन्य हुहिय हेरी ॥

अपरश्रवण करने को काहा ॥ हमसन कहहु कहु वममनाहा १९ । २१

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे ऐन्द्रे सुमनोपाख्याने

पापपुण्यविवक्षानाम षोडशोऽध्यायः १६ ॥

सत्रहवां अध्याय ॥

दो० कह्यो सत्रहें महँ सकल सोमशर्मा द्विज केरि ॥

पूर्वजन्म वृत्तान्त सब मुनिवशिष्ट हिय हेरि १

पूर्व अध्यायकी कथा सुनकर सोमशर्मा ब्राह्मण अपनी स्त्री सुमना से बोले कि हे देवि ! तुमने सब धर्मात्मा व पापात्माओं की गति व धर्मके लक्षण हमसे कहे अब यह कहो हम सर्वज्ञ व गुण युक्त पुत्र कैसे पावें १ हे महाभाग ! हे सुव्रते ! हे भद्रे ! यदि तुम जानती हो तो परलोक और इस लोकमें जिस दान धर्मादिके करने से पुत्र मिले वह हमसे कहो उसको करें इसमें सन्देह नहीं है २ सुमना बोली कि तुम अब धर्मज्ञ वशिष्ठजीके निकट जाय उन महा-मुनिसे पूँछो उनसे तुम धर्मज्ञ व धर्मवत्सल पुत्र पावोगे ३ जब उसने ऐसा कहा तो द्विजोंमें उत्तम सोमशर्माने कहा कि हे कल्या-णि ! तुम्हारा यह वचन हम करेंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं है ४ ऐसा कहकर सोमशर्मा द्विजोंमें उत्तम सब कुछ जाननेवाले दिव्य व सब तप करनेवालोंमें श्रेष्ठ वशिष्ठजीके निकट शीघ्र गये ५ जो मुनिराज गंगाजी के तीरपर पुण्य आश्रम में स्थित थे व तेजकी ज्वाला से मानो दूसरे सूर्यही के समान प्रकाशित थे ६ इस प्रकार ब्रह्मतेज से दीप्तिमान् द्विजोत्तम विप्रोंके स्वामी वशिष्ठजी के भक्तिते बार ७ दण्डवत्प्रणाम करके ८ उन पापरहित ब्रह्माजीके पुत्रसे महातेजस्वी सोमशर्मा पुण्य आसनपर बैठकर बोले ९ उनका वचन सुनकर महामतिमान् वशिष्ठमुनि सोमशर्मा से बोले कि हे वत्स ! तुम्हारे गृहमें पुत्र स्त्री भृत्यवर्गोंका १० क्षेम तो है व हे महाभाग ! तुम्हारे सब पुण्यकर्मों में व अग्नियों में कुशल है व तुम्हारे सब अंगोंमें नीरोगता है व सदा धर्मका पालन करते रहते हो ११ ऐसा कहकर उस महाबुद्धिमान् फिर सोमशर्मा से कहा कि हे द्विजोत्तम ! कहो तुम्हारा क्या प्रिय इस समय हम करें १२ ब्राह्मण से ऐसा कहकर कुम्भ से उत्पन्न वशिष्ठजी चुप हो रहे तब उन महामुनि व ऋषियों में श्रेष्ठ वशिष्ठजी के थँभजाने पर १३ सोमशर्मा सब प्रकाशमानों में श्रेष्ठ

वशिष्ठजीसे बोले कि हे भगवन् ! सुप्रसन्नचित्तसे हमारा वचन सुनो १३ व यदि हमारा प्रिय आपको करना अङ्गीकार हो तो हमारे प्रश्न के अर्थ के सन्देह नाश करने में उद्यतहोवो १४ किस कारण से हमारे दरिद्रता सदा रहती है व पुत्रका सुख हमको क्यों नहीं होता हे तात ! यह हमको संशय है किस पापसे ये दोनों बातें हमारे हैं १५ हम महामोह से मूढ़ होगये थे तब हमारी स्त्रीने बहुत समझाया व उसीकी प्रेरणासे हम आपके पास आये हैं १६ सो सर्व्व सन्देहोंके नाशनेवाला वचन हमसे आप कहें इस संसारबन्धनसे आप हमको मुक्तिके दाताहों १७ यह सुन वशिष्ठजी बोले कि पुत्र मित्र आता व और भी स्वजन बान्धव पांचमेदों से पुरुषके सम्बन्धसे होते हैं १८ वे सम्बन्ध के भेद सुमनाने तुम्हारे आगे पूर्व्वही कहे हैं हे द्विजोत्तम ! वे सब पुत्र कुपुत्र ऋणसम्बन्धी हैं १९ अब पुण्यात्मा पुत्रके लक्षण तुमसे हम कहते हैं जिसका आत्मा सदा पुण्य करने में लगारहता हो व सत्यधर्म में सदैव रत हो २० बुद्धिमान् ज्ञानसम्पन्न तपस्वी वाणी जाननेवालोंमें श्रेष्ठ सब कर्मोंमें धीर वेदअध्ययन करनेमें तत्पर २१ सब शास्त्रवेत्ता देव व ब्राह्मणोंका पूजक सबयज्ञोंका करनेवाला दाता त्यागी व प्रिय बोलनेवाला २२ विष्णुभगवान् के ध्यानमें नित्यपर शान्तचित्त इन्द्रियोंको दमन करनेवाला सदा सबका मित्र पिता माता की सेवा में नित्यपर व अपने सबजनों के ऊपर कृपाकरनेवाला २३ कुलका तारक विद्वान् अपने कुलकापालक ऐसे गुणों से सम्पन्न पुत्र सुखदायक होता है २४ अन्य सम्बन्धवाले पुत्र शोक सन्ताप के दायक होते हैं व फलहीन ऐसे पुत्र से जानो कुछ कार्य्यही नहीं चलता २५ वे सब सुदारुण ताप देकर आया जाया करते हैं हे द्विज-सत्तम ! पुत्ररूप से सब ऋणादि सम्बन्धी संसार में आ जाकर दुःख देते हैं २६ व पूर्व्वजन्मका कियाहुआ पुण्य जो तुम्हारे है जिसका पालन तुमने आजतक किया है वह सब तुमसे कहते हैं उस अद्भुत को श्रवण करो २७ हे महाप्राज्ञ! पूर्व्वजन्म के आप शूद्र हैं इस में कुछ सन्देह नहीं है खेती का काज किया करते थे ज्ञान से हीन थे व महालोभी थे २८ एकही तुम्हारे स्त्री थी व वैर तुम

सब से रखते थे पुत्र बहुत से थे देते किसी को तुम एक कौड़ी भी न थे धर्म को जानतेही न थे सत्य कभी सुना भी नहीं २९ दान तुमने कुछ दियाही नहीं शास्त्र कभी किसी पण्डित के मुख से सुना नहीं तुमने कोई तीर्थ किया नहीं व न कभी कोई उत्तम स्थानकी यात्राही तुमने की ३० बस हे विप्र ! एकज्ञानलगाये बार २ वही खेती किया करते थे व पशुओं का पालन तथा गौवों का पालन ३१ भैसों का व घोड़ों का पालन बार २ करते थे हे द्विजसत्तम ! पूर्व जन्ममें तुमने इसप्रकार बड़े लोभसे बहुतसा धन इकट्ठा कियाथा उसका खर्च तुमने सुपुण्यमें कभी नहीं किया ३२ ३३ व बड़े दुर्बल सत्पात्र ब्राह्मणकोभी आयेहुये देखकृपाकर तुमने कुछभी दान नहीं किया ३४ वनगो महिषी आदि जो तुम्हारे बहुतसे पशु थे उन्हींमेंसे किसी को दिया सब पशुओं को बेंच २ बहुत धन संचय करलिया था ३५ मट्टा घी दूध दही सब बेंच लेते थे इसप्रकार विष्णुभगवान् की माया से मोहितहो दुष्टता के साथ काल बिताते थे ३६ हे ब्राह्मणसत्तम ! ऐसा बहुतधन होनेपरभी किसी को कभी कुछ नहीं दिया ऐसे निर्दयी तुम थे ३७ हे विप्र ! देवताओंकी पूजा तो कभी आपने कीही नहीं पूर्णमासी अमावास्या व्यतीपातादिपुण्यपर्वों में भी तुमने ब्राह्मणों को दान नहीं दिया ३८ व श्राद्धसमय आजाने पर कभी श्रद्धापूर्वक श्राद्धभी तुमने नहीं किया तुम्हारी पतिव्रता स्त्री कहती भी थी कि आज अमुक पुण्यका दिन है ३९ व आज श्वशुर के श्राद्धका कालहै व आज श्वश्रूके श्राद्ध का काल आया है हे महामते! तुम उसका वचन सुनकर उस दिन घरछोड़ भागजाते थे ४० न तो धर्ममार्ग तुमने कभी देखा न किसी का कहाहुआ कभी सुना तुम्हारे लोभही माता पिता भाई लोभही स्वजन लोभही बांधव थे ४१ इससे धर्मको छोड़ तुमने केवल एक लोभहीका पालन सदैव किया इसीसे आप दुःखीहुये व दरिद्रता से अत्यन्तपीडित हुये ४२ व प्रतिदिन तुम्हारे हृदय में बड़ीभारी तृष्णा बनी रहती थी जब २ तुम्हारे घरमें धनकी बढ़ती होती थी ४३ तब २ अग्निरूप तृष्णा से तुम और भस्म होतेजाते थे रात्रि भर सोते

भी नहीं थे इसी चिन्ता में लगे रहते थे कि और भी धन हो तो अच्छा है ४४ फिर जब दिन होता था तो महामोहित होते थे कि सहस्र लक्ष कोटि अर्बुद हमारे धन हो तो अच्छा हो ४५ व खर्व निखर्व हमारे घर में कब धन होगा इस प्रकार जब सहस्रलक्ष कोटि अर्बुद ४६ खर्व निखर्व भी होगया तो भी तुम्हारी तृष्णा नहीं कम हुई इस प्रकार धीरे २ सब अवस्था बीत गई वृद्धता आन पहुँची ४७ न तो तुमने कुछ दान किया न होम किया न ब्राह्मणों का भोजन कराया न आप ही कभी पेट भर तुमने खाया धन भी जो हुआ पृथ्वी खेद कर गाड़ते गये जहाँ कि पुत्र किसी प्रकार से न जान पावे ४८ व ऐसा कर द्रव्य आने के अन्य उपाय करने लग जाते थे व सदैव किया करते थे यद्यपि तुम बुद्धिमान् बड़े थे पर धन बढ़ने का उपाय लोगों से और भी पूँछा करते थे ४९ प्रथम पूँछते थे कि किस प्रकार रुपया गाड़े जो कोई जान न पावे फिर अन्य का धरा हुआ धन कैसे जान लिया जाता है इसका विधान पूँछते थे इस प्रकार जिसी किसी से पूँछने हुये भूखेप्यासे भ्रमण किया करते थे ५० रुपये सोने चाँदी को छूने ही परखने का उपाय सोचा करते थे व सिद्धिवाली कल्प रसायनादि विद्याओं का विचार किया करते थे व विवरों का प्रवेश भी पूँछा करते कि कैसे ही दुर्गम स्थान में कोई पदार्थ धरा हो उसके निकालने का उपाय पूँछते थे ५१ इस प्रकार तृष्णारूप अग्नि से रात्रि दिन जला करते थे जिससे क्षणमात्र को भी कभी सुख नहीं मिलता था तृष्णानल में जलकर मूर्च्छित होकर अचेत हाहाकार मचाया करते थे ५२ हे विप्रेन्द्र ! इस प्रकार से मूढ़ता को प्राप्त ही थे कि काल के वशीभूत होगये तब तुम्हारी स्त्री पुत्रादिकों ने तुमसे पूँछा कि धन कहाँ है ५३ पर तुमने न उनको दिया न उनसे बताया बस प्राण छोड़कर चल दिये व यमपुर का मार्ग लिया इस रीति से हमने सब तुम्हारा पूर्वजन्म का वृत्तान्त कहा ५४ ॥

चौ० यही कर्मों से द्विज तुम भयऊ । निर्द्वन्द्वरिद सकल दुःख लह्यऊ ॥
यहि संसार माहिं सुत जाके । भक्तिमान शुभगुणयुत ताके ५५
ज्ञानी शीलवान सचवादी । धर्मपरायण विगत विवादी ॥

जापर विष्णु करतहैं दाया । ताकै सुत इमि होत सुभाया ५६
धनसुतधान्य कलत्र सुपोता । सो भोगन जो हरिजनहोता ॥
विष्णुविमुखपुरुष कहैं नाहीं । धनसुतादि भोगनको आहीं ५७
जापर श्रीहरिकेर प्रसादा । सो सुत धन भोगत गतवादा ॥
सुकुलसुजन्मपरमपदपावन । श्रीहरिकृपामिलतमनभावन ५८

इति श्रीपाद्ममहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेष्ट्रेसुमनो
पाख्यानेसप्तदशोऽध्यायः १७ ॥

अठारहवां अध्याय ॥

दो० अठारहें महँ पुनि कह्यो मुनिवशिष्ठ इतिहास ॥

सोमशर्म्म किय धर्म्मजिमि पूर्वद्विजहि दें वास १

इतनी कथा सुन सोमशर्म्मा बोले कि पूर्वजन्म का कियाहुआ
पाप तुमने हमारा कहा जो कि हमने शूद्रकी योनि में जन्म लेकर
कियाथा १ पर हमने ऐसे पापी शूद्रके जन्मसे ब्राह्मणता कैसे पाई
हे ज्ञानविज्ञानपण्डित ! इस सबका कारण हमसे कहो २ वशिष्ठजी
बोले कि हे द्विज ! पूर्वजन्ममें जो तुमने धर्म्मका कर्म्म कियाहै वह
तुमसे हम कहतेहैं यदि मानो तो सुनो ३ एक धर्म्मात्मा सदाचार-
रत पण्डित विष्णुजीका भक्त सुधर्म्मात्मा नित्य विष्णु में परायण
ब्राह्मण था ४ वह बुद्धिमान् तीर्थयात्रा के प्रसंग से अकेला पृथ्वी
पर भ्रमण किया करताथा घूमते २ एकसमय तुम्हारे गृहमें आया ५
हे द्विजसत्तम ! तुमसे उसने रहने के लिये एक घर मांगा तब तुम व
तुम्हारी भार्य्या व तुम्हारे पुत्रोंनेभी उसको रहने के लिये घर दिया
६ व कहा ब्राह्मण आवो २ हमारे घर में सुखसे निवासकरो उस
पुण्यात्मा वैष्णव ब्राह्मणसे बार २ तुमलोगों ने आदरपूर्वक कहा ७
कि हे सुव्रत ! यह गृह आपही का है जहां चाहो सुखसे बसो आज
हम धन्यहैं व आज सब पुण्य हमने किये मानो सब तीर्थोंको गये
८ व तुम्हारे दोनों चरणों के देखने से आज हमने बहुतसे तीर्थों के
जाने का फलपाया इतना कहकर अतिपुण्य गोशाला तुमने उस
ब्राह्मण के रहने के लिये देदी ९ व फिर उस ब्राह्मण के सब अंग

मर्दित करके फिर अपनेही हाथों से उस विप्रके चरणभी मींजदिये फिर उसके चरण अच्छे शुद्धजलसे धोये उसी जलसे तुमने स्नान करलिया १० फिर तुरन्तका घृत दधि दुग्ध अन्न और माठा, अलग २ पात्रों में लाकर उस ब्राह्मण को दिया आपने उस महात्मा वैष्णव ब्राह्मणकी ऐसी सेवाकी ११ इसप्रकार स्त्री पुत्रोंसहित तुमने उस ज्ञानमें पण्डित महाभाग ब्राह्मणको बनाय सन्तुष्ट किया १२ उसके प्रातःकाल अतिपुण्यदायक व शुभ आषाढमासके शुक्लपक्ष की पापनाशनी एकादशी तिथिथी १३ वह सबपातकनाशनी तिथि उस ब्राह्मणको तुम्हारे यहां आनपड़ी जिसमें देव श्रीविष्णुभगवान् योगनिद्राको ग्रहण करते हैं १४ उसदिन सब बुद्धिमान् पण्डितों ने अपने २ गृहोंका सब कार्य छोड़ दिया केवल सबके सब विष्णुके ध्यान में परायण होगये १५ व गाय २ बजायकर सबों ने बड़ा भारी मंगल किया ब्राह्मणों ने आकर वेद व स्तोत्र पढ़ २ कर बड़ी भारी स्तुतिकी १६ ऐसा महोत्सव उस तुम्हारे ग्राममें देखकर वह ब्राह्मणसत्तम उस दिन वहां रहगया क्योंकि वह व्रतकी तिथिथी इससे वहभी उपवास कररहा १७ व उस ब्राह्मणने विष्णुशयनी उस एकादशी का माहात्म्य बांचा व अपनी स्त्री पुत्रों समेत तुमने वह उत्तम धर्म श्रवण किया १८ उस कथाको सुनकर तुम्हारी स्त्री व पुत्रों ने तुमसे कहा कि तुमभी व्रत रहो सो उनके कहने से व उस ब्राह्मणके संसर्ग से उसदिन तुमभी एकादशी व्रत रहगये १९ फिर योंही नहीं उन सबोंका सब पुण्यदायक वचन सुनकर तुमने निश्चय करके संकल्पकिया कि आज हम व्रतकरेंगे २० फिर अपनी स्त्री पुत्रों के संग जाकर तुमने नदीमें स्नानकिया व बड़े हर्षित मनसे हे विप्र ! मधुसूदन भगवान्जीकी पूजाकी २१ जैसा गन्ध धूपदि सब पुण्यकारी सामग्री से श्रीहरिके पूजनका विधान लिखा है वैसेही पूजन तुमने किया व नाच और गाते बजाते हुये तुमने रात्रिभर जागरण किया २२ व ब्राह्मण के साथ प्रातःकाल फिर तुमने नदी में स्नान किया व फिर धूप गन्धादिकों से देवदेवेश श्रीविष्णु भगवान्का पूजन किया २३ व भक्ति से श्रीहरिके प्रणामकर बार २ स्नानकराये

व भगवान् को जो भोग लगाया वह उस महात्मा ब्राह्मण को देकर उसके भी प्रणाम किया व उस ब्राह्मणको भोजन कराके फिर दक्षिणाभी तुमने कुछदी तब अपनी भार्या पुत्रों के संग ब्राह्मण तुमने भी पारण किया २४।२५ यद्यपि तुमने अपनी स्त्री व पुत्रोंकी प्रेरणा से उन सहित व्रत किया परन्तु हे विप्र ! व्रत का फल तुम्हींने पाया जैसा कि पाना चाहिये था २६ इससे ब्राह्मणकी संगति से व श्रीविष्णुजी के प्रसादसे तुम ब्राह्मणताको प्राप्तहुये उस में भी सत्यधर्म युक्तहुये २७ व उस व्रतके प्रभावसे ब्राह्मणके महाकुलमें उत्पन्नहुये जो यह ब्राह्मणों का कुल सत्यधर्मोंसे संयुक्त होताहै २८ व जोकि तुमने उस महात्मा वैष्णव ब्राह्मण को उस द्वादशी तिथिमें बनाबनाया दिव्य भोजन करायाथा सोभी श्रद्धा व सद्भाव से २९ सो उस दानके प्रभावसे तुम को नानाप्रकार के मिष्टान्न भोगने को मिले व पूर्वजन्म के अन्य कर्मों के प्रभावसे महामोहसे युक्तहुये व सदा तृष्णा से व्याकुल मन बनारहताहै ३० व पूर्वजन्ममें तुमने इतना धन इकट्ठा कियाथा परन्तु न तो ब्राह्मणों को दिया न अन्यही दीनों को कुछ दिया ३१ व मारेलोभके मरते समय स्त्री पुत्रादिकों से भी नहीं बताया उस पापके प्रभावसे तुम दरिद्रहुये ३२ व पुत्रका लोभ व स्नेह तुमने छोड़दिया धन उनसे नहीं बताया इससे तुम इस जन्ममें पुत्रहीन हुये यह उसी पापका फलहै ३३ सुपुत्र सुकुल धन धान्य व श्रेष्ठस्त्रियां सुन्दरजन्म व अच्छी रीति से मरण सुभोग सुख ३४ राज्य स्वर्ग मोक्ष और जो जो दुर्लभ हैं ये सब पदार्थ महात्मा देव श्रीविष्णु भगवान्जी ही के प्रसादसे होते हैं ३५ इससे नारायण अनामय श्रीगोविन्दकी आराधना करके श्रीविष्णुके श्रेष्ठस्थान परमपद को पावोगे ३६ व सुपुत्र धन धान्य सुभोग व नानाप्रकार के सुख पावोगे पूर्वजन्म में जो कुछ तुमने किया था ३७ हे विप्र ! वह सब हमने तुम्हारे आगे विचारपूर्वक कहा सो हे महाभाग ! ऐसा जानकर अब तुम नारायणमें पर होवो ३८ ॥

चौपै० तब विधिसुतभाणी इमिवरवाणी सुनि भो विप्र प्रवीना ।

अतिहर्षितसोई अतिनतहोई मुनिहिप्रणामसुकीना ॥

करि भक्तिसुहावनि अतिमनभावनिजबोधितभो आशू ।
 तबमहाप्रभावा द्विजसुखपावा नयननमें भरिआंशू ३६
 लै मुनि उपदेशा गो निजदेशा हर्षसहित मुनिराया ।
 सुमनानिजप्यारी अतिहितकारी तासनसकलसुनाया ॥
 भामिनितवनेहा वरमतिदेहा मुनिवशिष्ट गुणखानी ।
 तिनसकलसुनाई अतिहरषाई पूर्वजकथाबखानी ४०
 नश्यहु सबमोहा ममकरिछोहा मुनिवशिष्ट विज्ञानी ।
 सबपूर्व कहानी तिनममभानी जासों वे बड़ध्यानी ॥
 अब हरिआगधी गतसबबधी लहिहहुँ मोक्षअनूपा ।
 अरु परपद पैहों सुखसों जैहों लखिहों सुरसुरभूपा ४३
 सुनिकै पतिवानी अतिसुखमानी हर्षितहैं अतिप्यारी ।
 निजपतिसों बोली बात अमोली तासुचरण शिरधारी ॥
 तुमधनिधनिस्वामी मुनिअनुगामी भयहुसुकृतकेकारी ।
 मुनिकरसमभावनबहुविधिपावनकहुसुहृदयविचारी ४२

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेऐन्द्रेसुमनो
 पाख्यानोऽष्टादशोऽध्यायः १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

दो० उन्निसयें भार्यासहित सोमशर्म्म द्विजवर्य्य ॥

कीन तपस्यानेक विधि सोइ सूत कह अर्य्य १

सूत मुनियों से बोले कि महाप्राज्ञ सोमशर्म्माजी अपनी सुमना
 स्त्री समेत नर्मदा नदी के पुण्यतटपर कपिलासङ्गमनाम पुण्यती-
 र्थमें १ स्नानकर शान्त आत्मा होकर देवताओं व पितरों का अच्छे
 प्रकार तर्पणकर कल्याणरूप श्रीनारायण का जप करतेहुये ब्राह्मण
 देव तप करनेलगे २ ध्यानयुक्त हो तिन देवदेव श्रीवासुदेवजी का
 द्वादशाक्षर मन्त्र जपने लगे ३ सदैव निश्चल होकर काम क्रोध से
 रहितहो आसन शयन सवारी और स्वप्नमें भी भगवान्ही को देख-
 ताभया ४ व महामाध्वा पातिव्रतकर्म में परायण महाभाग्यवती
 उनकी स्त्री सुमना तप करतेहुये अपने पतिकी सेवा करनेलगी ५ जब

इसप्रकार सोमशर्मा ध्यान करने लगे तो विघ्नों ने बहुत भय दिखाया बड़ेभारी विषधर काले सर्प तपकरते हुये उन महात्मा सोमशर्माके निकट आनेलगे सिंह व्याघ्र हाथीभी वहां आकर भय करने लगे ६।७ वेताल राक्षस भूत कूष्माण्ड प्रेत भैरव ये सब प्राणनाशन दारुण भय दिखानेलगे ८ व नाना प्रकारके भयङ्कर सिंह वहां आगये व अतिकराल दांतनिकाल २ वहां अतिभयङ्कर शब्दसे गर्जने लगे ९ परंतु महामति धर्मात्मा सोमशर्मा श्रीविष्णुजी के ध्यानसे चलायमान न हुये यद्यपि उन महारूढ़ विघ्नोंसे घेरेभी गये १० परंतु द्विजोत्तम सोमशर्मा ध्यान करतेही रहे किंचिन्मात्रभी चलायमान न हुये बड़ेप्रचण्ड वर्षा के साथ पवन चलते जिन के कारण अतिशीत से पीड़ित होते पर अपने ध्यानहीमें तत्पररहे ११ और महाभयंकर गर्जता हुआ सिंहभी वहां आया उसको देखकर भयसे डरकर ब्राह्मण नृसिंहजीको स्मरण करनेलगे १२ जोकि इन्द्रनीलमणि के तुल्य श्याम स्वरूप पीताम्बरओढ़े महापराक्रमी शंख चक्र गदा कमल चारोंहाथोंमें धारण किये १३ व बड़े मोतियों का हार पहिने जो कि चन्द्रमाके तुल्य श्वेतथा व कौस्तुभ रत्नसे शोभित १४ दिव्य श्रीवत्ससे विराजमान हृदय से शोभित सब आभरणों की शोभासे शोभित कमलसम नेत्र १५ मन्द २ मुसुकाते हुये प्रसन्नमुख होनेसे रत्नों से अतिशोभित व अतिभ्राजमान श्रीहृषीकेशजी का ध्यान करतेरहे १६ व उन्हीं शरणागतवत्सल श्रीकृष्णचन्द्रजी का स्मरण करतेरहे व कहते थे कि देवदेव श्रीहरि के नमस्कार है हमारा भय क्याकरेगा हम आपहीकी शरण हैं १७ जिन महात्मा के उदर में तीनों लोक ये व सात नीचेवालेभी वर्तमान रहते हैं उन श्रीविष्णुजी के शरण में हैं हमारा भय क्या करेगा १८ जिनसे कृत्यादिक महाबलवान् भय वर्तमान होतेहैं उन सब भयोंकेहर्ता श्रीहरिके हम शरण में हैं १९ व जो सब पापों से व दानवोंके महाभयों से विष्णु भक्तों की रक्षा सदा कियाकरते हैं हम उन्हींके शरणमें हैं २० जो सब देवता और महात्मा कृष्णभक्तोंकी जो गतिहैं हम तिनकी शरण में प्राप्त हैं २१ जो भयों को नाश करके अभय करते हैं व जानकर

पापोंको नष्ट करते हैं व आप एक चन्द्रस्वरूपी शुद्ध हैं हम उन्हींके शरणमें हैं २२ व जो विष्णुभगवान् व्याधियोंके नाशनेकेलिये औषध स्वरूपी हैं व आप रोगरहित हैं व सदा आनन्द से रहते हैं हम उन्हींके शरणमें हैं २३ जो अचल होकर लोकों को चलायमान करते हैं और पापरहित होकर ज्ञानको देते हैं तिनकी मैं शरण में प्राप्त हूँ भय हमारा क्या करेगा २४ और जो विश्वात्मा रोगरहित होकर सब साधुओंका पालन करते हैं और संसारकी भी रक्षा करते हैं हम तिनकी शरण में प्राप्त हूँ २५ जो सिंहरूपसे आगे भय दिखलाते हैं उन नृसिंहजीके शरणमें होकर उनके प्रणामकरते हैं २६ व जिनके शरण में मद से मत्त बड़ी देहवाला वनका हाथी आया व उसकी रक्षाकी उन गजकी परमगति शरणागतवत्सल श्रीहरिके शरणमें हैं २७ व गजका मुख धारण किये ज्ञानयुक्त पाश और अंकुश धारण किये काल के समान मुखवाले हाथीकीसी तुंडवाले श्रीविष्णुजी के शरण में हैं २८ व जिन्होंने शूकरावतार धारणकरके महाअसुर हिरण्याक्षको मारा उन शूकरजी के हम शरण हैं और शरणागतवत्सल वामनजी की हम शरणमें हैं २९ छोटे कूबरे पेट कूष्माण्डादिक करनेवाले श्रीवामनजी सब मृत्युरूप धारण किये हमको भय दिखाते हैं ३० व हम अमृतरूप श्रीहरिके शरणमें हैं तो भय हमारा क्या करेगा जो श्रीहरि ब्रह्मण्य ब्रह्म देनेवाले ब्रह्मा व ब्रह्म ज्ञानमय हैं ३१ उनके हम शरण हैं हमारा भय क्या करेगा भयके खण्डनकरनेवाले व दुष्टों को भय देनेवाले अभय श्रीविष्णुभगवान् के प्रपन्न हैं ३२ जिन्होंने भयरूप होकर अवतार लिया है फिर भय हमारा क्या करेगा व जो सब लोकोंके तारक हैं व सब पापियों के मारक हैं ३३ उन धर्मरूप जनार्दनजी के हम शरण हैं जोकि रण में देवताओंको अभय देते और अद्भुत देह धारणकरते ३४ तिनकी हम शरण में हैं ये हमारी सदागति हैं यह बड़ा भूभारूप पवन सब ओर से महाशीत उत्पन्नकरके पीड़ित करता है ३५ इसलिये उन पवनस्वरूप श्रीहरिके शरणमें हैं अतिशीत अतिवर्षा अतितापदायक घाम इन सबोंका रूपधारी जो हरि हैं मैं उसके शरण हूँ व ये सब

कालस्वरूपी भयदायक चंचलरूप सब हमको भयदेते हैं ३६।३७ हरि
स्वरूपी इन सबोंके भी शरणमें हम हैं ३८ जो सब देवोंका देव व हम
सबोंका परमेश्वर केवल ज्ञानमय प्रदीपरूप हैं व जो एक नारायणरूप
आदिसिद्धस्वरूप हैं उस सिद्धेश्वर के हम शरणमें हैं ३९ इसप्रकार
भक्तिसे छेशनाशन उन केशवभगवान्की नित्य स्तुतिकरते व ध्यान
करते हुये सोमशर्माने श्रीहरिको अपने हृदयमें स्थित कर लिया ४०
तब सोमशर्माका उद्यम व पराक्रम देखकर प्रकट हो अतिहर्षित होकर
श्रीहरि बोले कि ४१ हे महाप्राज्ञ सोमशर्माजी ! अपनी भार्यास-
हित हमारा वचन सुनो हम वासुदेव हैं प्राप्त हुये हैं इससे हे विप्रे-
न्द्र ! हे सुव्रत ! तुम हमसे वर मांगो ४२ जब श्रीहरिने ऐसा कहा
तो नेत्र खोलकर सोमशर्माने देखा आगे घनश्याम विश्वेश्वर महो-
दययुक्त ४३ सब आभरणों की शोभा से युक्त सब आयुध धारण
किये दिव्य लक्षणयुक्त कमल सदृश नेत्रवाले ४४ पीताम्बर धारण
करनेसे विराजमान शंख चक्र गदा पद्म धारण किये गरुड़पर आरुढ़
४५ व महायशस्वी ब्रह्मादिकों के धारण करनेवाले व सब जगत्
के धारक इस विश्वसे सदा अन्यत्र व रूपरहित जगत्के गुरु ४६ श्री
हरिभगवान् खड़े थे बस अतिहर्षित हो दण्डवत् प्रणाम कर लक्ष्मीयुक्त
कोटिसूर्य्यसम प्रकाशित श्रीहरिके ४७ हाथ जोड़ अपनी भार्यासुम-
नासमेत स्तुतिकरने लगे व जय २ हे मानद माधव ! जय २ यह कहा ४८॥

चौपाई ॥

जय योगीश जयाच्युत केशव । जय योगीन्द्र रमाधव मामव ॥
जय शाश्वत जय सर्व्वग देवा । जय मखमय करते तव सेवा ॥
जय सर्व्वेश्वर यज्ञ स्वरूपा । जय अनन्त नम करत अनूपा ॥
यज्ञ ज्ञान युत श्रेष्ठ जयाव्यय । ज्ञाननाथ जयजयमतिवरजय ॥
जय जय पाप विनाशन हारे । जय पुण्येश पुण्य प्रतिकारे ॥
ज्ञान स्वरूप ज्ञान गम तोरे । करत प्रणाम हरहु भय मोरे ॥
कमल नयन जय पंकजनाभा । करत प्रणाम लखत तव आभा ॥
जय गोविन्दरु जय गोपाला । शंख चक्रधर रूप विशाला ॥
गदापाणि जय नमत तुम्हारे । व्यक्ताव्यक्त स्वरूप उदारे ॥

जय विक्रम शोभांग मुरारे । विक्रम नायक हरु दुख सारे ॥
जय लक्ष्मी विलास जय देवा । नमो नमो करि करत सुसेवा ॥
जय विक्रम शोभा युत श्यामा । उद्यम नायक वरगुण धामा ॥
उद्यम करण जयाच्युत आजू । सकल कर्म उद्यत गुणभ्राजू ॥
उद्यम भोग्युद्यम त्रय धारक । नमतचरणयुग तवजनभारक ॥
युद्धोद्यम प्रवृत्त धर्माकर । धर्मरूप बिनवत मतिसागर ॥
नमो हिरण्यरेत तेजोऽधिप । प्रणमत तव पद पाप दूरक्षिप ॥
अतितेजस्वरूप तेजोमय । दैत्यतेजनाशकरु रहित भय ॥
पाप तेजहर गोहितकारी । द्विजहितकरण सदा तनुधारी ॥
हुत भोक्ता परमात्मा स्वामी । अनल रूप बिनवत वरधामी ॥
कव्य रूप नम स्वधा स्वरूपा । सदा नमत तव चरण अनूपा ॥
स्वाहा रूप यज्ञ वर रूपा । नमोनमो हम मति अनुरूपा ॥
करत शार्ङ्गधर हरि नम तोरे । पापहारि हरिये अघ मोरे ॥
सिंहविनाशन ज्ञान विलासी । विज्ञशिरोमणि सब गुणरासी ॥
पावन पुनि वेदान्त स्वरूपी । नमोनमो हम करत निरूपी ॥
नम हरिकेश केशहर तेरे । केशव नमत हरहु दुख मेरे ॥
विश्वधारि पर पुरुष तुम्हारे । करत प्रणाम दहहु अघ सारे ॥
कृष्ण बुद्ध सब हर्ष स्वरूपा । आनन्दमय तव रूप निरूपा ॥
नित्यशुद्ध केवल हरवन्दित । विधिपूजितसबकालविनन्दित ॥
इन्द्रादिक सुर नमित परात्मा । कृष्णनमत तवचरण दृढात्मा ॥
अजित सुरेश अमृत भगवन्ता । करत प्रणाम निहोरि अनन्ता ॥
क्षीरजलधिवासी कमलाप्रिय । नम ॐकाररूप हरिकरि हिय ॥
व्यापी व्यापक व्यसनविनाशी । नमोनमो नित करत महाशी ॥
नमो वराहरु वामन रूपा । कूर्म नृसिंहरूप सुरभूपा ॥
सर्वत्र नाशन द्विजरामा । करत युगलकरजोरि प्रणामा ॥
सर्वज्ञानमय मीन मुरारी । रावणनाशक जनभयहारी ॥
राम कृष्ण अरु बुद्ध स्वरूपा । म्लेच्छविनाशिकलिकानुरूपा ॥
कपिलदेव हयकण्ठ तुम्हारे । व्यासदेव सब पाप संहारे ॥
करत प्रणाम धाम निजदेह । सदा करहु निजचरण सनेह ॥

स्तुतिकरि पुनि कह करजोरी । जगन्नाथ जगदीश निहोरी ॥
तव अपार गुण पार न पावत । ब्रह्मा रहत सदा नित गावत ॥
रुद्र सहस्रनयन नहिं जानत । तव गुण कहन हारिहियमानत ॥
मैं किमि कहहुं कहां मति पावहुं । यासो सबविधि विनयबतावहुं ॥
निर्गुण सगुण कीन स्तुति तोरी । क्षमा करहु हों दास निहोरी ॥
जन्म जन्म मोपर करु दाया । केशवहोय कबहुं नहिं माया ४९।७५

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेभूमिखण्डेभाषानुवादेऐन्द्रेसुमनो
पाठ्यानेएकोनविंशोऽध्यायः १६ ॥

बीसवां अध्याय ॥

दो० बिसयें महँ श्रीहरिकृपा सों पुत्रादिक पाय ॥

सोमशर्म सुख लहि कियो धर्म पुण्य यह गाय १

श्रीविष्णुभगवान् सोमशर्माकी बड़ी स्तुति सुनकर बोले कि हे
द्विज ! हम तुम्हारे तप पुण्य सत्य व इस पावन स्तोत्र से बहुत
सन्तुष्ट हुये इससे जो चाहो वरमांगो १ चाहे बड़ा दुर्लभ भी वर
तुम्हारे मनमें होगा पर हम देंगे जो कामना करोगे उसीको हम पूरी
करेंगे २ यह सुन सोमशर्मा बोले कि हे कृष्ण ! जो सुप्रसन्न मन से
हमारे ऊपर आपकी दयाहुईहो तो प्रथम हमको यह वर मिले कि ३
जन्मजन्मान्तर को प्राप्तहोकर हम सदा आपकी भक्तिकरें व जिस
लोकमें हमको आप रखेंगे वह मोक्षदायक अबल लोक दिखा दें
४ व फिर अपने वंश का तारक दिव्य लक्षणमंयुत विष्णुभक्ति में
तत्पर हमारे वंशका बढ़ानेवाला ५ सर्वज्ञ सब कुछ देनेवाला इन्द्रि-
योंको दमन करनेवाला तप व तेजसे युक्त देवता व ब्राह्मणलोगों
का पालक व इन दोनों की पूजा सदैव करनेवाला ६ देवताओं का
मित्र पुण्यभाव का दाता ज्ञानी पण्डित ऐसा पुत्र हमको दीजिये व
हे केशव ! हमारा दारिद्र्य हरलीजिये ७ यह सब हमारेहो इस में स-
न्देह नहीं है बस यही आपसे वरमांगते हैं यह सुन श्रीभगवान्
बोले कि हे द्विजश्रेष्ठ ! हमारे प्रसाद से तुम्हारे वंशके तारनेवाला
पुत्र होगा इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है व मनुष्यों के दुर्लभ सब

८० पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

भोगों को तुम भोगोगे ८। ९ व पुत्र उत्पन्न होनेका सुख देखते हुये सब सुख भोगोगे हे विप्र ! जब तक जीवोगे तब तक किसी प्रकार का दुःख न देखोगे १० व तुम नानाप्रकार के पदार्थ सब दोगे व आप सब पदार्थ भोगोगे व गुणों के बड़े ग्राहक होगे इसमें सन्देह नहीं है व सुन्दर किसी तीर्थ में मरकर परमगति पावोगे ११ स्त्रीसहित ब्राह्मण को ऐसा वरदेकर श्रीहरि अन्तर्धान होगये व स्वप्नसा सब दिखाई दिया १२ व अपनी सुमना स्त्रीके साथ ब्राह्मणोंमें उत्तम सोमशर्मा नर्मदाके तीर पुण्यदायक तीर्थ में १३ जिसका अमरकण्टक नाम है दान पुण्य करने लगे व बहुत दिनों तक ऐसा पुण्यदान करते हुये सोमशर्मा ने १४ अपने आगे कपिला व नर्मदाके सङ्गम में स्नान करके निकले हुये एक श्वेत रङ्गके हाथी को देखा १५ जो कि सुन्दर प्रकाशित दिव्य स्वरूप सुन्दर मद्युक्त गज लक्षणों से युक्त नाना प्रकारके भूषणों से भूषित बड़ी शोभासे युक्त १६ सिन्दूर कुंकुम उसके मस्तकमें लगाहुआ था व सुवर्णकी भूल उसके ऊपर पड़ी जिसमें नीलमणि बीच बीच में जटित थे व ऊपर पताका लगीथी १७ व उसके ऊपर अच्छी दीप्तिवाला सुन्दर लक्षणयुक्त सब आभरणों से भूषित सुन्दर माला और वस्त्र धारण किये सुन्दर चन्दन लगाये अत्यन्त सुन्दर पूर्ण चन्द्रमा के समान छत्र और चामर संयुक्त एक दिव्य पुरुष बैठाथा सिद्ध चारण और गन्धर्वों से स्तुति किये गये मंगलरूप हाथीपर चढ़ेजाते हुये हाथी समेत सुन्दर दिव्य लक्षणयुक्त पुरुषको देख विस्मययुक्त सोमशर्मा ने विचारा कि सुन्दर अङ्गवाला अच्छा व्रतधारे राह में प्राप्तहोकर कौन पुरुष जाताहै यह ये चिन्तनाही करते थे कि वह उन्हीं के द्वार पर आया १८। २२ व उनके गृहमें पैठने के समय दिव्यरूप होगया जैसा कि देवताओं का रूप होताहै तब बड़े हर्ष से युक्तहो द्विजों में उत्तम सोमशर्मा २३ धर्मात्मा अपने गृहको चले जैसे घरके द्वार पर आये फिर उस हाथी को उन्होंने ने न देखा २४ केवल उसके ऊपर से अतिसुगन्धित कुछ पुष्प गिरपड़े थे उन्हें उन्होंने ने देखा व गृह में जानेपर अपने आँगन में दिव्य वस्त्र नानाप्रकार के ठौर ठौर

पड़े धरेदेखा २५ व देखा कि सब गृह चन्दन व कुंकुम और पुण्यकारी सुगन्धोंसे पुताहुआ है व आँगनमें दूब अक्षत बहुतसे पड़ेहुये हैं २६ यह सब देख सोमशर्मा बड़ी चिन्ता में युक्त हुये व सुमनाको भी देखा तो दिव्य माङ्गलिक भूषणादिकों से भूषित बैठी थी इससे विस्मित हो अपनी स्त्री से बोले २७ किये दिव्य भूषण तुमको किसने दिये शृङ्गार व रूपकी सुन्दरता वस्त्र अलङ्कारादि किसने दिये २८ हे भद्रे ! इसका कारण निश्चय होकर हमसे कहो ऐसा अपनी भार्या से कह वे द्विजोत्तमजी विश्राम कर रहे २९ तब सुमना बोली कि हे कान्त ! सुनो एक उत्तम ब्राह्मण दिव्यरूप धारण किये श्वेत गज पर चढ़ा दिव्य भूषणोंसे भूषित ३० दिव्य चन्दनादि गन्ध अङ्गों में लगाये दिव्य शोभासे युक्त नहीं जानती कि कोई देवता जिस की सेवा सब गन्धर्व्वलोग करते थे ३१ व देवता गन्धर्व्व चारण लोग सब ओर से स्तुति करते थे सो वह हमारे गृहमें आया उसके सङ्ग पुण्यरूपवाली शृङ्गारसंयुक्त ३२ सब भूषणोंसे भूषित पूर्णमनोरथ वाली बहुतसी स्त्रियां भी थीं सब सब आभरणोंसे युक्त थीं व सबों के पूर्णमनोरथ थे उन सबोंसे व उस महात्मा पुरुष से हम संयुत हुई ३३ उन सबों ने एक अति दिव्य सब शोभासहित चौतरा रत्नोंसे बनाया उसके ऊपर एक दिव्य आसनधर हनको उसपर बैठाया व ब्राह्मणोंसे हमको हनवाया ३४ व सबोंने वस्त्र भूषणादि हमें दिये व पहिनाये फिर वेदोंके मङ्गल पाठपढ़े व पुण्यदायक शास्त्रोंके भी माङ्गलिक स्तोत्रादि सुनाये व बहुत गाया बजाया ३५ व वस्त्रों से चारों ओर से घेरकर सबोंने अच्छी तरह हमको फिर हनवाया और सब अंतर्धान होगये फिर सबके सब हमसे आकर बोले ३६ कि हे कल्याणि ! हम सब सदैव तुम्हारे घरमें बसेंगे तुम सर्वदा पति समेत पवित्र होवो ३७ ऐसा कर वे सब चले गये यह हमने देखा सो तुमसे कहा उस अपनी स्त्री का कहा हुआ सुन महामति सोमशर्मा ३८ फिर चिन्ता करने लगे कि क्या यह सब किसी देवताने बना दिया ऐसा चिन्तन कर व विचारांश कर महामतिवाले सोमशर्मा ३९ अपने धर्म कर्म करनेमें फिर लग गये व होते २ उनसे उनकी महा-

भागा पतिव्रता स्त्रीने गर्भ धारण किया ४० उस गर्भके धारण करनेसे वह देवीसुमना अधिक शोभित होनेलगी फिर समयपर उस तेजकी ज्वाला समेत स्त्री ने सुन्दर दीप्तिमान् देव समान पुत्र उत्पन्न किया उस पुत्रके होनेके समय अन्तरिक्ष में देवताओंके नगारे बाजे ४१।४२ व बड़े देवोंने शंख बजाये गन्धर्व लोगोंने ललितराग गाथा व अप्सरा लोग सब मिलकर नाचने लगीं ४३ तब सब देवताओं को सङ्गलिये ब्रह्माजी वहां आये व उस पुत्र का नामकरण किया व कहा कि आपका सुव्रत नाम है ४४ इस प्रकार नाम धराकर सब बड़े तेजस्वी देवगण स्वर्गको चलेगये जब सब देवगण चलेगये तो सोमशर्म्मा ने जातकर्मदि सब कर्म अपने पुत्र के किये जब देवताओंका बनाया हुआ सुव्रत नामपुत्र सोमशर्म्माके हुआ ४५।४६ तो उनके गृहमें महालक्ष्मीके वास करने से धन धान्य सब भरहुआ हाथी घोड़े महिषी धेनु सुवर्ण रत्न ४७ सब पदार्थ घरमें होगये इससे धनके संचयों से कुबेर कासा गृह शोभित होनेलगा सोमशर्म्माके गृहमें मारे धनके वही शोभा होगई जो कुबेरके गृहमें है ४८ इससे वे ब्राह्मणदेव ध्यान पुण्यादिक कर्म करनेलगे और अनेक प्रकारकी पुण्यसे युक्त होकर तीर्थयात्राको भी गये ४९ और ज्ञान पुण्य युक्त बुद्धिमान् श्रेष्ठ ब्राह्मण और भी पुण्य दान करतेभये ५० इस प्रकार बार २ धर्म करतेथे व पुत्रका पालन करते व पुत्रके जातकर्मदि समय २ पर बराबर करते थे ५१ फिर बड़े हर्षसे पुत्र का विवाह कराया तब पुत्रके भी गुणवान् शुभ लक्षणके बहुतसे पुत्र हुये ५२ सब सत्य धर्म तप युक्त व दान धर्म में सदैव रतहुये सोमशर्म्मा ने उन सब अपने पौत्रों के भी जातकर्मदि किये कराये ५३ व उन पौत्रों के सुखसे महाभाग्यवाले सोमशर्म्मा अति हर्षित रहने लगे व सब सुखों के संयोगसे वृद्धता व कोई रोग उनको हुआही नहीं ५४ सूर्य के तेजके समान महामति सोमशर्म्मा का शरीर सदा पच्चीस वर्षकी अवस्थाका बनारहा व शोभित रहा ५५ व वह देवी सुमनाभी पुण्य मङ्गलोंसे वैसेही शोभित रही पुत्र पौत्रोंके साथ दान व्रत संयम करती रही ५६ व पतिव्रतादि धर्मों से वह

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

८३

विशालनयनी अति शोभित होती थी सदा तरुण अवस्थासे युक्त
बनीरही जैसे सोलह वर्षकी स्त्रियां होती हैं ५७ इससे वे दोनों स्त्री
पुरुष सुन्दर मङ्गलोंसे व सदा नवीन अवस्था बनीरहनेसे अत्यन्त
मोद करते थे व सदा वे पुण्यात्मा महाहर्षसे युक्तरहे ५८ ॥

चौ० इमिदोनोंके वृत्तसुहावन । पुण्यचरितयुत अतिमनभावन ॥

तुमसनकहासकलमुनिपुञ्जा । ज्यहिसुनिहोत पापसबलुञ्जा ॥

अबतासुतसुव्रतके चरिता । कहतभलीविधि सों आदरिता ॥

जिमिसौनारायणआराधन । करिकैभयदुरहितसबबाधन ५९।६०

इति श्रीपाद्मेयमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेपेन्द्रेसुमनो

पाठ्यानेसुव्रतोत्पत्तिर्नामविंशोऽध्यायः २० ॥

इक्कीसवां अध्याय ॥

दो० इक्किसयें महँ बाल्यके सुव्रत चरित अनेक ॥

हरिपूजनवन्दनस्तवन आदिकहेकरिटेक १

सूतजी बोले कि एकसमय अत्यन्त विस्मित व्यासदेवजी जगत
के पति ब्रह्माजी से सुव्रतका सब चरित पूछते भये १ कि हे लोका-
त्मन् ! हे लोकविन्यास ! हे देवदेव ! हे महाप्रभो ! इससमय सुव्रत
का चरित सुनने की इच्छा है २ तब ब्रह्माजी व्यासजी से बोले कि
हे व्यासजी ! हे महाभाग्यवाले ! तपस्या सहित सुव्रत विप्र का उ-
त्तमचरित हमसे सुनो ३ सुव्रतनाम मेधावी ने बाल्यावस्थाही से
बड़ीउत्तम चिन्तनाकी व गर्भही में टिकेहुये उन्होंने पुरुषोत्तम ना-
रायणजी के दर्शन किये ४ पूर्वजन्म के कर्मों के अभ्यास से गर्भ
हीमें हरिका ध्यानकिया शंख चक्र धारण कियेहुये पद्मनाभ अति-
पुण्य देनेवाले श्रीहरिका ५ ध्यान बड़ी चिन्ता से करते व मन में
उनके चरित गाते मुख से स्तोत्र पढ़ते इस प्रकार श्रीहरिका ध्यान
वे द्विजसत्तम सदैव करते थे ६ जब उत्पन्नहुये तो सब बालकों के
सङ्ग उत्तम क्रीड़ा करनेलगे बालकों के व अपनानाम श्रीहरिके स-
म्बन्धके धरादिये ७ जिस मित्रको वे महामतिवाले पुकारें तो हरिही
के नामसे पुकारें जो नाम उन्होंने धरायाथा इसप्रकार धर्म्मात्मा

पुण्यवत्सल वे सदा करते ८ भो केशव ! हे माधव ! हे चक्रधारिन् !
 हे पुरुषोत्तम ! यहां आओ हमारे साथ खेलो ९ व हमारे साथ चलो
 हे मधुसूदन ! इसीप्रकार वे ब्राह्मणदेव अपने मित्रोंको हरिही के
 नामोंसे पुकारते १० सो इसीतरह वे ब्राह्मणदेव क्रीड़ा करनेमें कभी
 पढ़नेमें हास्य करने में लेटजानेपर भीतगाने में व नृत्यआदि देखने
 में हरिही के नामों का कीर्तन करते वाहनपर चढ़ने के समय आ-
 सनपर बैठने में ध्यान करने में सलाह देनेमें ज्ञान बतानेमें व और
 भी सब सुकर्मों के करने में ११ इसीप्रकार जगन्नाथ जनार्दन जी
 को देखें व पुकारें भी व विश्वनाथ महेश्वर उन्हीं श्रीहरि अकेलेका
 ध्यानकरें १२ तृण काष्ठ पाषाण शुष्कहो वा आर्द्रहो सबमें केशव
 को ही देखते व वे धर्मात्मा सब कहीं कमलेक्षण गोविन्दही को पु-
 कारते १३ आकाश में भूमिके मध्यमें पर्वतों पर वनों में जल में
 स्थलमें पत्थरमें व सब पशुवादि जीवोंमें भी १४ सुमनाकेपुत्र सुव्रत
 ब्राह्मण नृसिंहही को देखते बालक्रीड़ा को प्राप्त होके ऐसेही प्रति-
 दिन रमण कियाकरें १५ व सुन्दर रागों के गीतों से मधुरस्वर से
 कृष्णहीका गानकरें लय तालोंसेयुक्त स्वरमूर्च्छादिकों समेत रागों
 से गावें १६ एकसमय सुव्रतजी बोले व यह गीत गानेलगे कि ॥

हरिगीतिका ॥

वेदवादी सकल बुधजन सततध्यावतजाहि को ।
 ज्यहिअङ्गजङ्गमुरारिजीके बसतजगबहुताहिको ॥
 सकलपापकलाप नाशन योगपति भगवन्तके ।
 हमहोत शरणविहाय औरनमधुदमन श्रीकंतके १७
 सकल लोकन महुँ विराजत जो चराचर पालई ।
 ज्यहिमाहिंलोकअशेषराजत गुणनिधानकहावई ॥
 सबदोषरहितपरेशअगजग बसतनिर्भयह्वैजहां ।
 ताकेचरणयुग नमतहों नित और जाहुँ कहौकहां १८
 वेदान्तशुद्ध विशुद्धमति बुधजाहि नारायणकहैं ।
 गुणधाम पूरणकाम रामनमामहम सबसुखलहैं ॥
 संसारसागर अतिअपार उतारहित चितदैसही ।

हमकरतबहुतप्रणामकेशव द्रवहुसुनिसबमोकही १६
 योगीन्द्र मानस है सरोवर राजहंस तहां हरी ।
 अरु शुद्धरूपप्रभावजगमहँ नाहिं जानतइमिकरी ॥
 ताकेचरणयुग शरणह्वै नित नमतहैं चितमें धरी ।
 सोकरहु रक्षामेशहमरी चहत नित आदरकरी २०
 जोशुद्धवेद अनन्तअद्वय सकलधर्मसमन्वितम् ।
 सबलोगगुरुसुरईशकेशव अमितवीर्यसुसंयुतम् ॥
 सुरगीतप्रीतअलापकरि श्रीरङ्गभुवनाधिपगुनी ।
 गावतमनावतचरित तवनित कबहुँ श्रवणपरैधुनी ॥
 दुखअन्धकार पसार नाशनहेतु चन्द्रसमानहै ।
 सबविश्वकरतप्रकाश दिननिशिप्रभुपरेशमहानहै ॥
 सम्पूर्ण अमृतकला कलापन सौंसदा सुविकाशहै ।
 त्यहिशरण शरणागतकृपाकरसकलजगतप्रकाशहै ॥
 शुभयोग युक्त विशेष इन्द्रिय गणनसों जग देखई ।
 चरअचरजीव अजीवकहँ विधिसों निरन्तरपेखई ॥
 नहिलखतभखतसुपापिगणत्यहिकरतकोटिउपायहू ।

त्यहिशरणअशरणशरणजूकेजातविगतअपायहू २१ । २४

इसप्रकार दोनों हाथोंसे ताड़ी बजाय ताल लगाय गाय २ श्री
 कृष्णजी को गीतोंसे रिभाय २ बालकों के संग प्रमोद करतेथे २५
 इस तरह बालभाव से सदा क्रीड़ा में रतरहते थे सुमनाके पुत्र सुव्र-
 तजी सदा विष्णु के ध्यान में परायण रहते २६ इसप्रकार खेलते
 हुये शुभलक्षण विचक्षण सुव्रतको आतेहुये देख सुमना कहती थी
 वत्स भोजनकरो तुमको क्षुधा पीड़ित करती होगी २७ तब वे परम-
 प्राज्ञ अपनी माता सुमनासे फिर कहते थे कि हम श्रीहरिके ध्यान
 रसके महा अमृत से तृप्तहैं २८ फिर भोजनके आसन पर बैठकर
 मिष्टभोजन के पदार्थ देखकर कहते थे कि यह अन्न स्वयं विष्णु
 रूपहै व आत्मा अन्नमें स्थितहै २९ सो आत्मा के रूप इस अन्नसे
 श्रीविष्णुभगवान् तृप्तहों जिन विष्णुभगवान् का क्षीरसागरमें सदा
 वास रहताहै ३० इस पुण्यजल से वे केशवभगवान् तृप्तहों व इन

मनोहर पुष्प ताम्बूल चन्दन सुगन्ध से आत्मरूप श्रीकेशव विष्णु तृप्तहों जब शयन करनेको जातेथे तब दिव्य शय्या देखकर विष्णु जीकी चिन्तना करते ३१ । ३२ कि इस शय्यापर शयन करतेहुये जलशायी भगवान् के हम शरणमें हैं इसप्रकार भोजन करने के समय वस्त्रधारण करने के आसनो पर बैठने के व शयन के समय ३३ सदा श्रीहरिका स्मरण करके उन्हींके निवेदन सब पदार्थोंको करते और धर्मात्माजी युवावस्था पाकर कामभोगों को छोड़कर ३४ फिर पवित्र पापनाशन जहां सिद्धेश्वर नाम लिङ्ग रुद्रजीका है व जहां अमरेश्वर व अंकोरेश्वर नाम लिंगहैं नर्मदाके दक्षिणतीरपर उत्तम वैदूर्यपर्वत में सिद्धेश्वरनाथ भी हैं वहीं जाकर सुव्रतजी तप करनेलगे ३५ । ३७ ॥

इति श्रीपाद्मयेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेऐन्द्रेसुमनो

पाख्यानेएकविंशोऽध्यायः २१ ॥

बाईसवां अध्याय ॥

दो० बाइसयें महँ पूर्वजनि सुव्रत कथा प्रसंग ।

तहँ धर्माङ्गद बहुरि रुक्मांगद चरितसुढंग १

इतनी कथा सुन व्यासजीने ब्रह्माजी से पूँछा कि हे महाभाग ! एक प्रश्न हम करते हैं आप उत्तर दें आपने पूर्वसमय में कहाथा कि सुव्रत ईश्वरहैं १ व पूर्वजन्म के अभ्यास से उन्होंने अनामय श्रीनारायणजी का ध्यानकिया सो अब कहिये कि पूर्वजन्म में सुव्रत किस जातिमें उत्पन्न हुयेथे २ वह हससे इससमय कहो व उन्होंने कैसे श्रीहरिकी आराधनाकी व इन्होंने कौन पुण्यकिया जिससे देवदेवेश श्रीविष्णु प्रसन्न हुये ३ यह सुन ब्रह्माजी बोले कि बहुत धन समृद्धियुक्त अतिपुण्य वैदिश नाम नगरमें महातेजस्वी अति बली ऋतध्वजका पुत्र राजा हुआ ४ उसके महाप्राज्ञ रुक्मांगद नाम अतिप्रसिद्ध पुत्रहुआ उसकी स्त्रीका सन्ध्यावली नामथा यह उसकी धर्मपत्नी बड़ी यशस्विनीथी ५ उसमें राजाने अपने तुल्य पुत्र उत्पन्नकरके उसका धर्माङ्गद नाम धराया ६ यह रुक्मांगदका

पुत्र सब लक्षणों से सम्पन्न पिताकी भक्तिमें परायण व हृषीकेशजी की भक्तिमें निरत हुआ ७ जिसने अपने पिताके सुखके लिये मोहिनी को अपना शिर दे दिया था उसके वैष्णवधर्म से व पिताकी भक्ति से ८ हृषीकेश भगवान् ने प्रसन्न होकर सदेह उसे वैष्णवपदको भेज दिया था व सब धर्म करनेवाले उस वैष्णवको सब भगवद्दासोंमें श्रेष्ठ समझा था ९ उन महाप्राज्ञ प्रज्ञा व ज्ञानमें विशारद धर्म्मगदजीको जब सशरीर श्रीहरिने वैष्णवलोक को भेजा था वहां निवास करके धर्म्मभूषण महाधर्म्मवाले उन्होंने १० दिव्य नानाप्रकारके सुखभोग जब सहस्रयुग भोग करते २ बीते तो वे धर्म्मात्मा धर्म्मके भूषण ११ उस विष्णुपद से भ्रष्टहुये व विष्णुजी के प्रसादसे आकर सुमना के आनन्द बढ़ानेवाले सोमधर्म्माके पुत्र महाबुद्धिमान् सुव्रत के नाम से प्रसिद्धहुये व सब भागवतों में श्रेष्ठहुये व जाकर श्रीविष्णु में मन लगाकर तप करनेलगे १२।१३ काम क्रोधादि दोषों को उन द्विजोत्तम ने छोड़ दिया व अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर निरन्तर तप करनेलगे १४ सिद्धेश्वर के समीप जो श्रेष्ठ वैदूर्य नाम पर्वत है उसीपर तप करने का प्रारम्भ उन्होंने ने किया अपने मन को एकाग्रकर श्रीविष्णुजी के साथ मिला दिया १५ व सौ वर्षतक उन महात्मा श्रीहरिका ध्यान करते रहे तब शंख चक्र गदा धारण किये श्रीजगन्नाथजी ने अतिप्रसन्नहो १६ लक्ष्मी सहित वहां आकर उनको वर दिया कहा कि हे धर्म्मात्मा देवताओं में श्रेष्ठ सुव्रत ! जागो २ समझो समझो १७ वर मांगो हम कृष्णहैं तुम्हारे समीप आये हैं ऐसा श्रीविष्णुजीका उत्तम वचन सुनकर १८ व जनार्दन जी को देखकर वे मेधावी सुव्रतजी बड़े हर्ष से युक्त हुये व दोनों हाथ जोड़कर उन्होंने श्रीहरिके साष्टांग प्रणाम किया १९ व सुव्रत बोले भी कि हे जनार्दन ! बड़े २ दुःख जालरूपी बड़ी २ लहरियों से युक्त व विविधप्रकारके मोहतरङ्गों से भरे व सब दोषगण बड़े २ मत्स्यों से युक्त इस संसारसागर में पड़ेहुये हम दीन का उद्धार करो २० व हे मधुसूदन ! नानाप्रकार के कर्म्म मेघों के गर्जते व वर्षते में पातकों के संचयोंसे व्याकुल व चलायमान व मोहान्वकार

परदों से नेत्र मूँदगयेहुये हम दीनका हाथ पकड़ो हमें कुछ दि-
खाई नहीं देता २१ हे कृष्ण ! अति दुःखों से भेदहुये इस संसाररूप
सघन वन में भूलेहुये व मोहमय सिंहों से व्याकुल व करुणारूप
बहुतसी ज्वालाओं के बीच में बहुधा पड़जाने से डरेहुये हमारी
रक्षाकरो २२ हे भगवन् ! हे मुरारे ! यह संसाररक्ष बहुत पुराना
व ऊँचा है माया इसकी जड़ें हैं दीनता व नानाप्रकारके दुःख शा-
खायें हैं व स्त्री आदि का संग इसके फलहैं ऐसे वृक्षपर चढ़कर
नीचे गिरेहुये हमारी रक्षाकरो २३ हे कृष्ण ! विविधप्रकारके मोहम-
य धूमों से युक्त दुःखों के अग्नि से जो कि शोक वियोग मरणादि-
कों के तुल्य हैं हम जले जाते हैं ज्ञानरूपी बादलों से स्नान करा के
हमको सदैव मोक्ष देवो २४ हे केशव ! घोर अन्धकार के परदे से
ढँकेहुये इस बड़ेभारी संसार गढ़ में गिरेहुये व महाभय से आतुर
हम दीन की रक्षाकरो क्योंकि तुम्हारी शरण में आये हैं २५ हे भ-
गवन् ! जो लोग निश्चलमानसभावसे युक्त हो ध्यानसे व ज्ञानयुक्त
मनसे तुम्हारी पदवीको पाते हैं वे धन्य हैं क्योंकि तुम्हारे पादयु-
गलों का ध्यान सदा देव किन्नरगण कियाकरते हैं २६ सो ऐसेही
हमारी इच्छा को पूरीकरो हम और देव को न कहें न भजें और न
चिन्तनकरें तुम्हारे युगल चरणारविन्दों के निरन्तर प्रणाम करतेहैं
व हमारे पाप के सब संचय दूरहों व जन्म रहम तुम्हारे दासोंके दास
हों आपके चरणकमलोंको सदैव स्मरण करतेहैं २७ २८ व हे कृष्ण !
हे प्रभो ! जो हमारे ऊपर प्रसन्नहुये हो तो हमको यह सुन्दर वरदो कि
हमारे माता पिता को शरीर सहित अपनेधामको लेचलो २९ व हम
कोभी सशरीर उन्हींके संग अपने धामको पहुंचाओ बस और कुछ
भी वर हम नहीं चाहते इसमें सन्देह नहीं है यह सुन श्रीकृष्ण जी
बोले कि बहुत अच्छा ऐसाही हो यह तुम्हारा कार्य्य अवश्य होगा
इस में कुछ संशय नहीं है ३० उन सुव्रतजी की भक्ति से हृषीकेश
जी बहुत संतुष्टहुये व सोमशर्मा व सुमना दोनों उष्णता व नाश
से रहित श्रीविष्णुजी के लोक को चले गये ३१ व सुव्रतभी उन्हीं
अपने पिता माता सोमशर्मा व सुमना के संग सदैवही श्रीहरि-

पुरको गये व जबतक दो कल्प बीते तबतक वे सुव्रत ब्राह्मण ३२ दिव्यलोक में नानाप्रकार के दिव्यभोग भोगतेरहे फिर स्वर्गलोक में देवताओं का कार्य करने के लिये कश्यपजी के गृह में फिर ३३ उन्हीं विष्णुभगवान् के कहने से उत्पन्न हुये व उन्हीं महात्मा विष्णु के प्रसाद से ऐन्द्रपद भोगनेलगे ३४ वहांउनका वसुदत्त नामहुआ व सब देवगण उनके नमस्कार करनेलगे क्योंकि इन्हीं वसुदत्तहीका दूसरानाम इन्द्रभी है सो जो आजकल ऐन्द्रपद को भोग करते हैं ३५ हे व्यास ! यह तुमसे सृष्टि के सम्बन्धका कारण हमने सुनाया और भी जो कुछ तुम पूछो गे सो सब कहें गे ३६ व्यासजी बोले कि महाबुद्धिमान् बलवान् रुक्मांगद का पुत्र धर्मांगद प्रथमसत्य-युगमें सृष्टि समय में उत्पन्न होकर इन्द्रहुआ ३७ हे देवदेवेश ! वह कैसे पृथ्वी में और धर्मांगदहुआ और धर्मांगद राजा देवताओंका स्वामीथा ३८ इस बातमें हमको बड़ासन्देहहै उसे आप कहनेके योग्य हैं ब्रह्माजी बोले कि हम तुमसे सब सन्देहोंका नाशनेवाला वृत्तान्त कहेंगे ३९ यह सब देव श्रीविष्णुजीकी लीला देखने के लिये संसार बनाहै जैसे सूर्यादिवार शुक्ल व कृष्ण दोपक्ष बारहमास हेमन्तादि छः ऋतु ४० संवत्सर मनु ये सब बने हैं इन्हीं के प्रमाणसे अयुतों युग बीतजाते हैं उनके पीछे कल्प होताहै तब हमजाकर जनार्दन जीमें लीनहोजातेहैं ४१ वहममें सबचराचर यह विश्व लीन होजाता है फिर वह योगात्मा परमेश्वर श्रीविष्णु हमआदि सब विश्व की रचनाकरता है ४२ फिर हमहोते तदनन्तर वेद होते हैं फिर देव गणहोते हैं फिर और ब्राह्मणलोग उत्पन्न होते हैं व ऐसेही सब राजालोग भी प्रत्येककल्प में उत्पन्नहोकर अपने २ चरित करते हैं ४३ इस प्रकार सब होतेजाते रहते हैं हे महाभाग ! इसविषय में विद्वानलोग मोहित नहींहोते पूर्वके कल्पमें जैसे महाभाग रुक्मांगदराजा हुआथा ४४ ऐसेही धर्माङ्गद महाख्यातिमान् द्विजहुआ था इसीप्रकार श्रीरामचन्द्रादिक महाराजाधिराज हुये व ययाति नहुषादि बहुतराजा हुये ४५ व महात्मा स्वायम्भुवादि मनुहुये व फिर नाश को भी प्राप्तहुये व इनमें ऐन्द्रपद वे धर्मात्मा राजा भोगते हैं

९०

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

४६ जैसे कि महावीर धर्मागद राजाने भोगाहैं ऐसे ही वेद देवता पुराण व स्मृतियांभी सब ऐन्द्रपद अपनी २ पारीपर भोगती हैं ४७ हे द्विजश्रेष्ठ ! यह सब तो प्रत्यक्ष तुम्हारे आगे सुत्रतका पुण्यकारी अच्छी गतिका देनेवाला चरित हमने कहा अब तुम्हारे आगे अ-प्रत्यक्ष समाचार कहेंगे सुनना ४८ । ४९ ॥

इति श्रीपाद्मयेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेऐन्द्रेसुत्रतोपाख्यानं
नामद्वाविंशोऽध्यायः २२ ॥

तेइसवां अध्याय ॥

दो० तेइसयें महँ दैत्यवध लखि दितिभई उदास ॥

नियम सहित बलनामसुत उपजायहु सुरत्रास १

कीन महातप ताहिसुनि अदिति पुरन्दर पाहिं ॥

हतन कह्योत्यहिसोहत्यो यहकहगुनिमनमाहिं २

इतनीकथा सूतसे सुनकर ऋषिलोगोंने फिर सूतसे प्रश्न किया कि तुमने धन्य पुण्य व यश फैलाने वाली यह बड़ी विचित्र कथा कही व सब पापहरनेवालीभी है क्योंकि आप कहनेवालोंमें बड़ेश्रेष्ठ हैं १ हेसूतनन्दन ! जैसे पूर्वमें सृष्टिका सम्बन्ध तुमने विस्तार से कहाथा वैसेही फिर हम तुमसे सृष्टिकासम्बन्ध सुनाचाहते हैं २ सूत जी बोले कि सृष्टिके संहार का कारण हम विस्तारसे कहेंगे जिसके केवल सुननेहीसे नर सर्वज्ञताको प्राप्त होजाता है ३ जब हिरण्य-कशिपुने बलिकाकहा न मानकर श्रीहरिसे वैरबांध बड़ीभारीतपस्या की तो उसके तपसे तीनोंलोक व्याप्तहोगये व तपस्यासे ब्रह्माजी की आराधना करके उसने बड़ादुर्लभ वरपाया ४ जिस में देवता गन्धर्वादि ब्रह्माकी सृष्टिभरसे उसको अमरता मिलगई इससे दे-वताओंको स्वर्गसे निकाल तीनोंलोकों की इन्द्रता आपही भोगने लगा ५ तब देवता गन्धर्व वेदपारगामी मुनिलोग नाग किन्नर सिद्ध व यक्ष तथा और सब देवताओंकी जातियां ६ ब्रह्माजीको सङ्ग ले श्रीनारायण प्रभुके समीपगये जो कि क्षीरसागरमें योगनिद्राको अपनी इच्छासे ग्रहणकरके शयन कररहेथे ७ उनको बड़े २ स्तोत्रों

से जगाकर सब देवगण हाथ जोड़ कर खड़ेहुये व उनके जागनेपर उस दुष्टात्मा हिरण्यकशिपुका सब वृत्तान्तकहा ८ व जगत्पति श्री नारायणने सुनकर नृसिंहका रूप धारणकरके उस हिरण्यकशिपु को मारडाला ९ व फिर वाराहरूप धारणकर महाबल हिरण्याक्षको भी विदारणकिया पुण्यकारी पृथ्वी को लेआये उसीमार्ग में उसअसुर कोभी माराथा १० व अन्यभी घोरदर्शन बहुतसे दानवोंको उन्होंने मारा इसप्रकार जब बड़े २ सब दानव नष्टहोगये ११ व और भी दुष्ट दितिके जब सबपुत्र नष्ट होगये व देवगण फिर अपने स्थान को प्राप्तहुये १२ यज्ञ व धर्म कर्म यथावस्थित ठौर २ होनेलगे व सबलोग अच्छेप्रकार स्वस्थ होगये तब दैत्योंकी मातादिति बड़े दुःखसे पीड़ितहुई १३ पुत्रों के शोकसे सन्तप्तहो हाहापुत्रो ! ऐसा कहकर मूर्च्छित होगई फिर कुछ चैतन्य होकर अपने सूर्य समान प्रकाशित तप और तेजयुक्त दाता और महात्मा कश्यपपतिसे बड़ी भक्तिसे प्रणामकरके हाथजोड़ उनमहातपस्वी महामतिकश्यपजी से बोली १४।१५ कि हे भगवन् ! विष्णुने हमको विनापुत्रों की करदिया दैत्यों व दानवोंको देवताओंसे मरवाडाला १६ हे मुनिसत्तम ! अब हम पुत्रोंके शोकके अग्निसे सदाजलाकरतीहैं हे विभो ! हमारे आनन्दके करनेवाला व सबका तेज हरनेवाला १७ सुबल सर्वांग सुन्दर देवताओंकी दीप्तिकेसमान दीप्तिवाला बुद्धिमान् सब कुछ जाननेवाला ज्ञाता व महापण्डित १८ तप तेजसमेत सुबली सुन्दर लक्षणवाला ब्रह्मण्य ज्ञानवेत्ता देव व ब्रह्मणोंकी पूजाकरनेवाला १९ व सब लोकों को जीतनेवाला व हमारे आनन्दके करनेवाला व सर्व शुभलक्षणों से युक्त पुत्र हमको दीजिये २० दितिका ऐसा उत्तम वचन सुनकर कश्यपमुनि उस दुःखित दितिके ऊपर कृपायुक्तहो बहुत सन्तुष्टहुये २१ व उस दीनमनवाली अतिदुःखित दितिसे उसके शिरपर अपना हाथ धरके भावमें तत्पर उससे बोले २२ कि हे महाभागे ! जैसा पुत्र तू चाहती है वैसाही होगा यह कह वे तो सुमेरु पर तप करने चले गये २३ व वहां जाकर उन कश्यपजीने निरालंब होकर परम व्रत साधनकर बड़ी तपस्याकी व इस अन्तरमें दितिने बड़ा उत्तम

गर्भ धारणकिया २४ व सब धर्म जाननेवाली चारुकर्म करनेवाली परमयशस्विनी उस दितिने सौ वर्षतक गर्भ धारणकिया इससे उसका गर्भ बहुत पवित्र व प्रकाशित हुआ २५ उसका उत्पन्न किया हुआ पुत्र ब्रह्मतेज से युक्त हुआ तब बड़े हर्षसे युक्तहो कश्यपमुनि वहां आये २६ व उस पुत्रका महामेधावी कश्यपजीने बल नाम धराया जैसा उस पुत्रका बल नामथा उसी के तुल्य वह बलवान् भी एकही हुआ २७ इसप्रकार नामकरण करके फिर उसका यज्ञोपवीत भी कश्यपजीने किया फिर उससे कहा कि हे महा भाग्यवाले हमारे पुत्र ! अब तुम जाकर ब्रह्मचर्य साधनकरो २८ उसने कहा बहुत अच्छा द्विजोत्तम हम तुम्हारे वाक्य से ऐसाही करेंगे तब प्रथम उस बलने सब वेद पढ़े २९ तदनन्तर जाकर सौ वर्षतक बड़ी भारी तपस्या उसने की फिर तप और तेजयुक्त हो माताके पास आया ३० उसका ब्रह्मचर्य से अतितीव्र वीर्य देखकर दिति बड़े हर्ष से युक्त हुई मारे आनन्दके फूलीहुई अंगों में न समाती थी ३१ इससे एकदिन उस परमतपस्वी बलनाम पुत्रसे बोली जोकि बड़ा मेधावी महात्मा व प्रज्ञा ज्ञानसे युक्तथा ३२ कहा कि हे वत्स ! अब तुम्हारे जीनेमें हमारे सब पुत्र जीतेहैं जिन हिरण्यकशिपु आदिकों को विष्णुने मारडाला था ३३ इससे हे पुत्र ! अब वैरको सिद्धकरो संग्राम में देवताओंको मारडालो फिर उस महाबली बलनाम पुत्रसे दानवों की माता दनु आकर बोली कि ३४ हे पुत्रक ! प्रथम तो सब देवताओंके स्वामी इन्द्रको शीघ्र मारो फिर सब देवताओं को मारकर पीछे गरुड़पर चढ़नेवाले उन विष्णुको भी मारडालो ३५ इनदोनों दिति व दनु अपनी सौतियों के वचन सुन देवताओं की माता अदितिजी बहुत दुःखितहुई व बड़े दुःखसे युक्तहो वे पतिव्रता अदितिजी अपने पुत्र इन्द्रसे बोलीं कि ३६ दितिका यह बल नाम पुत्र ब्रह्मतेजसे बढ़ते २ बड़े शरीरवाला होगयाहै व देवताओं के वधके अर्थ तप कर रहाहै ३७ हे देवेश ! इस बातको जानो जिसमें तुम्हारा कल्याणहो वह करो माताका ऐसा वाक्य सुनकर इन्द्र ३८ बड़ी भारी चिन्ताको प्राप्त हुये व अतीव दुःखित हुये व महा भय से ऊबकर

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

९३

उन्होंने अपने मनसे यह चिन्ता की ३९ कि कैसे देवधर्म को दूषित करनेवाले इसको हम मार डालेंगे बलके मार डालने के विषयमें इन्द्र ने निश्चय कर लिया ४० एक समय वह बल सन्ध्या करने के लिये समुद्र के तटपर पहुँचा व वहाँ मृगचर्म व दण्डकाष्ठ लिये विराजमान हो ४१ अमल पुण्य व ब्रह्मचर्य के तेजसे प्रकाशित सागर के तीर उसे संध्या करते ४२ व शान्तचित्त होकर मंत्र जपते हुये इन्द्र जीने देखा व जाकर वज्रसे उस दितिनन्दनको ताड़ित किया ४३ कि प्राणरहित हो बल पृथ्वीपर गिर पड़ा उसको मृतक देखकर बड़े हर्ष से युक्त हो इन्द्र बड़े प्रमुदित हुये ४४ इस प्रकार दितिके पुत्र उस बल दैत्यको मारकर इन्द्र धर्मात्मा बड़े सुखसे राज्य करने लगे ४५॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे बलदैत्यवधो नाम त्रयो

विंशोऽध्यायः २३ ॥

चौबीसवां अध्याय ॥

दो० चौबिसयें महँ वृत्रकी है उत्पत्ति विचित्र ॥

पुनि ता मैत्री इन्द्रसों यह कह चित्रचरित्र १

इतनी कथा सुनाकर सूतजी फिर ऋषियों से बोले कि सुन्दर बलवाले बलनाम पुत्रको मार गया हुआ सुन दितिने हाहाकष्ट कह कर अत्यन्त रोदन किया व बड़ी दीनता प्रकट की १ व बहुत दिनों तक उस परमतपस्विनी यशस्विनी दितिने अतिदीनता कर अपने गति कश्यप जी के पास जाकर कहा कि २ हे द्विज ! सुनो पापी तुम्हारे पुत्र इन्द्रने ब्रह्मलक्षण युक्त महातपस्वी हमारे पुत्र बल को सागरके समीप सन्ध्योपासन करते हुये देख चुप्पे से जाकर वज्रसे मार डाला इस बातको सुनकर मरीचिजी के पुत्र कश्यपजी ने बड़ा ही कोप किया ३ । ४ व क्रोधकी ज्वाला से जल उठे महाक्रोधानलको प्रकट किया फिर पवित्र अग्नि में एक अपनी जटा उखाड़ कर ५ कहा कि बस हम इन्द्र के वधके लिये पुत्र उत्पन्न करेंगे यह कह अग्नि में वह जटा डाल दी इससे उस अग्निकुण्डसे अग्निसमान प्रज्वलित एक असुर उत्पन्न हुआ ६ जिसका काले अञ्जनके ढेरके

समान तो रंगथा व पीले २ नेत्र अतिभयङ्कर आकृति ऐसे कराल मुखवाले उसको जगत् भरको भय देनेवाले कश्यपजी ने देखा ७ वह महावीर्यवान् खड्ग चर्म धारणकिये मुनि के तजसे प्रकाशित महामेघ के समान ऊँचा महाबलीथा ८ वह कश्यपजीसे बोला कि हे विप्र ! हमको आज्ञादीजिये हे विप्र ! आपने हमको क्यों उत्पन्न किया है इसका कारण कहिये ९ हे सुव्रत ! उसे हम आपके प्रसाद से सिद्ध करें यह सुन कश्यपमुनि बोले कि हे पुत्र ! दितिके पुत्र बल को इन्द्रने छलसे मार डाला है इससे दितिका मनोरथ तुम पूरा करो १० हे महाप्राज्ञ ! अदिति के पुत्र दुरात्मा इन्द्रको मार डालो व देवराजके मारजानेपर ऐन्द्रपदका राज्य भोग करो ११ इस प्रकार कश्यप महात्माकी आज्ञापाकर वृत्रासुर ने इन्द्रके मार डालने का उपाय किया १२ प्रथम बड़े पौरुषसे धनुर्विद्या सीखने में अभ्यास किया फिर बल वीर्य तेज धैर्यादि क्षत्रियों के सब गुण व स्वभाव सीखे व धारण किये १३ वृत्रासुरका ऐसा व्ययमदेख इन्द्र अत्यन्त भय से आतुरहुये व उस दुरात्मा वृत्रासुरके लिये उन्होंने उपाय विचारा १४ उसके वधके अर्थ सब महामुनियोंको बुलाया व सप्तर्षियों को भी बुलाकर वृत्रासुरके पासको भेजा कि १५ आपलोग वहांजायें जहां वह वृत्रासुर है उससे जाकर आपलोग हमारा मिलाप करा दें १६ इस प्रकार इन्द्रके सम्मतसे वे सप्तर्षिलोग जाकर वृत्रासुरसे बोले १७ कि हे दैत्यश्रेष्ठ ! इन्द्र मित्रता करना चाहते हैं सो आप करें यह सातों तत्त्वके जाननेवाले ऋषियों ने महाबली वृत्रासुरसे कहा १८ कि महाबुद्धिमान् जब इन्द्र आप मित्रता करना चाहते हैं तो तुम क्यों नहीं करते १९ वस इन्द्र से मैत्री करके हे वीर ! आधा ऐन्द्रपद सुखसे तुम भोगो व आधा इन्द्र भोगें ऐसा करनेसे दैत्य व देवता दोनों सुखसे रहेंगे व वैरभाव छूटजायगा इस बातको सुनकर वृत्रासुर बोला कि हे मुनिसत्तमो ! जो इन्द्र सत्यतापूर्वक मित्रता चाहते हैं २० । २१ तो हमभी सत्य २ मैत्री करेंगे इसमें कुछभी संशय नहीं है भला जो छल करके इन्द्र हमारे साथ द्रोहकरें २२ तो हे विप्रो ! फिर उसके लिये क्या प्रमाण ब-

तातेहो सो यह सुन ऋषियों ने जाकर इन्द्रसे पूँछा कि तुम दोनों के विषयमें इस अर्थ में कौनसी विश्वासकी वार्त्ता है कि उसके होजाने पर सत्य २ मैत्री बनीरहै तब इन्द्रने सप्तर्षियों से कहा कि आप लोगों को बीचमें डालकर हम सत्यही का बर्ताव करेंगे छलका नहीं २३ । २४ यदि सत्य के विपरीत करें तो ब्रह्महत्यादि पाप हमको निःसन्देह लगे यह सुन सप्तर्षियों ने जाकर वृत्रासुर से कहा २५ कि इन्द्र ने कहा है कि जो तुम्हारे साथ हम छलकरें तो हमको ब्रह्महत्यादिक सब पापलगे इसमें सन्देह नहीं है २६ बस हे महा-मते ! इस विश्वास वचन से तुम इन्द्र के साथ मैत्री करो वृत्रासुर ने कहा कि आपलोगों के संग चलकर इन्द्र से मैत्री करेंगे तब वे ब्राह्मणश्रेष्ठ वृत्रासुरको इन्द्रके स्थानपर लेगये व वृत्रासुर को आते देख इन्द्र मैत्री करने के लिये उद्यतहुये व अपने सिंहासनपर से उठकर अर्घ लेकर बड़ी शीघ्रता से आधा सिंहासन वृत्रासुरको बैठने के लिये दिया व धर्मात्मा वृत्रासुर उसपर बैठा व इन्द्र भी आधे सिंहासन पर बैठे व वृत्रासुरसे कहा कि हे महाभाग ! आधा राज्य तुम भोगो आधा हम भोगें २७ । ३० व हम दोनों सुखसे आपस में बर्ताव करें इस प्रकार इन्द्रने वृत्रासुर को अच्छे प्रकार विश्वास दिया ३१ जब सब ऋषिलोग अपने २ स्थानों को चलेगये व कुछ दिन प्रीतिभावसे चले तब दुष्टात्मा इन्द्र वृत्रासुर के रात्रिदिन छिद्र देखनेलगे ३२ रात्रिदिन यही विचाराकरें कि कहीं कोई छिद्र मिले मैत्री तोड़डालें परन्तु उस महात्मा वृत्रासुर में कोई भी छिद्र इन्द्र को न दिखाई दिया ३३ तब इन्द्रने उसके वध के लिये उपाय विचारलिया व रम्भा नाम अप्सरा को उसके पास भेजा कि जाकर उस महासुर को मोहितकरो ३४ हे शुभे ! जिस किसी उपायसे बने इस दैत्यको महामोहमें डालो जिसमें मारकर हम सुखको प्राप्तहों ३५ तब रम्भा जाकर महादिव्य पुण्य व पुण्यवृक्षोंसे शोभित बहुत पुष्पों से युक्त मृग व पक्षियों से समाकुल ३६ व दिव्य विमानमन्दिरों से सब ओरसे शोभित दिव्य गन्धर्वों के गीतों से युक्त अमरोंकी गुञ्जार से सदैव आकुलित ३७ कोकिलाओंकी पुण्य कूकोंसे सर्वत्र

मधुर मोर हरिणादि पक्षिमृगों से सब कहीं समाकुल ३८ व सब ओरसे दिव्य चन्दन के वृक्षोंसे अलंकृत व जलसे पूर्ण मनोहर वापीकूप तड़ागादिकों से शोभित ३९ जिनमें कि कमल शतपत्रादि पुष्प फूलरहेथे उनसे विराजमान व देव गन्धर्व सिद्ध चारुण किन्नर ४० व मुनियों से भरा दिव्य देवताओंकी पुष्पवाटिकाओं से शोभित व नाना प्रकार के कौतुक मंगल करनेवाली अप्सराओं के नृत्य से विराजमान ४१ सुवर्ण के धवरहरों से शोभित चामर छत्रादिकों से मण्डित कलशों व पताकाओं से सर्वत्र समलंकृत ४२ वेदध्वनि से समाकीर्ण व गीतध्वनि से समाकुल इस प्रकारके नन्दन वन में जाकर चारुहास करनेवाली वह रम्भा ४३ अप्सराओं के झुण्डों के साथ क्रीड़ा करनेलगी सूतजी शौनकादिकों से बोले कि एक दिन कालका खींचाहुआ वह वृत्रासुर कुछ दानवों को संगलिये आनन्द समेत उसी नन्दनवनको गया व इन्द्रभी अलक्षितहोकर उस महात्मा वृत्रासुर के पासहीपास घूमते चलेजातेथे क्योंकि वे शंकितचित्त होकर सदा उसके छिद्र ढूँढ़ा करतेथे व वह महाप्राज्ञ सब कर्मोंमें इन्द्र का विश्वास करताथा ४४।४६ इन्द्रको परममित्र जानकर कुछ उनकी ओरसे भय नहींकरताथा इधर उधर घूमताहुआ सब कहीं परमशुभ वनदेखता फिरताथा ४७ जो वन अतिरम्य नाना प्रकारके कौतूहलों से युक्त व उत्तम स्त्रीगणों से भराहुआ था देखा तो चन्दनकी पुण्यदायिनी शीतल छायामें बैठीहुई ४८ विशालाक्षी रम्भा नाम अप्सरा क्रीड़ा कर रही थी वह महाभाग्यवती यशस्विनी अपनी सखियों के साथ हिंडोले पर चढ़ी ४९ सुस्वर से गीत गारहीथी जिस गीत को सुनकर विश्वभर मोहित होजाता ॥

चौपाई ॥

कामाकुलित ललितमन भयऊ । वृत्रासुर तहँ आयसुगयऊ ॥
दोलारूढ़ विलोकत रम्भा । कांप्यहु जिमि कदलीकर खम्भा ५०।५१

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवृत्रवञ्चनं

नामचतुर्विंशोऽध्यायः २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय ॥

दो० पच्चिसयें महँ मोहवश रम्भालिङ्गित वृत्र ॥

इन्द्रहत्योच्छलसोऽप्यकोपशान्तिग्रहचित्र १

सूतजी शौनकादि ऋषियों से नैमिषारण्य में बोले कि रम्भा को देख कामाकुल हो वृत्रासुर अपने सङ्गी दानवों से बोला कि चारु लोचनवाली मनोहररूपिणी यह कौनसी स्त्री है गानकर रही है व अपने विलासभावों से सब विश्वको मोहित करती है व अत्यन्त शोभित सम्पूर्ण हावभावों से कामीजनों को अतिमोहित करती है १ व कमल के समान विशालनयनी पीनकुचवती कुंकुम अङ्गों में लगाये हुई कमलमुखी कामके मन्दिर के समान स्थित अतिचारु मनोहररूपिणी २ सम्पूर्ण भावों से व विलक्षण रूपसे युक्त कामांग शीलवती अतिशीलभाव किये हुई रम्भाको बनाय निकटमे देखकर कहनेलगा कि बस अब हम आज इसीके वशीभूत होंगे क्योंकि कामदेव ने इसीलिये हमको यहां भेजा है ३ इसप्रकार दैत्यों का ईश्वर बड़ी देरतक चिन्ता करता रहा व काममे मूढ़ही बहुत समय तक कुछ न बोला फिर अतीव आतुर हो अतिवेग से वहां गया व दीनमन हो उस सुलोचना से बोला ४ कि हे सुन्दरि ! तुम किसकी स्त्री हो व किसने तुमको यहां भेजा है व तुम्हारा पुण्यदायक क्या नाम है हम से कहो हे बाले ! महातेजस्वी तुम्हारे रूप से हम मूढ़ होगये हैं इस से तुम हमारे वशीभूत होओ ५ जब इसप्रकार वृत्रासुरने कहा तो वह विशालाक्षी रम्भा काम से अतिव्याकुल वृत्रासुरसे बोली कि हमारा रम्भा नाम है हे महाभाग ! यहां कामक्रीड़ा करने के लिये इस उत्तम वन में ६ सखियों के संग आई हूं देखते हो कि कैसा उत्तम नन्दन वन है तुम कौनहो व किसलिये हमारे पास आये हो ७ तब वृत्रासुर बोला कि हे बाले ! हे शुभे ! हम जो हैं व जिसके लिये यहां आये हैं तुमसे कहते हैं सुनो हम अग्नि से उत्पन्न हुये हैं व कश्यपजीके पुत्र हैं ८ व हे वरानने ! देवताओंके देव इन्द्र के भी हम सखा हैं व हे वरारोहे ! आधा ऐन्द्रपद हमारे भोगकरने

में आगया है ६ हे देवि ! हे वरवीणिनि ! मेरा वृत्रासुर नाम है मुझे इसप्रकार कैसे नहीं जानती हो जिसके तीनों लोक वश में हैं १० सो हे प्रिये ! हे श्रेष्ठमुखवाली ! हे सुन्दर नेत्रोंवाली ! हम काम से बहुत व्याकुल हैं और तुम्हारी शरण में आये हैं कामसे हमारी रक्षा करो हमारे संग भोग करो ११ तब रम्भा बोली कि हम अभी तुम्हारे वश में होंगी इस में कुछ सन्देह नहीं है परन्तु हे वीर ! जो २ कार्य्य हम कहेंगी सो २ तुमको करना होगा १२ वृत्रासुरने कहा हे महाभागे ! ऐसा ही होगा जो जो तुम कहोगी सब हम करेंगे इस प्रकार की प्रतिज्ञा उसके संग कर महाबली १३ दानवश्रेष्ठ वृत्रासुर उस महापुण्य वन में रम्भा के गीतसे व नृत्यसे ललित हैं मने से १४ व उसके सुरतसे महादैत्य अतिमूढ़ होगया तब उस महाभाग दानव सत्तम वृत्रासुरसे रम्भा बोली १५ कि अब तुम मदिरापान करो व मधु माधवी लताका भी रस पानकरो तब उस विशाल नेत्रवाली और चन्द्रमाके समान मुखवाली रम्भा से वृत्रासुर बोला १६ कि हम ब्राह्मण के पुत्र हैं व वेदवेदाङ्ग पारगामी हैं इस से हे भद्रे ! अति निन्दित मदिरापान कैसे करें १७ यह सुन उस देवी रम्भा ने बड़ी प्रीति के साथ हठ करके उसको मदिरा दी तब उसकी चतुरता से उसने सुरापान करीलिया १८ जब मदिरा से अति मत्त होकर ज्ञान से अष्टहोगया व सो गया सोते ही में इन्द्र ने वज्र से मार डाला १९ व वृत्र के मारने के कारण ब्रह्महत्यादि पापों से इन्द्र लिप्त होगये तब ब्राह्मण इन्द्रसे बोले कि हे इन्द्र ! तुमने पाप किया २० महा बलवान् वृत्र तुम्हारे विश्वासपर था तुमने विश्वासघात किया जो उसे मारा ऐसा पाप तुमने किया २१ इन्द्र बोले कि जिस किसी उपाय से हो शत्रुको सदैव मार ही डालना चाहिये ॥

चौ० द्विज देवनको मारन हारा । यज्ञधर्म कण्टक श्रुतिन्यारा ॥
तीनलोक नायक खल दानव । हम मारा जो मारत मानव २२
तासु हेतु कोप्यहु तुम लोग । यह नहिं न्याय बरनहै शोका ॥
करहु विचार विप्र वर नीके । कहत वचन सबविधि हमठीके २३
मम अन्याय जानि पुनि पीछे । करहु कोप हम कहत अतीछे ॥

इमिकहि सुरपति द्विजनप्रबोध । जासों गयहु कहुक तिनकोधा २४
पुनि ब्रह्मादिक तिन समभावा । बहुनभांति करि वचन बनावा ॥
तवगे ऋषि निज आसन पाहीं । धर्मशत्रुहतिगोशकनाहीं २५।२६

इति श्रीपाद्मेयमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवृत्रासुरवधोनाम

पञ्चविंशोऽध्यायः २५ ॥

छब्बीसवां अध्याय ॥

दो० छब्बीसयें महँ दितिज पवन भये उड्यास ॥

जिन्हेंइन्द्रहति गर्व महँ तिनसँग भयेपचास १

सूतजी शौनकादिकों से बोले कि उस पुत्रको भी माराहुआ सुन
दिति दुःखितहुई व हे द्विजसत्तमो ! पुत्र के शोकसे अतिभस्महुई १
व जाकर फिर महात्मा मुनिश्रेष्ठ कश्यपजीसे बोली कि हे द्विजस-
त्तम ! इन्द्र दुष्ट के वध के अर्थ २ ब्रह्मतेजोमय तीव्र सब देवता-
ओं को दुःख से सहने के योग्य एकपुत्र हमकोदो हे कान्त ! हे विभो !
जो हमभी आपकी प्रियाहों ३ कश्यपजी बोले कि दुष्टात्मा इन्द्र ने
अधर्म का आश्रयणकर महाबली हमारे बल व वृत्र दोनों पुत्रोंको
मारडाला ४ अच्छा अब उसके वध के लिये एक और पुत्रतुमको देंगे
परन्तु हे यशस्विनि ! सौ वर्ष तक तुम पवित्रता से रहना ५ इतना कह
उन योगेन्द्रजीने दितिके शिरपर अपना हाथरखदिया व दितिके साथ
हीवे योगीन्द्रजी तपकरनेके लिये सुमेरु पर्वतपर चलेगये ६ व दिति
भी तपोवनमें रहकर तप करनेलगी व पुत्रकेअर्थ सदा पवित्रादि
नियमोंसे रहनेलगी ७ तब इन्द्रदेव दितिका ऐसाउद्यम जानकर
उनके नियमोंमें विघ्नदेखनेलगे ८ यहांतक कि ब्राह्मणका शरीर धा-
रणकर पच्चीसवर्षके होकर दैवतोपम इन्द्रजी उस महातपस्विनी
अपनी मौसी व सौतेलीमाता दितिके समीपगये व धर्मात्माजी तप
करती हुई उस अपनी सौतेलीमाताके प्रणाम करतेभये तब दितिने
कहा कि हे द्विजसत्तम ! आप कौन हैं ९।१० इन्द्र उससे बोले कि
हे भामिनि ! हे शोभने ! हम तुम्हारे पुत्रहैं व वेदशास्त्र जाननेवाले
ब्राह्मणहैं सब धर्म जानतेहैं ११ इससे तुम्हारे तपमें सहायताकरेंगे

इसमें कुछ सन्देह नहीं है यह कह तप करती हुई उस अपनी माता की शुश्रूषा इन्द्र करने लगे १२ परन्तु वह दुष्टकारी इन इन्द्र को नहीं जानती थी दिन २ सेवाकरने से धर्मपुत्र जानती थी १३ इन्द्र उसके सब अङ्ग मीजदेते थे व पैर धोदेते थे वनसे मूल फल पत्र वल्कलाजिन आनदेते थे १४ व बड़े प्रेमसे धर्मात्मा इन्द्र उस दिति को सदा सब पदार्थ दिया करते इन्द्रकी भक्तिसे सन्तुष्ट हो बड़ी प्रीति से दिति ब्राह्मणरूपी इन्द्रसे बोली कि १५ जब हम पुण्यपुत्र उत्पन्न करेंगी व वह इन्द्र को मार डालेगा तो उस हमारे पुत्रके सङ्ग तुमभी राज्यसुख भोगना १६ यह सुन इन्द्रजीने कहा हे महाभागे ! अच्छा तुम्हारे प्रसादसे हमभी ऐन्द्रपदका सुखभोगेंगे यह कह इन्द्र उसके तप नियममें और भी अन्तर विचारने लगे १७ इसप्रकार कुछ कम सौ वर्ष बीत गये इन्द्रने एक दिन यह अन्तर देखा कि विना पैर धोये हुये दिति सोरही १८ व शिरके बारखोले उत्तरको शिरकिये अत्यन्त विह्वल दितिके उदरमें सूक्ष्मशरीर धारण कर इन्द्र पैठ गये व तिनकी नींदको हरलिया और तीक्ष्णधारवाले वज्रसे उस गर्भके उन्होंने सात खण्ड कर डाले १९।२० तब वे सातों खण्ड रोदन करने लगे फिर रोते हुये उन गर्भके खण्डोंसे इन्द्रने बार २ कहा २१ कि रोदन न करो रोदन न करो जब उन्होंने रोना न बन्द किया तो इन्द्र ने उन सातोंके सात २ और खण्ड कर डाले इस प्रकार वे उच्चास होगये व तब उन्होंने कहा अब हमको न मारो हम तुम्हारे भाई होंगे इन्द्रने कहा अच्छा तुम हमारे भाई उच्चास पवन होओ इससे वे पवन होगये इन्द्रके कहनेसे वे सब अतिवीर्यवाले व बड़े शरीरवाले महातेजस्वी पराक्रमी होगये २१।२४ व उच्चासो देवता होगये मरुत् उनका नाम हुआ व इन्द्रहीके आश्रित हुये २५ व सब प्राणियों को ये पवन सदा सन्तुष्ट करते व प्रकाशित करते रहते हैं वस इसप्रकारसे सब समूहके समूहोंकी सृष्टि श्रीविष्णु भगवान् कश्यपादि प्रजापतियोंसे कराते हैं २६ व उस सृष्टिके राजा क्रमसे पृथु आदिको बनाते हैं वे देवदेव कृष्णचन्द्र सर्वव्यापी पुरुष पुराण जगत्के गुरु हैं २७ तप सब विष्णुरूप हैं व सब प्रजापति भी विष्णुस्वरूपी हैं मेघ अ-

ग्नि आदि सब पुण्यात्मा विष्णु रूपही हैं २८ व उन्हींका यह स्था-
वर जङ्गम सब जगतहै हे द्विजसत्तमो ! जो कोई यह प्राणियोंकी
सृष्टि जानताहै २९ उसका फिर इस संसारमें आना नहींहोता फिर
परलोकका भय कहां होसक्ताहै इस महापुण्य व सब पापहरनेवाली
सृष्टिको ३० जो पुरुष भक्तिसे सुनताहै वह सब पापों से छूटजाता
है वह धन्य होता व पुण्यात्मा होता व सत्यसंयुत होताहै ३१ ॥
चौ० जोयहसृष्टि सुनतनरकोई । लहत परमगति नहिं शकसोई ॥
सर्व पापगत शुद्धस्वरूपा । विष्णुलोक पावत नरभूपा ३२

इति श्रीपाद्ममेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेमरुदुत्पत्तिर्नामषड्

विंशोऽध्यायः २६ ॥

सत्ताईसवां अध्याय ॥

दो० सत्ताइसयें भहँ कह्यो सब अधिपतिजिभिहोत ॥

ब्रह्माज्ञासों करतसुखपालत सबहि निसोत १

सूतजी शौनकादि ऋषियोंसेबोले कि वे परमेश्वर सबलोकोंके ईश
सब राज्य में वेन केपुत्र महाप्रभुपृथुजी को राज्याभिषेक करते भये १
ये पृथुजी महाबाहु महाकाय सुरेश्वरइन्द्र के समान थे २ सृष्टि की
आदि में सबको उत्पन्न करके ब्रह्माजी जो जिसके योग्य होताहै उसे
उसका राजा बनातेहैं जैसे मनुष्यों का राजा महात्मापृथुजी को
नियत किया ऐसेही सब वृक्ष ब्राह्मण ग्रह ताराओं का राजा चन्द्र-
मा को नियतकिया व सब तप धर्म सबयज्ञ सबपुण्य व सब पुण्य-
तेजस्वियों का भी राज्य सोमही को दिया ३ । ४ व जलोंके मध्य
में सबतीर्थोंका राज्य वरुणजीको दिया समुद्रमें जो रत्न हैं उनके
भी स्वामी वरुणही हुये ५ व अन्य सब यक्षाओं के राजा कुबेरजी
को बनाया व महा बुद्धिमान् विष्णु वामनजीको सब अदितिके पुत्र
देवताओंका राजा बनाया ६ व सब पुण्यात्माजनोंके राजा सबोंके
हितके लिये दक्षप्रजापतिजीको बनाया ७ क्योंकि वे सब धर्म जा-
नते थे इससे सब प्रजाओं के अधिप किये गये व विष्णुके तेज से
युक्त सबधर्मजाननेवाले प्रह्लादजीको ब्रह्माजीने सब दैत्यों व दान-

वोंके स्वामी नियत किया यम वैवस्वत धर्मराजजीको पितरोंके राज्यपर स्थापित किया ८।६ यज्ञ राजस भूत पिशाच उरग सर्पसब-योगिनी महत्मा वेताल १० सब कंकाल सब कूष्माण्ड व सब राजाओं के राजा शूलपाणि महादेवजी को बनाया ११ व सब पर्वतोंके राजा महापर्वत हिमवान्को नियत किया व सब नदियों तड़ागों वापियों १२ कुण्डों व कूपोंके राज्यपर सर्वतीर्थ अत्युत्तम पुण्यकारी समुद्रको स्थापित किया १३ व सब गन्धर्वों तथा पुण्यजनों के राज्यपर सुरेश्वर ब्रह्माजीने चित्ररथनाम गन्धर्वको नियुक्त किया १४ व पुण्यवीर्यवाले नागोंके राजा वासुकिनागको बनाया व सर्पों के राज्यपर तक्षक नाम सर्पको नियोजित किया १५ व सब हाथियोंका राजा ऐरावत नाम महागज नियत हुआ ऐसेही सब घोड़ोंका राजा उच्चैःश्रवा नियत हुआ १६ व सब पक्षियोंके राजा गरुड़ नियत हुये व सब हरिणों का राजा सिंह बनाया गया १७ व सब वृषभों व धेनुओं के राजा नन्दीश्वर नियत हुये व सब वनस्पतियोंका राजा पिप्पल बनाया गया १८ इस प्रकार पुण्य राज्यों पर पुण्यात्मा राजा नियत कर ब्रह्माजीने सब दिशाओंमें दिक्पाल स्थापित किये १९ पूर्व दिशामें वैराजके पुत्र सुधन्वा को राज्याभिषेक करके स्थापित किया २० व दक्षिण दिशामें कर्दम प्रजापतिके पुत्र महात्मा शंखपदको राजा नियत किया २१ इन लोगोंने सप्तद्वीपवती पत्तनयुक्त इस सब पृथ्वीको यथा भाग पालन किया व अबभी ये सब धर्मसे पालन करते हैं २२ फिर पश्चिम दिशामें ब्रह्माजीने वरुण प्रजापतिके पुत्र पुष्करनामको दिक्पालता पर नियत किया २३ व उत्तर दिशामें ब्रह्माजीने नलकूबर को स्थापित किया इस प्रकार महापराक्रमियों को सब राज्याधिकार में ब्रह्माजीने अभिषेक किया २४ महाभाग पृथुको जानों प्रथम सब राजाओंका स्वामी बनाया ही था फिर राजसूयादि सब महायज्ञों से ब्राह्मणोंके द्वारा विधि विधानसे उनका अभिषेक किया कराया २५ इस प्रकार वेदके विधानसे महाराज पृथुजीको राज्यपर स्थापित किया इन पृथुजीको अत्यन्त पुण्यात्मा महापराक्रमी महात्मा चाक्षुषनाम मन्वन्तरमें सबका राजा ब्रह्माजीने

बनायाथा २६ फिर उसके पीछे जब पुण्यरूप यह वैवस्वत मन्वन्तर
आया तो इसमें जो राजा पृथु नियतहुआ उसकी विशेष कथा जो
तुम्हारे सुननेकी इच्छाहोगी तो हम कहेंगे २७। २८ ॥

वौ० पुण्यपुनीतदेवअभिषेका । अधिष्ठान सबके सविदेका ॥
नुमसनभाषे सकल सुपावन । सब पुराणमहँ भणितसुहावन २९
पुण्ययशस्य स्वर्ग्य आयुषकर । शुभ अरु सौख्य सकलउत्तमतर ॥
वन्य पवित्र पुत्रप्रद येह । वृद्धिदायि यामहँ न सँदेह ३०
भाव ध्यानयुत जो नर कोई । पढ़त भक्तिसों प्रकट न कोई ॥
अश्वमेधफल सो जनपावत । नहिँ संशय कछु सत्य बतावत ३१

इति श्रीपाद्मयेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेराज्याभिषेको

नामसप्तविंशोऽध्यायः २७ ॥

अट्टाईसवां अध्याय ॥

दो० अट्टाईसे महँ पृथुचरित कथनहेतु खल वेन ॥

के भाषे अवगुण बहुरि पृथुचरित्र सुख देन १

पूर्वके अध्यायकी कथा सुन ऋषियोंने सूतसे पूछा कि हे महा-
भाग ! महात्मा पृथुजीका चरित विस्तारसहित कहो हम लोगों को
फिर सुननेकी इच्छाहै १ जिस प्रकार उन महात्मा राजाने इस पृ-
थ्वी को दुहा व फिर देवताओं पितरों व तत्त्व जाननेवाले मुनियोंने
उसे दुहा २ व जैसे दैत्यों नागों यक्षों व वृक्षों ने दुहा फिर जैसे
पर्वतों पिशाचों गन्धर्वोंने व पुण्य कर्म करनेवाले ब्राह्मणोंने दुहा
जैसे सिद्धों राज्ञसों व भीमपराक्रमी अन्य महात्मा लोगोंने भी दुहा
३।४ उन सबोंके पात्र विशेष वर्णनकरो व हे महामतिवाले ! दुग्धका
भी विशेष विधान कहो ५ व महात्मा राजा वेन का हाथ पूर्व समय
में ऋषियों ने मथा सो किस कारण से यह भी कहो ६ सोभी उन
लोगों ने सुना कि क्रुद्ध होकर वेन का हाथ मथा था यह सब पाप-
नाशिनी कथा पुण्यकारिणी और बड़ी विचित्रहै ७ हे महाभाग !
इससे हम लोगोंके सुननेकी इतनी इच्छाहै कि तृप्तिही नहीं होती
यह सुनकर सूतजी बोले कि वेन व पृथु दोनों का चरित्र व जन्म

वीर्य्य क्षेत्र पौरुष सत्र विस्तारपूर्वक कहते हैं व विशेषकर धीमान् पृथुका चरित कहते हैं ८ । ९ सो हे महाभाग द्विजसत्तमो ! हमसे श्रवणकरो व कभी यह चरित अभक्त श्रद्धाहीन शठमे न कहना १० व न अतिमूर्खसे न अतिमोहयुक्त से न अशिञ्जितसे न थोड़ी श्रद्धावाले से न क्रूरसे न सब कुछ नाशकरने वाले से ११ क्योंकि जो इस चरितको अश्रद्धा आदिसे पढ़ता है वह नरकको जाता है आप लोग भावसंयुक्त व सत्य धर्मपरायण हैं १२ इससे आपलोगोंके आगे पापनाशन यह चरित सम्पूर्ण कहते हैं श्रवणकरो १३ यह चरित स्वर्ग देता यश आयुष् देता है धन्य है व सब वेदोंके सम्मत से है ऋषिलोगों ने इसे बहुत गुप्त सम्भाषण किया है पर हम तुम से कहेंगे हे द्विजोत्तमो ! सुनो १४ जो कोई वेनकेपुत्र पृथुजीका चरित विस्तारपूर्वक कहता है वह ब्राह्मणों के नमस्कार करके किये हुये व बिना कियेहुये का शोच नहीं करता सब उसे कियाही हुआ जानपड़ता है १५ सातजन्मका पाप केवल सुननेसे नष्ट होजाता है ब्राह्मण जो इसे पढ़ता है वेदज्ञ विद्वान् होता व क्षत्रिय विजयी होता १६ वैश्य धनवान् होता व शूद्र इसको सुनकर सुखी होता है जो सुनता व पढ़ता है अपनी २ जातिके अनुसार ऐसा फलपाता है १७ पृथुका जन्म व वेनकाभी जन्म पवित्र पापनाशने वाला है धर्म के रक्षक महाप्राज्ञ वेद शास्त्र के अर्थ जानने में महा परिणत १८ अत्रिवंश में उत्पन्न अत्रि के समान तेजस्वी पूर्वकाल में सब धर्मोंके उत्पन्न करने वाले अङ्गनाम एक प्रजाओं के पति राजाहुये १९ वे धर्मको छोड़ और कर्म कभी नहीं करते थे तिन अङ्गके वेन नाम प्रजापति हुये २० राजा अङ्गजीका विवाह महाभाग्यवती मृत्युकी कन्या सुनीथा नाम के सङ्ग हुआ २१ उस में जो पुत्र हुआ उसका वेननाम हुआ यह बड़ा धर्मनाशक बालक हुआ अपने मातामह मृत्यु के दोषसे यह मृत्युकी पुत्रीका पुत्र हुआ २२ यह अपने धर्मको छोड़ अधर्म में निरत हुआ काम लोभ व महामोहसे पापही सदा किया करे २३ वेदाचारके धर्मको छोड़ वह राजा मदसे मत्त व मोहित हो सदा पापों के ही करने में निरतर है २४ इससे उसके भयके मारे

अन्यजनभी वेदाध्ययन न करनेलगे उस राजाके राज्यमें स्वाहा स्व-
धा वषट्काररहित सब प्रजा प्रायः होगई २५ अब देवताओंकी प्रवृ-
त्तिही यज्ञोंसे जातीरही क्योंकि जो ब्राह्मण यज्ञ करनेभी लगे उनसे
वह दुष्ट ऐसा कहै २६ कि तुम लोग वेदादि न पढ़ो होम न करो
दान न दिया लिया करो यज्ञ न करो हवन कभी न करो यह हमारी
आज्ञाहै २७ राजाकी जब ऐसी आज्ञाहुई तो सबोंने जाना कि अब
इनका विनाश आगया है व यहभी राजाने ब्राह्मणोंसे कहा कि
यज्ञ हमारे लिये करना चाहिये क्योंकि उसके भोक्ता हमी हैं व
यज्ञ करनेवाले भी हमी हैं यज्ञ भी हम हैं २८ हमारेही विषय में
यज्ञ करो व हमारेही विषय में होम करो वेन ऐसाही सदा सबोंसे
कहै कि सनातनविष्णु हमी हैं २९ हम ब्रह्मा हम रुद्र हम इन्द्र
हम पवनहैं व हमी हव्य कव्य सबके भोक्ता हैं इसमें कुछभी संशय
नहीं है ३० यह सुनकर महाबलवान् मुनिलोग वेनके ऊपर बहुत
क्रुद्ध हुये व इकट्ठे होकर सबके सब जाकर उस पापी राजासे बोले
कि ३१ राजा पृथिवीका नाथ होताहै इससे सदा प्रजाओंको पाल-
ताहै व धर्मकी मूर्ति होताहै इससे सदा उसे चाहिये कि धर्म की
रक्षाकरे ३२ हमलोग दीक्षामें प्राप्तहोकर बारहवर्षतक यज्ञकरेंगे
इससे हे वेन ! उसे रोककर अधर्म न करो क्योंकि यह सज्जनों का
धर्म नहीं है ३३ हे महाराज ! तुमभी धर्म करो व सत्यपुण्य
करो तुमने यह प्रतिज्ञाकीथी कि हम प्रजाओंको पालेंगे ३४ ऐसा
कहते हुये उन महर्षियोंसे निर्वृद्धि वेन यह निरर्थक अर्थ हँसकर
बोला कि ३५ धर्म बनानेवाला और कौनहै व हम अन्य किसका
वचन सुनें क्योंकि वेदाध्ययन पराक्रम तप व सत्यके करनेमें हमारे
समान और पृथ्वी पर कौनहै ३६ हे मूढ़ो ! तुमलोग सब भूतों के
उत्पन्नहोने के स्थान व सब धर्मोंके उत्पन्न होनेके तो विशेषस्थान
हमको नहीं जानते ऐसे अचैतन्य होगयेहो ३७ हम इस पृथ्वीको
जब चाहें जलादें व जब चाहें समुद्रमें डुबादें पृथ्वी व अन्तरिक्षको
कहो तो रूँधलें इसमें कुछ विचार करने की बात नहीं है ३८ जब
मोह व गर्व से युक्त राजाकी दुष्टता न मिटसकी तब महर्षियोंने

राजा के ऊपर बड़ा क्रोध किया ३९ व इधर उधर कूदते फांदते हुये
 वेनको जबरदस्ती पकड़कर मारे क्रोध के वेनकी बाई जंघा मथी ४०
 उसमेंसे काले अञ्जन के ढेर के समान काला बहुतही छोटे डीलका वि-
 लक्षण बड़े भारी मुखका अतिविरूप नेत्रवाला नीलके रंगका ४१
 बड़े लम्बेपेटका सिकुड़े कानोंका अतिभयङ्कर व बड़े दुःखसे भरने
 वाले पेटका एक पुरुष निकला व उसने कहा क्या करूं तब उन महा-
 त्माओंने देखकर कहा निषीद अर्थात् बैठजा ४२ उन लोगों का
 ऐसा वचन सुन भयसे आतुर हो वह बैठ गया व इसीसे उसका नि-
 षाद नाम हुआ पर्वतों पर व वनोंमें उसको वसने की आज्ञा हुई ४३
 उसी निषाद के वंशसे निषाद किरात भिल्ल नाहलक भ्रमर पुलिन्द
 व और भी जो स्लेच्छोंकी जातें हैं ४४ वे सब पाप करनेवाले उसी
 वेनके अंगसे उत्पन्न हुये थे फिर वे सब ऋषिलोग बड़े प्रसन्न मन
 हुये ४५ व उन्होंने नृपोत्तम वेनको अब पापरहित समझा इससे उस
 महात्मा वेनका दहिना हाथ उन्होंने मथा ४६ उस हाथके मथने पर
 उसमें पसीना हो आया तब उन विप्रोंने फिर वही दहिना हाथ म-
 था ४७ तब उस सुन्दरकरसे बारह सूर्यों के समान प्रकाशित एक
 पुरुष उत्पन्न हुआ उसके सब अंगोंका रङ्ग तपाये हुये पक्के सोनेका
 सा था व दिव्यमाला वस्त्र धारण किये हुये था ४८ दिव्य आभरणों
 की शोभासे शोभित अंगथा व दिव्य गन्ध अंगोंमें लगे थे सूर्यसम
 चमकते हुये मुकुटसे व कुण्डलोंसे विराजता था ४९ बड़ा भारी शरीर
 था व बड़े बड़े बाहु थे व रूपमें पृथ्वीपर उसके समान दूसरा कोई
 न था खड्ग बाण धनुष कवच धारण किये महाप्रभु था ५० सब
 लक्षणोंसे सम्पन्न व सब अलङ्कारोंसे भूषित था तेज रूप वर्णोंसे युक्त
 महामति ५१ इन्द्र जैसे स्वर्ग में शोभित होते हैं वैसेही पृथ्वीपर
 वह वेनका पुत्र शोभित हुआ उन महाभाग के उत्पन्न होने पर निर्म-
 ल देवताओं व ऋषियोंने ५२ वेनके पुत्र होनेका बड़ा भारी उत्सव
 किया उन्होंने अपने शरीरसे दीप्तिमान् होने से साक्षात् अग्नि के
 समान प्रज्वलित होते हुये ५३ आजगवधनुष धारण कर जिसमें बड़ा
 भारी शब्द होता था दिव्य बाण व रक्षा के लिये बड़ी दीप्तिवाला क-

वच धारणकिया ५४ यह सब महाभाग महात्मा महावीर पृथुजीके उत्पन्न होतेही सब हुआ व सब प्राणी हर्षितहुये ५५ व सब तीर्थों के विविध प्रकारके पुण्यकारी जल उनके अभिषेकके लिये सब ब्राह्मण सब ओरसे लेकर आखड़े हुये ५६ व ब्रह्मादिक देव तथा और भी नानाप्रकार के प्राणी स्थावर जङ्गम सब अभिषेकके समय आये व आकर सबोंने अभिषेक किया ५७ इसप्रकार चरोंने व अचरोंने भी ऐसे महावीर पृथुजीको राजराजकरके अभिषेकित किया व वे सब प्रजाओंके पालक हुये ५८ जब देवताओं व सब ब्राह्मणों ने वेनके पुत्र महाराजाधिराज प्रतापी पृथुजी को राजसिंहासनपर स्थापित किया ५९ वैसेही उन्होंने सब प्रजाओंको अनुरञ्जितकिया जिनको उनके पिताने कभी अनुरञ्जित नहीं कियाथा जब प्रजाओं में उन वीरने ऐसा अनुराग किया जिससे सब पृथ्वी राजन्वती हुई व समुद्र पार तक सप्तद्वीपवती धरणी के अकेले स्वामी हुये उन महात्माके भयसे समुद्र पर्यन्त के जल सब ठौर ठौर ठहरगये चलना बन्दहोगया व पर्वतों पर यद्यपि बहुधा दुर्गम मार्ग होतेहैं पर इनके होतेही सब पर्वतोंने मारे भयके अपने मार्ग सुगम कर दिये ६० । ६१ इनके ध्वजाका भङ्ग किसी पर्वतने न किया सब कहीं सुगममार्ग होगये व महाराज पृथुजीके राज्यमें पृथ्वीपर विना जोतेही अन्न होनेलगा ऐसेही धेनु जो इनके पिताके समयमें कुछ भी दुग्ध नहीं देतीथी वे बहुत बहुत पय देनेलगीं ६२ मेघ प्रजाओं की इच्छा के अनुकूल जल बरसाने लगे सर्वत्र बड़े बड़े यज्ञ होने लगे ब्राह्मण व क्षत्रिय सब यज्ञ करने लगे ६३ व उन राजाके राज्य में सब कालों में वृक्षों से फल मिलने लगे दुर्भिक्ष उनके राज्य में कभी हुआही नहीं व्याधि अकाल मरण किसी प्राणी को कभी न हुये ६४ सब लोग धर्म में परायणहो सुखसे जीनेलगे जब ये राजराज दुर्धर्ष महात्मा इस प्रकारका राज्य कर रहेथे ६५ उसी समयमें महाब्रह्मयज्ञ में सूतसूति में उत्पन्न हुये जब कि अच्छा सौम्य दिन आया ६७ व उसी यज्ञमें महाप्राज्ञ मागध लोग उत्पन्न हुये तब पृथुकी स्तुति करनेके लिये ऋषियों ने उनको बुलाया ६८ हे द्विजो-

तमो ! अब हम पुण्य सूतका लक्षण तुम लोगों से बताते हैं शिखा सूत्रसे संयुक्त व वेदके अध्ययन में तत्पर ६६ सब शास्त्रों के अर्थों का वेत्ता व नित्य अग्निहोत्रकी उपासना करे दान नित्य देता रहे पठन पाठनकरे ब्रह्मचर्यमें परायण हो ७० देवताओं व ब्राह्मणों की नित्य पूजाकरे व याजकों से सदा पुण्यकारी वेदमन्त्रों से यज्ञ करातारहे ७१ ब्राह्मणों का सा सदा आचारकरे सम्बन्धभी बहुत ब्राह्मणों केही साथ रखे बस यह सूतका लक्षण है अब मागधका लक्षण कहते हैं वह अन्यकर्म तो करसक्ता है पर वेद नहीं पढ़सक्ता ७२ व वन्दीजन तथा सब चारण ब्राह्मणका कोई आचार नहीं कर सके व और भी जो बड़े भाग्यवाले स्तुति करनेवाले लोग होते हैं ७३ परन्तु स्तुति करने के लिये निपुण सूत व मागध येही दो ठीक ठीक उत्पन्न किये गये हैं इसलिये उन्हीं दोनोंसे सब ऋषियोंने कहा कि तुम दोनों इस राजाकी स्तुति करो ७४ जैसा राजा होना चाहिये उसके अनुरूप ये महाराज हुये हैं इससे इनकी स्तुति करनी चाहिये यह सुन वे वन्दी व मागध दोनों ऋषियों से बोले ७५ कि हम दोनों देवताओं व ऋषियोंको अपने कर्मों से तृप्त करेंगे पर इन राजाके न हम कुछ कर्म जानें न यश न लक्षण ७६ कि जिस कर्म से इन महात्माकी स्तुतिकरें विना इनके गुण जाने हम स्तुतिमें क्या कहें ७७ तब ऋषियोंने उनदोनोंसे कहा कि हम इनके भविष्यगुण जानते हैं ये २ होंगे इससे तुम इन्हीं गुणों से इन महात्मा राजाकी स्तुतिकरो जो गुण उनमहायशस्वी पृथुमहाराजमें थे ७८ सब गुणोंको उन महात्मा त्रिकालदर्शी ऋषियों ने सूत व मागध से कहे जैसे कि सत्यवान् ज्ञानसम्पन्न बुद्धिमान् अद्भुतविक्रम ७९ सदा शूर गुणग्राही पुण्यवान् दानी गुणी धार्मिक सत्यवादी यज्ञों के उत्तम याजक ८० प्रियवाक् सत्यवाक् धान्यवान् धनवान् अतिगुणी गुणज्ञ गुणग्राही धर्मज्ञ सत्यवत्सल ८१ सर्वगसर्ववेत्ता ब्रह्मण्य वेदवित् सुधी प्रज्ञावान् सुन्दर स्वरवाले वेदवेदाङ्गपारगामी ८२ धाता व प्रजाओं के गोप्ता समरभूमिविजयी व ये राजसत्तम राजसूयादि यज्ञोंके करनेवाले होंगे ८३ व भूतलपर सब धर्मयुक्त एकही होंगे ये सबगुण इन

महात्मा के अङ्गों में होंगे ८४ जब ऋषियों ने ऐसे भावी गुण बता-
कर सूत व मागधको महाराजकी स्तुति करने के लिये नियुक्त किया
तो उन महात्माके उन भविष्य गुणों से सूत मागधों ने बड़ी स्तुतिकी
८५ व तब से सब लोग उनकी स्तुतियों से प्रसन्न हुये जब सूतादि-
कों ने दिव्य स्तुति महाराजाधिराजकी की तो उनमें आर्य्य को तो
बहुतसा उत्तम धन महाराज ने दिया ८६।८७ व सूत मागध वन्दी
गण इनको महोदय दिया जिससे सर्वत्र उनका मान होता रहे व
चारणको तैलङ्ग उत्तम देश दिया ८८ पृथुर्जाके प्रसादसे इन लोगों
को ये पदार्थ मिले व आपने हैहयदेश में नर्मदा नदी के तीर पर
अपने नाम का एक नगर बसाया ८९ व वहां बस नानाप्रकार के
यज्ञ करके ब्राह्मणों को बहुत धन दिया जब सर्वज्ञ सर्वदाता धर्म
वीर्य्ययुक्त महाराज को ९० सबों ने देखा तो सब प्रजायें व तपसे
निर्मल मुनिलोग परस्पर यह कहने लगे कि ये महाराज महामति-
मानहैं ९१ क्योंकि देवादिकों को वृत्ति देते हैं व हमलोगों को तो
विशेष वृत्ति देते हैं व प्रजाओं के पालक व जीविका देनेवाले भी
होंगे ९२ यह आपस में विचारकर सब प्रजायें महाराजसे बोलीं कि
हे महाराज ! यह पृथ्वी आपके प्रथम बोये हुये बीज को ग्रसलेती
थी इससे प्रजाओंकी जीविका नहीं चलती थी अब आप इस विषय
में विचारांशकरें व हमलोगों की वृत्ति फिर नियत करें क्योंकि विना
जीविका के हम सब मरेजाते हैं आप इन ब्राह्मणों से भी पूँछलें
९३।९४ सब हम लोगोंकी जीविका लीलकर पृथ्वी कुछभी अन्नादि
नहीं उत्पन्न करती प्रजाओं का यह बड़ा भय श्रवणकर महाराज
श्रेष्ठतमने ९५ महर्षियोंसे भी पूँछकर जब उन्होंने भी कहा कि सत्य
ऐसाही है तो धन्वा बाणले बड़ा क्रोधकर पृथ्वीके ऊपर महाराज बड़े
वेगसे दौड़े ९६ तब हाथीका रूप धारणकर राजाके भयसे व्याकुल
पृथ्वी भागी व वनोंमें दुर्गम स्थानों में गुप्त होकर घूमनेलगी ९७
महाराज ने बहुत ढूँढ़ा परन्तु पृथ्वीका रूप उन्होंने न देखा तब सब
ऋषियोंने कहा कि पृथ्वी तो हाथीकारूप धारण कियेहुये है ९८ तब
कुञ्जररूप धारणकिये हुई पृथ्वी के पीछे राजा अतिवेगसे दौड़े दौ-

इने के समय राजाने योगबल से अपना सिंहकारूप धारण कर लिया रोषके मारे लाल नेत्रवाले महाराजने बड़ाही क्रोधकिया व बड़े तीक्ष्ण घोर बाणों से जाकर पृथ्वी को मारा ९९। १०१ तब बाणों के घातसे युक्त गजरूप पृथ्वी बहुत आकुल व्याकुल होगई व महिष का रूप धारणकरके भागी हाथीका रूप छोड़ दिया १०२ पर बाण हाथोंमें लिये राजा बड़े वेगसे उसके भी पीछे २ दौड़े तब तो वह महिषका रूप छोड़ गऊका रूप धारणकर निश्चय स्वर्ग को चली गई १०३ व जाकर प्रथम ब्रह्माजीके शरण में पहुँची वहां अपनी रक्षा न देखकर महात्मा श्रीविष्णुजी के शरण में गई वहांसे भी भागी फिर रुद्रादि सब देवताओं के समीप गई पर रक्षाका स्थान कहीं न पाया १०४ तब अत्यन्त व्याकुल हो महाराज पृथुजीकेही शरण में आई बाणों के घातों से समाकुल हो उनके पास फिर आकर १०५ हाथ जोड़ उन्हीं महाराज पृथुजीसेही बोली कि हे राजेन्द्र ! रक्षाकरो रक्षाकरो १०६ हे महाभाग ! मैं सबकी आधारभूत पृथ्वी हूं हे राजेन्द्र ! मेरे मारजाने पर सातोलोक मार जायेंगे १०७ फिर भी दोनों हाथ जोड़कर राजासे बोली कि महाराज स्त्रीजाति सब किसी से सदैव अवध्य होती है १०८ क्योंकि स्त्रियोंके वधमें महर्षियोंने बड़े २ दोष दिखाये हैं व गौओं के वधमें भी द्विजोत्तमों ने बड़े २ पाप कहे हैं १०९ इसके विशेष हे महाराज ! मेरे न रहनेपर आप प्रजाओंको कहां धारण करेंगे हे राजन् ! जब मैं स्थिर हूं तभीतक ये चर अचर सब लोग हैं ११० क्योंकि जब मैं स्थिर रहती हूं तभी ये सब स्थिर रहते हैं अन्यथा नहीं मेरे न रहनेपर चराचर ये सब लोग विनष्ट हो जायेंगे १११ फिर मेरे होनेपर भी क्या होगा जब कि सब प्रजायें नष्ट हो जायेंगी सो हे राजन् ! यह तो बतावो कि बिना मेरे आप प्रजाओं को कैसे धारण करेंगे ११२ मुझीपर सब लोग स्थिर रहते हैं व मैंही सब जगत् को धारण किये रहती हूं व मेरे विनाश में सब प्रजायें नष्ट हो जायेंगी इसमें सन्देह नहीं है ११३ इससे यदि सबका कल्याण चाहते हो तो मुझको मारनेके योग्य नहीं हो हे प्रजानाथ ! हे पृथ्वीपाल ! हे देव ! मेरा वचन सुनो ११४ उपाय के करने

से लोग सिद्धि पाते हैं जिस उपायसे प्रजाओंका धारण हो वह उपाय देखिये ११५ मुझको मारकर आप इस उपाय से प्रजाओंका धारण पालन पोषण सदैव करेंगे मैं तो जानती हूँ कि मेरे विनाश में आप का किया पालन पोषण न होगा ११६ अब कोपको छोड़ो हम जो उपाय बतावें उसे करो हम अब अन्नमयी होंगी व सब तुम्हारी प्रजा का धारण पोषण करेंगी ११७ व जो मारनाही चाहते हो तो मैं स्त्री हूँ इसे मुझे मार तुमको प्रायश्चित्त करना पड़ेगा क्योंकि स्त्री अवध्य होती है सो मनुष्यही की स्त्री अवध्य नहीं होती बरन पशु पक्ष्यादिकों की भी स्त्री अवध्य होती है ११८ ऐसा विचारकरके हे महाराज ! आप धर्म छोड़ने के योग्य नहीं हैं ॥

चौपाई ॥

इमि नानाविध वचन बनाई । कहे धरणि नृपसों अकुलाई ॥
दारुण कोप तजहु महिपाला । जासों होवहुँ सुखित निहाला ॥
जब प्रसन्न ह्वैहहु भूपाला । तबै स्वस्थ हम होब कृपाला ॥
यासों होहु प्रसन्न महीपति । हौं तव शरण न है दूसरिगति ॥
वेन तनय पृथुराज प्रतापी । प्रजापाल सुनि धरणि अलापी ॥
बोले क्षितिसों वचन गँभीरा । प्रजानाथ वर पुण्य शरीरा ११९।१२१
इति श्रीपाद्मपुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषा नुवादे पृथूपाख्यानेष्टाविंशोऽध्यायः

उन्तीसवां अध्याय ॥

दो० उनतिस महुँ पृथुकी कृपा सों निजपात्ररु वत्सु ॥

दोग्धाकरि महि सब दुही निज अभीष्ट पयसत्सु १

महाराज पृथुजी ने कहा कि महापापी व पापचारी एकके मार जानेपर जो पुण्यदर्शी साधुलोग सब आनन्दित व सुखी हों तो एकके मारनेमें कुछभी दोष राजाको नहीं होता १ इससे भूपति को चाहिये कि पापचेतन एक महापापिष्ठको मारडाले इससे सब प्राणियों के विनाश करनेवाली तुम्हको हम मारडालेंगे २ तू सब अन्न वृक्षादिकोंके सब बीज ग्रसितकरके बैठी है इससे अब सब प्रजाओं को मारकर कहांजाती है ३ दुराचारी पापीके मारजानेपर साधुलोग

सुखपूर्वक जीते हैं इससे पापीको मार साधुकी रक्षा करनी चाहिये इसमें संशय नहीं है ४ इससे साधुओं का पालन बड़े यत्नसे करना चाहिये क्योंकि ऐसा करने में धर्म होता है तुमने बड़ा भारी पाप किया है जो सब प्रजाओं का संहार करना चाहा है ५ हां एक के लिये एकको न मारना चाहिये चाहे अपने लिये हो वा दूसरे के लिये व जिसने बहुतों की प्राणहत्या चाही हो उसको अवश्य ही मार डालना चाहिये ६ क्योंकि उस अकेले के मार जाने पर बहुत लोग सुख पाके बढ़ते हैं इससे हे वसुधे ! तेरे मार डालने से न पाप ही है न उपपाप ही है ७ प्रजाओं के निमित्त तुझको आज मार डालेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है जो पुण्ययुक्त हमारा वचन तू न करेगी ८ तो सत्य ही कहते हैं कि जगत् के हित के लिये तुझको इस पैंने बाण से मार डालेंगे क्योंकि हमारे वचन से तू पराङ्मुखी है ९ व हमारे तेज से पुण्यरूपिणी त्रैलोक्यवासिनी और पृथ्वी स्थित हो जायगी बस उसी पर सब प्रजाओं को स्थापित करके धर्म से उनका पालन करेंगे इसमें संशय नहीं है १० हे पृथ्वि ! धर्मयुक्त हमारी आज्ञा को ग्रहण कर मेरी ही आज्ञा से सदैव इन प्रजाओं की रक्षा करो ११ हे भद्रे ! इस प्रकार हमारी आज्ञा को इस समय जब करोगी तो प्रसन्न होकर सदैव तुम्हारी रक्षा करेंगे १२ इसमें सन्देह नहीं है अन्य भी राजा रक्षा करेंगे तब शरसे विधी हुई धेनुरूपिणी पृथ्वी १३ वेन के पुत्र धर्मात्मा राजापृथुजी से बोली कि हे महाराज ! सत्य पुण्य अर्थ युक्त तुम्हारी आज्ञा मैं अवश्य करूँगी १४ व यह भी मैंने जाना कि आपने प्रजाओं की रक्षा के लिये ऐसा किया है इससे अब आप प्रथम उपाय करें क्योंकि सब राजा लोग उद्यम ही से सिद्ध होते हैं व सब पुण्ययुक्त ही कार्य व उपक्रम फलित होते हैं इससे आप भी उपाय ही करें जिससे सत्यवान् गिने जायँ १५ १६ व इन सब प्रजाओं का भी धारण पोषण कर सकें हमारे अंगों में बाणरूप सब पर्वत व आपके शर भी लगे हैं १७ हे राजन् ! प्रथम ये दोनों शल्य हमारे अंगों से निकाल लिये फिर हमसे सब पदार्थ युक्ति से दुह लीजिये १८ सूत जी शौनकादिकों से बोले कि इतना सुनते ही महाराज ने पृथ्वी के

अंगों में प्रविष्ट नानाप्रकारके बड़े भारी पर्वतों को धन्वा के अग्र भाग से अलगकर व पीटकर चूर्णीभूत करके भूमिको समान कर दिया १९ तब फिर उसके अंगपर जहां तहां ऊपरको ऊँचे होगये फिर उसके अङ्गों से महाराजने अपने सब बाण निकाले २० प्रसन्न मनसे सब शर पृथ्वीके अंगों से निकाल वेनके पुत्र महाराजने गढ़े व कन्दरा आदि जो कहींथे सबको पाटकर समान करदिया व ऊँचे टीले आदिकों को पीटकर नीचा करदिया २१ इस रीति से सब पृथ्वीको समान करदिया व समान करके उसपर नगर ग्राम घोष खेरे आदि बसादिये २२ जिसप्रकारकी पृथ्वी राजास्वायम्भुवजीके समय में थी उसीतरहकी फिर करदी स्वायम्भुवमनुको छोड़ अन्य अतीत किसी मन्वन्तरमें वैसी भूमि न थी जैसी कि महाराज पृथुजीने चाक्षुषमन्वन्तरमें सुन्दरसमान करदीथी २३ जितने विषमस्थान ऊँचे नीचेथे सब समान होगये क्योंकि स्वायम्भुव मन्वन्तरके पीछे चाक्षुष मन्वन्तरतक ऐसी विषमधरणी होगई थी कि कहीं बड़े नगरादिकोंके बसने का स्थानही नहीं रहगयाथा २४। २५ इसीसे ग्रामपुर पत्तन देश खेत आदिकों की मर्यादा कहीं नहीं दिखाई देतीथी २६ न कहीं खेती होती थी न वाणिज्य होता न गउओं की रक्षाहोती पर हां कोई मनुष्य झूठ नहीं बोलता था सब सत्य बोलते व लोभ और मत्सरहीन २७ निरहङ्कारी होतेथे अभिमान कहीं न था न कोई कभी स्वप्न में भी पाप करता था व पृथुजी के प्रथम इतनीप्रजा इसभूमि पर न थी न इन प्रजाओं के लिये कहीं समस्थानही था जहांवसते इस से कहीं २ नदियों के किनारों पर वा पर्वतों के ऊपर एक घर यहां दूसरा वहां इसरीति से लोग बसतेथे कुञ्जों में तीर्थ स्थानों में समुद्रकी तराइयों में २८।३० सब प्रजा पुण्यसे निवास करती थी व भूमिपर कोई भी कहीं प्रायः नहीं बसता बसाता था कन्दमूल फलादि यही सब भोजन करते थे ३१ बड़े कष्ट से उन प्रजाओंको आहार मिलता था जो उस समय में थीं भी वही दशाथी जबपृथु जीका अवतारहुआ ३२ जब इसप्रकार उन्होंने पृथ्वीको समान कर ग्राम नगरादि बसाये तो पृथ्वी बहुत प्रसन्नहुई उसे प्रसन्नदेख

स्वायम्भुवमनु राजाको बछड़ा कल्पितकर व अपने हाथों को पात्र कल्पित करके ३३ पृथुजीने प्रथम सब यज्ञ के लिये पुरोडासादि यज्ञकर्म दुहलिये व सब अन्नमय समर्थ दूध दुहलिया ३४ उसी पुण्यकारी अमृत सदृश अन्नमय दुग्ध से सब प्रजाओं की व देवताओं की तृप्तिहोनेलगी व उसी से प्रजा पितरों की तृप्तिकरनेलगी ३५ व उन महाराजपृथुके प्रसादसे सब प्रजायें सुखसे जीने लगीं प्रजा देवता और पितरोंको अन्न देकर ३६ ब्राह्मण और अतिथियों को विशेषकर देकर पीछेसे सब प्रजा भोजन करतीथी ३७ यज्ञोंसे जनार्दनजीको लोग तृप्तकरनेलगे व उसी अन्नसे जनार्दनजी की पूजा करने से सब देवतालोग तृप्तहोने लगे ३८ व श्री माधवजी की प्रेरणा से मेघ वर्षा करने लगे उससे नानाप्रकारके अन्न व अन्य औषधियां भी उत्पन्न होनेलगीं व उन सबों के प्रजाओं के पति वेनके पुत्र महाराज पृथुजी हुये तबसे उसी अन्नसे प्रजा अब भी सुख से अपनी प्राणयात्रा करतीहैं ३९ । ४० फिर सब ऋषियों ने मिलकर इस पृथ्वी को दुहा तदनन्तर अन्य साधारण विप्रों ने भी दुहा इन ऋषियों व ब्राह्मणों ने सत्य तप अमलता आदि पदार्थ दुहलिये ४१ फिर चन्द्रमाको बछड़ा कल्पितकर व बृहस्पति जी दुहनेवाले बनकर बल करनेवाला ऊर्ज नाम दुग्ध दुहलिया जिस से देव गण अबभी जीतेहैं ४२ व उनके सत्य तथा पुण्य से अन्य सब भूतलपरके जीव जीते हैं व ऋषिलोग भी वसुन्धरा को दुहकर अपने सत्य पुण्यादिकों से वर्त्ताव वर्त्तने लगे ४३ अब वह विधान कहते हैं जिस विधि से पितरों ने इकट्ठे होकर इस भूमिको अच्छेप्रकार से दुहा ४४ चांदी का सुन्दर पात्र बनाकर स्वधारूप दुग्ध यमराज को वत्स बनाकर अन्तक ने अपने आप दुहलिया ४५ नागों व सर्पोंने तक्षकको बछड़ा बनाकर लौकीका पात्र ले विषरूप दुग्ध दुहलिया ४६ व नागों में प्रतापी धृतराष्ट्रनाम नाग दुहनेवाला बना बस उसी विषरूप क्षीर से अतुलसर्प व नाग जीनेलगे ४७ नाग और भयानक सर्प अत्यन्त घोर रूप विष से जीनेलगे ४८ ये नाग और सर्प बड़ेघोर बड़ी देह और महाबल

युक्तभये वही विषही उन लोगों का आहार है व वही आचार वही वीर्य वही पराक्रम है और कुछ नहीं ४९ अब वह कहते हैं जैसे असुरों और सब दानवों ने वसुन्धरा को दुहा है द्विजोत्तमो ! असुरों ने व दानवों ने अपने योग्य लोहे का पात्र बनाया क्योंकि वह पात्र उनका सब काम देता है व सब शत्रुनाशन मायामय और उन्होंने ने दुहा ५० । ५१ उन दैत्यों में महाप्रतापी विरोचन बत्स हुआ था द्विमूर्धा व महाबली मधु दो दुहनेवाले दैत्यों व दानवों में हुये ५२ इसी से अब भी दैत्य दानव सब मायासेही सब कार्य करते हैं ये दैत्य महाप्राज्ञ महाकाय होते हैं परन्तु तेज व पराक्रम इनमें मायायुक्तही होता है ५३ व उन दानवों का वही बल व पौरुष भी होता है व उसी मायामय तेज से वे सदा जीते रहते हैं हे द्विजोत्तमो ! उसी माया से अब भी वे ५४ वर्त्ताव करते हैं इससे माया दैत्यों का महाबल है व वैसेही यक्षों ने सर्वधात्री मही को दुहा ५५ हे विप्रो ! यह हमने सुना है कि पूर्वकल्प में इसी प्रकार यक्षों ने पृथिवी दुही इन लोगों ने बड़ेभारी कच्चेपात्र में अन्तर्धान मय दुग्ध दुह लिया ५६ उन्होंने ने महाप्राज्ञ कुबेरजी को बछड़ा कल्पित किया था व मणिधरका महापुण्यात्मा व बुद्धिमानों में बड़ा श्रेष्ठ पिता ५७ रजतनाभ नाम यक्ष दुहनेवाला हुआ यह महामतिमान् यज्ञथा सर्वज्ञ सर्वधर्मज्ञ व बली यक्षराज का पुत्र था ५८ अष्टबाहु व महातेजस्वी द्विशीर्षभी दोहने के समय सहाय हुये थे सो हे द्विजोत्तमो ! यज्ञलोग अब भी उसी अन्तर्धानही से अपने बहुधा सब कार्य करते हैं ५९ तदनन्तर महाबली राक्षसों ने इस पृथ्वीको दुहा उन्होंने भूतों पिशाचों व मनुष्यों के भक्षण करनेवाले बहुतसे राक्षसोंको भी बछड़ा बनाया ६० व सड़ेहुये तथा फूलेहुये मुर्हको पात्र बनाया व चाहा कि इससे बहुतसे उत्तम २ पदार्थ हम लोग भोग करेंगे ६१ उनमें महाबली रजतनाभ राक्षस दुहनेवाला बना व सुमाली राक्षस बछड़ा कल्पित किया गया व रुधिरमय दुग्ध दुहा गया ६२ इससे राक्षस भूत प्रेत पिशाच व यक्ष तथा दारुण ब्रह्मराक्षस उसी रुधिरही से अब भी जीते हैं ६३ फिर गन्धर्व

व अप्सराओंने पृथिवीको दुहा उन लोगोंने चित्ररथ नाम बड़े विद्वान् गन्धर्वको बछड़ा बनाया ६४ व गीतमें तत्पर गन्धर्वोंने गान विद्यादुही उनमें सुरुचिनाम महाबुद्धिमान् गन्धर्व दुहनेवाला हुआ इन सबोंने गीतके विशेष पवित्रता व तपोरूपभी क्षीर दुहा ६५।६६ इससे उसी गानविद्या व तपके बलसे गन्धर्व व अप्सरायें जीती हैं फिर महापुण्यकारी पर्वतोंने इस वसुन्धरा को दुहा ६७ इन्होंने विविध प्रकारके रत्न व औषधियां दुहीं जोकि अमृतके समान गुण करती हैं पर्वतोंने महाभाग हिमवान्को बछड़ा बनाया ६८ व सुमेरु पर्वतको दुहनेवाला व पात्र हरीघासयुक्त स्थानोंको बनाया उसदूध से सब महापराक्रमी पर्वत बढ़े ६९ तदनन्तर पर्वतों के सम्बन्धसे महावृक्षोंनेभी अपने मनका पदार्थ दुहलिया वृक्षोंमें कल्पद्रुमादिक सब इकट्ठे हुये थे व पालाशको तो उन्होंने पात्र बनाया व छिन्न दुग्धप्ररोहण नाम दुग्ध अर्थात् जहां काटे जायें व जल जायें वहीं कल्ले निकल आवें यह दुग्धदुहा ७० उनमें सांख्येवृक्षको तो दुहने वाला बनाया व पाकरिके वृक्षको बछड़ा बनाया था इसप्रकार वृक्षोंने दुहा फिर गुह्यक चारण सिद्ध विद्याधरादिकोंने ७१ इस सब वसुन्धराको दुहा क्योंकि यह तो सर्वकामप्रदायिनी ठहरी जो जो चाहता दुह लेता जिस २ वस्तुकी इच्छा जिसनेकी उसने पात्रवत्स व दोग्धा बनाकर अपने भावके तुल्य दुग्धदुहलिया यह पृथ्वी सब के धारण करनेवाली है व पालन पोषणभी करती है व यही श्रेष्ठ धनभी धारण करती है इसीसे इसका वसुन्धरा नाम भी है ७२ । ७३ सब कामोंके दुहनेकी धेनु भी यही है व सब पुण्योंसे भी भूषित है यह सब से ज्येष्ठा व प्रतिष्ठा है व यही सृष्टि यही प्रजा भी है ७४ जितनी पृथ्वी है सब पुण्य देनेवाली व पुण्यस्वरूपिणी है व सब अन्नोंको जमाती है इसीसे चर व अचर सबके टिकनेका व उत्पत्तिका स्थान है ७५ यही महालक्ष्मी है व यही महाविद्या है व सदा सर्व विश्वमयी है सब कामोंको पूरा करती है व सबको दुहती है व सब बीजोंको जमाती है ७६ व सब कल्याणोंकी माता है व यह सब लोगोंको अपने ऊपर धारण करती है व पाँचो तत्त्वोंका प्रकाश व रूप यही है ७७ क्योंकि यह

सबसे प्रथम व जलके पीछे बनाईगई है इसीसे इसका मेदिनीभी नाम है विष्णु भगवान् ने मधु व कैटभनाम बड़े भारी दैत्योंके मेदस् अर्थात् मज्जासे बनाया है इसीसे मेदिनी कहाती है ७८ व इसीसे वेदवादी लोगभी इसदेवीको मेदिनी कहते हैं व फिर इसीप्रकार जब वेनके पुत्र महाप्रतापी पृथुजी हुये ७९ व उन्होंने इसे अपनी कन्या करके माना तबसे इस देवीका एक पृथ्वीभी नाम हो गया हे द्विज श्रेष्ठो ! उन महाराजने इस वसुन्धरा का पालन किया ८० व उन्होंने ग्राम पुर पत्तनादिकों का आधार इसे बनाया व सब अन्नोंकी उत्पत्तिकी खानि इसको बनाया व सब धन धान्यादिकों से भरीपुरी बनाया व सर्वतीर्थमयीभी उन्होंने इसे किया ८१ इस प्रकार वसुमती देवी सदा सर्वलोक मयी है हे राजन् ! पुराणोंमें इसप्रकार के प्रभावसे युक्त यह पृथ्वी कही जाती है ८२ वेनके पुत्र महाराज पृथुजी सब कर्मोंके प्रकाशक हुये जैसे ब्रह्मा विष्णु व रुद्र सनातन हैं ८३ व तीनों वेदवादी देवादिकोंसे नमस्कार करनेके योग्य हैं व इसीसे ब्राह्मण व ऋषि लोग इनके नमस्कार करते चले आये हैं ८४ व वणों तथा आश्रमों के स्थापक व सबलोकोंके धारण करने वाले राजालोगभी पृथ्वीके पालक होकर इनतीनोंके प्रणाम करते चले आये हैं ऐसेही उनसबोंको महाराजाधिराज प्रतापी पृथुजीके भी नमस्कार करना चाहिये ८५ क्योंकि ये आदिराजा कहलाते हैं व सदैव जयकी इच्छा किये हुये धनुर्वेदके अर्थियों कोभी चाहिये कि इनके नमस्कार करें व सब राजाओं को तो नित्य उन महाराजके नमस्कार करना चाहिये क्योंकि सबकी वृत्ति देने वाले वही हैं हे द्विजोत्तमो ! इसप्रकार सबोंने जिस २ को पात्र बनाकर पृथ्वी को दुहा हमने सब कहे ८६ । ८७ व बछड़ों व दुहनेवालों की विशेषता भी तुम्हारे आगे कही व क्षीरविशेष भी हे भूसुरो ! तुमसे कहा यह सब जैसा पूर्वकालमें हुआ था सब तुमसे कहा ॥

चौ० धन्ययशस्य पुण्यनीरोगा । पाप प्रणाशन गत सब शोगा ॥
वेन तनय पृथुचरित अनूपा । जो यहिसुनिहिस्वमति अनुरूपा ॥
भागीरथी स्नानफल तासू । प्रतिदिन होइहि पुण्य प्रकासू ॥

सर्व्व लोकमहं शुद्ध पुनीता । क्लैजाइहि हरिपुरश्रुतिगीता ८८ । ११॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादे

पृथूपारुयानएकोनत्रिंशोऽध्यायः २९ ॥

तीसवां अध्याय ॥

दो० तिसर्येके महं वेनके पुनि पृथुके बहु वृत्त ॥

सूत ऋषिन सों कह्यहु यह कथा विचित्र सुनृत्त १

ऋषिलोगोंने सूतजीसे पूँछा कि पाप करनेमें प्रवृत्त वेनके दुरा-
चार तुमने कुछ हमलोगोंसे कहेथे सो उसके पापकी कौनसी वृत्ति
थी व क्याफल उसने पाया १ अब वेनके व वेनकेपुत्र महात्मा पृथु
जीके भी चरित्र हमसे विस्तारपूर्वक कहो हमलोगों को सुनने की
बड़ी इच्छाहै २ सूतजी बोले कि हमने जैसे पूर्वकालमें सुनाहै वह
पुण्यदायक वृत्तान्त तुम लोगों से कहेंगे ३ जब महात्मा महाभाग
पृथुनाम पुत्र राजावेनके अङ्गसे उत्पन्न हुये तो राजावेन विमलहोके
फिर धर्म्मात्मा होगये ४ क्योंकि जैसे अधम पुरुष महापाप इकट्ठे
करते हैं व तीर्थके प्रसङ्गसे सब नष्ट होजाते हैं ५ ऐसेही सज्जनों
के सङ्गसे पुण्य उत्पन्न होताहै इसमें सन्देह नहीं है व पापियोंके प्र-
सङ्गसे पापही उत्पन्न होताहै ६ पापियोंके सङ्ग वार्त्ता करने से व
उनके देखने से स्पर्श करने से उनके सङ्ग बैठने उठने से व उनकी
पंक्तिमें बैठकर वा उनका बनाया भोजन करनेसे वा उनका संगम
होनेसे पाप इकट्ठा होजाताहै ७ ऐसेही पुण्यात्माओंके सङ्गवार्त्तादि
करनेसे पुण्यहोताहै व महातीर्थों के प्रसङ्ग से पावनष्ट होतेहैं
अन्यथा नहींनष्टहोते ८ व तीर्थोंके करनेसेवमहात्माओं के सङ्गसे
सब पापधोकर पुरुष पुण्यगति को पाते हैं इतनी कथा सुनकर ऋ-
षिलोगों ने पूँछाकि पापी लोग कैसे सत्सङ्गसे परमसिद्धि को पहुँचते
हैं ९ वह सब हमसे विस्तारसे कहो हम लोगोंको सुननेकी बड़ी
इच्छा है १० सूतजी बोले कि देखो लुब्धक लोग दास धीवरादि
महापापी होते हैं व वे बहुधा नर्मदा गंगा यमुना नदियोंकेही
भीतर सदा स्थित रहते हैं ११ ज्ञान से वा अज्ञानसे सदा उन्हीं

नदियों में स्नान किया करते हैं व जलमें क्रीड़ा किया करते हैं सो महानदियोंके प्रसंग से वे परमगतिको पाते हैं १२ व दासत्व जोकि पापोंके समूहोंसे युक्त होता है उसे परित्याग करके स्वर्गादि स्थानों को चलेजाते हैं जो पुण्यकारी जलमें स्नान करते हैं १३ सो इसी प्रकार महानदीके प्रसंगसे अन्य महापापी पापों से छूटजाते हैं इसमें कुछ संदेह नहीं कि महापुण्यात्माजनों के संगसे पापियोंके पाप नष्ट होते हैं १४ महात्माओं के प्रसंगसे व दर्शनसे स्पर्श करनेसे पापियों के पाप छूटतेही हैं इस विषयमें विचारणा करनेकी कुछभी आवश्यकता नहीं है हे विप्रो ! इस विषयमें एक पापनाशन इतिहास कहते हैं सुनो वह बहुत पुण्य देता है/एक महावन में सुलोभ नाम मृग व्याध रहताथा १५ । १६ वह कुत्तोंको संग लिये जाल व पांशी हाथोंमें किये धनुर्बाणोंसे नित्य मृगोंको माराकरे क्योंकि मांसके स्वादुमें वह बड़ा लम्पट होगया था १७ एक समय धन्वाबाण हाथों में लिये वह दुष्टात्मा कुत्तोंको संगलिये विन्ध्याचलके दुर्गम स्थानमें गया १८ व मृग रुरु वराह सूकरादि डरेहुए बहुत भे जन्तुओं को उसने मारा व उसी समय नर्मदाके तीर से कोई मछली मारनेवाला धीवर १९ मछलियों को मार जलसे बाहर निकला व उसी समय सुलोभनाम मृगव्याध के भयसे डरीहुई एक मृगी २० अपने जीव की रक्षा करनेके लिये अति विह्वलहो जीभ निकालेहुई आपहुँची वह बड़े वेगसे दौड़ती हुई नर्मदाके तीर पर आई २१ उसके बाण भी लगाथा व पीछे से कुत्ते भी दौड़े चले आते थे व पवनके वेग से सुलोभ नाम मृगघातक भी दौड़ा आता था २२ इधर से मछली मारनेवाले उस धीवर ने भी उसे देख बाण हाथ में लिया व धनुषपर चढ़ाकर उस बेचारी मृगी को मारा इतने में सुलोभ नाम लुब्धकभी कुत्तों सहित वहां पहुँचा २३।२४ व उसने कहा कि इसे न मारना यह मृगी हमारी है क्योंकि हमारा बाण इसके लगाहुआ है यह सुन मांसके लोभी उस मछली मारनेवाले २५ महाबली दुष्टात्माने भी उसका कहा न मानकर मृगीके ऊपर एक बाण मारा व उधरसे मृगव्याधने भी तीक्ष्ण बाण उसके मारा २६

बस उन दोनों पापियों के बाणों के लगनेसे वह मृगी मृतकके समान होगई तब तक कुत्ते आकर नोचनेलगे तब तो वह मृगी उचकी व जाकर नर्मदा नदी के भीतरगिरी व उसके संगही वे कुत्ते भी उस विमल नर्मदा के कुण्डमें कूदे २७।२८ तब मृगव्याध क्रोध से मूर्च्छित उस धीवरसे बोला कि हे दुष्ट ! यह मृगी तो हमारी थी तू ने बाणसे क्यों इसे मारा २९ तब मञ्जुलियों का मारनेवाला उस मृगघातकसे बोला कि नहीं यह मृगी हमारी है तू घमण्डके मारे अपनी कहताहै ३० बस ऐसा कहकर क्रोधमें व लोभमें आकर दोनों युद्धकरनेलगे यहां तक कि लड़ते २ वेभी दोनों उसी विमल नर्मदा जीके जलमें गिरे ३१ उस समयमें दैवयोगसे एक पर्वका योग था अमावास्या तिथि लगगईथी वह पर्व सर्वथा गतिदायक और महापुण्य फलका देनेवाला था ३२ उसी पर्वमें वे सबके सब जलमें गिरे यद्यपि वे सब जप ध्यान से हीन थे व भावसत्यसे वर्जित थे ३३ परन्तु तीर्थस्नानके प्रसंग से मृगी कुत्ते व लुब्धक सबके सब पापोंसे विनिर्मुक्तहो परमगति को चलेगये ३४ इससे हे ब्राह्मणो ! तीर्थों के प्रभाव से व सज्जनों के संग से पापियों के पापभी नष्ट होजाते हैं जैसे अग्निके संयोग से काष्ठ जलजाते हैं ३५ सूतजी बोले कि इसीप्रकार उन महात्मा ऋषियों के संसर्ग से व उनसे वार्त्तालाप करने व उनके दर्शन करनेसे व स्पर्श करने से उस पापी राजा वेन के भी पाप नष्ट होगये अत्युग्र पुण्यात्मा के संसर्ग से पापियों के पाप नष्टही होजाते हैं ३६ । ३७ व अत्युग्र पापियों के संग से अल्प पुण्यवाले पुरुषों को पाप भी लग जाते हैं सो अपने नानाके पापके दोषसे वेन लिप्त होगयाथा ३८ इतना सुनकर ऋषिलोगोंने प्रश्न किया कि वेनके मातामह अर्थात् नानाके कौनदोषथा हमसे विस्तारसहित कहो वही मृत्यु वही काल वही यम व धर्मराज ३९ केवल वह उस अधिकारपर स्थित रहता है किसीका मारनेवाला नहीं स्थितहोसक्ता चर व अचर सबलोग अपने अपने कर्मकेवशीभूतहोते हैं ४० इससे कर्मानुसारजीते मरते व सुख दुःखादि भोगते हैं पापी तिनके कर्म के विपाक से यमराजजी को

नयानक देखते हैं ४१ और पुण्यात्मा यमराजजी दिनदिनमें पापियों को उनके कर्म से सब नरकों में लेजाते और ताड़ना देते हैं ४२ और पुण्यात्माओं को सब पुण्यकर्मों में धर्मात्मा यमराजजी लगाते हैं पुण्यात्माका दोष नहीं देखते ४३ ऋषियोंने सूतजीसे पूछा कि पापी वेन किस दोष से मृत्युको प्राप्तहुआ तब सूतजीने कहा कि दुष्ट चित्तवाले पापियोंको मृत्यु नित्यही शासन करती है ४४ काल रूपसे वर्तमान होती और पापियोंके कर्म देखती है जिसका पापकर्म होताहै उसको तिसी कर्मसे नाशकरती है ४५ तिसका पापजानकर यमराजजी उसको लेजाते हैं पुण्यात्मा पुण्यकर्मसे स्वर्गको जाता है ४६ इन सबको दूतों की द्वारा मृत्यु युक्त करती है जो यहां बड़े २ दानपुण्य करते हैं व मंगलकर्म सदा करते रहते हैं ४७ उनको मृत्यु नानाप्रकारके भोग भोगनेको देती है व दुष्ट पापियोंको वही मृत्यु लोहदंडादिकों से ताड़ित कराकर नानाप्रकारके कष्ट देती दिलाती है वस कर्महीसे मृत्युका व्यापार ऐसाहै मृत्युभी पाप व पुण्यहीसे प्रयोजन रखताहै ४८।४९ व महात्मा मृत्युके लोभ और पुण्यसे सुनीथानाम कन्या हुईथी व पिताके कर्म देखतीहुई सदा क्रीड़ा किया करतीथी व प्रजाओं को जिसप्रकार पाप पुण्यके अनुसार मृत्यु दुःख व सुख देताथा सब सुनीथाभी देखाकरती थी ५०।५१ मृत्यु की कन्या महाभाग्यवाली सुनीथा एकदिन खेलती २ अपनी सखियों के साथ एक वनको गई ५२ वहांपर उसने एक बड़े सुन्दर गन्धर्वके पुत्र सुशङ्ख को देखा व उसके गाने का कोलाहल सुनकर वहांगई ५३ व सर्वांग सुन्दर उस गन्धर्वकुमार को अच्छी तरह निकट से देखा वह गीतविद्याकी सिद्धि के लिये सरस्वती जीका ध्यान कर रहाथा ५४ यह वहां रहकर उस गन्धर्व का विघ्न नित्यही आप करे वह विचारा गन्धर्व क्षमाकरे व नित्य कहे कि तू यहांसे चलीजा हमारे ध्यान में क्यों विघ्न डालती है पर यह उसके कहने से वहां से न हटी बार २ विघ्नही करतीरही तप करतेहुये उसको इसने उलटे ताड़ित भी किया कि तू क्यों तप करता है ५५ । ५६ तब वह सुशङ्ख नाम गन्धर्व इस सुनीथा नाम मृत्यु की

कन्या से अतिक्रुद्ध होकर बोला कि हे पापिनिदुष्टे ! तू क्यों हमारे तपमें बार २ विघ्नही करती चलीजाती है ५७ महात्मा लोग मारने परभी उसके बदले में उसे नहीं मारते व न गालीआदि पाने से उलटकर गाली ही उसे देने हैं ५८ पर तूने तप करतेहुये निर्दोष हमको ताड़ित किया इतना पापिनी सुनीथासे कहकर वह धर्मात्मा गन्धर्व तो महाक्रोध से चुपहोरहा क्योंकि उसने विचारा कि यह स्त्री है व दुष्टता करती है पर यह मारे पाप मोहके व बाल्यावस्थाके कारण ५९।६० तपस्या करतेहुये महात्मा सुशंखसे बोली कि तीनों लोकों में जितने प्राणी बसते हैं उन सबों को हमाराही पिता मारता है ६१ व दुष्टोंको सदा सन्तप्त करता है और सज्जनों का पालन करना है तिनको दोष नहीं होता महापुण्य से वर्तता है ६२ यह सुशंख नाम गन्धर्व से कह जाकर अपने पिता से सुनीथा बोली कि हे तात ! हमने वनमें आज तप करतेहुये एक गन्धर्व के पुत्रको ताड़ित किया है ६३ वह काम क्रोधआदि से रहित था अपना मन लगाये सदा एकान्त में ध्यान करता था जब हमने उसे बहुतही दुःखित किया तब वह धर्मात्मा क्रोधयुक्त होकर हमसे बोला ६४ कि मारतेहुये को मारना न चाहिये न गाली देतेहुये को गाली देनी चाहिये हे तात ! उसने हमसे यह कहा सो आप हमसे इसका कारण कहें ६५ हे द्विजसत्तमो ! जब मृत्युसे सुनीथाने ऐसा कहा तो मृत्यु सुनीथा से कुछभी नहीं बोला क्योंकि वह तो धर्मात्मा है इस दुष्टा अपनी कन्या के वचनका क्या उत्तर देता ६६ तब एकदिन फिर सुनीथा वहां वनमें गई जहां वह सुशंख गन्धर्व तप करता था व जातेही उसने तप करतेहुये उसको दुष्टतासे हाथसे मारा ६७ जब मृत्युकी कन्यासे वह सुशंख गन्धर्व व्यर्थ फिर ताड़िता हुआ तो क्रुद्धहोकर उस महातेजस्वी ने सुनीथा को शापदिया ६८ कि हे दुष्टे ! जिससे कि वनमें तप करतेहुये निर्दोष हमको तूने व्यर्थ ताड़ित किया इस से हम तुझे शाप देते हैं ६९ सो सुन जब तू गृहस्थाश्रम को प्राप्त होगी व अपने पतिके संग स्त्री पुरुषका व्यवहार करेगी तब पापाचारयुक्त, देवता व ब्राह्मणों का निन्दक ७० सब पापोंके करने में

रत हे दुष्टे ! तेरे गर्भ से ऐसा पुत्र उत्पन्न होगा ऐसा शाप देकर वह अन्यत्र जाकर तप करने लगा ७१ व उसके वहां से चले जाने पर सुनीथा अपने गृहमें आई व अपने महात्मा पितासे सब समाचार तत्प्रेम होकर उसने कहा ७२ जैसे कि उस गन्धर्व के पुत्रने शाप दिया था व वह सब उसका कहा हुआ मृत्युने सुना ७३ तब कहा कि दोषरहित तप करतेहुये उसे तूने क्यों ताड़ित किया हे पुत्रि ! जो तुमने उसको ताड़ित किया यह उचित नहीं किया ७४ ऐसा कहकर धर्मात्मा मृत्यु तिसकी भाग्यकी चिन्तना कर बहुत दुःखित हुआ ७५ सूतजी शौनकादिकों से बोले कि अत्रिमुनि के पुत्र महातेजस्वी व प्रतापी अंगनाम मुनि एक समय नन्दनवनको गये ७६ वहां उन्होंने देवराज पाकशासन इन्द्रजी को देखा तो अप्सराओं के गणोंसे व गन्धर्व किन्नरों के गणों से युक्त थे ७७ व सब ओरसे अप्सरादि पंखे से पवन कर रही थीं व सुन्दर स्वरोंसे गान करती थीं हंसगामिनी रूपवती स्त्रियां चामरों से सेवा कर रही थीं व हंसके समान उजले छत्रसे जोकि चन्द्रमा का अनुकरण करता था उसके दूरने से ७८ । ७९ सब भूषणभूषित इन्द्र शोभित होते थे व काम क्रीड़ा कर रहे थे ऐसे इन्द्र को जब देखा ८० व उनके समीप चारु मंगलवती महाभाग्यवती इन्द्राणीजी को भी विराजमान देखा जो कि रूपसे व तेजसे व तपसे महायशस्विनी थीं ८१ सौभाग्य व पातिव्रत धर्म से प्रकाशित हो रही थीं उनके संग इन्द्र नन्दनवन में विहार करते थे ८२ इन्द्रकी लीला देख द्विजों में उत्तम अंगजी कहने लगे कि ये देवराज धन्य हैं जो ऐसे लोगोंके मध्यमें विराजमान हैं ८३ अहो इनके तपके वीर्य को है जिससे इन्होंने ऐसा महास्थान पाया है जो हमारे भी सब लोकों के धारण करनेवाला ऐसा ही पुत्र होता ८४ तो हम भी बड़े सुखको पाते इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥

चौ० इमि चिन्तापर अंगमुनीश । मनसुभिरतबहुविधजगदीश ॥

निजगृह गयहु भयहु अतिवैरी । चितसो बतकरनो सुतनेगी ८५

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादेवेनो

पाख्याने त्रिंशोऽध्यायः ३० ॥

इकतीसवां अध्याय ॥

दो० इकतिसयें महँ अंगको अत्रि दीन उपदेश ॥

इन्द्रसदृशसुतहितकरन तपसोगयहुनगेश १

सूतजी शौनकादि ऋषियोंसे बोले कि महातेजस्वी अङ्गजी उन महात्मा इन्द्रजीकी लीला सम्पदा भोग विलास देखकर १ सोचने लगे कि इन्द्र के तुल्य पुत्र हमारे कैसे हो व धर्मात्मा भी एकही हो एक क्षणमात्र चिन्ता करके २ सत्यमें तत्पर अंगजी अपने घरमें आये और अपने पिता अत्रिजी से बड़ी नम्रता से प्रणाम करके पूँछा कि ३ किस पुण्य समाचारके करने से पुरुष इन्द्रत्व भोगता है व किस पुण्यकी बड़ी पुष्टता है कैसा कर्म किया है ४ व किस प्रकारका तप किया है और पूर्व समयमें किसका आराधना किया है हे सत्यवानोंमें श्रेष्ठ यह हमसे विस्तारसहित कहो ५ अत्रिजीबोले कि हे महाभाग ! बहुत अच्छा २ जो हमसे ऐसा तुमने पूँछा हे वत्स ! अब इन्द्रका चरित हम तुमसे कहते हैं सुनो ६ पूर्वकालमें एक बड़े मेधावी सुव्रत नाम उत्तम ब्राह्मणहुये उन्होंने कृष्ण हवीकेशजी को तपस्यासे संतुष्ट किया ७ इससे वे कश्यपजी के वीर्यसे अदिति जीके पुण्यगर्भ में प्राप्तहुये व उत्पन्न होकर श्रीविष्णुभगवान के प्रसादसे देवराज होगये ८ यह सुन अंगजी बोले कि पिताको प्रिय इन्द्रके समान पुत्र हमारे कैसे उत्पन्न हो इसका उपाय आप हमसे कहें आप ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ हैं ९ यह सुन अत्रिजी बोले कि हे महामते अंग ! संक्षेप रीति से महात्मा सुव्रतका सब पुण्यचरित सुनिये १० जिस प्रकारसे पूर्वकालमें मेधावी सुव्रतजीने श्रीहरिकी आराधनाकी थी व उनका भाव भक्ति व ध्यान ११ देख श्रीजगन्नाथ जीने उनको दूसरे जन्म में महापद दिया जिस पदके अधीन चराचर सब तीनों लोक हैं १२ व विष्णुके प्रसाद से जैसे इन्द्र उसे भोगते हैं इस प्रकार इन्द्र का कियाहुआ सब तुम से कहा १३ कि हे सत्तम ! श्रीहरि भक्तिसे भावमहित ध्यान करनेसे संतुष्ट होते हैं व जिरकी भक्तिसे श्रीहरि संतुष्ट होते हैं उसे सब कुछ देदेते हैं १४

इससे सब कुछ देनेवाले सर्व संभव सर्वज्ञ सब जाननेवाले श्रेष्ठ पुरुष श्रीगोविन्दजी की आराधना करो १५ हे पुत्र ! उनसे जिस जिस पदार्थकी इच्छा करोगे सब पाओगे १६ ॥

चौपै० वरसुखकेदाता धर्मविधाता अरुसबमोक्ष प्रदाता ।
सबजगके नाथा दीनसनाथा हैं हरिसुनु यह बाता ॥
यासों सुतताही करिमनमाही आराधहु विधिनीके ।
तुम इन्द्रसमाना अतिबलवाना पैहहुपुत्र सुठाके १७
परमार्थसमेता धर्मोपेता सुनि निजपितुके वचना ।
मनसोंगहिनीकेअरुकरिठीके करिप्रणाममुनिचरना ॥
शाश्वतहितकारी वरदमुरारी मनमहँकरिहितजानी ।
सोमुनिविज्ञानी पितुकीवानी मानी सब गुणखानी १८
लहिजनकनिदेशाचल्यहुविदेशा करनहेतुतपभारी ।
वरअंग मुनीशा धरिपदशीशा निजपितुकेअघहारी ॥
गिरिशज सुमेरू जहँ सुरफेरू सदा करत मनलाये ।
तहँ गो तपहेतू सुस्थिरचैतू करिहरिपद शिरनाये १९

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादे

वेनोपाख्यानैकत्रिंशोऽध्यायः ३१ ॥

बत्तीसवां अध्याय ॥

दो० बत्तिसयें महँ मेरुगिरि वर्णन अरु तप अंग ॥

हरिसोंवर वाञ्छितलह्यहु मुनियहकहो प्रसंग १

सूतजी शौनकादिकोंसे बोले कि नानारत्नों से अच्छेप्रकार सर्वत्र प्रकाशित व सबकहीं सुवर्ण से युक्त वह सुमेरुपर्वतराज ऐसा शो-
भित होताथा जैसे किरणोंसे सूर्य भगवान् शोभितहोते हैं १ जिस
पर अतिशीतल अशोक वृक्षोंकी छायाओंमें दृढ़ आसन मारे बैठेहुये
योगीलोग श्रीहरिका ध्यान कररहेथे २ कहीं २ मुनिलोग तप करते
व कहीं किन्नरलोग गाते व कहीं २ ऋषि व गन्धर्व्वलोग सन्तुष्ट बैठे
वीणा तालबजाते ३ व गन्धर्व्वलोग तालमान लयमें लीनहो निषाद

ऋषभ गान्धार षड्ज मध्यम धैवत व पंचम इन सातो स्वरोंसे गान कर रहे थे मूर्च्छना रत्निआदि से संयुत स्पष्ट मनोहर गीतें गाते थे ४ व उस पर्वत श्रेष्ठपर चन्दनों की छायाओं में बैठे हुये गीतके सब भेद तालस्वर जाननेवाले गन्धर्व लोग तत्पर हो गान करते थे ५ व उस पर्वतोत्तम में देवों की स्त्रियां नाचतीं व पापनाशन पुण्यदायी दिव्य सुन्दर कल्याण देनेवाला ६ मधुर वेदका शब्द सुनाई देता व चन्दन अशोक पुन्नाग शाल ताल तमाल ७ वटके बड़े २ वृक्षोंसे वह पर्वतोत्तम शोभित था सन्तानक कल्पवृक्ष केलाआदि के वृक्षोंसे विराजमान था ८ व सुन्दर फूले हुये स्वर्ग के वृक्षोंसे सब ओर शोभित था अनेक प्रकार की धातुओं से युक्त और अनेक प्रकारके रत्नसमूह वाला था ९ अनेक प्रकारके कौतुक और मंगल संयुक्त था व देव समूह तथा अप्सराओं के झुंडों से संकुल था १० ऋषियों मुनियों सिद्धों व गन्धर्वों से सब ओरसे प्रकाशित था पर्वताकार गजों से व सिंहोंके नादोंसे विराजित था ११ शरभ मतवाले शार्दूल व मृग शशक लोमड़ीआदि से युक्त था विमल जलोंसे सम्पूर्ण वापी कूप तड़ागादिकों से अलंकृत था १२ जिनमें कि हंस कारण्डवआदि पक्षी कूजते थे उनसे शोभित था व उनमें सुवर्ण के पुष्प व कमल कल्लार उत्पल शतपत्रादि कमलकी नानाजातियों के पुष्प लगे थे इससे शोभित था १३ ठौर-२ नदियों की धारायें बहती थीं झरने झरते नाना प्रकारकी चित्र विचित्र शिलाओं से विराजता था १४ व बड़ी २ लम्बी चौड़ी सुवर्णकी शिलाओं से जोकि सूर्य व अग्नि के समान चमकती थीं उनसे वह शैलराज शोभित था १५ व देवताओंके विमानों से तथा पर्वताकार देवताओं के धवरहरों से व हंस और चन्द्रमा के समान सुवर्ण के दण्डोंसे अलंकृत था १६ धवरहरों पर सुवर्णमय कलश विराजित थे व नानाप्रकार के गुणोंसे युक्त देवगणों से शोभित था १७ व अनेकप्रकार के देवसमूह गन्धर्व चारणोंसे सब ओरसे पुण्यात्मा पर्वतों में उत्तम मेरुपर्वत शोभित था १८ व उसी पर्वतपरसे महापुण्य जलवती गंगानाम महानदी सब पुण्यरूप तीर्थों से युक्त कमलोंसे शोभित हंसों से युक्त बहती १९

जिसकी सेवा मुनि व ऋषिसमूह कियाकरते इस प्रकारके गुणों से युक्त पुण्य कौतुक मंगल संयुक्त उस सुमेरुपर्वतपर २० अत्रि मुनिके पुत्र पुण्यात्मा अंगजी पहुँचे व जाकर गङ्गाजी के तीर एक पुण्यरूप कन्दरा में एकान्त २१ बैठकर वे मेधावी काम क्रोध से वर्जित होकर व सब इन्द्रियों को अपने वशमें करके हृषीकेश भगवान् को मनमें करके २२ व क्लेशनाशन श्रीकृष्णजी को ध्यान करते हुये सोते बैठे जागते मनसे सदा सर्वत्र देखनेलगे २३ व नित्य योगाभ्यास से संयतेन्द्रिय होकर अनन्यमन होगये व चर अचर सब जीवोंमें केशव भगवान् को देखनेलगे २४ चाहे गीले पदार्थहों वा सूखेहों सबों में श्रीहरिकोही देखते इस प्रकार तप करतेहुये सौवर्ष बीतगये २५ तब इस प्रकार तप करतेहुये उन ब्राह्मणोत्तम अंगजी को देखकर जगन्नाथ चक्रपाणिजीने नित्य बहुत घोर विघ्न मुनिको दिखाये २६ परन्तु उन्हीं महात्मा श्रीनृसिंहजी के तेजसे वह धर्मात्मा ब्राह्मण उन विघ्नोंको ऐसा भस्म करता गया जैसे अग्नि इन्धनों को भस्म करताहै २७ व नानाप्रकार के नियमों के करनेसे व अन्य संयम उपवासादिकों के विधान से वह ब्राह्मण शरीर से तो अतिदुर्बल होगया परन्तु अपने तेज से अतिदीप्तिमान् होतारहा २८ व सूर्य और अग्निके समान प्रकाशित दिखाई देनेलगा इस प्रकार तपस्या में निरत जनार्दनजीका ध्यान करते अंगजी को २९ श्रीभगवान् जीने आकर दर्शन दिया और अंगजी से बोले कि हे मानद ! वर मांगिये उन्हें देख परमनिर्वृत ३० प्रसन्न बुद्धियुक्त अंगजी नम्र होकर बोले कि ३१ ॥

चौ० तुमगतिसबजनकेजगपावन । भूतभव्य भवके हौ भावन ॥
सर्वभूतपति सब गुण तोरे । भूतरूप बिनवत करजोरे ॥
गुणरूपी गुणगम्य गुणार्णव । गुह्यवृत्त प्रणमत सुखमार्णव ॥
शंख चक्रदर धर भगवाना । नमो नमोहै सहित विधाना ॥
सत्यभाव अरु सत्य स्वरूपा । सर्व सत्यमय वेद निरूपा ॥
माया मोह विनाशनहारे । सब माया कर नमत तुम्हारे ॥
मायाधर मायाधृत देहा । मायारूप न रूप न गेहा ॥

सर्व मूर्तिधर शङ्कररूपा । करत प्रणामस्वमति अनुरूपा ॥
 सर्वधाम प्रणमत हों तोहीं । धर्मधारि पलहु अब मोहीं ॥
 तुम आकाश प्रकाशनहारे । वह्निरूप नम करत तुम्हारे ॥
 शुद्धरूप स्वाहा तनुधारी । अरु अव्यक्त महात्मकरारी ॥
 व्यासरूप जगव्यासस्वरूपा । नमोनमो हम करत अनूपा ॥
 वासुदेव विश्वेश सुरारी । अनलरूप सर्वत्र प्रचारी ॥
 हुतभोक्ता हुत आहुतिरूपा । करत प्रणामस्वमति अनुरूपा ॥
 वामन कपिलदेव हरिनामा । करत प्रणाम सुनाम सुधामा ॥
 नमो नृसिंहदेव भगवाना । सत्त्वपाल बलपाल महाना ॥
 एकाक्षर गोविन्द गुपाला । नमो नमो हम करत कृपाला ॥
 सर्वाक्षर अरु हंस स्वरूपा । लेहु प्रणाम सकल सुरभूपा ॥
 पञ्चतत्त्व त्रयतत्त्व स्वरूपा । नमत चरण तव हे जगरूपा ॥
 पञ्चविंश तत्त्वात्मक देवा । दत्ताधार करत तव सेवा ॥
 कृष्ण कृष्णरूपी भगवन्ता । लक्ष्मीनाथ अवौघ निहन्ता ॥
 पद्मपलाश नयननम तोरे । आनन्ददानि हरहु दुख मोरे ॥
 विश्वम्भर ममपाप विनाशन । नमोनमो हम करत प्रकाशन ॥
 शाश्वतअव्ययअनघअनामय । लेहु प्रणति तव होयसदाजय ॥
 पद्मनाभ केशव कमलाप्रिय । वासुदेव सर्वेश भक्त हिय ॥
 आनन्द कन्द पादयुग तोरे । मधुसूदन विनवत करजोरे ॥
 देहु दास्य तव चरणनमामी । केशव जन्मजन्म अनुगामी ॥
 शङ्खपाणि शङ्करहु हमारो । शान्ति देहुयशजपत तिहारो ॥
 भवदारुणहुत अशनज तापा । शोकमोह बहुविधि तनुव्यापा ॥
 दै अबज्ञान हरहु दुखसारे । विश्वनाथ हम शरण तुम्हारे ३२।५४

इस प्रकार की स्तुति अङ्गनाम महात्माकी सुनकर व घनश्याम
 निज महापराक्रमी रूप दिखाकर ५५ भगवान् प्रसन्न हुये वह रूप
 शंख चक्र गदा पद्मको धारण किये गरुड़पर आरुढ़ प्रकाशित दिखा
 दिया ५६ सब भूषणोंकी शोभासे युक्त हार कुण्डल कङ्कण धारण
 किये व परमदिव्यरूप वनमालासे विराजमान ५७ अङ्गमुनिके
 आगे हृषीकेशजी ने अपना ऐसा रूप दिखाया जो कि पुण्यकारी

भृगुलता और कौस्तुभमणिसे शोभितथा ५८ सर्वदेवमय हरिजी ने अपनी देहदिखाकर ऋषिश्रेष्ठ महात्मा अङ्गजी से यह वचन कहा ५९ भो भो महाभाग विप्र हमारा परमवचन सुनो यह वचन मेघके नादके समान पुनाक कहा ६० कि हम तुम्हारे तप से सन्तुष्ट हुये अब अच्छा वर हम से मांगो ऐसा कहतेहुये सन्तुष्ट विष्णुरूप जनेश्वर दीप्तिमान् कमलापति हृषीकेशजी को देखकर उनके युगलचरणकमलोंके बार बार प्रणाम करके ६१ ६२ बड़े हर्षसे युक्तहो उन जनार्दनजीसे अङ्गजी बोले कि हे देवोंके स्वामी ! हे शंख चक्र गद्गधरजी ! मैं तुम्हारा दासहूँ ६३ जो मुझको वरदिया चाहते हो तो ऐसा उत्तमपुत्र दीजिये कि जैसे सब तेजों से युक्त स्वर्ग में इन्द्र प्रकाशित होते हैं वैसेही मेरापुत्र सदा प्रकाशितरहे ६४ वस वैसेही पुत्र दीजिये कि इन्द्रहीके समान तीनों लोकोंकी रक्षा करे व सब देवताओं को प्रियहो ब्रह्मण्य धर्मपण्डित ६५ दाता ज्ञानी धर्म तेजसे समन्वितहो तीनों लोकों का रक्षक व श्रीकृष्णचन्द्रजी के धर्मोंका पालकहो ६६ व सब यज्ञों के करने में एकही मुखपहो शूर व तीनों लोकों का भूषणहो वेदके माननेवाला वा चार वेदों का पूरा पण्डितहो सत्यप्रतिज्ञ जितेन्द्रिय ६७ सब से अजित सबको जीतनेवाला विष्णुजी के तेजसे युक्तहो वैष्णव पुण्यकर्ता पुण्यसे उत्पन्न पुण्यलक्षणा ६८ शान्तरूपभाव तपस्वी सब शाल्ही में विशारदहो वेदज्ञ योगियों में श्रेष्ठ व आपके सब गुणों के समान हो ६९ वस जो वर दिया चाहते हो तो इसी प्रकारका पुत्र हमको दीजिये यह सुन श्रीभगवान् विष्णुजी बोले कि बहुत अच्छा इन्हीं गुणों से युक्त तुम्हारे पुत्रहोगा ७० वह अत्रिकेवंशकाभी धर्ताहोगा व इस विश्वभरको भी धारण करेगा तेज व यशसे अपने पिताका उद्धारकरेगा ७१ व सत्यों से अपने पिता तथा पितामह दोनों का उद्धारकरेगा व आप विष्णु के परमपद हमारे स्थान को प्राप्तहोगे ७२ अब किसी पुण्यवीर्यकी पुण्यकारिणी कन्या से विवाहकर ७३ तिस में शुभ पुण्यात्मा पुत्र को उत्पन्न करो हे महामते ! हमारे सन्साद से वह धर्मात्मा होगा ७४ और सर्वज्ञ सर्वदेता जैसा तुमने

वाञ्छा किया है ऐसा पुत्र होगा ऐसा वरदेकर श्री हरिभगवान् अ-
न्तर्धान होगये ७५ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवनो

पाख्यानेअंगवरप्रदानं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ३२ ॥

तैंतीसवां अध्याय ॥

दो० तैंतिसयें महँ पितु गिरा सुनी सुनीथा फेर ॥

वनहिं गई सखियन कह्यो चिन्तातजन सुटेर १

ऋषियोंने इतनीकथा श्रवणकर सूतजी से पूछा कि हे सूतजी !
जब सुशंख नाम महात्मा गन्धर्व के पुत्र ने शाप दिया तो उस पाप
से वह सुनीथा कैसी हुई व क्या क्या कर्म उसने किया १ व उस
शापसे उसने कैसा पुत्र पाया इत्यादि सुनीथा का चरित हमसे वि-
स्तारसहित कहो २ सूतजी बोले कि जब सुशंख ने उस तनुमध्यमा
सुनीथाको शापदिया तो वह दुःखसे पीड़ितहो अपने पिताके स्थान
पर गई ३ व पितासे अपना सब चरित्र उसने प्रकाशित किया स-
त्यवानों में श्रेष्ठ धर्मात्मा मृत्युने उसका चरित सुनकर ४ उस महात्मा
से शापित अपनी कन्या सुनीथासे बोले कि तुमने धर्म तेजके नाश-
नेवाला बड़ा भारी पाप किया ५ हे महभाग ! तुमने क्यों सुशंखको
ताड़ित किया यह तुमने सब लोगोंके विरुद्ध काम किया ६ जो कि
काम क्रोध विहीन सुशान्तरूप धर्मवत्सल तपमार्गमें विलीन पर-
ब्रह्ममें स्थित ७ ऐसे पुरुषको जो ताड़ित करताहै उसके पाप का
फल सुनो हे पुत्रि ! उसके पापात्मा पुत्र होताहै व बड़ेपापको भोग-
ता है ८ व मारतेहुये को जो मारता है व गालीआदि कुवाच्य कहने
वाले को जो कुवाच्य कहताहै वह उस मारनेवाले वा गालीदेनेवाले
के पापका फल भोगताहै इसमें सन्देह नहीं है ९ वही शान्तहै व वही
जितात्मा है जो ताड़न करतेहुये को नहीं ताड़ितकरता व जो कोई
निर्दोषके साथ पाप करते हैं १० वे तो मोहसे महापाप करते हैं व
जो दोष करनेवालेके सङ्ग दोषकरतेहैं तो दोषीके दोष उनके ऊपर
प्राजातेहैं ऐसेही जो कोई निर्दोष पुरुष किसी पापी को ताड़ित

करता है तो उस पापीका पाप उस निर्दोषके ऊपर चला जाता है इसी
 से ज्ञानवान् पुरुष ताड़न करतेहुये को भी कभी ताड़ित नहीं करता
 ११ । १४ हे पुत्रि ! तुमने बड़े पापका पालन किया है यद्यपि उसने
 उसके बदले में तुमको शापदे दिया है तथापि अब तुम पुण्यकरो १५
 वह पुण्य सज्जनोंके सङ्गसे होता है इससे सदैव सत्सङ्गति करो व योग
 ध्यान ज्ञान से अब अपना समय बिताओ १६ क्योंकि सज्जनों
 का संग महापुण्यदायक व कल्याण करनेवाला होता है हे बाले !
 तुमने बड़ी दुष्टताका काम किया है अब सत्संगका गुण देखो १७
 जलके स्पर्शकरने व पीने व स्नानकरने से महात्मा मुनिलोग सि-
 द्धियों को पाते हैं व भीतर बाहरके सब मल उनके दूरहो जाते हैं १८
 मुनियों के विशेष और भी सब चराचरलोग जलके स्पर्श स्नाना-
 दिकोंसे सदा शुद्ध होते हैं हे पुत्रि ! जल शान्त होता व सुशीतल होता
 व सबका प्रिय होता है १९ निम्नमल रसयुक्त पुण्यवीर्य मलनाशक
 होता है इससे उसीके समान सबको शान्त रहना चाहिये व उसीके
 तुल्य सबको सुख देना चाहिये इसके अन्यथा न करना चाहिये २०
 जैसे अग्निके प्रसंगसे सुवर्ण मलको छोड़ देता है वैसेही सज्जनों के
 संसर्ग से मनुष्य पापको छोड़ता है २१ व वह अग्निके तुल्य प्र-
 काशित रहता है व पुण्यके तेजसे प्रज्वलित रहता है ऐसेही सत्यरूप
 दीपसे सज्जनलोग प्रकाशित रहते हैं व ज्ञान से अतिनिर्मल
 रहते हैं २२ व ध्यान भावसे अतिउष्ण रहते हैं इसीसे पापीनर
 सज्जनरूप अग्नि का स्पर्श नहीं करसके परन्तु सज्जन अग्निके
 प्रसंगसे पाप सब भस्म होजाता है २३ इससे तुम सज्जनों का संग
 करो इसके विपरीत न करो पापके भारको छोड़ केवल पुण्यके आश्रित
 होओ २४ सूतजी बोले कि जब दुःखित सुनीथाको पिताने इसरीतिसे
 ममभाया तो वह अपने पिताके चरणोंके प्रणामकर निर्ज्जन वनको
 चली गई २५ व काम क्रोध तथा बाल्यभाव को छोड़ तप करने
 लगी मोह द्रोह व मायाको छोड़ एकान्तमें स्थित हुई २६ उसके
 छोले उसकी सखियांभी खेलने व उसका लाड़प्यार करनेके लिये
 हां गई व दुःखभागिनी उस सुनीथाको उन्होंने देखा २७ जोकि

ध्यानकरही थी व चिन्ताके पारको नहीं जाती थी इससे उससे चिन्ता युक्त सब बोलीं कि हे भद्रे ! तुम यहां एकान्तमें बैठी हुई क्यों चिन्ता करती हो २८ इसका कारण हमलोगोंसे कहो क्योंकि चिन्ता दुःख को देती है हां चिन्ता एक ही सार्थक होती है जो कि धर्मके अर्थ की जाती है २९ व दूसरी वह चिन्ता मार्थका होती है जो यागियोंको आनन्द बढ़ाती है अन्य सब चिन्ता निरर्थक होती है इससे चिन्ता न करनी चाहिये ३० चिन्ता शरीरका नाशकरती है व बल तेजका तो प्रणशनही करती है सब सुखोंको नाशती है रूपकी हानि दिखाती है ३१ तृष्णा मोह लोभको भी यह चिन्ता प्राप्तकरती है व प्रति दिन चिन्ता कीगईहुई पापको उत्पन्न कराती है ३२ चिन्ता व्याधि का जब प्रकाश होता है तब वह नरकको पहुँचाती है इससे हे शोभने ! चिन्ताको छोड़ अपनी पूर्वप्रकृतिके समान कार्य्यकरो ३३ मनुष्य जो पूर्व समयमें कर्म करने से इकट्ठा करता है उसीको भोगता है इससे ज्ञानीलोग किसी वस्तुकी चिन्ता नहीं करते ३४ इससे चिन्ता को छोड़ अपना सुख दुःखादिक कहो उन सबोंका वचन सुनकर सुनीथा बोली ३५ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिलण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेसुनीथा

चरितं नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३ ॥

चौतीसवां अध्याय ॥

दो० चौतिसयें महँ सखिन कह सब देवनमहँ दोष ॥

पुनि प्रतिमोहिनीकी कही विद्या जासों पोष १

सूतजी शौनकादिक ऋषियों से बोले कि सुनीथाने सखियों से जैसे महात्मा सुशंस गन्धर्वने पूर्वसमय में शाप दियाथा वह वृत्तान्त सब अपनी सखियोंसे कहा १ व उसीदुःखसे अपनेको पीड़ित बताया व सखियोंसे फिर कहा हे सखियो ! और भी कुछ चिन्ता का कारण कहती हैं सुनो २ हमारे गुण रूपकी सम्पत्तिका ढेर देखकर हमारे कारण हमारे पिताजीने बड़ीचिन्ता की ३ व देवताओं व मुनिगोंको हमको देनाचाहा हाथमें हमको ग्रहणकर सबसे बोले ४

कि यह सुन्दर नेत्रवाली सोलहवर्ष की हमारीकन्या सब गुणोंसे युक्त है इसे तुम लोगोंमें जो अधिक गुणवान् व महात्मा हो उमको दिया चाहते हैं ५ मृत्युका ऐसा वाक्य देवताओं व सब ऋषियोंने सुना तब वैसा कहतेहुये मृत्युसे इन्द्रादि देवगण बोले कि ६ हां तुम्हारी यह कन्या सब गुणोंसे युक्त है व शीलकी तो परमनिधि है परन्तु एकबड़े भारी दोषसे युक्त है जोकि इसे उस तपस्वी ऋषिने शापदिया है ७ इससे इसमें जिस पुरुषके वीर्यसे पुत्र उत्पन्न होगा वह पुत्र महापापी व पुण्यवंशका नाशक होगा ८ इससे यह गंगा-जल से भरेहुये कलशके तुल्य दिखाईदेती है पर जैसे वह मदिरा स्पर्शकियेहुये हाथके स्पर्शसे मद्यहीका कुम्भ होजाता है गंगाजल-का घटनहीं समझाजाता ९ ऐसेही यह तुम्हारी कन्या है पापके संसर्गसे कुलपापी होजाता है जैसे सिरका का एकबूँदभी जो दूधमें पड़जाता है १० वह पीछेसे दुग्धको नाश करके अपनेही रूपका प्रकाश करता है वैसेही पापीपुत्र वंशका नाशक होता है इसमें कुछभी संशयनहीं है ११ बस इसदोषसे तुम्हारीकन्या पापभागिनी है इससे इसे और किसीकोदो यह हमारे पितासे देवताओंने कहा १२ सो देव गन्धर्व व महात्मा सब ऋषियोंनेभी ऐसेही कहा जब उन सबोंने हमारा लेना अंगीकार न किया तो हमारे पिता दुःखसे बहुत पीड़ितहुये १३ सो यह सब हमाराही दोष है जो सज्जनों ने हमको अंगीकार न किया क्योंकि हमोंने तो पूर्वसमयमें ऐसा पापकर्म कियाथा १४ सो इस दुःखके शोकसे सन्ततहो हम इस निर्जनवन को चली आई यहांपर देहका सुखानेवाला तपहीकरेंगी १५ जो तुम लोगोंने हमारी चिन्ताका कारण पूछा वह हमने तुम लोगोंसे प्रकाशित किया १६ मृत्युकी कन्या दुःखसे पीड़ित यशस्विनी सुनीया ऐसा कहकर चुपहोरही फिर सांख्योंसे कुछ न बोली १७ तब सखियांबोलीं कि हे महाभागे ! शरीरनाशक इस दुःख को छोड़दो क्योंकि ऐसा कौन है जिसके कुलमें कुछदोष नहीं है सब देवोंने पाप किया है १८ ब्रह्माजी ने पूर्वकाल में महादेवजीके समीप झूंकहा था इसीसे ब्रह्मा अपूज्य होजायँ यह देवताओंने कह दिया १९ इन्द्र

को देखो ब्रह्महत्यासे युक्त हैं परन्तु बड़े भाग्यवान् देवताओं के साथ तीनों लोकों का राज्य भोगते हैं २० फिर ब्रह्महत्याके सिवाय गौतम मुनि भी प्रिया भार्या अहत्याके संग उन्होंने भोग किया था सो परस्त्रीगामी होकर भी देव क्या देवराज कहाते हैं २१ महादेवजीने भी ब्रह्महत्या की है इससे अब भी उनके हाथमें ब्रह्माका शिर लपटारहना है पर देवता व वेदपारगामी सब ऋषिलोग उनके प्रणाम करते हैं सूर्यदेव कुष्ठरोगसे संयुक्त हैं परन्तु तीनों लोकोंको प्रकाशित करते हैं २२ २३ उनके इन्द्रादि चर अचर सबलोग नमस्कार करते हैं विष्णु भगवान् भृगुमुनि के शापसे दशबार तक पृथ्वी पर जन्म लेकर दुःखादि भोगते हैं २४ चन्द्रमाने अपने गुरु बृहस्पतिजी की स्त्री ताराके संग भोग किया इससे उनके क्षयीरोग होगया व प्रतापवान् महातेजस्वी राजा २५ पाण्डुके पुत्र महाप्राज्ञ धर्मात्मा धर्मके अवतार युधिष्ठिर राजा होंगे अपने गुरु द्रोणाचार्य के वध के अर्थ मिथ्या बोलेंगे २६ इतने महात्माओंमें महापाप विद्यमान है विगुणता किसमें नहीं है व विनालाञ्छनका कौन है २७ हे वरानने ! आप तो थोड़ेही दोषसे लिप्त हैं हे श्रेष्ठरङ्गवाली ! हमलोग तुम्हारा उपकार करेंगी २८ हे शुभे ! तुम्हारे अङ्गोंमें जो सज्जन स्त्रियोंके गुण हैं हे चारुलोचने ! वे गुण हमलोग अन्यत्र नहीं देखतीं २९ स्त्रियोंका भूषण सबसे प्रथमरूप है दूसरा भूषण शील है व तीसरा सत्यबोलना ३० चौथा अच्छे प्रकार शृङ्गार किये रहना पांचवां धर्म करना छठां मधुर बोलना हे वरानने ! ३१ सातवां भूषण अन्तःकरण व बाहरसे शुद्ध रहना आठवां पिताका भावरखना नववां पति की सेवाकरनी ३२ दशवां सहनशीलता रतिमें कुशलता ग्यारहवां भूषण है व पातिव्रतत्व बारहवां भूषण है हे वरवर्णिनि ! ३३ हे बाले ! हे वरानने ! इन बारहगुणोंसे तुम युक्त हो जिस उपायसे सुधर्म करनेवाला तुम्हारा पति होगा ३४ वही उपाय हमलोग करेंगी इस विषयमें हमलोग प्रयत्न करेंगी यह सखियोंने सुनीथासे कहा व यह भी कि हम सब यत्न करती हैं तुम साहस न करो साहस करनेसे होताहुआ भी कार्य नष्ट होजाता है ३५ सूतजी शौनकादिकोंसे बोले

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

१३५

किं जब सखियोंने सुनीथासे ऐसा कहा तो वह सखियोंसे बोली कि जिस उपायसे धर्मात्मापति हमको मिले वह उपाय हमसे तुम सब कहो ३६ यह सुन रम्भादिक उसकी सखियां उससे बोलीं कि आप रूप मधुरतासे युक्त व ऐश्वर्यके बढ़ानेवाली हैं ३७ ब्राह्मणके शाप से डरके कुछ भयभीतहोगई हैं इससे हमलोग यहां आई हैं यह सुन्दर नेत्रवाली मृत्युकी कन्यासे कहा कि ३८ आपको एक ऐसी विद्यादेगी जिससे पति मोहित होजाताहै व सब मायावी पुरुषोंको भी सब कल्याण देनेवाली है ३९ यह कह सबोंने सुनीथा को सुख देनेवाली पति मोहिनी विद्यादी व कहा कि हे भद्रे ! जिस २ देवादिकको तुमको मोहित करना अभीष्टहोगा ४० उस २ को देखकर यह विद्या पढ़ना वह आप तुम्हारे पास आजायगा जब वह विद्या पाकर सुनीथाने उसे सिद्धकिया तब वह परमानन्दित हुई ४१ व अपनी सखियोंकेसङ्ग पुरुषोंके देखनेकेलिये घूमनेलगी घूमते २ पुण्य उत्तम नन्दनवन को गई ४२ वहां गङ्गाजीके तीरपर एक उत्तमपुरुष ब्राह्मणको देखा जो सब लक्षणोंसे सम्पन्न सूर्यके तेजके समान तेजस्वीथा ४३ लोकमें रूपमें अद्वितीयथा मानों दूसरा कामहीथा देवरूपसे महा भागवान् व भाग्यवान् और भाग्यदेनेवाला था ४४ उपमारहितथा क्योंकि विष्णुके तेजके समान उसके तेजकी रभा थी वैष्णव वहथा भी इसीसे विष्णुके तुल्य पराक्रमीथा ४५ ॥ चौ० कामक्रोधमोहादिविहीना । वंशविभूषण मन्त्र प्रवीणा ॥ ऐसे पुरुषहि देखि लुभानी । सखिसों बोली परमसयानी ४६ को यह पुरुष रूप गुणखानी । तपप्रवीणयुत भाव सुबानी ॥ कहु रम्भे यह बात विचारी । दीखतपुरुष महाहितकारी ४७

इति श्रीपाद्मेसहापुराणेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

चतुर्विंशोऽध्यायः ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय ॥

दो० पैंतिसयें महँ अंगमुनि चरितकहे संक्षेप ॥
ताहिबनावनपतिकह्यो रम्भासखिसोंऽवेप १

सुनीथा का वचन सुन रम्भानाम उसकी सखी बोली कि परमेश्वर से ब्रह्माजी उत्पन्नहुये व उनसे प्रजाओंके गति महामनस्वी व धर्मात्मा अत्रिजी हुये १ उनके पुत्र अंगनामहुये ये एकबार इन्द्र के नन्दनवनको गये वहां उनकी लीला व तेज आदि देखकर २ इन्होंने चाहा कि हमारे भी यदि इन्द्रके समान पुत्र होता तो बहुत उत्तम बातथी व ऐसीही धर्मात्मा भी होता ३ तो यश कीर्तियुक्त मेरा कल्याण समेत जन्महोता यह विचार अपने पिताके उपदेश से इन्होंने तपो व नियमोंसे श्रीविष्णु भगवान् जीकी आराधनाकी ४ जब हर्षिकेशजी सुप्रसन्नहुये तो इन्होंने यह वरमांगा कि इन्द्र के तुल्य विष्णुने तेज व पराक्रमसे युक्त वैष्णव सर्व पापनाशक पुत्र हमको मधुसूदनजी दीजिये तब उन्होंने कहा कि अच्छा जैसा तुम चाहतेहो वैसा पुत्र हमने तुमको दिया ५ । ६ तबसे ये विप्रेन्द्र पुण्यवती कन्याको देखतेहैं कि आवे तो उसके संग विवाहकरें जैसे तुम सुन्दर सब अंगवाली हो तैसीहीको ये देखतेहैं ७ इससेहे वरारोहे ! इनके पास जाओ इनसे तुम में पुण्यात्मा पुण्यधर्म जाननेवाला विष्णुके समान तेजस्वी और पराक्रमी पुत्र होगा ८ हमसे जो तुमने पूछा था वह सब तुमसे हमने कहा व हे देवि ! ये तुम्हारे भर्ताहोंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं है ९ व हे देवि ! सुशंखका शापभी वृथा होजायगा इसमें भी संशय नहीं है व हे महाभाग ! इनसे जो पुत्र उत्पन्नहोगा वह धर्मका प्रचार करनेवाला होगा १० हे भद्रे ! यह हम तुम से सत्य २ कहती हैं तुम सुखी होगी जैसे किसान अच्छे खेत में जैसा बीजबोता है ११ वैसाही उसबीजका फलभी भोगताहै उसके विपरीत नहीं होता ऐसेही जैसे पुरुषके वीर्यसे पुत्र होता है वैसाही होता है १२ ये महाभाग तपस्वी व पुण्य वीर्यवान् हैं इससे इनके वीर्य से जो उत्पन्नहोगा वह इन्हीं के गुणों का होगा १३ बस योग्य महातेजस्वी सब देहधारण करनेवालों में श्रेष्ठ पुत्र होगा महाभाग्यवाला व योगतत्त्वादिकों का वेत्ता होगा १४ ॥

चौ० रम्भाकी बाणी विधियों भाणी सुनि बाला हरषानी ।

जो सब सुखदायक अरु चितभायक कहती सकल शुभखानी ॥

मनमाहिं सुनीथा ताहि गुनीथा है सच मृषा न होई।

यासों यह कारज किये न हारज सुनि प्रसन्न सबकोई १५ ॥

इति श्रीपाद्मस्य महापुराणे भूमिखण्डे भाषानुवादे

वेनोपाख्याने पंचत्रिंशोऽध्यायः ५५ ॥

छत्तीसवां अध्याय ॥

दो० छत्तिसयें महँ अङ्गमुनि और सुनीथा व्याह ॥

तासुतवेन सुराज्यकर वर्णन किय ऋषिनाह १

यहसुन सुनीथा अपनी सखी रम्भासे बोली कि हे भद्रे ! तुमने सत्य कहा हम ऐसाही करेंगी इस विद्यासे इन ब्राह्मणदेवको मोहित करेंगी इसमें अन्तर न पड़ेगा १ अब हमको पुण्य सहाय दो जिससे इनके समीपको जावें यह सुन देवोंकी नारी रम्भाने उस मनस्विनी सुनीथा से कहा कि २ हे भामिनि ! कैसी सहायता करें तो तुम हमसे कहो सुनीथा ने कहा कि प्रथम इन विप्रजीके समीप तुम दूती बन कर जावो ३ जब सुन्दर नेत्रवाली रम्भासे सुनीथाने ऐसा कहा तो वह बोली कि बहुत अच्छा ऐसाही करेंगी ४ हम तुम्हारी सहायता करेंगी अब जो तुमको कहनाहो हमसे कहो यहसुनकर उसने कहा कि कहना क्याहै जिसमें हमको ये ग्रहणकरें वह युक्ति करो यह सुनतेही वह दिव्यरूप तो थीही और भी अपना उसने दिव्यरूप बनाया सुन्दर बड़े २ नेत्र रूपयौवनयुक्तहो मायासे अत्यन्त दिव्यरूप धारण किया यहांतक रूपमें उत्तम उससमय होगई कि तीनों लोकोंमें जोई देखता मोहित होजाता ५ । ६ सो वह महापुण्य सुन्दर कन्दराओंसे युक्त नानाप्रकारके धातुओंसे मण्डित नानाप्रकारके रत्नोंकी राशियोंसे शोभित ७ देववृक्षोंसे समाकीर्ण बहुत पुष्पोंसे उपशोभित देवसमूहोंसे समाकीर्ण गन्धर्व्व व अप्सराओं से सेवित ८ मनोहर सुरम्य शीत व्याघ्राओंसे समाकुल चन्दन अलंकारादि वृक्षोंके झुण्डोंसे सघन उस सुभेरुपर्वतके शिखरपर ९ सब उद्गार किये जाकर हिंडोले पर झूलनेलगी नीलरङ्गके रेशमी सूक्ष्म रत्न धारण करलिये १० इससे अतीव शोभितहोनेलगी दुपहरीके

फूलके रङ्गकी चोलीपहिने सब अङ्गोंसे सुन्दरी वह बाला हाथमें वी-
णाले बजानेलगी ११ व सुन्दर स्वरसे विश्वभरके मोहनेवाला गान
गानेलगी उन अपनी सब सखियोंको भी सङ्ग लियेथी १२ यह तो
ऐसा करनेलगी व महात्मा अङ्गजी पुण्यकन्दरामें एकांत में ध्यान
कर रहे थे काम क्रोधसे रहित हो जनार्दनजी का स्मरण करते थे १३
उन्होंने मधुर मनोहर तालमानलयक्रियाओंसे युक्त सब प्राणियोंको
खींचलेनेवाला सुन्दर स्वर सुना १४ यद्यपि महातेजस्वी थे परन्तु उस
मायागीतसे मोहित हो ध्यानसे चलायमान होगये आसनपरसे उठ
कर बारबार उसी ओर देखने लगे १५ व मायासे मोहित होने के
कारण बड़े वेगसे वहां गये व देखा तो वह हिंडोलेपर चढ़ी हुई वी-
णा हाथमें लिये बजारही थी १६ कुछ हँसतीजाती व पूर्ण चन्द्र के
समान प्रकाशित मुखसे गाती जाती उसके उस गीतसे व रूप से वे
महायशस्वी मोहित होगये १७ उसकी सुन्दरताके भावसे काम बाण
से पीड़ित हुये व ऋषिपुत्र द्विजोत्तम वे आकुल व्याकुल ज्ञान हुये १८
मोहसे अनर्थ वचन कहने लगे व फिर २ जँभाईलेने लगे व क्षणमात्र में
उनके सब अंगोंमें पसीना हो आधा थर २ कांपने लगे देहमें सन्ताप हो
आया १९ महामोहोंसे मोहित होने लगे व मन चलायमान होगया
व कांपते हुये अंगजी बनाय उसके निकट चले गये २० व उसे तो छोड़
उसीके निकट मृत्युकी कन्या विशालाक्षी यशस्विनी सुनीथाको देख
मन्द २ मुसुकाती हुई सुनीथासे वे महात्माजी बोले २१ कि हे वरा-
रोहे ! तुम कौन हो व किसकी हो व सखियोंके बीचमें किस कार्यसे
यहां आई हो व तुमको इस वनमें किसने भेजा है २२ तुम्हारे सब
सुन्दर अंग इस महावनमें शोभित होते हैं हमसे कहो व हमारे ऊपर
प्रसन्न होके सुमुखी होवो २३ माया के मोह से मुनिने न जाना
कि यह इसीका कर्म है क्योंकि वे तो कामके बाणोंसे विद्ध होगये
थे २४ मुनि का इस प्रकार का महावाक्य सुनकर अपनी सखीके
मुखकी ओर देखकर उन ब्राह्मण देव से सुनीथा कुछ भी न बोली
२५ व अपने सङ्केतसे रम्भाको प्रेरित किया कि तुम इनसे वृत्तान्त
कहो यह जान रम्भा उन द्विजोत्तम से आदरसमेत बोली कि २६

यह महाभाग महात्मा मृत्युकी कन्या है व सबगुणोंसे सम्पन्न है सु-
नीथा इसका नाम है २७ यह बाला धर्मवान् तपोनिधि शान्तस्व-
भाव जितेन्द्रिय महाप्राज्ञ वेदविद्यामें विशारद पति चाहती है २८
यह सुन अप्सराओंमें श्रेष्ठ उस रम्भासे अङ्गमुनि बोले कि हमने
सर्वविश्वमय श्रीविष्णुजी की आराधना की है उन्होंने हमको वर
देया है कि तुम्हारे सब से उत्तम पुत्र होगा २९।३० उसके लिये
तुम बहुत दिनों से चाहते हैं कि किसी महात्मा पुण्यात्माकी कन्या
मिले तो उसके सङ्ग अपना विवाह करें परन्तु आज तक हमने अपनी
अच्छाके अनुकूल कोई कन्या नहीं देखी पर यह धर्मकी कन्या है व
धर्मचारमें परायण है रूपभी इसका अद्भुत है ३१।३२ सो यदि यह प-
ति की इच्छा करती हो तो हमीको क्यों नहीं भजती है जो २ यह बाला
चाहेगी हम सो २ इसे देंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ३३ इसके संग
अदेयभी वस्तु हम इसे देंगे ऐसा कोई पदार्थ संसारमें नहीं जो
हम इसकी प्रार्थना से इसे न दें ३४ जब ब्राह्मणने ऐसा कहा तो
रम्भा उनसे बोली कि हे विप्रेन्द्र ! सुनो यह तुम्हारी ही धर्मपत्नी होगी
इसमें सन्देह नहीं बस तुम यही करना कि चाहे यह कुछ अपराध भी
करे पर इसका परित्याग न करना ३५ व इसके गुण दोषकी ओर
ध्यान न देना बस इस अर्थकी तुम प्रतिज्ञा करलो व कुछ विश्वास
भी दिखावो ३६ सो और कुछ नहीं विश्वासके लिये अपना हाथ
दे दो यह सुन विप्रजीने कहा कि बहुत अच्छा हम अपना हाथ इसको
पकड़ाते हैं इसमें सन्देह नहीं है ३७ बस ऐसा कह दोनोंकी हाथ
पकड़ी पकड़ा होगई बस गान्धर्वविवाह की रीतिसे अङ्गजीने सु-
नीथा का विवाह कर लिया ३८ उनको सुनीथा को देकर रम्भा
बहुत हर्षितहुई व उन दोनों से विदा होकर रम्भा अपने स्थानको
चलीगई ३९ व सब और सखियां भी अपने २ स्थानोंको चलीगई
तब वे सब चलीगई तब द्विजोंमें उत्तम ४० अङ्गजी उस अपनी
प्रेमभार्याके साथ विहार करने लगे व उसमें सब लक्षणयुत एक पुत्र
उत्पन्न करके ४१ उसका वेन नाम धराया व महातेजस्वी सुनीथाका पुत्र
दने लगा ४२ वेद शास्त्रपढ़के उस वेनने धनुर्वेदपढ़ा फिर वह

मेधावी सब विद्याओंका पारगामी हुआ ४३ इससे अङ्गका पुत्र
 वेन बड़े शिष्टाचार से बर्ताव करनेलगा यद्यपि वह वेन ब्राह्मणों में
 श्रेष्ठथा परन्तु धनुर्विद्या अधिक पढ़नेसे क्षत्रियोंके आचरणमें तत्प-
 रहुआ ४४ जैसे इन्द्र सब तेजसे युक्तहोनेके कारण स्वर्गमें शोभित
 होते हैं वैसेही वहभी शोभित होनेलगा बल व पराक्रमसे वह महा-
 प्राज्ञ इन्द्रहीके तुल्य हुआ ४५ तब चाक्षुष मन्वन्तरके बीचमें व वै-
 वस्वत मन्वन्तर के आनेके पूर्वमें विना प्रजापालके लोकमें सदैव
 प्रजा कष्ट पातेहैं ४६ यह तपस्वी धर्मतत्त्वके जाननेवाले ऋषि प्र-
 जाओंके कारण धर्म जाननेवाला सत्यमें पण्डित राजा चिन्तनाकरते
 भये ४७ तब सब लक्षणों से युक्त वेनको देखतेभये और उनको
 प्रजाओंका पालक नियतकरके राजसिंहासन पर स्थापितकिया ४८
 महाभाग अंगके पुत्रके अभिषेक होने में सब प्रजापति लोग तप
 करनेके लिये वनको चलेगये उन सब महात्माओं के चलेजाने पर
 वेनराजा प्रजाओंका पालन यथावस्थित करनेलगे सूतजी शौन-
 कादिकोंसे बोले कि सुनीथा वेनकी माता अपने पुत्रको विधिवत्
 राज्य करतेहुये देख ४९।५० उस सुशंखके शापका स्मरणकर बहुत
 शंकित चित्तहुई कि यह कैसेहुआ शाप तो यों था कि तेरे बड़ा दुरा-
 चारी पुत्रहोगा परन्तु उसके विपरीत यह तो बड़ा महात्मा तनय
 हुआ यह नित्य विचाराकर जब सब धर्मही के अंग पुत्रमें देखे
 पापका कहीं लेशमात्र भी न देखे तब अत्यनन्दित हो रहते २ वेन
 कुछ २ पापभी करने लगा जैसेही पाप करते जाने वैसेही
 सत्य धर्मादि गुणों को वेनके आगे प्रकाशित करके दिखावे व
 यह कहै कि हे वत्स ! मैं धर्मकी कन्याहूँ ५१ । ५३ व तुम्हा-
 रे पिताजी धर्मतत्त्व अच्छे प्रकार जानते हैं इससे तुम धर्महीका
 आचरणकरो इस प्रकार वह पतिव्रता सुनीथा अपने पुत्रको नित्य
 समझायाकरे ५४ तब माता व पिताके भी वचनके अनुकूल प्र-
 जाओंका पालन अच्छेप्रकार करनेलगे इसप्रकार प्रजापाल होकर
 वेन पृथ्वीमण्डलभरका राज्य करनेलगा ५५ ॥

चौ० प्रजासकलसुखसौनिजजीवन । करहिंधरहिंधर्महिंमनहीमन ॥

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

१४१

वेन सदा अनुरञ्जन करई । देय न दुख काहुहि हित चरई ५६
वेन महात्मा के वर राजा । इमि प्रभाव भो सकल समाजा ॥
बड़ेहु धर्म पालत त्यहि धरणी । अपरसुयशहमक्यहिविधिवरणी ५७

इति श्रीपाद्ममेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनो

पाख्यानेषट्त्रिंशोऽध्यायः ३६ ॥

सैंतीसवां अध्याय ॥

दो० सैंतिसयें महँ वेनकहँ पापरूप थक आय ॥

वेदधर्मतजि जैनमत करन कह्यो यह गाय १

इतनी कथा सुनकर ऋषिलोगोंने सूतसे पूँछा कि जब महात्मा
वेनकी राज्य व धर्म करने में ऐसी रीतिथी तो फिर धर्मछोड़कर
अधर्म कैसे करनेलगे जिससे पीछे सुना है कि ब्राह्मणों ने कोप
किया १ सूतजी बोले कि ज्ञानविज्ञानसम्पन्न व तत्त्व जाननेवाले
मुनिलोग शुभ वा अशुभ जो कुछ कहते हैं वह मिथ्या नहीं होता २
ससे तपकरतेहुये उनमहात्मा सुशंखने जो सुनीथा को शापदिया
गा कि तेरापुत्र बड़ा अधर्मात्मा व दुराचारी होगा वह अन्यथा
से होसके ३ उस शापके कारणसे वेनके सब दुराचार तुम लोगों
कहतेहैं जब धर्मज्ञ महात्मा वेन राज्य करनेलगे तो ४ एक पु-
ष कपटवेषधारण किये वहां आया उसका बड़ाउग्ररूपथा व म-
कायथा शिरमुँड़ायेहुये बड़ातेजस्वी दिखाईदेताथा ५ एकमाज्जनी
खमेंदबाये था व हाथमें एक नारियल का बड़ाभारी पानपात्र
तये था ६ व वेदधर्म की निन्दा करताहुआ असत् शास्त्र पढ़ता
था जहां महाराज वेनजी थे वहां बड़ेवेग से आ पहुँचा ७ व वह
पी महाराज वेनकी सभामें पैठआया उसको सम्मुख आया देख
जावेन ने पूँछा कि ८ आप कौनहैं जो ऐसा रूप धारण कियेहुये ह-
रीसभामें चलेआये अपने आनेका कारण हमसे कहो ९ तुम्हारा
नाम क्याहै व क्या धर्म क्या तुम्हाराकर्महै किसदेवताकी उपा-
ना करतेहो आचार तुम्हारा क्याहै तप कैसा करतेहो व तुम्हारी
वना कैसी है १० व तुम्हारा क्या ज्ञान क्या प्रभाव क्या सत्य

धर्मका लक्षण है वह सब हमारे आगे तुम सत्य २ कहो ११ वेनका ऐसा वाक्य सुन वह पापरूप बोला कि तुम इसप्रकारसे राज्य करते हो सबवृथा है महामूढ़ हो इसमें कुछ भी संशय नहीं है १२ हम धर्म के सर्ववधन हैं हम सब देवोंसे पूजित हैं हम ज्ञान हम सत्य व हम सनातन हैं इससे सबको धारण करते हैं १३ हम धर्म हम मोक्ष हम सर्वदेवमय हैं ब्रह्मदेह से उत्पन्न व सत्यप्रतिज्ञ हैं भ्रष्टप्रतिज्ञ नहीं १४ हमको सत्यधर्मके शरीर जिनरूप जानो ज्ञानतत्पर सब योगी लोग सदा हमारा ही ध्यान करते हैं और किसीका नहीं १५ यह सुन राजा वेन बोले कि तुम्हारा कैसा कर्म है व तुम्हारा शास्त्र कैसा है व तुम आचार कौन करते हो यह जब राजाने कहा तो १६ पापरूप वह बोला कि जहां अहिंसा तो देवता हो व कुशकी गांठियोंकी मालाधारण किये गुरुदिखाई दे व दयाकरना परमधर्म हो बस वहां मोक्ष दिखाई देता है १७ इस शास्त्रमें कुछ सन्देह नहीं है अब आचार तुमसे कहते हैं यज्ञकरना व कराना व वेदोंका पढ़ना हमारे आचारमें नहीं है १८ न सन्ध्या तप दान स्वधा स्वाहा होम का करना है हव्य कव्यादिक नहीं हैं न यज्ञादिक कोई क्रियायें उसमें हैं १९ पितरोंका तर्पण नहीं है अतिथिका पूजन व बलि वैश्वदेव करना भी नहीं है क्षपणक अर्थात् शिर मुण्डोंकी पूजा व अर्हन् का ध्यान उसमें है २० यह जैनमार्गका धर्म समाचार है बस यही सब जिनधर्मका लक्षण है जो कि हमने तुमसे कहा २१ यह सुन राजा वेन बोले कि हम तो जानते हैं कि जो वेदमें कहा है जिसमें यज्ञादिक क्रियायें हैं पितरोंका तर्पण व बलि वैश्वदेवादिकर्म हैं वही धर्म है २२ पर जिसमें ये एक भी नहीं हैं न तप दानादिक हैं वह धर्म कैसा है हम से उसप्रकार का धर्म कहो २३ पातक बोला कि यह सब का देह पृथ्वी जल वायु तेज व आकाश इन पांच तत्त्वोंसे बना है उसमें आत्मा वायु के स्वरूप से रहता है बस इसमें यज्ञादि क्रियाओंकी प्रसङ्गता नहीं है २४ जैसे जलोंमें बुल्लोंका समागम होता है व जाता है ऐसे ही इन पृथिव्यादिकोंमें प्राणियोंका सङ्गम है २५ पृथ्वी और जल वहीं स्थित हैं तेज इसमें विद्यमान दिखाई देता

है तब वायु उनको प्रेरित करता है २६ फिर उसको आकाश आच्छा-
दित करता है तब बुद्बुद् अर्थात् बुल्ला होजाताहै तब जलके बीच
में वह तेज गोलाकार होकर दिखाई देता है २७ सो क्षणमात्र दि-
खाई देता क्षणमात्र में फिर नहीं दिखाई देता ऐसेही प्राणियों का
समायोग सर्वत्र दिखाई देता है २८ अन्तकाल में आत्मा अलग
चला जाता है व पृथिव्यादि पांचों पांचों में मिलजाते हैं इस से
मोहकी बुद्धिसे मनुष्य परस्पर मिलकर एक दूसरे की सहायता के
लिये मोहही से श्राद्धकरते मोहही से क्षयाह व पितरों का तर्पण
करतेहैं हे नृपोत्तम ! मरजाने पर वह कहां रहता व किस रूप से
रहता है जो श्राद्धादि के पिण्डादि खाताहै २९ । ३० उसका ज्ञान
कैसा होता व शरीर कैसा होता व उसे किसने देखा है हमसे कहो
हां श्राद्धादि में मिष्टान्न भोजन करके ब्राह्मण तृप्त होकर चले
जाते हैं ३१ और श्राद्ध किसको दियाजाता है इस से श्राद्ध में
विश्वास करना निरर्थक है और अब वेदोंके दारुण कर्म तुम से
कहतेहैं ३२ कि जब अतिथि गृहमें आवे तो प्रथम एक बड़ाभारी बैल
उसको दे अथवा हे राजराजेन्द्र ! उसे एक छाग दे तबतक अति-
थि भोजनकरै बस इसको तो अतिथि का भोजनकराना लिखाहै ३३
इसीप्रकार अश्वमेधयज्ञमें अश्वका बलिप्रदान करना पवित्र लिखा
है ऐसेही गोमेधमें बैलका बलिदान पुरुषमेध में मनुष्य का बलि-
दान व वाजपेय यज्ञ में छागका ३४ व हे महाराज ! राजसूययज्ञमें
जानो बहुत से प्राणियों का घातन लिखा है पुण्डरीक यज्ञ में गज
को मारे व गजमेध में भी हाथी मारे ३५ सौत्रामण्यपशुमेध में मेष
अर्थात् मेढ़े का वध लिखा है हे नृपनन्दन ! इसीप्रकार नानाप्र-
कारके यज्ञ लिखेहैं ३६ व उन में नानारूप के पशुओं का वधकर-
ना लिखा है फिर जहां पशवादिकही बलिदान दियेजाते हैं तो
उनका लक्षण व फल क्या होगा ३७ व वह अन्नजुँठा होताहै जहां
कि बहुत लोग एकत्र बैठकर भोजन करते हैं व वेदोंमें बार २ बहु-
तों को एकत्र भोजन देना लिखा है व यह भी लिखा है कि महा-
यज्ञ में जो पशुको मारताहै व वह पशुभी महादोषों से हीन होजाता

है ३८ फिर हे राजन् ! ऐसे यज्ञों के करने से कौन धर्म दिखाई देता है व क्या फल जिन यज्ञों में वेदवाले पण्डितों ने पशुओंका मरण दिखाया है ३९ इस से उनमें न कोई धर्मही है न मोक्षदायक पुण्यही है क्योंकि बिना दया का जो धर्म होता है वह विफल समझा जाता है ४० व जहां जीवों का पालन होता है वहां धर्म है इसमें कुछ संशय नहीं है व हे नृपोत्तम ! स्वाहाकार स्वधाकार तप सत्य ये सब ४१ दयाहीन विफल होते हैं व उत्तम धर्म उनमें कुछ भी नहीं होता व ये वेद अवेद हैं जिनमें कहीं दयाका नाम नहीं है ४२ बस दया दानमें नित्यपर हो जीवों की रक्षाही करे जो जीवों की रक्षाकरे वह चाण्डालहो वा शूद्रहो वही ब्राह्मण कहा जाता है ४३ व जो ब्राह्मण होकर दयाहीन हो पशुओं के घात में परायण होता है वह दयाहीन पपी कठिन कूरचित है ४४ ऋषियों ने तो कह दिया है कि वेद ज्ञान देनेवाले हैं परन्तु वे ज्ञानवर्जित बस जहां नित्यज्ञान हो वहीं वेदको स्थित जानो ४५ हे महामते ! दयाहीन वेदों में व दयारहित विप्रों में न सत्य है न वेद वा वेदक्रिया है ४६ हे राजेन्द्र ! वेद वेदान्त वा ब्राह्मण ये सब सत्यरहित हैं व दान का भी कुछ फल नहीं है इससे दान न देना चाहिये ४७ जैसे श्राद्ध का चिह्न है वैसाही दानका भी लक्षण है इस से भुक्ति मुक्तिदायक जिनका धर्म ४८ बहुत पुण्यका देनेवाला तुम्हारे आगे कहता हूं प्रथम शान्तचित्त से सब प्राणियों पर दया करे ४९ फिर हृदय से जिनदेव की आराधना करे जिसमें कि चराचर सब लोग विद्यमान रहते हैं व शुद्धभाव मनसे केवल एक जिनकी पूजा करे ५० बस नमस्कार भी उन्हीं देवदेव जिनके करे अन्य किसीके कभी न करे व माता पिताके पादोंकी वन्दना तो कभी न करे ५१ हे राजसत्तम ! फिर औरोंकी कौनसी बात है इतना पुन वेन बोले कि ये सब विप्रलोक व सब आचार्य्यलोक गंगादि नदियों को ५२ पुण्यतीर्थ बहुत पुण्यके देनेवाले कहते हैं सो बतावो सत्य है कि मिथ्याही कहते हैं यदि इनमें कुछ धर्म तुम जानते होवो तो हमसे कहो ५३ तब वह पातक पुरुष बोला कि हे महाराज ! आकाश से मेघ जल

बरसते हैं तब भूमि और पर्वतों में सबकोर जल गिरता है ५४ वही
 वहां स्थित रहता है और नदियों में तो सब मैला कुचैला पापयुक्त
 जल बहता है फिर उनमें तीर्थत्व कैसे होसका है ५५ व हे महाराज !
 ऐसे ही तड़ाग सागरादि सब जलाशय हैं व पर्वत सब पर्वतों के ढेर
 हैं ५६ इससे इनके ऊपर भी कोई तीर्थ नहीं न कहीं के जलही में
 कोई तीर्थ है जलसे मेघ उत्तम हैं यदि इन तीर्थों में स्नान करने से
 पुण्य है तो उनमें सदा मछलियां रहती हैं क्यों नहीं तरती ५७ जो
 स्नान करने से कुछ भी सिद्धि होती तो मछलियां जगह ही तरतीं
 कुछ भी अन्तर न पड़ता बस जहां जिन वहां सनातन धर्म व वही
 सब तीर्थ ५८ व वही तपोदानादि सब पुण्य प्रतिष्ठित रहते हैं ५९ ॥
 चौ० यासौ नृप जिन सुरभय होई । उन्हें छोड़ि नहीं धर्म्म कहोई ॥
 परम पवित्र लोक महुँ ओई । उन स्नान नहीं है सुर ओई ॥
 यासौ ताहि अराधहु भूषा । पैहु राखहु मन अनुखा ॥
 यामहुँ नहीं संशय क्यहु भांती । सदा नपहु जिन गुण गणपांती ॥
 सकल धर्म्म नख वेद सुदाना । पुण्य सत्यव्रत तीर्थ पुराना ॥
 इन सबकी कीन्हीं अतिनिन्दा । कहाहु अपूज्य सकल सुरवृन्दा ॥
 पाप भावसों अंग तनूजा । बोधित भयहु त्यागि सब पूजा ॥
 पूर्वज शाप प्रभावज पापी । समभायहु सब मृषा अलापी ६० ॥ ६१

इति श्रीपाद्ममेमहापुराणे भूमिखण्डे भाषानुवादे देवेनोपाख्याने

सप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७ ॥

अड़तीसवां अध्याय ॥

दो० अड़ती इसमें महुँ कह्यो वेन केर दुष्कर्म ॥

पुनि जिमि ऋषि समझाय त्यहि अंगमथे किय धर्म्म १

सूतजी बोले कि जब उस पापीने पापभावसे राजा वेनको इस
 प्रकार समझाया तो वेन पापभावको प्राप्त हुआ व उस पुरुष ने
 बनाय पापभावसे दृढ़ कर दिया १ तब भट उस दुष्टात्माके पैरों पर
 राजा गिरपड़ा व वेद धर्म्म पुण्य यज्ञ क्रियाओंका करना छोड़ दिया
 २ सुन्दर यज्ञोंकी व वेदोंकी निवृत्ति होगई व पुण्यदायक धर्म्मशास्त्र

व पुराणोंका धर्म सब बन्द होगया ३ व उसकी आज्ञासे सबलोग पापमय होगये न कोई यज्ञ करता न वेद पढ़ता न उत्तम धर्मशास्त्र ४ व पुराण कोई पढ़ने पाता ब्राह्मणलोग उसके राज्यमें दानदेना लेता व किसी वेद शास्त्रादिका अध्ययन नहीं करनेपाते ऐसा करने से धर्मका लोप होगया व महापाप प्रवृत्त होगया ५ अंगजी रोंकते थे पर उनके कहने के विपरीतही वह करे क्योंकि उस पापीने तो शिचाहीदीगी कि माता पिताकी आज्ञा न माननी चाहिये न उनकी पूजाही करनी चाहिये इससे वह दुरात्मा राजा न कभी पिताके चरणोंके प्रणाम करे न माताके ६ व न किसी ब्राह्मणही के प्रणाम करे ऐसा प्रतापी बन बैठा पिता व माताके विचारेहुये ७ शुभकर्म वह दुरात्मा एकभी न करनेलगा व न पुण्य तीर्थ दानादि कोई शुभ कर्मही करे ८ अब अंगमुनि बार २ विचारांश करें कि न तो हमने कोई अशुभकर्म किया न कुमुहूर्त कुसमय में रतिकी फिर यह पुत्र ऐसा दुराचारी कैसे होगया प्रजाओं के पति हम अंगके वंशमें लाञ्छन लगगया ऐसा विचारकर ९ फिर उन धर्मात्माने महात्मा मृत्युकी कन्या सुनीथासे पूँछा कि हे प्यारी ! हमसे सत्य कहो यह किसके दोषसे दुष्ट पुत्र हुआ क्या तुमने तो कोई पाप कभी नहीं किया १० सुनीथा बोली व उसने पूर्वका अपना सब वृत्तान्त पति से कहा कि यह पुत्र मेरे दोषसे दुष्ट हुआहै ११ बाल्यावस्थामें मैंने तपस्यामें स्थित सुशंख महात्माको ताड़ित कियाहै और कुछ मैंने नहीं कियाहै १२ तब कोपकर सुशंखजीने शापदिया कि तेरी सन्तान दुष्टहोवेहे महाभाग ! यह मैं जानतीहूँ तिसीसे यह दुष्ट हुआहै १३ इस बातको सुनकर महातेजस्वी अंगजी सुनीथाको संगले वनको चलेगये जब भार्यासहित वे महाभाग वनको चलेगये १४ तब सप्तऋषिलोग उस दुष्ट वेनकेपास आये व बुलाकर अंगके पुत्र वेनसे बोले कि हे वेन ! साहस न करो आप इस समय प्रजापाल हैं व तुमको चाहिये कि चराचर तीनोंलोकों को धर्म सिखाओ व तुमभी करो १५ हे महाराज ! धर्ममें सब प्रतिष्ठित रहते हैं व पाप से नष्ट होते हैं इससे पाप छोड़ धर्मकरो १७ जब ऋषियोंने ऐसा

कहा तो बहुत हँसता हुआ वेन वचन बोला कि बस यही परमधर्म है जो हम करते हैं व यही सनातनधर्म है १८ हम सबको अपने बलसे धारण करते हैं व हम सबके रक्षक हैं व हमीं वेदोंके अर्थ हैं व हमीं महापुण्यधर्म हैं व हमीं सनातन जैनधर्म हैं १९ और कोई भी धर्म ठीक नहीं है हे ब्राह्मणो ! कर्मसे धर्मरूपी हमको भजो यह सुन ऋषिलोग बोले कि ब्राह्मण क्षत्रिय व वैश्य ये तीनोंवर्ण द्विजाति कहाते हैं २० सो इन तीनोंवर्णोंके लिये यह सनातनी श्रुति है कि जो वेदके आचारपर चलते हैं वेही जन्तु जीते कहाते हैं २१ व ब्राह्मण से उत्पन्न होनेके कारण आप ब्राह्मण हैं फिर पीछे से पृथ्वी के राजा होगये हैं इससे विक्रमसे विख्यात होगये हैं २२ हे राजेन्द्र ! राजाही के पुण्यसे ब्राह्मणलोग सुखसे जीते हैं व राजाहीके पापसे सब ब्राह्मणादि नष्ट होजाते हैं इससे पुण्यकरो २३ हे नराधिप ! जो सत्ययुग का धर्म है उसको करो फिर जैसा सत्ययुगमें धर्मथा वैसा त्रेतामें नहीं रह गया था व जैसा त्रेतामें था वैसा द्वापरमें नहीं २४ व जैसा द्वापरमें होता है वैसा कलियुगके प्रवेशमें नहीं रहता इससे जिस जैन धर्मकी तुम प्रशंसा करते हो उसे कलियुगमें बहुधा लोग करेंगे व इसी जैनधर्म पापरूपके करनेसे सब मोहित होजायेंगे २५ व वेदाचारको छोड़कर सब मनुष्य पापकरने लगेंगे क्योंकि यह जैनधर्म पापकामूल है इसमें कुछभी संशय नहीं है २६ हे राजेन्द्र ! जैनधर्मसे युक्त मनुष्य महा मोहसे गिरायेजाते हैं पापी होते हैं तिनके नाशके लिये २७ सब पापके नाशकरनेवाले गोविन्दजी होंगे वे अपनी इच्छासे रूपधारणकर पापसे नाश करेंगे २८ पापयुक्त होने में म्लेच्छ नाशके लिये कलिकदेव निःसन्देह होंगे २९ इससे अब कलियुगका व्यवहार छोड़ो व पुण्यकर्म करो सत्यसे वर्त्ताव करो व प्रजापाल होओ ३० यह सुन वेनराजा बोला कि हम ज्ञानवानों में श्रेष्ठ हैं इससे इस विषय में सब हमाराजाना हुआ है जो और तरह से वर्त्तता है वह निश्चय दण्ड देनेयोग्य होता है ३१ ऐसा कह जब वह पापीराजा और भी बहुत बकने लगा तो ब्रह्माजीके सातोपुत्र वे महात्मा ऋषिलोग अत्यन्त कुपित हुये ३२ जब उन सब महात्मा-

ओंने कोपकिया तो राजावेन उन लोगों के शापके भयसे बामी
वा ठयमौर में घुसगया ३३ वे मुनिलोग सबओर वेनको कुपित
होकर देखनेलगे कि वह दुष्ट कहांगया तब उन्होंने जाना कि राजा
बामी में पैठाहुआ है ३४ बलसे ब्राह्मणोंने उसक्रूरपापी राजाको
बामीसे खींचलिया तब इधर उधर कूदने फांदनेलगा ३५ परन्तु
उन लोगोंने जबरदस्ती पकड़ अतिक्रोधकर उसकी वामजानु मथा
उससे एक नीलवर्णका बहुतछोटा भयंकर पुरुष उत्पन्नहुआ ३६
रक्तकेसमान लाल २ तो उसके नेत्रयें व धनुर्व्याण हाथों में लिये
हुये था वह सब पापोंका रूपथा ३७ व म्लेच्छोंका पालक विशेष
रीति से होनेवाला था उसपापकर्मवाले को देख ऋषियोंने जाना
कि अब इसके देहसे पाप निकलगया ३८ इससे उन्होंने फिर वेन
महात्मा का पहिनाहाथ मथा उससे फिर वे महात्मा पृथुजी उत्पन्न
हुये जिन्होंने पृथ्वीको दुहा ३९ ॥

चौ० राजराजवल्लभमहात्मा । पृथुसमानमहिमयहुनजाना ॥
जासुप्रसाद वेन सनपापी । हरिपुरगदहुअलीकचलापी ४०
अरु पृथुहरिप्रसाद सौ नीके । चक्रवर्ति पदभोगि सुठीके ॥
गयहुविष्णुपदजोअतिपावन । असुखभांति सुहावनभावन ४१

इति श्रीमद्भगवद्गीतापुराणेभूमिलच्छेदभाषानुवादे

वेनोपाख्यानेऽष्टत्रिंशोऽध्यायः ३८ ॥

उन्तालीसवां अध्याय ॥

दो० उन्तलिसे महुँ वेन तप हरिदर्शन करवान ॥

दानकाल सत्पात्रअरु लक्षण तीर्थ बखान १

इतनी कथासुन ऋषियोंने सूतजीसे पूँछा कि हे सत्यवानों में
श्रेष्ठ सूतजी ! सब पापोंको दूरसे त्यागकर वेन कैसे स्वर्गको गये
यह हमसे विस्तारसहित कहो १ सूतजी बोले कि ऋषियोंके पुण्य
संसर्गसे व उनके सम्भाषणसे व शरीरके मथनेसे वेनके शरीरसे
सबपाप जातेरहे २ पीछे पुण्यात्मा वेनने निरन्तर उत्तम ज्ञानपाया
व नर्मदाके दक्षिणतटपर उन पुण्यात्मा ने बड़ाभारी तपकिया ३

जहां कि सब पापनाशन तृणबिन्दु मुनिका आश्रम था वहीं तप किया वहां पर काम क्रोधसे रहितहो कुछ अधिक सौवर्षतक तप कियाथा ४ उनके उम उग्रतपसे शंख चक्र गदाधारी श्रीविष्णुदेव प्रसन्नहोकर उनसे बोले कि वरमांगो तब राजा वेन बोले कि हे देवदेव ! जो हमारे ऊपर प्रसन्न हो तो यह उत्तम वर हमको दो ५।६ हम इसी अपने शरीरसे व अपने पिता माता सहित तुम्हारे तेजसे युक्तहो श्रीविष्णु तुम्हारेही परमपदको जायँ पर माता पिता भी इसी देहसे चलें ७ तब श्री वासुदेवजी बोले कि हे राजन् ! महा-मोह कहांगया जिससे तुम मोहित हुए और लोभ मोह युक्तहोकर तमोमार्ग में गिरायेगये ८ तब वेन बोले कि हे विभो ! जो हमने पूर्व समय में पाप किया है तिसी से मोहित हुयेहैं इससे आप हम को इस घोर पाप से उद्धार कीजिये ९ और कृपा करके जपने और पढ़ने के योग्य भी बताइये तब भगवान् बोले कि हे महाभागरा-जन् ! तुमने अच्छा प्रश्न किया तुम्हारे पाप नाशहोगये १० तप-स्या से तुम शुद्धहो अब हम पुण्य को कहतेहैं जैसे आपने पूछा ऐसेही पूर्वसमयमें ब्रह्माजी ने पूछा था ११ तब ब्रह्माजीसे जो कहा वह सब हम तुमसे कहतेहैं एकसमय ब्रह्माजीनाभिकमलमें ध्यानमेंस्थित थे १२ तब हम ब्रह्माजीके वर देने के लिये प्रकट होगये तो उन्होंने ने बड़ा पुण्यकारी पापनाशनेवाला स्तोत्र पूछा १३ जिसका वासु-देवस्तोत्र नाम है इच्छा करनेवालों को अच्छी गति देता है स्तोत्रों में श्रेष्ठ है बड़ाभारीहै १४ पढ़ने और जपनेवाले मनुष्योंको सदैव सब सुख देनेवाला है ऐसे विष्णुजीके प्रीति करने वाले श्रेष्ठ स्तोत्र को उपदेश करते भये १५ फिर भगवान् बोले कि अव्यक्त मूर्ति मुझसे यह सब संसार व्याप्तहै इस से विष्णुमें परायणमुनि हमको विष्णु कहते हैं १६ जहां प्राणी बसतेहैं और इन में जो विभु बस-ता है वह आदरसे विद्वानों ने वासुदेव नाम जाना है १७ जिस से विभु अव्यक्त के लिये अन्त में प्रजाओं को खींचता है तिससे श-रणागतों ने संकर्षण नाम जाना है १८ इंगितमें कामरूप हम बहुत होंगे इस कामना से पुत्रकी इच्छाकरनेवाले विद्वानों ने प्रद्युम्न नाम

हमको जानाहै १६ इस लोकमें सब के स्वामी महादेव और केशव जीहैं यांगबल से हम किसी से अनिरुद्धकी नाई रोंके नहींगये २० ज्ञान विज्ञान संयुक्त संसारमें हम विश्वनाम सेहैं जाग्रत् अवस्था में चिन्तायुक्त अहमिति अभिमानी हैं २१ तैजस जगच्चेष्टामय इन्द्रियरूप युक्त ज्ञानकर्म समेत स्वप्नावस्था को प्राप्तहैं २२ बुद्धिमान् अधिदैवात्मा संसार के अधिष्ठान गोचर सुषुप्तावस्थाको प्राप्त लोक से उदासीन विकल्पयुक्त २३ तुरीय विकाररहित गुणावस्था से वर्जित साक्षी की नाई निर्लिप्त संसारमें प्रतिबिंबयुक्त शरीर २४ चिदाभास चिदानन्द चिन्मय चित्स्वरूपयुक्त नित्य अक्षर ब्रह्मरूप हे ब्रह्मन्! इसप्रकारसे हमको जानिये २५ ऐसा पूर्वसमय में ब्रह्मासे विष्णुजी कहकर अपने रूपको अन्तर्धान करतेभये और ब्रह्माजी क्षणमात्रमें संसारकी व्याप्ति जानकर कृतार्थ होगये २६ हे अच्छे व्रत करनेवाले राजन्! पृथुकेजन्म से तुमभी शुद्धात्मा होगये तिस परभी इसस्तोत्रसे भगवान् की आराधना करो २७ और प्रसन्नहुये विष्णुजी राजासे यहभी कहतेभये कि हे मानदेनेवाले राजन्! वर मांगिये तब वेन बोले कि हे विष्णुजी! अच्छी गति हमको दीजिये और पापों से तारिये २८ आपकी शरणमें हम प्राप्तहैं अब अच्छी गति का कारण कहिये तब श्रीभगवान्जी बोले कि हे महाभाग! पूर्वसमय महात्मा अङ्गजीनेभी २९ हमारी आराधना की थी तब उनकोभी हमने वर दियाथा कि हे महाभाग! तुम अपने इन शुभ कर्मोंसे उत्तम वैष्णवलोकको जाओगे ३० सोहे नृपनन्दन! हे महाभाग! वे तो अपने ही पुण्य कर्मसे वहां जायेंगे अब तुम अपने लिये कोई और वर मांगो ३१ और पहलेके वृत्तान्त को सुनो पूर्वसमयमें तुम्हारी माता सुनीथा को बाल्यावस्था में महात्मा सुशंखजीने क्रोधितहोकर शाप दियाथा तब शापजानकर तुम्हारे उद्धार करनेकी कामनासे अंगको हम नेवरदिया कि तुम्हारे अच्छा पुत्रहोगा ऐसा तुम्हारेपिता से कहा ३२ ॥ ३४ अब तुम्हारे अंगसे उत्पन्न होकर हमलोकका पालनकरेंगे और स्वर्गमें जैसे इन्द्र शोभित होतेहैं तैसे हम पृथ्वी में स्थित होंगे ३५ और पुत्रआत्माही उत्पन्न होताहै यह सत्यवती श्रुतिहै इससे हमारे

वर से तुम अच्छी गतिको प्राप्त होगे ३६ और हे राजन्! अपनी गति के लिये एक दानही दीजिये क्योंकि सुनीथाको सुशंखजी ने शाप दिया था कि तेरे दुष्ट पुत्र होगा और हमने तुम्हारे पिता अंगकोवर दिया था कि तुम्हारे उत्तम पुत्र होगा इससे विधि और निषेध में ही हूँ कर्मके अनुरूप फलदाता हूँ बुद्धिसे अतीत और गुणोंका ग्रहण करने वाला हूँ ३७। ३९ दान परमश्रेष्ठ है व दानही सब धर्मों को उत्पन्न कराता है इससे अब तप छोड़कर तुम दानदो क्योंकि दानहीसे पुण्य होता है ४० व दानसे पाप नष्ट होते इससे दान अवश्य करो व हे नृपसत्तम! अश्वमेधादि यज्ञोंमें हमारी पूजा करो ४१ व भूमिदानादिक महादान ब्राह्मणोंको दो क्योंकि सुदानही से भोग मिलते हैं व सुदानहीसे यश मिलता है ४२ सुदानहीसे कीर्ति मिलती है सुदानसे सुख मिलते हैं दानहीसे स्वर्ग मिलता है व स्वर्गका फल दानहीसे प्राणी भोगता है ४३ व दानभी जो श्रद्धापूर्वक दिया जाता है वह सफल होता है काल पाकर तीर्थको जावे पुण्यका फल यही है ४४ श्रद्धासे पवित्रचित्तसे सुपात्रब्राह्मणको जो हममें भावकरके महादान देता है ४५ वह जो रमनसे चाहता है हम सब उसे देते हैं वेन यह सुनकर बोले कि दानका काल हमसे कहो कालका लक्षण कैसा होता है ४६ व तीर्थ और पात्रका भी लक्षण हमसे कहो व हे जगन्नाथ! दानका भी सब लक्षण विस्तारसे कहो ४७ सो भी जो हमारे ऊपर दया हो तो प्रसन्नतापूर्वक सबके लक्षण कहो श्रीवासुदेवजी बोले कि हे नृप! नित्य व नैमित्तिक दोनों दानोंके कालों के लक्षण कहते हैं ४८ सूर्योदयकी बेलामें सब पाप नष्ट होते हैं व अन्धकारादिक सब घोररूप मनुष्योंके नाशक हैं इसीसे स्वर्गमें अपने अंश तेजके निधि सूर्यको हमने कल्पित किया है ४९ । ५० इससे उनके तेजसे भस्म होकर सब पाप नष्ट होते हैं उदय होते हमारे अंश सूर्यको देखकर जो जलभी देता है ५१ हे राजन्! तिसका क्या कहना है नित्यही पुण्य बढ़ती है तिस अच्छी बेलके प्राप्त होनेमें पुण्यकर्त्ता मनुष्य ५२ स्नानकर जो कोई देवनाओं व पितरोंका तर्पण करके फिर श्रद्धासे पवित्र चित्तसे दान देता है सो दान दाताकी शक्तिके अनुसार होता है ५३

व अन्न दुग्ध फल पुष्प वस्त्र ताम्बूल भूषण व सुवर्ण रत्न आदिक जोड़े तो उसका फल अनंत होवे ५४ हे राजन् ! ऐसेही मध्याह्न में व पराह्नमेंभी जो कुछदे वह हमारेही उद्देशसे तोभी उसका फल अनंतही होवे ५५ खानेपीनेके मीठे पदार्थ व कुंकुमादि लेपकरनेके ऐसेही कर्पूरदि सुगन्धित वस्तु वस्त्र तथा नानाप्रकारकेभूषण ५६ देवे तो भोग और सुखकोभी वह दानपूजा के अर्थियों का शुभ नित्यकाल मैंनेकहा ५७ अब उत्तम नैमित्तिकों कहतेहैं तीनोंकालों में निरसन्देह दानदेनाचाहिये ५८ आत्मा के हितकी इच्छा करने वालेको दानसे शून्य दिन न करना चाहिये हे राजन् ! जिस काल में कुछ दानदियाजाताहै ५९ तो दानके प्रभावसे महाबुद्धिमान् बहुत सामर्थ्यसंयुक्त धनाढ्य गुणवान् बुद्धिमान् व पण्डित निपुण होताहै ६० जो कोई पक्षभर वा मासभर लगातार दान पुष्प नहीं करता है उस उत्तमभी पुरुष को हम भोजनसे हीनकरदेते हैं ६१ व जो कोई विना उत्तमभी दानकिये कुछ पदार्थ आप अकेले भोजनकरताहै हम ऐसाराग उत्पन्नकरदेते हैं जिससे सब भोगों का निवारण होजाताहै ६२ उसके शरीर में सदा पीड़ाबनीरहती है इससे कुछ खाने पीनेकी इच्छाही नहींरहती उसे मन्दाग्निसे युक्त करदेतेहैं वा ज्वर से पीड़ित करदेतेहैं ६३ जो लोग तीनकालों में एकमें भी कुछ दान नहीं करते कि ब्राह्मणदेवताओं को खिलावें पिलावें व आप मीठे पदार्थ खाते पीते रहते हैं वे लोग महापाप करते हैं ६४ उनको चाहिये कि बड़ाउग्र प्रायश्चित्तकरें हे महाराज ! बहुत उपवासादि करनेसे उन्हें अपना शरीर दुर्बल करनाचाहिये ६५ जैसे निर्घृणहोकर चर्मकार कुण्ड के ऊपर चमड़े को खड़ाकरके उसके शुद्धहोनेकेलिये अनेक खराबवस्तु भरताहै पर उसे शुद्धकरलेताहै ६६ वैसेही हम उस पापकर्त्ता को शुद्धकरते हैं इसमें कुछभी संशय नहीं है ओषधियों के सुयोगों से व कड़ुये काथोंसे ६७ उष्णजलोंके सन्तापोसे वैद्यरूप धारणकर उसे हम शोधते हैं इसमें अन्तर नहीं पड़ने पाता और लोग उसीके आगे नानाप्रकार के उत्तम मनोवाञ्छित भोगोंको भोगतेहैं व वह बैठादेखताहै ६८ क्या करे दानदेने

में समर्थथा पर उत्तम दान तो दिया नहीं फिर भोग कैसे भोगनेपावे
 वस हम उसे किसी बड़े पापरूपसे तापयुक्त करदेते हैं ६९ हे राज-
 राजेन्द्र ! ये सब नित्यकालके दान हैं जिनने श्रद्धासे पवित्र चित्तक-
 रके अपने लिये दान न किया ७० उनको हम वैसेही दारुण उपायों
 से जलाते हैं श्रीभगवान् जीने कहा कि अब नैमित्तिक पुण्यकाल
 तुम्हारे आगे कहते हैं ७१ हे नरश्रेष्ठ ! अच्छी बुद्धिसे तत्परहोकर
 सुनो हे महाराज ! हे नरेश्वर ! जब अमावास्या पूर्णमासी संक्रान्ति
 व व्यतीपातयोग होताहै व वैधृतियोग तथा एकादशीहो ७२।७३ व
 माघकी पूर्णमासी व आषाढ़की पूर्णमासी वैशाखी पूर्णिमा तथा कार्ति-
 की व सोमवती अमावास्या मन्वादिक व युगादिक सब तिथियां ७४
 गजच्छाया मघानक्षत्र ये सब नैमित्तिक पुण्यकाल हैं जो तुम्हारे आगे
 कहेगये हैं ७५ इनमें जो दान कियाजाताहै उसका जो फलहोताहै
 वह फल कहते हैं हे नृपराज ! सुनो ७६ हमारे उद्देशसे जो पुरुष
 भक्तिसे ब्राह्मण को देताहै उसको हम निश्चय करके देते हैं इसमें
 संशयनहीं है ७७ गृह सौख्य स्वर्गवास मोक्षादिक सब कुछ देते
 हैं अब दान का फलदायक काम्यकाम तुमसे कहेंगे ७८ सब व्रतों
 के व सब देवताओं के दानका पुण्यकाल जो २ द्विजोत्तमों ने कहे
 हैं ७९ व आभ्युदयिक का काल उन सब यज्ञोंमें विवाह यज्ञ सब में
 उत्तम है ८० फिर पुत्रके जन्मका काल तथा चूड़ाकर्म का व व्रत-
 बन्ध का समय देवताओं के मन्दिरादि बनवाने व ध्वजादि चढ़ाने
 का समय व इन मन्दिरोंकी प्रतिष्ठा का काल ८१ वापी कूप तड़ा-
 गादिकों के उत्सर्ग का काल व नवीन गृह बनवाकर वास्तवर्चन
 विधान का काल व आभ्युदयिक श्राद्धका काल जहां माताओं का
 पूजन होताहै ८२ उस कालमें सब सिद्धि देनेवाला दान देवे हे
 नृपोत्तम ! यह आभ्युदयिक काल कहाता है ८३ हे नरोत्तम ! और
 पाप पीड़ा निवारण काल कहते हैं मृत्युकाल प्राप्त होनेमें नाश जा-
 नकर ८४ यममार्ग के सुख देनेवाले दान देने दोष्य हैं हे महाराज !
 नित्य नैमित्तिक काम्य आभ्युदयिक ८५ और अन्त्यकाल तुम्हारे
 आगे कहा ये कहेहुये काल अपने कर्म के फल देनेवाले हैं ८६ हे

राजन् ! अब तीर्थके लक्षण तुम्हारे आगे कहते हैं अच्छे तीर्थों में ये गंगा शोभित हैं और पुण्यकारिणी सरस्वती ८७ नर्मदा यमुना तापती चर्मण्वती सरयू घाघरा सब पाप नाश करनेवाली वेणा ८८ कावेरी कपिला विखत्तारणी विशाला और हे नरोत्तम ! गोदावरी तुंगभद्रा नदी हैं ८९ अब पापपीड़ा निवारण करने के लिये अन्य काल कहते हैं सब पारों को नित्यही भय देनेवाली भीमरथी नाम नदी है व देविका कृष्णगंगा आदि सब महानदियां उत्तम कालोंमें हैं ९० इन सबोंके पुण्यकालों में अनेक तीर्थ रहते हैं चाहे ग्राममें हों चाहे वनमें हों नदियां सर्वत्र पावन होती हैं ९१ इससे जहां कहीं नदियां वहां स्नान दानादिक क्रियायें करने के योग्य हैं जब उन नदियों के तीर्थोंका नाम न जाना हो तो हे राजसत्तम ! ९२ हे राजन् ! उस तीर्थ को हमारा तीर्थ अर्थात् विष्णुतीर्थ कहना चाहिये व उस तीर्थ के देव भी हमी हैं इसमें कुछ संशय नहीं है ९३ जो साधकलोग सब तीर्थोंमें व सब देवोंमें हमाराही उच्चारण करते हैं हे नृपनन्दन ! उनके पुण्यका फल हमारे नामसे होजाता है ९४ हे नृपश्रेष्ठ ! जितने अज्ञात तीर्थोंके व देवताओं के नाम हैं वे सब हमारे नाम से स्नान दानमें पुकारने चाहिये ९५ हे राजेन्द्र ! यह ब्रह्माजीने तीर्थों की माला करी है पृथ्वी में सब ओर स्थित समुद्र सब महापुण्यकारी हैं ९६ हे नृप ! इनमें जहां कहीं स्नान दानादिक किया जाता है वह सुन्दर तीर्थों के प्रसादसे अक्षय होजाता है ९७ व सातोसागर भी महातीर्थरूप हैं व हे राजन् ! ऐसेही मानसादि सब सर भी तीर्थरूप हैं ९८ झरने पल्लव कहते हैं ये भी निस्संदेह तीर्थ रूप हैं हे महाराज ! छोटी नदियोंमें भी तीर्थ स्थित हैं ९९ सब खातों में कुर्येंको छोड़कर ऐसेही सुमेरु आदि सब पर्वत भी तीर्थरूप ही पृथ्वीतल पर हैं १०० यज्ञभूमि व अग्निहोत्र यज्ञभूमि श्राद्ध करनेकी भूमि ये भी सब तीर्थरूप हैं व जितने देवमन्दिर हैं सब तीर्थरूप हैं १०१ ऐसेही होम करनेकी शाला व वेदाध्ययनकी शाला ये भी सब तीर्थरूप ही हैं व अपने गृहके भीतर गोशाला उत्तम तीर्थ होता है १०२ व जहां सोमयज्ञ करनेवाला यजमान बसता हो वहां भी तीर्थ

सदा प्रतिष्ठित रहताहै व जहां पुण्यरूप पुष्पवाटिका वा साधारण वाटिकाहोतीहै वहां भी तीर्थवासकरताहै ऐसे खालीभूमिकी अपेक्षा जहां कोईभी वृक्षलगाहो मुख्यकर पिप्पल वट व आम्रका वृक्ष जहां हो वह भी तीर्थही है १०३। १०४ ये सब स्थावरतीर्थ तुम से कहे व पिता माता जंगमतीर्थ महापवित्र हैं व जहां कोई पुराण एकबार भी पढ़ागया हो वा पढ़ाजाता हो व जहां अपना गुरु रहता हो १०५ व जहां पतिव्रता स्त्री रहती हो वह स्थान व अच्छा पुत्र जहां रहताहो १०६ ये भी सब उत्तमतीर्थ गिनेजाते हैं व राजाका गृह भी तीर्थही गिनाजाता है ये सब तीर्थ हमने तुम से कहे यह सुन राजावेन बोले कि हे देवोत्तम ! अब हमसे पात्रका लक्षण बताइये जिसे दान देना चाहिये १०७ हे माधव ! प्रसन्नतापूर्वक कृपा करके हमसे निरूपण करो श्रीभगवान् जी बोले कि हे महाप्राज्ञ राजन् ! पात्रका भी लक्षण सुनो १०८ जिसको पवित्र होकर श्रद्धासे महात्माओं को दानदेना चाहिये ब्राह्मण उसमें भी कुलीन फिर वेद शास्त्र पढ़ने में तत्पर १०९ शान्तचित्त इन्द्रियों को दमन कियेहुये तपस्यासे युक्त उसमें भी उज्ज्वल फिर बुद्धिमान् ज्ञानवान् देवताओं के पूजनमें तत्पर ११० सत्यवान् महापुण्य उसमें भी वैष्णव व ज्ञान से भी पण्डित व धर्मज्ञ चञ्चलतारहित पाखण्डोंसे विवर्जित १११ वम दान देनेके योग्य ऐसाही ब्राह्मण सत्पात्र समझा जाता है अब और भी सत्पात्र बतातेहैं ऐसेही इन्हीं गुणोंसेयुक्त जो कहीं भगिनी का पुत्रहो तो मनुष्योंमें उत्तमहै ११२ इसको भी सुपात्र जानिये ऐसे ही कन्याका पुत्र सत्पात्र होताहै व हे महाराज ! इन्हीं भावोंसे संयुक्त जामाता सत्पात्र होताहै ११३ व जिससे मन्त्रसुने वह गुरु व यज्ञकरानेवाला गुरु महासत्पात्र होताहै हे सत्तम ! दानके योग्य इतने सुपात्र हमने बताये ११४ वेदाचारसे युक्तहों सब सत्पात्रही हैं अब दान देनेके व यज्ञ कराने के अयोग्य विप्र बतातेहैं काने व धूर्तको त्यागना चाहिये ११५ अतिकाले ब्राह्मण को दान न देना चाहिये व कपिल रंगवालेको भी न देना चाहिये ब्राह्मणों में एक कटारे नेत्रोंके होतेहैं उन्हें भी न देना चाहिये अत्यन्त नीलवर्णवाला भी

वर्जित है जिसके कालेदन्तहों वह भी त्याज्य है ११६ व जिसके नील वा पीलेदन्त हों वह भी वर्जित है गोवध करनेवाला व अत्यन्त कालेदन्तवाला व दाढ़ी रखानेवाला भी वर्जित है ११७ जो किसी अंगसे हीनहो वा किभी अंगसे अधिकहो वा कुष्ठीहो वा जिस के नखों में अपरसआदि कोई रोगहो व जिसके मुख से बहुत लार बहा करतीहो व जिसके शिरकेबाल खोड़ाहोनेसे धिलकुल गिरगयेहों ११८ व जिस किसी विप्रकी स्त्री अन्यके संग भोग करवाती हो तिसको जो ब्रह्माके समान भीहो तोभी दान देना अनुचितहै ११९ हे महाबुद्धियुक्त राजन् ! स्त्रीजित अपनी शाखाको छोड़कर और की शाखा के कर्मकर्ता रोगी और मृतक के यहां भोजन करनेवाले को भी न देना चाहिये १२० व चोर ब्राह्मण को दान कभी न देना चाहिये चाहे वह अत्रिमुनि के समान भी तेजस्वीहो जो कभी वस्तु पाकर तृप्तही न होताहो उसे भी न देना चाहिये व जो शूद्रादिकों के मुर्देवाउनकेहाड़ ढोताहो उसे भी न देना चाहिये १२१ अत्यन्त स्तब्ध और विशेषकर मूर्खको भी दान देना योग्य नहींहै व जो वेद शास्त्रसे तो युक्तहो पर सदाचारसे हीनहो वह भी ब्राह्मण दानदेने के योग्य नहीं होता १२२ हे राजेन्द्र ! ऐसेको श्राद्धके निकट आने में व दान देनेमें सदा त्यागना चाहिये ॥

चौ० पुण्यदायिफलयुक्तमहाना । दानकहततुमसनश्रुतिमाना ॥
 कालतीर्थमहँ पायसुपात्रा । श्रद्धायुत देइय करियात्रा ॥
 श्रद्धासमनहिपुण्यअपारा । नहिं श्रद्धासम सुखसंसारा ॥
 श्रद्धासम तीरथजगनाहीं । संसारिनकहँकतहुँ लखाहीं ॥
 यासों श्रद्धा भाव समेता । सुमिरत हमें दान जो देता ॥
 पात्र हाथ महँ थोड़उ कोई । होतअनन्ततनिकनहिंगोई ॥
 यहिविधिदानकेरफलभूषा । होतअनन्त सुवेद निरूपा ॥

ममप्रसादपावतसुखदानी।बसतस्वर्गनहिंलहतगलानी१२३।१२७

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ३६ ॥

चालीसवां अध्याय ॥

दो० चालिसयें के महँकहे नैमित्तिक अरु नित्य ॥

सकलदानभूपालसों श्रीहरिबहुत विचिन्त्य १

इसप्रकार दानपात्रोंका धिवेक सुन राजा वेतने पहुँचा कि हे भग-
वन् ! हमने पहिले नित्यदानका फल तो आप से सुनाथा अब नै-
मित्तिकदान देनेका भी फल जो होताहै १ वहभी प्रसन्न होकर यत्न
पूर्वक हमसे कहिये हमको अभी तृप्तिनहींहुई बरन अभी सुननेकी
श्रद्धा बढ़ती जातीहै २ यह सुन श्रीविष्णु भगवान् बोले कि हे नृपो-
त्तम ! अब नैमित्तिकदान तुमसे कहते हैं महापर्व पड़नेपर जिसने
श्रद्धा से दान ३ सुपात्रों को दिये तिनके पुण्यफल को सुनिये हाथी
रथ और घोड़ेका देनेवाला ४ नौकरों समेत पुण्य देशमें हमारेप्रसाद
से निस्सन्देह उत्तम राजा होता है ५ जोकि धर्मात्मा ज्ञानवान् बल-
वान् बुद्धिमान् सब प्राणियों के नहीं जीतने योग्य और महातेज-
स्वी होताहै ६ महापर्वही के प्राप्त होने में जो कोई भूमिदान देताहै
अथवा हे महाराज ! गोदान देताहै वह सर्व भोगोंका पति होताहै
७ दान पुण्यात्मा ब्राह्मणको बड़े यत्नसे देनाचाहिये जोकोई पात्रका
जाननेवाला तीर्थमें पर्व में जाकर महादान देताहै ८ तिनके चिह्न
कहतेहैं वह भूमिका पति होताहै पर्व प्राप्त होनेमें तीर्थ में जो गुप्त
दान देताहै ९ उसको शीघ्र निधियों की नाशरहित प्राप्ति होती है
और महापर्व प्राप्त होने में तीर्थों में ब्राह्मण को १० सुन्दर वस्त्र सो-
नायुक्त महादान देताहै हे राजन् ! तिस दान का पुण्यफल कहतेहैं
सुगुणवान् वेदपारगामी आयुष्मान् प्रजावान् यश व पुण्यसमन्वित
बहुत पुत्रहोतेहैं ११ १२ व विपुल धनधान्य समन्वित लक्ष्मी उसके
होती है सौख्य पुण्यपाता है व धर्मवान्भी होता है १३ महापर्व
में जो कोई तीर्थ में जाकर यत्न से सुवर्ण की धेनुबनवाकर महात्मा
ब्राह्मणको देताहै १४ हे महामते ! उसके दानके पुण्यकाफल कहतेहैं
हे महाराज ! गोदान करनेसे वह प्राणी प्रथम तो यावज्जीव सब सुख
भोगताहै १५ व अन्तावस्था में मरकर ब्रह्माकी आयुर्दायिके समान

ब्रह्मलोक में निवास करता है व जो किसी महापर्वमें धेनुको वस्त्र भूषणादिकोंसे भूषित करके व कुछ सुवर्णसहित किसी सत्पात्रको देता है हे राजेन्द्र ! उसके दानका फल व भोगका फल कहते हैं १६।१७ उसके गृहमें दान व भोगयुक्त विपुल लक्ष्मी होती है व वह सब विद्याओं का पति होकर विष्णुकी भक्तिसे युक्त होता है १८ व अन्तमें वह मनुष्य तब तक जाकर विष्णुलोकमें निवास करता है कि जब तक यह पृथ्वी रहेगी व तीर्थमें जाकर जो कोई ब्राह्मणको भूषण देता है १९ वह इन्द्रलोकमें जाकर उनके संग विपुलभोग भोगता है व जो कोई श्रद्धायुक्त किसी महापर्व में सुपात्र ब्राह्मणको वस्त्र देता है व अन्नसहित भूमि देता है वह विष्णुके तुल्य पराक्रमपाकर वैकुण्ठमें जाकर प्रमोद करता है २०।२१ व वस्त्रसहित सुवर्ण ब्राह्मणको देकर सुखी हो अपनी इच्छा से अग्नि के समान वैकुण्ठमें निवास करता है २२ व जो कोई सुवर्ण के कुम्भमें घी भरकर व ऊपरसे चांदीके ढकनेसे बन्द कर ऊपरसे वस्त्र व हारसे अलंकृत करके २३ पुष्पोंकी मालापहिनाय व यज्ञोपवीतभी कुम्भके गलेमें डाल वेदमंत्रों से उसकी प्रतिष्ठा कर व पञ्चोपचारसे पूजन कर २४ अथवा पवित्र षोडशोपचारोंसे पूजन करके वस्त्र आभूषणादिसे भूषित कर महात्मा ब्राह्मण को देता है २५ व फिर उसीके सङ्ग ही कांस्यपात्रके दोहनपात्र और वस्त्रसमेत सोलह धेनु वा कांस्यके दोहनपात्र समेत चार धेनु सोनेकी दक्षिणा समेत २६ वा वस्त्रालंकार से भूषित उसी प्रकारके दोहनपात्रोंसे युक्त करके द्वादश धेनु किसी सत्पात्र ब्राह्मणको निस्सन्देह देनी चाहिये २७ हे नृपनन्दन ! इसी प्रकारके और भी बहुतसे दान हैं वे तीर्थ व कालको पाकर देने चाहिये परन्तु जो दिया जाय श्रद्धा व भावसे युक्त ही होकर दिया जाय क्योंकि श्रद्धापूर्वक देनेसे बहुत पुण्य होता है श्रीभगवान्जी बोले कि जो दान व्रतके उद्देशसे किसी कामनाके लिये किया जाता है उसे काम्यदान कहते हैं २८।२९ उस दानके भावसे भावनासे परिभावित होकर तैसेही फल को मनुष्य पाता है इसमें संशय नहीं है ३० आभ्युदयिक दान कहते हैं जो यज्ञोंमें किया जाता है हे द्विजोत्तम ! वह दान आभ्युदयिक श्रद्धाद्वारा होता है ३१ इस

दानके करनेसे बुद्धिकी वृद्धि होतीहै व करनेवालेको दुःख नहीं होता व करनेवाला धर्मात्मा जबतक जीतारहताहै नानाप्रकारके भोगभोगताहै ३२ और इन्द्र के भोग भोगताहै व दाता मरनेपर दिव्यगति भी पाताहै और अपने कुलको हजार कल्पतक स्वर्ग लेजाताहै ३३ इस प्रकार आभ्युदयिकदान तुमसे कहा अब प्राप्तदान कहतेहैं जब प्राणी जाने कि वृद्धता से युक्त हुयेहैं अब शरीर का नाशहोगा ३४ उसको तब दान अपने लिये करने चाहिये इसमें पुत्र पौत्रादिकों की आशा न करनी चाहिये कि हमारे मरजाने पर हमारे पुत्र व और स्वजन बान्धव ३५ विना धनके कैसे जीवेंगे व विना हमारे ये सब सुखदू कैसे निर्वाह करेंगे इस मोह से मूढ़होकर ऐसा न हो कि कुछ भी न दानकरे ३६ व मृतक होजाय तो दुःखसे पीड़ित सब मायामोह से पीड़ायुक्त बन्धुवर्ग बैठकर रोदन करनेलगे ३७ दानों को कोई संकल्प और मोक्षकी चिन्तना करतेहैं परन्तु तिसके मरने में माया मोहमें प्राप्त होकर ३८ लोभी मनुष्य दानोंको बिसरा डालतेहैं नहीं देतेहैं और जो मरताहै वह हे महाराज ! यमराज के मार्गमें अत्यन्त दुःखित होता है ३९ प्यास और भूख से व्याकुल बहुत दुःखों से पीड़ित होताहै तिससे निस्संदेह सब दान अपनेही हाथों से करडाले ४० हे नृपोत्तम ! किसके पुत्र किसके पौत्र किसकी भार्या संसार में कोई किसी का नहीं है इससे दान देना चाहिये ४१ जब तक अपना ज्ञान अच्छा ठीक बनारहे तभीतक अपनेही हाथों से निस्संदेह दान देना चाहिये उसमें अन्न नानाप्रकारके पान करनेके शर्व्वतादि पदार्थ ताम्बूल जल सुवर्ण ४२ दोवस्त्र छत्र भूमिकेफल अनेक जलपात्र जलसमेत ४३ विचित्र घोड़े गजआदि वाहन व पालकी नालकीआदि यान नानाप्रकारके चन्दन कर्पूरादि सुगन्धित पदार्थ व यममार्गके सुखदायक पदार्थ ४४ व जो बहुत सुखचाहे तो उपानत् अर्थात् जूता खराऊँ उस समय में दानकरे ॥

चौ० इतने दान सुनहुमहिपाला । सत्पात्रनको देयविशाला ॥

सुखसों जाय धर्मपुरप्रानी । मारगमहँनहिँहोयगलानी ॥

यमदूतन सों भूषित सोई । सकलपापयकक्षणमहँखोई ॥

सुखितलहैस्वर्गादिअनूपा॥ जवविचलैतबहोयसुभूपा४५॥४६

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

चत्वारिंशोऽध्यायः ४० ॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

दो० इकतलिसे महँ कह कृकल सुकलादम्भति गाथ ॥

जहां पतिव्रतधर्म सब सुकला वर्णि सनाथ १

इतनीबातेंसुन राजाबेन फिर बोले कि पुत्र व भार्या कैसे तीर्थ होते हैं व माता पिता और गुरु कैसे तीर्थ होते हैं यह हमसे विस्तारसे कहिये १ श्रीभगवान् बोले कि गङ्गाके तीरपर सुन्दर गङ्गा युक्त वाराणसी महापुरीहै उसमें एक कृकलनाम वैश्य बसताथा २ उसकी भार्या महासाध्वीवपतिव्रत में परायणथी धर्माचारमें नित्य पर रहती व पतिकी सेवामें परायणरहती ३ उसका सुकलानाम था सुरूप युक्त सब उसके अङ्गथे सुन्दरपुत्रभी उसकेथे व चारु मङ्गल युक्तरहती सत्यवचन सदाबोलती शुद्धचित्त रहती उसकासब आकार प्रियथा व अपने पतिको परमप्रियथी ४ ऐसे शुभगुणोंसे युक्तथी व ऐश्वर्य्यवतीथी सबकार्य्य सुन्दरही करती व वह कृकलभी सब वैश्यों में उत्तम अनेक प्रकारके धर्म जाननेवाला ज्ञानवान् व गुणीथा ५ पुराणोंके सुनने में सदैव तत्पर श्रोताथा व तीर्थयात्राके प्रसंगसे बहुतसे पुण्य कियेथे ६ व फिर भी एक समय पुण्यमङ्गलकारी तीर्थ यात्रा करनेके लिये श्रद्धासे निकला व वहां ब्राह्मणोंका संगहुआ इससे उनके साथ कुछ वार्त्तालापहुआ ७ फिर धर्ममार्गपर वह वैश्य चलनेपर हुआ उसकी पतिव्रता स्त्री उससे बोली सो पतिके स्नेहसेयुक्त उसनेकहा कि ८ हे प्रिय! मैं तुम्हारी पुण्य करनेवाली धर्मपत्नीहूँ व पतिके मार्गको देखतीहूँ व पतिही की पूजा करतीहूँ ९ व कभी आपको संग नहीं छोड़ केवल तुम्हारी छाया का आश्रयण करके उत्तम धर्म करतीहूँ १० जोकि पतिव्रत धर्म नारियोंके लिये पापनाशनेवाला व गतिदायक है व लोक में वह पुण्य स्त्री कहाती है जो पतिकी सेवा में परायण रहती है ११ पतिको छोड़

युवतियों को अलग और कोई तीर्थ नहीं शोभित होता है वस स्त्रीके लिये पतिही स्वर्ग मोक्ष देनेवाला तीर्थ है १२ पतिका वामपाद स्त्री के लिये प्रयाग तीर्थ है व दक्षिणचरण उसके लिये पुष्कर है १३ सो स्त्री अपने पतिके चरणधोकर उसी से स्नान करे क्योंकि स्त्रियोंके लिये पतिके चरणोंका जल प्रयाग व पुष्कर इन दोनों तीर्थों के समान है इसमें कुछ भी संशय नहीं है १४ सर्व तीर्थमय भर्ता होता है व सर्वपुण्यमय पतिहोता है बहुत से यज्ञोंके करनेवाले यजमानको जो पुण्य होता है १५ वह पुण्य पतिकी सेवा से स्त्री पाती है गयादिक तीर्थोंकी यात्रा करने से जो फल होता है १६ वह फल पतिकी शुश्रूषा करने से स्त्री को मिलता है अब संक्षेपरीति से कहती हैं सुनो १७ इन स्त्रियों को पतिसेवा को छोड़ और कोई धर्मही नहीं है इससे हे कान्त ! तुम्हारे सङ्गही सङ्ग सहाय करने में मैं सुखभागिनी हूँ १८ अब जहां जहां तुम तीर्थ करने जाओगे संग संग में भी चलूँगी इसमें अन्तर न पड़ेगा विष्णुजी बोले कि यह सुनकर कृकल वैश्यने सुकुमारता विचारा कि इसका रूप शील गुण भक्ति व नवीन अवस्था तो गृहसे बाहर जाने के योग्य है नहीं क्योंकि जो इसे हम बड़े दुर्गम पर्वतोंपर व वनों में तीर्थयात्रा के लिये संग लेजायेंगे तो शीत व घाम आदिक के लगने से व मार्ग के श्रम से इसके रूपका नाशहो जायगा क्योंकि इसके सब अंग कमलके गर्भ के समान चमकते हैं १९। २१ वे शीत झञ्झा पवन से काले होजायेंगे मार्ग अतिकर्कश व चरण इसके अतिकोमल २२ इससे इसको बड़ी पीड़ा होगी व मार्गपर चलने न पावेगी फिर भूख व प्यास से पीड़ित हो नहीं जानते यह कैसी होजायगी २३ यह हमारे सुखका स्थान है व नित्य हमारे प्राणके समान प्यारी व धर्मका आश्रय है २४ कदाचित् यह हमारी स्त्री नष्ट होगई तो हमारा भी नाशही होजायगा यही हमारी नित्य जीविका है व यही नित्य हमारे प्राणोंकी ईश्वरी है २५ इससे इसको तीर्थ कराने के लिये वनको न लेजायँ केवल हम अकेलेही चलेजायँ एक क्षणमात्रतक वह महात्मा इसीप्रकार चिन्ता करता

रहा २६ उसको चिन्ता करते देख उसने समझलिया कि ये हमको संग नहीं लेजाया चाहते हैं इससे चलनेपर उद्यत अपने स्वामी से वह महाभाग्यवती फिर बोली २७ कि हे महानुभाव ! पुरुषों को पापहीन स्त्री स्वतन्त्र न छोड़नी चाहिये यह पुरुष के धर्मका ऐसा मूलहै २८ यह जानकर हे महाभाग ! हमको इससमय अपने संग लैतेचलो श्रीविष्णु भगवान् राजावेनसे बोले कि अपनी प्राणप्रिया के युक्तिपूर्वक सब वचन सुन २९ हँसकर कृकलवैश्य फिर उससे बोला कि हे प्रिये ! हम तुमको कभी नहीं त्यागसके क्योंकि बड़े धर्म से हमने तुम ऐसी प्राणप्रिया भार्याको पाया है ३० जिसने धर्मचारिणी पतिव्रता स्त्रीको छोड़दिया हे श्रेष्ठमुखवाली ! उसने दशाङ्ग धर्म भी छोड़दिया ३१ हे प्रिये ! तुम्हारा कल्याण हो तिसी से हम तुमको कभी नहीं त्याग करेंगे विष्णुजी बोले कि इसप्रकार बारबार अपनी भार्या सुकला से कहकर व समझाकर ३२ उससे विनाबतायेरात्रिहीमें उठकर अकेला चलागया जब पुण्यकारी महाभागकृकल चलागया तो ३३ प्रातःकाल देवकर्मके समय जब वह शुभ मुखवाली उठी तो अपने पतिको अपने मन्दिरभरमें कहीं न देखकर व्याकुल हुई ३४ व इधर उधर देख रुदन करती हुई अतिदुःखित हुई व दुःख शोकसे पीड़ितहो पति के संगियोंसे पूँछनेलगी ३५ कि आपलोग हमारे भाई बान्धवहैं जो हमारे प्राणनाथ कृकलजी को कहीं आपलोगोंने देखाहो तो हमसे कहो क्योंकि हमारे भर्तापुण्यकर्त्ता व सत्य पण्डित व सब जाननेवाले हैं ३६ । ३७ उन महामति को जो कहीं देखाहो तो बताओ उसका ऐसा भाषित सुन वे महात्मा लोग उस महामतिवाली सुकलासे बोले ३८ कि हे शुभे ! हे सुव्रते ! धर्मयात्रा के प्रसङ्गसे तुम्हारे कृकल स्वामी तीर्थयात्रा करनेगये हैं तुम क्यों शोचकरतीहो ३९ महातीर्थको करके फिर लौट आवेंगे इस प्रकार उनहितकारी पुरुषोंने जबबहुत समझाया ४० तो मनोहर बोलनेवाली सुकला फिर अपने घरको चलीगई व घरमें जाकर करुणा पूर्वक बड़े दुःखसे रोदन करनेलगी क्योंकि वह नित्य पतिकी पूजामें परायणथी इससे उसने यह विचारांशकिया कि जबतक हमारे स्वामी न

आवेंगे तबतक हम भूमिपर ऐसेही कुछ विना बिछाये हुये सोवेंगी घृत व तैल कुछ न भोजन करेंगी व न दही दूध खायेंगी ४१।४२ व लवण ताम्बूल भी उसने छोड़ दिया व हे राजन् ! गुड़ शर्करादि मीठे पदार्थ उसने छोड़ दिये ४३ व एकवार खाकर व विना खायेही रह जाया करे वस उसने कहा कि जबतक हमारा स्वामी आवेगा तबतक निस्संदेह ऐसेही रहूँगी ४४ भोग विलासोंकी आवश्यकता नहीं इस प्रकारके दुःखसे युक्त हो शिरके केशोंमें तैल न लगानेसे एक बेणी बंध गई वही चोली जो उस दिन धारण किये थी बराबर पहिनेरही इससे अतिमैली होगई ४५ व एकही मलिनवस्त्रभी तबतक पहिने रही व दिनरात्रि मारे दुःखसे हाहाकार मचाती रही ४६ वियोग के अग्नि से जलकर काली होगई ऐसे दुःख समाचारों से युक्त होकर अतिदुर्बल व विह्वल होगई ४७ व रात्रि दिन रोतीही रहै इससे निद्रा कभी उसे आईही नहीं व हे राजन् ! क्षुधाभी उसे न लगे व दुःखसे बनाय मलिन होगई ४८ तब उसकी सखियों ने आकर सुकलासे पूछा कि हे सुकले ! सुन्दर सर्वाङ्गवाली ! तू आजकल रोती क्यों है ४९ इससे हे वरानने ! इस दुःखका कारण हम लोगों से कह सुकला बोली कि धर्ममें तत्पर हमारे भर्ता धर्म के अर्थ तीर्थयात्रा के प्रसङ्ग से कहीं घूमते हैं व हमको यहीं छोड़ गये यद्यपि हम निर्दोष पापवर्जित हैं तथापि हमारे स्वामी हमको छोड़ गये ५०।५१ हम साध्वी हैं व सदाचारयुक्त पुण्य पतिव्रता हैं परन्तु हमको त्याग हमारे भर्ता तीर्थ सेवन में तत्पर होकर चले गये ५२ हे सखियो ! इसी से हम दुःखित हैं व पति के वियोग से पीड़ित रहती हैं जीव का नाश श्रेष्ठ है व विष खाना श्रेष्ठ है ५३ अग्नि में प्रवेश करना उत्तम है व शरीर नाश होना भला है पर क्या करें कोई भर्ता ऐसा निष्ठुर होता है कि नारी को छोड़कर चला जाता है ५४ परन्तु पति के त्याग से प्राणोंका त्याग अच्छा होता है अब हम नित्यका दारुण वियोग नहीं सहसकती ५५ हे सखियो ! इस दारुण वियोगसे नित्यही दुःखित रहती हैं यह सुन सखियां बोलीं कि तीर्थयात्रा को तुम्हारे पति गये हैं फिर आवेंगे ५६ इससे तुम वृथा शरीर सुखा-

ये डलतीहो व वृथा शोक करतीहो व हे बाले ! वृथा तुम ताप करती हो व वृथा भोगों को छोड़तीहो ५७ पीनेवाली वस्तुओंको पानकरो भोजन करनेवाली भोजनकरो जो पूर्वजन्ममें तुमने दे रखेहैं वे सब पदार्थ भोग के लिये प्राप्तहैं उनको भोगो किसका भर्ता किसके पुत्र व किसके स्वजन बान्धव ५८ कोई किसी का संसार में नहीं है न किसी का किसी के साथ कोई सम्बन्ध है पूर्वजन्मका फल संसार में सब भोगताहै ५९ जब प्राणी मृतक होजाताहै तो कौन भोजन करताहै व कौन फल देखताहै बस जबतक जीता है प्राणी तभी तक सब संसारी पदार्थोंको खातापीताहै ६० सु कला बोली कि जो आप लोगों ने कहा वह वेदका सम्मत नहीं है क्योंकि जो स्त्री अपने पति से अलग सदा रहती है ६१ वह नारी पापरूप होजातीहै व सज्जनलोग उसको नहीं मानते हैं सखियो ! वेदों में यही लिखा देखाहै कि स्त्री सदा अपने पति के संगरहै ६२ पर ऐसा सम्बन्ध पुण्यके संसर्ग से होताहै इसमें सन्देह नहीं है शास्त्रों में स्त्रियों का तीर्थ पतिही पढ़ाहै ६३ इससे स्त्रीको चाहिये कि कर्म मन व वचन से उसी अपने पतिकी सेवाकरे व सत्य भावयुक्त मनसे नित्य उसकी पूजा करे ६४ पतिका दहिना अंग सदैव महातीर्थ है जो गृह की स्त्री तिसी का आश्रय करके रहती है ६५ दान पुण्यों से पूजन करती है तिस दानका जो फल होताहै कि काशी गङ्गाजी पुष्कर ६६ छारका अवन्ती केदार और शशिभूषण तीर्थ में उतना फल स्त्री सदैव नहीं पाती है ६७ हे सखि ! कभी तैसे फल को नहीं पाती अच्छे मुखवाले पुत्र सौभाग्य स्नान दान गहना ६८ वस्त्र अलंकार सौभाग्य रूप तेज यश कीर्ति और गुणको पाती है ६९ स्वामी के प्रसाद से सब पाती है इसमें कुछ संशय नहीं है व पतिकी विद्यमानतामें जो स्त्री अन्य तीर्थ व्रतादि करती है ७० उसका सब निष्फल होताहै व पुँश्चली कहाती है स्त्रियोंका रूप यौवनहै ७१ व उस यौवनके लिये स्त्री को पृथ्वीमण्डलमें अकेला अपना पतिहै जो नारी पतिकी सेवा करती है वह सुपुत्रवती होती है उसीका यश सदैव संसारमें होताहै ७२ व जिस स्त्री के ऊपर उसका पति सदा सन्तुष्ट रहताहै वह संसारमें दर्शन करने

के योग्य है इसमें कुछ भी संशय नहीं है व जो स्त्री अपने पतिसे विरुद्ध रहती है पृथ्वी पर ७३ उसको सुख, रूप व यश कहां मिलसके हैं व पुत्र कीर्ति कहां मिलसके हैं क्योंकि वह सदैव दुःखही भोगती है संसारमें कुछभी सुख उसे नहीं मिलसक्ता व सब पापोंकी भागिनी होती है व सब दुःखही दुःख भोगती है ७४ ॥

दो० जा नारीसों तासु पति तुष्ट रहत दिन रैन ।

सब सुर तापर तुष्टही रहत लहत सुखचैन ॥

ऋषि मानव सब तुष्टही पतिहि देखि सन्तुष्ट ।

होत नारिसों त्यहि बिना ऋष्यादिक सबरुष्ट ॥

भर्ता गुरुपति नाथअरु हैं सब देव महान ।

पति तीरथ युवतीन कहँ और नहीं है आन ॥

रूपवर्ण शृङ्गार अरु भूषण लेप सुगन्ध ।

पर्व छोड़िपतिहित सदा करें युवति शुभवन्ध ॥

भूषण अरुशृङ्गार बिन कबहुँ न पतिहिदिखाहिं ।

जौ नारीसुखधर्म नित चाहें निज मनमाहिं ॥

स्वामि प्रीति सुखदायिनी पापकरी अप्रीति ।

यासों शाश्वत धर्म यह करहिं नारिपति प्रीति ॥

इमिजानतहों धर्म सब किमित्यागहुँ निजस्वामि ।

सुनहु सखिहु इतिहास यहि विषयरुहत सबकामि ॥

वसुदेवाकर चरित जहँ पुण्यरु पापाहारि ।

कहतविचारिप्रचारिवहु करिताकर निरधारि ७५ । ८४

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेसुक-

लाचरितेएकचत्वारिंशोऽध्यायः ४१ ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

दो० बयालीसयें महँ कह्यो शूकर दम्पति गाथ ॥

नृपइक्ष्वाकुशिकारयुत सुकलासखियनसाथ १

यह सुन सुकलाकी सखियां उससे बोलीं कि हे महाभाग्यवाली!
तुमने जिसके वसुदेवा व सुदेवा दो नामहैं उसमें कौनसे आचारदेखे

थे हमसे सत्य कहो १ सुकला बोली कि अयोध्यापुरी में धर्म करने में बड़े पण्डित महाभाग सब धर्म अर्थ में तत्पर महाराज वैवस्वत मनु के पुत्र २ सर्वज्ञ देव ब्राह्मणों के पूजक इक्ष्वाकु नाम महाराजाधिराज हुये उनकी सदा पुण्यकर्म में परायण पातिव्रत धर्म में निरत ३ सुदेवा नाम भार्याथी उसके सङ्ग महाराज ने यज्ञ और विविध प्रकार के तीर्थ किये वह काशी के राजा महात्मा वेदराज वीरकी कन्याथी ४ सत्य आचार में परायण थी उसके संग महाराज का विवाह हुआ ५ इसके सब अंग मनोहर थे और वह सत्यव्रत में परायण थी उस प्रियाके संग मनुष्यों के पुण्यनायक राजाओं में श्रेष्ठ महाराज नित्य विहार करते थे एक समय महाराज उसके साथ वनको गये ६ । ७ व गङ्गाजी के निकट वनमें पहुँचकर सदा मृगया खेलने लगे सिंहों वराहों महिषों व गजों को मार ८ क्रीड़ा करते थे तो उनके सम्मुख अपने पुत्र पौत्रादिकों के साथ एक शूकर आया ९ व उसके पास एक उसकी प्राणप्रिया शूकरीभी थी व वह वाराह बहुतसे शूकरों से घिरा हुआ था १० व स्त्री समेत पुत्र पौत्र गुरु बालकों संयुक्त पर्वत के नीचे अपने पराक्रमसे एकही स्थितथा उस ने दुःखसे जीतनेवाले शिकार में रत राजराजेन्द्रको देखकर और तिन मृगों का नाश जानकर ११ । १२ पुत्र पुत्र और स्त्री से कहा अयोध्या के महाराज महाबली वीर मनुजी के पुत्र इक्ष्वाकुजी इस वनमें १३ शिकार खेलते हैं व देखो बहुत से मृगोंको मारचुके हैं जैसेही हमको देखेंगे महाराज अवश्य आवेंगे इसमें संशय नहीं है १४ अन्य व्याधाओं का तो हमको रंचकभी भय नहीं है परन्तु हमारारूप देखकर महाराज क्षमा न करेंगे १५ बड़े हर्ष से युक्तहो धन्वा बाण लिये हुये हैं उन के संग बहुतसे कुत्ते हैं व अन्य बहुत मृगों के मारने वाले लुब्धकहैं १६ इस से हे प्रिये ! हमारा नाश करडालेंगे इसमें संशय नहीं है १७ यह सुन उसकी पत्नी शूकरी बोली कि जब बहुत से लुब्धक व कुत्ते वनमें दिखाई देने लगे तब हे कान्त ! हमारे इन पुत्र पौत्रादिकों समेत भागकर दूर चले चलना १८ हे स्वामिन् ! अब धैर्य व बल छोड़ करके यद्यपि भय

युक्तहो तथापि भागचलो क्योंकि जब बनाय समीप राजाको आये
हुये देखोगे तब कौन पौरुष करसकोगे इसका कारण कहिये १६
उसका ऐसा वचन सुन वह शूकरो का राजा अपनी शूकरीसे बोला
कि हां भागना तो अच्छाही है क्योंकि नहीं तो इनपापी लुब्धकों
के हाथों से मरना पड़ेगा क्योंकि जो बड़े दुराचारी दुष्ट पापी
होते हैं वेही मरनेपर इन पर्वतोंपर लुब्धकों के वंशमें उत्पन्न होते
हैं २० । २१ इससे हम इन पापियों के हाथों से मरने से डरते हैं
क्योंकि जब पापियों के हाथों से मरेंगे तो फिर ऐसीही किसी पाप-
योनि में जन्म पावेंगे इसीसे हे कान्ते ! अपमृत्युसे डरकर किसी
पर्वत की कन्दरामें दूरजाकर लुकेंगे २२ जब पुण्यात्मा विश्वभरके
स्वामी विष्णु भगवान् के तेजसे उत्पन्न ये महाराज उस कन्दराके
समीप जायेंगे तो इनके संग अपने पराक्रम व बलसे हम युद्धकेंगे
२३ यदि अपने तेज से महाराज इक्ष्वाकुजीको जीतलेंगे तो पृथ्वीपर
अतुल कीर्तिको भोगेंगे कदाचित् द्वारकर संग्राममें इनपुण्यात्मा के
हाथसे मारेजायेंगे तो विष्णुलोक में जावेंगे २४ व हमारे अङ्गों से
निकलीहुई मज्जासे व मांससे पृथ्वीनाथ महाराज तृप्तहोंगे व उन
के तृप्तहोने से सबलोग व देवतालोगभी तृप्तहोंगे इससे महाराज
चलेआते हैं २५ हे सुन्दरि ! जो इन्हीं के हाथों से मरणहो तो बड़ा
लाभहो व कीर्त्तिभी उत्तमहो तीनोंलोकों में भी यशहो व मधुसूदन
भगवान् के लोकको जायें २६ हम मृत्युके भयसे पर्वतकी कन्दरा
में भागजाना नहीं चाहते थे किन्तु पापियों के हाथसे मरनेके भयसे
भागना चाहते थे पर अब पुण्यात्मा महाराजको देखकर फिर स्थिर
होगये २७ यह नहीं जानते कि पूर्व जन्ममें हमने कौनसा बड़ाभारी
पापकियाहै जिससे इसमहानिन्द्य शूकरी योनि में उत्पन्नहुये हैं २८
सो अब महाराजके घोर व तीक्ष्ण सैकड़ों बाणजलों से पूर्वसञ्चित
पापको धोडालेंगे २९ अब पुत्र पौत्र व कन्या कुटुम्बके बालकोंको लेकर
तुम पर्वतकी कन्दरा में चलीजाओ व हमारा मोह छोड़दो ३० व
हमारे ऊपर स्नेहछोड़दो राजाका रूपधारणकिये ये हरिही आगये हैं
इससे इनके हाथसे मरकर विष्णुजीके परमपदको जायेंगे ३१ दैवने

आज हमारेलिये उत्तम स्वर्ग के द्वारके किवाड़ खोल दिये हैं इस से चलेजायँगे ३२ सुकला बोली कि हेसखियो ! तिसमहात्मा शूकरके वचनसुन क्लेशयुक्त उसकी प्यारी ३३ शूकरी बोली किजिस यूथमें पुत्र पौत्र मित्र भाई व और स्वजन बांधवोंसे शोभित आप स्वामी अबतक रहे ३४ इससे आप से भूषित वह यूथ अत्यन्त शोभित होताथा सो हेमहाभाम ! विना तुम्हारे वह कैसा होजायगा ३५ हेकान्त ! तुम्हारे ही बलसे गर्जतेहुये सब शूकर व हमारे पुत्रकन्या पौत्रादि पर्वत व वनमें निःशङ्क विचरतेथे ३६ व तुम्हारेही तेजसेनिर्भयहो कन्दमूल खाते थे व दुर्गम पर्वतोंपर कुंजों में नगरों व ग्रामों में ३७ किसी मनुष्यादिकों से भय नहीं करतेथे व पर्वतपर सिंहोंसे भी नहीं डरते थे व तुम्हारे तेजसे पालित थे ३८ अब जब तुम इनको छोड़कर चलेजाओगे तब हमारे ये सब लड़के लड़कियां जोकि अभी बहुधा बालकहैं वे बेचारे दीन व्याकुल होजायँगे व विचेतन भी होजायँगे ३९ ये बालक सदा तुमको देख २ सुखही भोगते थे पर अब जैसे पतिहीन नारी नहीं शोभित होती ४० चाहे अनेक दिव्य रत्न भूषण सुवर्ण वस्त्रादिकों से भूषितहो व अन्यभी नानाप्रकारके परिच्छदोंसे तथा पिता माता भाई बन्धुओं से थी शोभितहो ४१ व सास श्वशुर के पक्षवालों से भी सबसे युक्तहो पर पतिहीनहो तो नहीं शोभित होती व जैसे विना चन्द्रमा की रात्रि नहीं शोभितहोती व विना पुत्र के कुल नहीं शोभितहोता ४२ जैसे विना दीपकके मन्दिर कभी नहीं शोभित होता वैसेही विना तुम्हारे यह शूकरोंका भुण्ड न शोभित होगा ४३ आचार के विना मनुष्यज्ञानहीन संन्यासी मंत्रहीन राजा जैसे नहीं शोभित होते तैसेही यह शूकर समूह न शोभित होगा ४४ जैसे अन्य सब जन धन धान्य से युक्तभीहो पर विना मल्लाह के समुद्र में नौका नहीं शोभितहोती ऐसेही यह भुण्ड विना तुम्हारे न शोभितहोगा ४५ जैसे विना सेनापति के सैन्य नहीं शोभितहोता वैसेही हे महामते ! तुम्हारे विना यह शूकरोंका यूथ न शोभितहोगा ४६ जैसे वेदसे हीन ब्राह्मण दुःखी होताहै ऐसेही विना तुम्हारे शूकर भुण्ड दुःखितहोगा कुटुम्बका भार हमारे ऊपर धरके जातेहो ४७

मरण को सुलभ समझा ऐसी प्रतिज्ञा कैसी होगी हे प्रियेश्वर ! विना तुम्हारे अपने हम प्राणही नहीं धारण करसक्तीं ४८ हे महामते ! तुम्हारेही सङ्ग स्वर्गभूमि व नरक सबके सुख वा दुःख भोगेंगी यह हम आपसे सत्यही कहती हैं ४९ इस से हे यूथेश ! हम दोनों इस शूकर के भुण्डको लेकर पर्वत के दुर्गम स्थान में चलेचलें ५० जीवन छोड़कर लड़नेको जातेहो मरने में तुमने कौनसा लाभ देखाहै यह हम से इस समय बताओ ५१ इतना सुन वह शूकर-राज बोला कि तुम वीरोंका सुन्दर धर्म नहीं जानती हो अब हमसे सुनो जब कोई वीर युद्ध करने के लिये किसी वीरके समीप जाकर याचना करताहै ५२ कि हमको युद्धदो क्योंकि समरमें तुम्हारेसाथ हम युद्ध करनेके अर्थ आयेहैं इस प्रकार दूसरे से याचित होनेपर जो नर युद्धदान नहीं करता ५३ सो चाहे कामसे लोभसे वा भयसे अथवा मोहसे जो युद्ध नहीं करता वह सहस्र युगतक कुम्भीपाक नरक में पड़ा रहता है ५४ क्षत्रियों को युद्धदेना परमधर्म है इसमें कुछभी सन्देह नहीं है जब किसी के मांगनेपर कोई युद्धदान करता है ५५ वह शत्रुको जीत कीर्ति व यश भोगता है व यदि युद्धकरने में मारागया पर पौरुष से निर्भय होकर लड़ा ५६ वह दिव्य वीर-लोकों को पाकर दिव्य भोग विलास करता है जबतक बीस सहस्रवर्ष नहीं बीतते तबतक दिव्यभोग भोगा करताहै ५७ व उस वीरलोक में देवताओं से पूजित होताहै सो ये वीरशिरोमणि मनुजी के पुत्र यहां हमसे युद्ध मांगनेकी इच्छामेही आयेहैं इसमें कुछ संशय नहीं है इससे निश्चय हमें इनको युद्ध देना चाहिये क्योंकि ये सनातन विष्णुरूप युद्धके अतिथि होकर आये हैं ५८ । ५९ इस से इनका सत्कार युद्धरूप से हमको करना चाहिये तब शूकरी बोली कि जो महात्मा राजाको तुम्हें युद्ध देनाहै ६० तो हे कान्त ! हमभी तुम्हारा पौरुष देखेंगी कि कैसाहै यहपनिसे कहकर शीघ्रतासे अपने पुत्रोंपौत्रों को बुलाकर ६१ बोली कि हे पुत्र पौत्रादिको ! हमारे वचन सुनो युद्धके अतिथि सनातन विष्णुरूप आयेहैं ६२ इससे जहां शूकर जावेंगे वहां पर हमकोभी जाना चाहिये अभी जबतक तुमलोगोंके स्वामी ये जीते

हैं ६३ तबतक तुम लोग पर्वत की किसी गुहामें दूर चले जाओ वहे हमारे वत्सो ! लुब्धकों से सदा बचाते हुये सुख से जीते रहो ६४ हमको वहां जाना चाहिये जहां ये जायेंगे व तुम लोगों के ये बड़े भाई सब यूथ की रक्षा करेंगे ६५ व ये आप लोगों के चचा लोग आप लोगों की रक्षा सदा करते रहेंगे इससे हे पुत्रो ! तुम सब हमको छोड़कर दूर चले जाओ ६६ वे सब यह सुनकर बोले कि इस पर्वत श्रेष्ठ पर बहुत कन्दमूल फल जल हैं व यहां किसी का भय नहीं है इससे सुख से जीवन होता है ६७ सो आप दोनों जनों ने अकस्मात् भयंकर कहा सो हे मातः ! इस का सत्य सत्य कारण हम से कहो क्या है ६८ तब शूकरी बोली कि ये महारौद्ररूप राजा कालरूप यहां आकर प्राप्त हुये हैं व शिकार के लोभ से बहुत से ऋगों को मार वन में क्रीड़ा करते हैं ६९ ये मनुके पुत्र महाबली व दुर्द्धर्ष हैं और इक्ष्वाकु इनका नाम है वस ये कालरूप ही हैं तुम सबों को मार डालेंगे इससे हे पुत्रो ! दूर भाग जाओ ७० तब वे पुत्र बोले कि माता पिता को छोड़कर जो भाग जाता है वह महापापी कहाता है व महाघोर नरक में जाता है ७१ ॥

चौ० मातुपवित्र दुग्धकरिपाना । पुष्ट होत अरु बहु बलवाना ॥
निर्दय है तजि जननी तातहि । चला जात जो लहत सुघातहि ॥
जाय नरकमहँ शोणित पूया । पीवत कृमि दुर्गन्ध ससूया ॥
यासों जननि मातु पितु त्यागी । हम न जावनहि होब अभागी ॥
धर्म अर्थ युत कहि इमिबानी । सकल भये उद्यत बड़मानी ॥
बल अरु तेज सहित करि व्यूहा । स्थिर भे सबराण की करि ऊहा ॥
साहस अरु उत्साह समेता । सब देखहि भूपहि अगलेता ॥
नाद करत क्रीड़त वनमाहीं । पौरुष युक्त तनिक भय नाहीं ७२ । ७२

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ४२ ॥

तेतालीसवां अध्याय ॥

दो० तेतालिसें महँ शूकरी शूकर लुब्धक युद्ध ॥
वीरधर्म कहि युवतिसों नृपहतिहित भो कुद्ध १

सुकला बोली कि इस प्रकार वे सब शूकर युद्ध करने के लिये उप-
स्थित हुये और लुब्धकलोग राजाके आगे खड़े हुये १ हे राजेन्द्र !
बड़ा शूकरभी पहाड़की चन्द्रामें बड़ा यूथकर व्यूहकर खड़ा हुआ २
यह शूकर कपिल रंगवाला स्थूल पीन अंगयुक्त बड़ीडाढ़ें और बड़े
मुखवाला दुःसह था और अत्यन्त भयानक गर्जता था ३ तिन
शाल व तालके वनमें खड़ेहुओं को महाराजने देखा उन शूकरोंका वचन
सुन मनुके पुत्र प्रतापी महाराजने ४ कहा कि सुनो सबलोगो बलसे
दर्पित इस शूरवाराह को पकड़ो व मारो ऐसा उन वीरों से कहकर
मनुके पुत्र महाप्रतापी राजा खड़ेहोगये ५ वसुगन्धर्वके मदसे मोहित
उनके वीर लुब्धकलोग अपने कवच बखतर आदि सुधारकर कुत्तों
समेत तैयार होगये ६ तब महाबली महाराज बड़ेहर्षसे युक्त हुये व घोड़े
पर चढ़े हुये चतुरंगिणी सेना संगलिये ७ गंगाके तीरपर गिरिवरों
में उत्तम सुमेरुनाम पर्वत के नानाप्रकार के रत्नोंसे जटित व धातु-
ओंसे मण्डित नानाप्रकारके वृक्षोंसे अलंकृत शृंगपर खड़ेहो शोभित
होनेलगे ८ सुकला अपनी सखियोंसे बोली कि वह पर्वतराज बल
का धाम किरणों के समूहयुक्त बहुत ऊंचा आकाश को प्राप्त अनेक
पर्वतोंसे शोभित प्रकाशितथा ९ और बहुत योजनोंतक निर्मल गङ्गा
जीकी धारामें लहरें सोतीके सदृश निर्मल जल के कणों समेत उठ-
तीथी सब ओर शिलातल धो जाकर स्वच्छथे ऐसा पर्वतश्रेष्ठ अच्छी
शोभासे युक्तथा १० उस समय देवता चारण किन्नर गन्धर्व विद्या-
धर सिद्ध व अप्सराओं की शोभासे शोभित होरहा था व नानाप्र-
कारके मुनिगण व हाथियों से व चन्दन के बहुत वृक्षोंसे शोभितथा
व वैसेही देवदारु शाल ताल तमाल कृतमाल के प्रवालों से शोभित
था व नानाप्रकार के अन्य वृक्षों से व कल्पद्रुमादिकों से विभूषित
था ११ नाना प्रकार की धातुओं से विचित्र था अनेक प्रकार के
रत्नोंसे विचित्रित विमान जिनमें सोनेके दण्डथे ऐसा पर्वत स्त्रियोंसे
शोभितथा १२ नारियल के सुन्दर वन व सुपारी के वृक्षोंसे शोभित था
दिव्य पुष्पाग बकुल व कदली के खण्डों से मण्डित था १३ पुष्प
सहित चम्पा पाटल व केतकी के वृक्षोंसे मण्डितथा नानाप्रकार की

वह्नियों के प्रतानों से व पद्मके वृक्षोंसे शोभित था १४ नानाप्रकार के पुष्पोंसे पुष्पित वृक्षोंसे अलंकृत था स्फटिकमणि की शिलाओं पर जमे दिव्यवृक्षों से विराजमान १५ व कन्दराओं में योगीन्द्र व योगिराजों के बसने से आनन्दयुक्त होरहाथा नानाप्रकार के भरनों के चलनेसे अतिमनोहर व नदियों के प्रवाहों से अतिरम्य १६ व नदी के प्रवाह से प्रसन्न संगमों से शोभित व निर्मल जल भरेहुये हृद कुण्ड व अल्प जलाशयों से शोभित था १७ व नानाप्रकार के ऐसे शृंगोंसे वह गिरिराज उस समय शोभित होरहा था शल्लकी शार्दूल व मृगोंके यूथोंसे अलंकृत १८ महामत्त मातङ्गोंसे महिषों व रुरुओं से उपशोभित था ऐसेही अनेक भावोंसे गिरिराज विभासितथा १९ सो मनुके पुत्र महावीर इक्ष्वाकुजी ऐसे पर्वत पर उस अपनी स्त्री व चतुरंगिणी सेनासमेत २० व आगे २ कुत्तोंको उनके पीछे लुब्धकों को कियेहुये जहां वह बली शूकर अपनी भार्यासमेत २१ व बहुत से शूकरों से रक्षित था व अपने पुत्र पौत्रोंसमेत विराजमान था उस गंगाके तीर मेरुभूमिमें पहुँचे २२ सुकला अपनी सखियों से बोली कि तब हर्षसे युक्त होकर वह शूकर अपनी प्रियासे बोला कि हे प्रिये! देख महाबली को शलाधिपति चले आते हैं २३ व महाप्राज्ञ राजा हमारे मारने के उद्देश से मृगया क्रीड़ा करते हैं इनके संग देवताओं व दैत्यों के हर्ष करानेवाला युद्ध हम करेंगे २४ यह तो ऐसा अपनी स्त्रीसे कह रहाथा व महातेजस्वी महाराज धन्वा बाण हाथोंमें लिये सत्यधर्मी-गी अपनी सुदेवानाम महारानी से हर्षित होकर बोले २५ कि हे कान्ते ! देखो यह महाबली शूकर गर्ज्जरहा है व उसके संग महाबल पराक्रमी उसके परिवारवाले भी गर्ज्जते हैं यह मृगके मारनेवालोंसे दुःसह है २६ हे प्रिये ! इसी समय तीक्ष्ण बाणोंसे मारुंगा जो यह महाशूर युद्ध करनेके लिये हमारे पास आवेगा २७ ऐसा स्त्रीसे कह लुब्धकों से बोले कि जैसे यह शूकर शूर है ऐसेही महाशूरों को इसके पास भेजो २८ तब लुब्धकोंने बल तेज पराक्रम युक्त शूरोंको भेजा तो वे गर्जतेहुये दौड़े २९ व वायुवेगसे चले व पहुँचकर तीक्ष्ण बाणोंके जालों व अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्रोंसे लगे शूकरों को व

उस वीररूप महावराह को मारने ३० । ३१ सुकला अपनी सखियों से बोली कि लुब्धकलोग बाण तोमर इस प्रकार शूकरके ऊपर छोड़ते भये जैसे मेघपर्वतमें जल छोड़ते हैं जब दृढ़ प्रहार करनेवाले सैकड़ों लुब्धकों से संग्राम में प्राप्त यूथपालक शूकर मारकर निर्जित किया गया ३२ तब अपने पुत्र पौत्र और बन्धवों समेत होकर उसने लुब्धकोंको मारा और डाढ़ोंसे लुब्धकों को काटकर गिराया पांच हाथ गिरनेलगे तब शूकरने लुब्धकोंकी आईहुई गर्जनहीं देखी ३३ अपने तेजसे नाशित और मुखके अग्र और डाढ़ों से लुब्धकों को मार कर राजाके पास गया तब राजा संग्रामकी वाञ्छा न करता भया ३४ फिर क्रोधयुक्त संग्राम में हर्ष समेत होकर शूकर राजाको बहुत भय दिखाकर जबर्दस्ती वनमें उनसे युद्धकी वाञ्छा करता भया ३५ फिर युद्धमें कुशल शूकर संग्राम की इच्छासे थूथुनके आगेसे तीक्ष्णदांत और नहोंसे क्रोधयुक्त होकर पृथ्वीको खोदने लगा हुंकार के उच्चार गर्वसे विमलराजा को प्रहार करता भया तब आनन्द की रोमाञ्च युक्त राजा विष्णुके समान पराक्रमी शूकर को जानते भये ३६ शूकर के अतुल पौरुष को देखकर इन्द्र मनसे सहसा वाराहरूप से देवताओंके वैरी शूकर को समझकर और बहुत सेना देखकर उसके नाशने के लिये हाथी भेजते भये और यह राजा से कहते भये कि हाथी को ग्रहणकरो ३७ फिर बहुत वेग युक्त रथ और हाथी भेजते भये तब लुब्धक बाण खड्ग भुशुंडी मुद्गर और फँसरी हाथमें लेकर जहां हाथी घोड़े थे वहां लड़ाई की इच्छा से शब्द करनेलगे और रोकनेसे भी न रुँकते भये ३८ तब शूकर कहीं २ न दिखाई देता भया और कहींकहीं दिखाई पड़ता भया कहीं डरवाता भया कहीं घोड़ों को मारता भया ३९ फिर रणमें दुर्जय शूकर क्रोध से लाल नेत्रकर वीर योधाओं को मर्दन कर बड़ा शब्द करता भया ४० तब कोशलापुरीके स्वामी तिसको रणमें दुःख से जीतनेवाले बड़ी देहयुक्त मेघों के समान गर्जते हुये और युद्ध करते देखकर ४१ धीरयुक्त होकर समरभूमिमें गर्जने और घूमनेलगे और अपने तेज से वीरोंको प्रकाशित करते भये मुखों में विजलीकीनाई दाढ़ें प्रका-

शितहोतीभई ४२ तब राजा शूकर को उसके बंधुओं समेत देखकर तीक्ष्ण बाणों से और शस्त्रों से एक एकको मारते भये ४३ और सेनावालों से बोले कि हे सेनावाले शूरो! इसको पराक्रम से क्यों नहीं पकड़ लेते हो फिर इससे तीक्ष्ण बाणों से युद्ध करो ४४ तब क्रोधयुक्त महात्मा राजा के वचन सुन सब सेनावाले युद्ध करनेकेलिये उपस्थित हुये ४५ सहस्रों योधा वनमें रण में स्थित शूकर को सब दिशाओं में प्रहार कर भेदन करते भये ४६ किसी विशाल योधाओं ने संग्राममें बाण समूहोंसे मारा किसी ने चक्र किसी ने वज्रसे मारा ४७ तब पौरुषों से क्रोधयुक्त रक्तकी धारा से भीगाहुआ शूकर रण में फँसरियों को काटकर बड़े शूकरों समेत पहुँचा ४८ व पहुँचकर घोड़ों हाथियों के पेट मस्तक पैर आदि फाड़चीड़डाले व तीक्ष्ण दांतों से पैदर लोगों को तो विदारणही कर डाला ४९ यहां तक कि उस बड़े शूकरराज ने तो अपने थूथुन से गजका मस्तक विदीर्ण कर डाला और पांवके नखोंसे वीरोंको नाश किया ५० तब फिर सब लुब्धक व सब शूकर क्रोधकेमारे लाल २ नेत्र कर परस्पर घम २ कर युद्ध करने लगे ५१ तब लुब्धकोंके मारे हुये शूकर व शूकरोंके मारे हुये लुब्धक रुधिरसे अरुण होकर पृथ्वीपर गिरने लगे ५२ लुब्धकोंने जीव छुड़ाकर शूकरोंको बलसे महीपर गिराया कि वे मृतकहो विना प्राणके पृथ्वीपर गिरपड़े व कुत्तेभी प्राणों को छोड़ देते भये ५३ व बहुतसे शूकर जो प्राणसहित भूमिपर गिरे थे उन्होंने अपने दांतोंसे क्षितिपर पड़े हुये घायल लुब्धकोंके अंग निकट जा जाकर चीड़फाड़ डाले ५४ व बहुतसे शूकर बाणोंके आघातोंसे पीड़ित हो पर्वतके दुर्गम स्थानों में भागकर जागिरे व बहुतसे कुञ्जोंमें बहुतसे कन्दराओंमें बहुतसे अपने २ घरोंमें जा चुके ५५ ऐसे ही कोई २ लुब्धकभी शूकरोंके दांतों से छिन्नभिन्न होकर प्राणों को छोड़ खण्ड २ होकर स्वर्गको चले गये ५६ व लुब्धक लोगों के जाल व फांसियां जो लिये थे सब जहां की तहां पड़ीरह गई व उन लोगों की नसें भी ठौर २ पड़ीरह गई ५७ केवल वह बलके अभिमानयुक्त महाबाराह अपनी स्त्री व पांचसात पुत्र पौत्रों समेत खड़ा रह गया ५८ तब वह

शूकरी अपने स्वामी शूकर से फिर बोली कि हे कान्त ! हमारे व इन बालकोंके साथ चलेचलो ५९ तब प्रीतियुक्त दुःख से पीड़ित प्राणप्रियासे वह शूकर प्रीतिसे बोला कि हम कहांको जायें टूटफा-टगये हैं हमारेलिये भूतलमें कहीं स्थान नहीं है ६० हे महाभागे हमारे नाशहोनेपर शूकरोंके भुण्ड नष्टहोजायेंगे क्योंकि आजतक दोसिंहोंके बीचमें शूकर पानी पीताथा ६१ व दो शूकरोंके मध्यमें सिंह नहीं जल पीसक्ताथा शूकरकी जानियोंमें ऐसा उत्तमबल दिखाईदेताथा ६२ सो हम समरसे भागजायें तो उस धर्म व बलको नष्टकरें हे महाभागे! बहुत कल्याणदायक धर्म हम जानते हैं ६३ जो कोई लोभ व भयसे समरसे भागता है वरणतीर्थको छोड़ता है वह पापीहोता है इसमें कुछभी संशय नहीं है ६४ व जो तीक्ष्ण शस्त्र समूहको देखकर हर्षितहोता है वह मानों समुद्र तीर्थ में स्नानकरके उसके पारको जाता है ६५ व अपने पुरुषोंसमेत वैष्णवलोकको जाता है व जो पुरुष शस्त्रस्त्रयुक्त वीरोंके आनन्द देनेवाली समरभूमिको देख हर्षितहोता है उसके पुण्यकाफल हमसे सुनो ६६ पद पद पर गङ्गाजीके स्नानका महापुण्य होता है वरणसे भागकर जो लोभसे घर को चलाजाता है उसकाफल सुनो ६७ ६८ वह जानों अपनी माता के दोषों को प्रकाशित करता है व जानों पुरुष होकर उत्पन्नही नहीं हुआ बरन स्त्रीही होकर जन्मा है हे कान्ते! इस रणभूमिमें सबयज्ञ व सबतीर्थ विद्यमानरहते हैं व महापराक्रमी देवतालोग ६९ कौतुक देखा करते हैं मुनि सिद्ध चारणलोगभी कौतुक देखते हैं जहां वीरवीरको युद्धकरनेकेलिये प्रचारता है तीनोंलोक वहां देखनेकेलिये आजाते हैं ७० व समरसे भग्नको तीनोंलोकों के निवासी देखते हैं व जो पापयुद्धकरता है उस घृणाहीन पापीको शापदेते हैं व बार२ हँसते हैं ७१ व धर्मराज उसको दुर्गति दिखाते हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं है व जो कोई सम्मुखहोकर युद्धकरके अपने शिरकारुधिर पीता है ७२ वह अश्वमेधयज्ञका फल पाता है व इन्द्रलोकमें जाकर बसता है व हे वरानने! जब शूर समरमें शत्रुओं को जीतता है ७३ तो वह नानाप्रकारकी लक्ष्मीको भोगता है इसमें संशय नहीं है व जो कोई

सम्मुखयुद्धमें निराश्रयहोकर प्राणछोड़ताहै ७४ वह परमलोक को जाकर देवकन्याओंके सङ्ग भोग करता है इसप्रकारका धर्म हम जानतेहैं फिर कैसे समरसे भागें ७५ इन राजाकेसाथ समरमें युद्ध करेंगे इसमें कुछसन्देहनहींहैये एकतो मनुकेपुत्रदूसरे धीर इक्ष्वाकु जी हैं ७६ व हे वरानने!इन पुत्र पौत्रादिकोंको लेकर तुमजाओ व सुखसेजीवो उसका ऐसा वचन सुन शूकरी बोली किहम तोतुम्हारे स्नेहके बन्धनोंसे बँधीहैं ७७ क्योंकिहे प्रिय!जबतुम्हारेस्नेहव नाना प्रकारकी रतिक्रीड़ाका स्मरणकरती हैं तो आपको छोड़कर जाया नहींजाता इससे हे मानद ! तुम्हारेआगे पुत्रोंसमेत प्राणोंको त्यागूंगी ७८ इसरीति से आपसमें वार्त्ताकर व एक दूसरेका हितचाहते हुये वे दोनों स्त्री पुरुष युद्धकरने का निश्चयकर अपने शत्रुओंकी ओरदेखनेलगे ७९ व कौशलापुरी के स्वामी महाराज इक्ष्वाकुजीकी ओर बड़ेक्रोधसे देखने लगे ८० ॥

चौपै० जिमिनभमहँगर्जतमेघा तर्जतचपलासँगअतिवेगा ।

तिमिवहवरशूकर गर्जत भूपर निजदयिताके नेगा ॥

महाराजकुमारहि अतिहि प्रचारहि समरकरनके हेता ।

पुनिपुनितेहिओरावचनकठोर बहुविधिसों कहिदेता ॥

गर्जत लखिताही मन उत्साही भूपतिमनहिं विचारें ।

यहएक वराहा रणगुणगाहा करुपुरुषार्थ प्रचारें ॥

नरवीर धुरन्धर भूमि पुरन्दर अश्वारूढ तुरन्ता ।

आयहुत्यहि आगे अतिअनुरागेचापकरतशरवन्ता ८१।८२

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रेत्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ४३ ॥

चवालीसवां अध्याय ॥

दो० चौवालिसयेंमहँ नृपति श्रीइक्ष्वाकु महान ॥

बध्योशूकरहि सोगयो सुरपुरचढ़ेविमान १

सुकला अपनीसखियोंसे बोली कि अपनी दुर्द्धरसेनाको अति दुर्द्धर शूकरसे निर्जितदेखकर महाराजने दुस्सह व क्रूरस्वभाववाले

उस शूकरके ऊपर बड़ा कोपकिया १ व वेगसे घोड़ेपर चढ़ धनुष हाथ में ले कालाग्निके समान बाण चढ़ाकर शूकरको मारा २ जब श्रेष्ठ पौरुषयुक्त शत्रुनाशक राजा को शूकरराज ने घोड़ेपर चढ़ा देखा तो रणभूमिमें राजा के सम्मुख गया ३ महाराजने दूसरा अतितीक्ष्ण बाणचलाया तब वह उसको भी उल्लंघन कर शीघ्रता से घोड़ेके पांवके पास पहुँचा ४ और घोड़ेको व्यथितकिया तो धूधुन से माराहुआ घोड़ा पृथ्वी में गिरा और शूकर अपनी जातिके शब्दों से गर्जा तब राजा भट उसपरसे उतरकर रथपरसवारहुये ५ तब भूपालमणिने एक ऐसी गदा बड़े बलसे उसकेमारी कि उसका शिर फटगया व पृथ्वीपर गिरपड़ा प्राण निकलगये व उसीसमय विमान पर विद्याधरके रूपसे चढ़कर श्रीहरिलोक को गया जब महाराज केसंग समरमें युद्धकरके शूकरराज मृतकहोकर पृथ्वीपर गिरा तब प्रसन्नहुये देवताओंने महाराजके ऊपर पुष्पोंकी वर्षाकी वे सब पुष्प कल्पवृक्षके थे जिनसे देवताओंने वर्षाकी व कुंकुम चंदनादिकों की भी वर्षा भूपाल के ऊपर की ६।९ व राजाके देखतेही देखते प्रथम विद्याधर का रूप धारणकिया था फिर चतुर्भुजी मूर्ति धारणकर दिव्यभूषण वस्त्रादि धारण किये सूर्य समान प्रकाशित होनेलगा १० व दिव्यविमानपर चढ़के देवता गन्धर्व सिद्धादिकोंसे पूजित हो फिर वह गन्धर्वराज होगया क्योंकि पूर्वजन्म का भी वह गन्धर्वही था इससे हरिपुरमें पहुँच कुछदिन वहां के सुख भोगकर फिर गन्धर्वराज हुआ ११ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रेचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ४४ ॥

पैंतालीसवां अध्याय

दो० पैंतालिस महँ शूकरी चार पुत्र लै साथ ॥

नृपसों समरभिरीतनय तासुमरो यहगाथ १

सुकला अपनी सखियोंसेबोली कि जब शूकरमारागया तब राजा की ओरके सब शूर लुब्धकलोग पाश हाथोंमेंलिये सहादारुणरूप

किये उस शूकरी के ऊपरको दौड़े १ व शूकरी अपने स्वामीको परिवारसहित मरेहुये देख केवल चारपुत्र उसके वचे थे उनको संगले वहां स्थितरही २ व यह उसने विचारा कि इसी समरमें मरकर मेरा पति ऋषि देवताओंसे पूजितहुआ व इसी वीरकर्म से वह महात्मा स्वर्गको गया ३ सो इन राजाकेसंग युद्धकर समरमें मरकर मैंभी पतिकेपास पहुँचूंगी यह चिन्तनाकर फिर उसने अपने बालकों के विषयमें सोचा कि ४ जो ये चारो मेरेबालक जीते रहेंगे तो वंशको धारणकिये रहेंगे व उस हमारे अतिवीर महात्मा पतिकाभी नाम चलाजायगा ५ सो अब मैं किसउपायसे इन पुत्रोंकी रक्षाकरूं इसचिन्ता में युक्तहो व पर्वतके दुर्गमस्थान देख ६ व वहां मार्गभी बहुत लम्बा चौड़ा भागनेकेलिये देखकर उसने निश्चयकिया कि वस पुत्रों से कहूं कि इस मार्गहोकर भागजायें ७ यह दृढ़कर पुत्रोंसे बोली कि हे पुत्रो ! जबतक मैं जीतीहूँ व यहां खड़ीहूँ तबतक तुमसब यहां से शीघ्र चलेजाओ ८ उनमें जो ज्येष्ठ उसका पुत्रथा वह माता का वचन सुनकर बोला कि माता को छोड़कर मैं कैसे जासक्ता हूँ हे मातः ! तुमको छोड़कर चलेगयेहुये सुप्तको धिक्कारहै व मेरे जीनेको अतिधिक्कार है ९ मैं रणमें शत्रुसे अपने पिता का पलटा लूंगा उसे मारडालूंगा इससे मुझसे छोटे इन तीनों मेरे भाइयोंको लेकर पर्वत की कन्दरा में तुम चली जाओ १० क्योंकि जो कोई माता पिताको ऐसे स्थानपर छोड़कर चलाजाताहै वह महापापी होताहै व करोड़ों कीड़ों से युक्त नरकको प्राप्त होताहै ११ यहसुन दुःखसे व्याकुलहो वह बोली कि हे पुत्र ! तुमको छोड़कर मैं कैसे जाऊँ क्योंकि जो कोई अपने पुत्रको छोड़कर कहीं चलाजाताहै वह महापापी होताहै तीनों मेरेपुत्रजावें १२ यह कह आपतो उनके देखतेही देखते बड़े पुत्रकेपास रणमें रहगई व उसके छोटे तीनोंलड़के बड़े दुर्गम मार्गमें चलेगये १३ व तेज बलसे अपने बड़े पुत्र समेत बारंवार गर्जतीरही इतनेमें पवनके वेग के समान शूर लुब्धकलोग आपहुँचे १४ व जिसमार्ग होकर अपने तीनों पुत्रोंको भेजाथा उस मार्गको रोककर ये दोनों माता व पूत खड़ेरहे १५ व लुब्धकलोग खड्ग बाण धन्वा धारण

कियेहुये वहां आये और तीक्ष्ण तोमर चक्र मूसर आदिसे उन दोनों को मारने लगे १६ तब माताको पीछेकर पुत्र उनके साथ लड़ने लगा किसी २ को तो दांतोंसे व किसी २ को थूथनसे विदीर्णकर दिया १७ व शूरो को नहीं से ऐसा नोचा कि सबकेसब पृथ्वीपर गिर पड़े व जब इस प्रकार युद्धकरनेलगा तो महात्मा राजाने उसेदेखा १८ व विचारा कि यह अपने पिताकी अपेक्षा अधिक शूर है इससे महातेजस्वी प्रतापी महाराज इक्ष्वाकुजी धन्याबाण लेकर उसके सम्मुख उपस्थितहुये १९ व अर्द्धचन्द्राकार अतिचोखेबाणसे उसे मारा महात्मा राजाके उस बाणके लागतेही छाती फटकर वह शूकर भूमिपर गिरपड़ा २० व गिरतेही वह वराह मृतकभी होगया व पुत्रके अतिमोहसे व्याकुल उसके पीछे उसकी माता शूकरी युद्धकरने में प्रवृत्तहुई २१ उसनेअपनेतुण्ड के घातसे शूरोको ऐसा मारा कि बहुत से लुब्धक तो मरगये २२ तब अपने दांतोंसे बड़ी भारी सेनाको विदीर्ण करती हुई वह शूकरी आगेको बड़ी जैसे कि मन्त्रसे उत्पन्न कृत्या महाभयंकरी होकर सैन्यको काटती फाड़ती चलीजाती है २३ उसको सब सैन्यको संहारकरतीहुई देख महारानी जी महाराज इक्ष्वाकुजी से बोलीं कि हे महाराज ! इस शूकरी ने तो आपकी बड़ी सेना मारी २४ आप इसके मारनेमें कैसे उपेक्षा करते हैं इसका कारण हमसे कहें तब महाराजने रानीजीसे कहा कि हम मारती हुईभी स्त्रीको कभी नहींमारते २५ क्योंकि हे प्रिये ! स्त्रीके वधमें देवताओंने महादोष दिखाये हैं इससे हम स्त्रीको अपने हाथों से कभी नहीं मारसक्ते न उसके मारनेके लिये किसी को हम भेजीसक्तेहैं २६ इससे हे सुन्दरि ! इसके वधके निमित्त पापसे हम डरते हैं ऐसा कहकर उससमय राजाविश्राम कर रहे फिर कुछ न बोले २७॥ चौ० तब लुब्धकयक झाङ्गर्भरनामा । लखीशूकरी करतसुवामा ॥ जिमिनसुभटरणकरहिंकदापी । तिभिशूकरी करतअतिपापी २८ तिन अतिवेग निशित शरलीना । हती वराही ह्वैगइ छीना ॥ बाण विदीर्ण रुधिर की धारा । बहत कोलिनी देह अपारा २९ शरशोभा शोभितसोकोली । झपटजाय भाङ्गर्भर दिगडोली ॥

हत्यो तुण्डसों ताहि करारी । घायल भो सो वीरप्रहारी ३०
 गिरतसमय तिन कीनप्रहारा । खड्ग उठाय कठोर उदारा ॥
 तासुघात व्याकुल भुविसोई । मूर्च्छित कोली सबबल खोई ३१
 श्वासलेत कहरत क्षितिमाहीं । लोटत छटपटात बल नाहीं ॥
 इमि शूकरी व्यथित भै कैसे । जलबिन मीन दीनहो जैसे ३२

इति श्रीपाद्मेमहापुराणोद्धृतिभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रेपंचचत्वारिंशोऽध्यायः ४५ ॥

छियालीसवां अध्याय ॥

दो० छियालिसयें महँ कह्यो शूकरिमुक्ति बहोरि ॥

तिननिजपतिपूरवजनम भाषेचरितनिहोरि १

सुकला सखियोंसे बोली कि राजाकी पतिव्रता महारानी पुत्रोंके ऊपर कृपाकरनेवाली उस शूकरीको पृथ्वीपर पड़ी लोटतीहुई देख बड़ी कृपासे दुःखितहो महादुःखित उस शूकरी के समीप गई १ व शीतल जलसे उसका मुखधो फिर उस रणशालिनीके सर्वांग जलसे धोये २ जब पुण्य शीतलजल से वह हनवाई गई तो महारानी से मनुष्य बोली से बोली सो भी बड़े मधुरस्वरसे बोली ३ कि हे देवि ! तुमको सुखहो क्योंकि तुमने अपने हाथोंसे मुझको हनवाया तुम्हारे दर्शन से व स्पर्शकरने से मेरेपापोंका ढेर नष्टहोगया ४ अद्भुताकारसंयुत उस शूकरीका अद्भुत संस्कृत भाषाका शब्द स्पष्टता पूर्वक सुनकर वह सुदेवा नाम महारानी अपने मनमें कहनेलगी कि ऐसा आश्चर्य हमने देखाहै जोकि स्वर व्यंजनसहित उत्तम संस्कृतवाणी यह शूकरी बोलती है ५।६ इस हर्ष व विस्मयसे उत्तम साहसकरके अपने पतिसे यह बोली कि हे पूज्यमहाराज ! यह अपूर्व संस्कृत बोलती है क्याकहूं उसके सुनने से आश्चर्यहोता है पशुयोनि में इसका जन्महै पर वाणी पढ़े लिखे विज्ञानी मनुष्यकी बोलतीहै ७।८ सब ज्ञानवानों में श्रेष्ठ राजा यह सुनकर जोकि उस ने अद्भुत व अद्भुताकार कभी न सुनाथा न देखाथा ९ तब अपनी सुदेवा प्राणप्रिया से महाराज बोले कि यदि ऐसा है तो इससे पूछो

कि यह कौन है १० राजाका वाक्य सुन महारानी सुदेवाने उस शूकरी से पूँछा कि तुम कौन हो तुम में यह बड़े आश्चर्यकी बात दिखाई देती है ११ कि पशुयोनिको पाकर भी मनुष्यकीसी बोली बोलती हो बरन बहुतसे विना पढ़ेहुये मनुष्योंसे भी ज्ञान सम्पन्न और सुन्दर बोली बोलती हो इससे तुम अपने पूर्वजन्मके सब कर्म हमसे कहो १२ व हे महाभागे ! अपने महात्मापतिके भी विचित्रचरित कहो वह पूर्वजन्मका कौन धर्मात्मा है जो अपने पराक्रमोंसे स्वर्ग को चला गया १३ अपने व अपने भर्ताके सब पूर्वजन्मके समाचार कहो ऐसा कहकर रानी तो चुप होरही १४ और शूकरी उसी मनुष्य वाणीसे बोली कि हे भद्रे ! जो तुम हमारे व महात्मा इन हमारे प्रिय पति के वृत्तान्त पूँछती हो तो हम प्रथम इन महात्मा अपने पति के चरित कहती हैं जो कि इन्होंने पूर्व जन्म में किये थे १५ ये महात्मा महाप्राज्ञ सब शास्त्रों के अर्थ जानने में बड़े पण्डित व गानविद्या में बड़े विज्ञ रंग विद्याधर नाम गन्धर्व थे १६ व पर्वतों में श्रेष्ठ मनोहर निर्जर व कन्दराओं से युक्त सुमेरुपर्वत पर महातेजस्वी मुनिश्रेष्ठ पुलस्त्यजी १७ चित्तलगाकर तपस्या करते थे वहाँ पर अपनी इच्छा से विद्याधर गया १८ और उस पर्वत में गीतविद्या में अभ्यास किया करता सो स्वर व तालसमेत अति मनोहर इनका गाना सुनकर एक मुनि ध्यानसे चलित मन होगये तब गातेहुये उन गीत विद्याधर नाम गन्धर्व से मुनिराज बोले १९।२० कि आपके इस दिव्यगीत से देव मोहित होते हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है जब तुम सातस्वर व पुण्यलयताल भाव मूर्च्छना आदि से युक्त गीत गाते हो तो देवताओं को कौन कहे हम मुनियों का ध्यान चलायमान होजाता है २१।२२ इस से तुम यह स्थान छोड़कर और किसी स्थान को चले जाओ यह सुन वे गीत विद्याधर नाम गन्धर्व बोले कि हम यहां अपने ज्ञान के समान गीत को सिद्ध करते हैं और स्थान को क्यों जावें २३ किसीको कुछ दुःख नहीं देते सदैव मनुष्योंको इस गीतसे सुखही देते हैं क्योंकि सब देवता इस दिव्यगीतको सुनकर प्रसन्न होते हैं २४ हे द्विज ! गीतकी ध्वनि में

रत महादेवजी भये हैं गीत सर्वरस कहाता है और गीतही आनन्द दाता है २५ शृंगारादिक सबरस गीत से ही प्रतिष्ठा युक्त हैं गीत से उत्तम चारोवेद शोभित होते हैं २६ व गीतही से सब देवगण सन्तुष्ट होते हैं और किसी से नहीं सो ऐसे गीत के गातेहुये हम को आप रोंकते हैं २७ हे महाभाग ! इस विषय में आपकाही यह अन्याय दिखाई देता है यह सुन पुलस्त्यमुनि बोले कि तुमने सत्यकहा गीतका अर्थ बहुत पुण्यदायक है २८ पर हे महामते ! हमारा वाक्य सुनो व मानको छोड़ो हम गीतकी निन्दा नहींकरते वन्दना करते हैं २९ सब चौदहो विद्या गीत के भाव से पढ़ने सेही आती हैं परन्तु जितनी विद्याहैं मुख्यकर ध्यान देकर एकभाव से चित्त लगाने से आती हैं ३० व ऐसेही तप मन्त्र सब एकचित्तता सेही सिद्धहोते हैं हमारे मत से इन्द्रियोंका समूह बड़ा चञ्चल है ३१ इससे वह आत्माको सब विषयों में खींचता रहता है इस से मनको ध्यान से चलादेता है इसमें कुछभी संशय नहीं है ३२ जहां शब्दरूप व युवती नहीं रहतीं मुनिलोग तप सिद्ध करनेके लिये वहां जाते हैं ३३ यह तुम्हारा गीत पुनीत व बहुतही सुखदायक है व हे धीर ! हम लोग घर द्वार छोड़कर तपस्याही करने के लिये वनमें आकर स्थितहुये हैं ३४ इससे कितो तुम्हीं अन्यस्थान को चलेजाओ वा तुम न जाओ तो हमों कहीं चलेजावें यह सुन गीत विद्यावर बोला कि जिस महात्माने इन्द्रियोंका बलवर्ध जीतलिया हो ३५ वही जयी तपस्वी योगीवीर व साधक कहाता है हे महामते ! जो शब्द सुनकर वा रूप देखकर ३६ ध्यानसे चलायमान नहीं होता वही धीर तप सिद्ध करनेवाला कहाता है हमने जानलिया कि तुम तेजसे हीनहो व काम क्रोध लोभादि छः रिपुओं को जीते नहींहो ३७ हे ब्राह्मण ! जब अपने अंग में कुछ सामर्थ्यही नहीं रखते तो हमारे गीतसे डरतेहो जो हीनवीर्य होते हैं वे सब वन छोड़तेरहते हैं इसमें कुछ संशय नहीं है ३८ हे विप्र ! यह तो साधारण वन है इसमें संदेह नहीं है सब देवताओं का सब जीवोंका है इससे जैसे यह तुम्हारा है वैसेही हमारा है ३९ ऐसा उत्तम वन छोड़कर हम क्यों चलेजायें तुमचाहे चलेजाओ अथवा ठहरो व

जो भावीहै करो ४० उन ब्राह्मणदेवसे ऐसा कहकर गीतविद्याधर चुपहोरहा उन मुनिजीने उसका ऐसा उत्तर सुनकर ४१ अपने मन में चिन्तनाकी कि क्याकरनेसे अब हमारा सुकृतहो यह विचार क्षमाकरके वे महात्मा पुलस्त्य योगी वहांसे अलग चलेगये व अपने कहीं एकान्तमें तप करनेलगे सदैवयोगके आसनमें रहें काम क्रोध मोह और लोभको त्यागदिया ४२।४३ मनके साथही सब इन्द्रियोंको अपने वशमें करलिया इसप्रकार मुनिश्रेष्ठयोगी पुलस्त्यजीस्थितरहे ४४जब मुनिश्रेष्ठपुलस्त्यजीचलेगये तो कालकी आज्ञासे प्रेरित उस गीत विद्याधरने ४५ अपने मनमें चिन्तनाकी कि हमारे भयसे देखो वह मुनि कहीं नहीं दिखाई देता अब नहीं जानते कहांगया व कहांहै व क्या करता है ४६ इसप्रकार विचारकर उसने जानलिया कि ब्रह्माके पुत्र पुलस्त्यहैं व एकान्तमें वनमें हैं इससे वह गीतविद्याधर शूकरकारूप धारण करके वहांगया जहांवहांसे जाकर पुलस्त्यजी तप करते थे ४७ वहां पहुँचकर तेजकी ज्वाला से युक्त मुनि को आसनपर बैठेहुये तपकरते देख उन महात्मा ब्राह्मणदेवकी चारों ओर घूमने लगा व जाकर ब्राह्मणोत्तम पुलस्त्यजी के अपने तुण्ड से पेटमें खोददिया पशुजानकर उन महात्मा मुनिने अपराध क्षमा किया ४८।४९ फिर मूत्र और पेशाब किया नाच और क्रीड़ा किया फिर गिरपड़े और उठकर फिर चले ५० तब मुनिने पशुजानकर छोड़ दिया जब वह उसी रूपसे फिर आया ५१ व बड़ा अट्टहास मुनि के पास इसने किया व बड़े जोरसे रोदनकिया फिर सुन्दर स्वरसे गीतगाया ५२ उससे मुनिने जाना कि बस यह वही गीतविद्याधर नाम गन्धर्वहै उसका चेष्टित देखकर जाना कि यह शूकर नहीं है ५३ उसके वृत्तांतको जानकर मुनिने कहा देखो पशु जानकर हमने इसे छोड़दिया परन्तु यह दुष्ट अपनी दुष्टताही करताजाता है ५४ यह विचार महात्मा गन्धर्वधमको महामति मुनिश्रेष्ठने क्रोधकर शापदिया ५५ कि जिससे तुमने शूकरका रूप धारणकर हमको इस रीतिसे तप से चलायमान किया इससे हे महापाप ! तू जाकर इसी शूकरी योनि में जन्मले ५६ जब उन मुनिने शापदिया तो

वह गीत विद्याधर गन्धर्व्व इन्द्रके समीप गया व हे वरानने ! कांप-
ताहुआ उनमहात्मा इन्द्रजीसेबोले कि ५७ हे सहस्राक्ष ! हमारावचन
सुनो हमने आपका कार्यकियाहै दारुण तप करतेहुये मुनियों में श्रेष्ठ
पुलस्त्यजी को उस तपसे हमने चलायमान करदिया इससे उन्होंने
शाप देकर हमारा देवरूप नष्ट करदिया ५८।५९ ऐसी दुष्ट पशुयोनि
में गयेहुये मेरी रक्षाकरो उस गीत विद्याधरका सब वृत्तांत जानकर
६० उसकेसंग इन्द्रजाकर उनमुनिपुलस्त्यजीसे बोले कि हे द्विजोत्तम !
इसके ऊपर अनुग्रह करो तुम सिद्धिके जाननेवालेहो ६१ जो इसने
आपका पाप किया है क्षमा कीजिये व शाप छुड़ाइये इसप्रकार इन्द्र
ने जब प्रार्थना किया तो प्रसन्नबुद्धि ६२ पुलस्त्यजी बोले कि हे
देवेश ! तुम्हारे कहने से हमने क्षमाकी महाबली मनुके पुत्र महाराज
अयोध्याधिपति इक्ष्वाकुजी होंगे वे बड़े धर्म्मात्मा व सब धर्म्मोंके
पालक होंगे उनके हाथ से जब इसकी मृत्यु होगी ६३।६४ तब यह
फिर अपने गन्धर्व्व शरीरको पावेगा इसमें कुछभी संशयनहीं है ॥
चौ० यह वृत्तांतसकलहमगावा । महाराज्ञि सो तुम्हेंसुनावा ॥
अब अपनी पूरवजनि केरी । कहत कथा कुछ करब न देरी ॥
सो निजपतिसँगसुनहुसुनयनी । जिमिहमपापकीनपिकवयनी ॥
पूर्वजन्ममहँ किय अतिघोरा । यासोंशूकरिभइउँकठोरा ६५।६६

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रेष्टवत्वारिंशोऽध्यायः ४६ ॥

सैतालीसवां अध्याय ॥

दो० सैतालिसयेंमहँ कह्यो कोलीराज्ञी पाहिं ॥

पूर्वजन्मकीनिजकथादुर्गुणजासमनाहिं १

सुकला अपनी सखियोंसे बोली कि सर्वांगसुन्दरी सुदेवा उस
शूकरीसेबोली कि हे शूकरि ! तुम किसपापसे पशुयोनि में उत्पन्न हुई
हो और संस्कृत कहतीहो १ इसप्रकार का ज्ञान कैसे हुआ हेशुमे !
अपना और अपने स्वामी का चरित्र कैसे जानती हो सब हमसे
कहो २ तब शूकरीबोली कि हे श्रेष्ठवर्णवाली ! पशुके भावसे मोहसे

हम चुरालीगई हैं खड्गके व बाणोंके प्रहारों से समर में हम गिरा-
ईगई ३ हे वरानने ! इससे ज्ञानहीनहोकर मूर्च्छित होगई थीं हे सु-
न्दरि ! फिर तुमने अपने पुण्यहाथ से हमारा अभिषेक अतिपुण्य
शीतलजल से किया सो तुम्हारेहाथसे स्नानहोनेपर हमारा मोहन-
ष्टहोकर हमको छोड़कर कहीं चलागया ४।५ जैसे कि सूर्य के तेज
से अन्धकार जातारहता है वैसेही तुम्हारे स्नानकरानेसे हमारे पाप
सब चलेगये हे शुभे ! ६ हे सुन्दर अङ्गोंवाली ! तुम्हारे प्रसादसे हमको
फिर पुरानाज्ञान होआया हे शुभे ! अब हमने जाना कि पुण्यगतिको
हम जायँगी ७ अब सुनो हम अपनेपूर्वजन्मका वृत्तांत कहतीहैं हे
भद्रे ! हम पापिनीने जो बहुत पाप किये हैं ८ कर्लिंग देशमें एक
श्रीपुर नाम नगर है वह सब समृद्धियोंसे समाकीर्ण व चारोंवर्णोंके
लोगों से सेवितहै ९ उसमें एक वसुदत्त नाम ब्राह्मण रहता था वह
ब्रह्मचार में नित्यपर रहता व सत्य धर्म में परायण १० वेदवेत्ता
ज्ञानवेत्ता पवित्र गुणवान् व धनी था व नानाप्रकारके धनों धान्यों
से तथा पुत्र पौत्रोंसे अलंकृत था ११ हे भद्रे ! हम उसी ब्राह्मण की
कन्यार्थी हमारे कई सहोदर भाई व अन्य बांधव बहुत थे व हे व-
रानने ! अलङ्कार व शृङ्गारोंसे भूषित रहतीथीं १२ हे महामते ! हमारे
पिता ने हमारा सुदेवानाम धराया था उन महामति अपने पिताको
हम बहुतही प्रियथीं १३ व रूपमें तो ऐसी सुन्दरी थीं कि हमारे
समान संसारमें कोई स्त्री न थी इसलिये रूप व यौवन से मतवाली
होकर हम बहुधा हँसाकरें १४ व सब उत्तम भूषण धारण किये रहें
इससे अत्यन्त शोभित रहतीं हमको देखकर सब हमारे स्वजन बा-
न्धव लोगों ने १५ हमसे प्रार्थनाकी हे वरानने ! अब तुम अपना
विवाह किसी के सङ्ग करलो इस बातको सुनकर बहुत ब्राह्मणों ने
आकर हमको मांगा परन्तु हमारे पिताने न दिया १६ हे महाभागे !
वे हमारे पिताजी मारे स्नेह के मोहित थे इसलिये महात्मा हमारे
पिताने किसी को हमको न दिया १७ हे बाले ! इतने में हमको ब-
नाय युवावस्था होआई व हमारा वैसेरूप देखकर हमारी माता
बहुत दुःखित रहा करे १८ व हमारे पितासे कहे कि कन्या क्यों

नहीं किसी को देते किसी उत्तमब्राह्मण महात्माको क्यों नहीं देदेते
 १९ हे महाभाग ! यह युवावस्था को प्राप्त है इस कन्या को किसी
 को दीजिये तब एक दिन द्विजों में उत्तम हमारे पिता वसुदत्तजी हमारी मातासे बोले कि हे महाभाग ! हमारा वचन सुनो हे श्रेष्ठरङ्ग
 वाली ! हम कन्या के महामोह से मूढ़ होगये हैं २०। २१ इस से
 हे शुभे ! जो कोई ब्राह्मण आकर हमारे ही गृहमें रहेगा उस जामाता
 को कन्या देंगे इसमें कुछ संशय नहीं है २२ यह सुदेवा हमारे प्राण
 से प्यारी है इसमें सन्देह नहीं है इस प्रकार हमारे लिये वसुदत्त
 हमारे पिता कहते भये २३ कि इतने में एक दिन कौशिक के कुल
 में उत्पन्न सब विद्याओं में विशारद ब्राह्मणों के गुणों से युक्त शील-
 वान् गुणवान् पवित्र २४ वेदपाठसे सम्पन्न इस से सुन्दर स्वरसे
 वेदको पढ़ते हुये भिक्षामांगने के लिये एक ब्राह्मणदेव आये उन के
 पिता माता कोई नहीं था २५ उन रूपवान् को देखकर महामति
 हमारे पिताने पूछा कि तुम कौन हो २६ तुम्हारा नाम क्या है व
 किस गोत्र व कुलमें उत्पन्न हो व तुम्हारा आचार कैसा है हमारे पि-
 ताका ऐसा वाक्य सुनकर वे ब्राह्मणदेव वसुदत्तजी से बोले २७ कि
 हम कौशिक के वंश में उत्पन्न हुये हैं व वेद वेदांग के पारगामी हैं
 शिवशर्मा हमारा नाम है व पिता माता से विवर्जित हैं २८ हमारे
 चार और भी भाई हैं सब वेद वेदांग के पारगन्ता हैं इस प्रकार अ-
 पने कुलका सम्भव शिवशर्मा ने हमारे पिता से कहा तब जब शुभ
 लग्न आया व उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र आया २९। ३० हमारे पिता
 ने उन ब्राह्मणको हमारा पाणिग्रहण वेद विधान से करा दिया व उन
 महात्मा अपने पति के सङ्ग हम अपने पिताही के गृहमें रहने लगीं
 ३१ परन्तु मुक्ष पापिनी ने ऐसे महात्मा अपने पतिकी सेवा कभी न
 की क्योंकि पिता माता के धन के अहङ्कार से मोहित होगई थी ३२
 उन महात्मा के अङ्ग तो कभी मैंने न मीजे व न रतिही उन के सङ्ग
 प्रेमसे करती थी और कौन कहे कभी स्नेह सहित वचनभी न उनसे
 बोली ३३ बस उनको जब मैं देखूँ तो क्रूरही बुद्धिसे देखूँ ऐसी महापा-
 पिनी थी यहां तक कि पुंश्चली स्त्रियों के सङ्ग बैठने उठने वार्त्तालाप

करनेसे मैं भी पुंश्चली होगई ३४ व माता पिता तथा स्वामी और अपने भाइयों का सिखाना कहना नहीं मानती थी जहां मेरा मनहो वहीं चली जाऊँ ३५ इसप्रकार मेरे पाप देखकर शिवशर्माजी मेरे महाबुद्धिमान् स्वामी श्वशुर वर्ग के स्नेह से कुछभी मुझको न कहें क्षमाकरते रहें पर कुटुम्ब के लोग सब मुझपापिनी को रोकें ३६।३७ व महात्मा शिवशर्माका शील स्वभाव जानकर व मेरा दुराचार जानकर पिता माता अति दुःखित रहते ३८ तब हमारे पाप देख हमारे भर्ता एक दिन गृहसे कहीं चलेगये/वह ग्राम देश सब उन्होंने छोड़दिया ३९ जब मेरे भर्ता चले गये तो मेरे पिताने बड़ीचिन्ताकी मेरे दुःखों से ऐसे दुःखित हुये जैसे कोई रोगसे पीड़ितहोताहै ४० तब ऐसे दुःखित अपने पतिसे मेरी माता बोली कि हे कान्त!तुम क्यों बहुत चिन्ता करतेहो हमारे आगे अपना दुःखरहो ४१ तब वसुदत्त मेरे पिता मेरी मातासेबोले कि हे प्रिये! सुनो वह ब्राह्मण हमारा जामाता कन्या को छोड़कर कहीं चलागया ४२ व यह पापसमाचारों से युक्त होगई व महापापचारिणी व निर्दय होगई महामति शिवशर्मा पतिको इसदुष्टाने छोड़दिया ४३ जोकि सब कुटुम्ब भरमें परम चतुर विज्ञानी ब्राह्मणथा वह ब्राह्मण अपनी सुशीलतासे व हमारे स्नेहसे भी इस दुष्ट सुदेवाको कभी कुछ नहीं कहता था ४४ अपने सौम्य भावसे रहता न कभी इसकी निन्दा करता न कठोर वचनही कहता सुदेवा तो महापापिनी दुराचारिणी व वह ब्राह्मण बुद्धिमान् पण्डित ४५ अब कुलनाशनी यह दुष्टा सुदेवा कौन कर्म करेगी अब हम भी इसको छोड़कर कहीं चलेजायेंगे ४६ तब मेरी माता ब्राह्मणी बोली कि हे कान्त! तुमने आज कन्याके दूषण गुणजाने यह तुम्हारेही स्नेह व मोहसे नष्ट हुईहै ४७ क्योंकि चाहे कन्याहो वा पुत्रहो तबतक उसका लाड़ प्यार करना चाहिये जबतक पांच वर्ष का न हो फिर उसे शिक्षाकी बुद्धिसे सदैव फिर मोहसे पालन करे ४८ हां स्नान भोजन वस्त्रादि कराने देनेमें पाप न करना चाहिये जो हो प्रीतिपूर्वक देना चाहिये और सुन्दर गुण सुन्दर विद्या सीखने के लिये उसे आज्ञादेकर युक्त करना चाहिये ४९ पिताको

चाहिये कि गुण सिखाने के लिये सदा पुत्र वा कन्या के ऊपर निर्मोह रहे हे कान्त ! पालन पोषण करने में प्रेम जान पड़ता है ५० व गुण के विषय में कभी पुत्रकी न प्रशंसा करनी चाहिये वरन प्रति दिन ताड़ना करनी चाहिये व सदा कठिनता कह २ कर उसे घुड़कना धमकना चाहिये ५१ कि विद्या बड़े परिश्रम से आती है इस से रात्रिदिन श्रमकर ऐसे वचन स्नेहहीन होकर कहने चाहिये व यह कहना चाहिये कि अभिमान पाप दुराचारको दूरसे छोड़ जब इनको छोड़ेगा ५२ तब तू विद्या में और गुणोंमें निपुण होगा नहीं तो नहीं पिताको तो पुत्रको ऐसी ताड़ना के साथ सिखाना चाहिये व माताको चाहिये कि ऐसेही पांचवर्ष के ऊपर कन्याको ताड़ना देकर स्त्रियों के धर्म सिखावे व सासु अपनी बहूको सिखाती रहै व ताड़ना करती रहै ५३ व गुरु शिष्यको ऐसेही ताड़नाकरे तो कार्य सिद्ध हो अन्यथा नहीं व पतिको चाहिये कि अपनी भार्याको ताड़ित कियाकरे व राजाको चाहिये कि अपने मन्त्रीको ताड़ित किया करे ५४ व वीरको चाहिये कि घोड़े को प्रतिदिन चलाया करे ऐसे ही हाथी को हथिवाल घुड़कता धमकता रहे बस इस रीति से शिक्षा करने ताड़नकरने व पालन करने से बुद्धि बढ़ती है ५५ हे नाथ ! इसको तुम्हीं ने सदैव नष्ट किया इसमें कुछ भी संशय नहीं है व तुम्हारेही संग उस शिवशर्मा ब्राह्मण ने भी इसे नष्ट किया ५६ क्योंकि उसने भी इसे निरंकुश करदिया बस इसी कारण से यह नष्ट भ्रष्ट होगई हे कान्त ! हमारा वचन सुनो कन्या को तबतक अपने गृहमें रखना चाहिये ५७ कि जबतक आठवर्ष की न हो बस इसके ऊपर पिताके घरमें रहने से कन्या प्रबल होजाती है इससे फिर उसे न रहने देना चाहिये क्योंकि पिताके गृह में रहकर पुत्री जो पाप करती है ५८ वह पाप माता पिता को होता है इससे समर्थ पुत्रीको अपने घरमें न रहने देना चाहिये ५९ बस जिसको देनाहो उसे देकर उसके घरको भेजदेना चाहिये जिस से कि वह वहां रहकर अपने गुणों से अपने पतिको भक्तिपूर्वक प्रसन्न करे ६० ऐसा होने से कुलकी कीर्ति होती है व पिता सुखसे जीता है

यदि वहां रहकर कुछ पाप करती है तो वह उसका पति भोगता है ६१ व वहां रहने से सदा पुत्रों पौत्रों से बढ़ती रहती है जब पिता कन्याके सुगुण सुनता है तो उसकी कीर्ति होती है ६२ हे कान्त ! पति सहित कन्या को तो कभी न अपने गृहमें रखना चाहिये हे कान्त ! इस अर्थ में एक पुराना इतिहास सुनाई देता है ६३ अष्टाईसई चौयुगी के द्वापरयुग में एक उग्रसेन नाम वीर यदुवंशि-यों में श्रेष्ठ हुये ६४ उनका चरित तुमसे कहती हैं हे द्विज ! एकाग्र मन करके सुनो ६५ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानं
सुकलाचरित्रेसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ४७ ॥

अड़तालीसवा अध्याय ॥

दो० अड़तालिसें महुँ है कही पद्मावती सुगाथ ॥

सत्यकेतुकी जो सुता उग्रसेन ज्यहि नाथ १

वह ब्राह्मणी सुदेवा की माता अपने पति वसुदत्तजी से बोली कि माथुर देश में जो मथुरा नाम नगरी है उसमें उग्रसेन नाम एक यदुवंशी शत्रुओंके नाशकर्त्ता हुये १ वे सर्व धर्म व अर्थ के तत्त्व को जानते व वेदज्ञ बहुश्रुत व बली दाता भोक्ता गुणग्राही व सद्-गुणों से युक्त राजा हुये २ वे मेधावी राज्यकरते व प्रजाओं को ध-र्म से पालते इसप्रकारके महाप्रतापी महातेजस्वी उग्रसेनजी ने ३ विदर्भदेश के राजा बड़े पुण्यात्मा सत्यकेतु नाम बड़े प्रतापीकी क-न्या महाभाग्यवती कमलमुखी व पद्मनयनी ४ पद्मावती नाम जो कि सत्यधर्म में परायण थी उसके स्त्रियोंके सब उत्तमगुण थे जिस के समान उन दिनों में दूसरी कोई स्त्री न थी लक्ष्मी के समान थी ५ यह वैदर्भी सत्य कारण अपने गुणों से शोभित भई सो माथुरदेश के निवासी राजा उग्रसेन ने उस सुलोचना के सङ्ग अपना विवाह कि-या ६ व उसके सङ्ग सुखसे वे प्रतापी भोग विलास करने लगे उस के शुभगुणों से राजा बहुत प्रसन्न हुये व सदा सुखी होनेलगे ७ उसके स्नेह व प्रीतिसे वे मथुरा के अधिप उग्रसेनजी बड़े आनन्दि-

त होकर रहने लगे वह महाभाग्यवती पद्मावती उनके प्राण के समान प्रिय हुई ८ राजा उसके बिना न तो भोजन करें न कुछ क्रीड़ा करें व बिना उसके उनको सुख क्षणमात्र भी न मिले ९ इस प्रकार उन दोनों की परस्पर प्रीतिथी व दोनों आपसमें अतिस्नेह करते थे १० महाभाग राजा सत्यकेतु ने अपनी कन्या पद्मावती का स्मरण किया व उसकी माताने भी बहुत दुःखित हो अपनी कन्या का स्मरण किया ११ तब विदर्भ देश के राजा सत्यकेतु ने मथुरापुरी को दूत भेजे वे मनुष्यों में वीर उग्रसेनजी से आदर समेत जाकर बोले कि हे महाराज उग्रसेनजी ! हम लोग विदर्भ देश से आये हैं विदर्भ देश के राजाने बड़ी भक्ति व स्नेह से आपको बहुत २ पूँछा है १२। १३ व अपना कुशल कहा है व आपका पूँछा है हे महाराज ! राजा सत्यकेतु ने बड़े स्नेह से यह कहा है कि यदि आपकी कुछ अप्रसन्नता न हो तो पद्मावती को देखने के लिये भेज दो सो हे नाथ ! जो तुम प्रीति स्नेह व हित मानते हो १४ । १५ तो हे महाराज ! इस अपनी महाभाग्यवती प्रीतिरूपिणी को थोड़े दिनों के लिये भेज दो क्योंकि महाराज सत्यकेतु व उनकी रानी कन्या के देखने को बहुत चाहती हैं १६ यह वाक्य सुन राजाओं में उत्तम उग्रसेनजी ने महात्मा सत्यकेतु राजा की प्रीति स्नेह के कारण अपनी स्त्री को उन दूतों के सङ्ग बिदा कर दिया यद्यपि प्रतापी उग्रसेनजी को अपनी भार्या पद्मावती प्रिय थी १७ । १८ पर क्या करें श्वशुर व श्वश्रू के स्नेह से बिदाही करते बना व महाराज के भेजने से पद्मावती अपने पूर्वके घर को बड़े हर्ष से गई १९ जाते २ प्रथम तो अपने पिता माता को फिर सब कुटुम्ब के लोगों को देखा व शिर झुकाकर उस सत्यवती ने पिता के चरणों के नमस्कार किया २० व उस महाभाग्यवती पद्मावती के आने पर विदर्भ देश के राजा बड़े हर्षित हुये २१ व बहुत भूषण व उत्तम वस्त्रों के देने से अपनी कन्या को बहुत बढ़ाया व लालन पालन किया व पद्मावती सुख से अपने पिता के घर में रहने लगी २२ व अपनी सखियों के साथ निश्शङ्क रहने लगी व उनके सङ्ग जहां चाहे मनमानी घूमाकरे २३ जहां चाहे गृह में वन में

व तड़ागों के किनारे महलों में अपनी सखियों के सङ्ग घुमाकरे यहां तक कि मानों फिर पांचवर्ष की बालिका होगई निल्लज्ज वैसेही घूमने लगी २४ हे विप्र ! सदा निश्शङ्क अपनी सखियों के सङ्ग हँसती खेलती रहै यद्यपि वह पतिव्रता व महाभाग्यवती थी पर मारे हर्ष के जहां चाहे चलीजाय २५ पिता के घरके सुख श्वशुरके घरमें तो दुर्लभ होतेही हैं इस विचारसे खुले बन्धन यथेष्ट सर्वत्र आया जाया करे २६ इस मोहभाव से क्रीड़ा में इतनी लोभिनी हुई कि सखियों के सङ्ग सदा वनों में व वाटिकाओं में ही बहुधा विहार कियाकरे २७ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानं

सुकलाचरित्रेऽष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ४८ ॥

उनचासवा अध्याय ॥

दो० उग्रसेन दयिता तथा सत्यकेतु दुहिताउ ॥

गोभिलसँग भोगी उनचसयेंमहँ यह गाउ १

ब्राह्मणी बोली कि हे महाभाग ! एक समय वह एक पर्वत के ऊपर गई देखा तो कदली के खण्डों से मण्डित वहां का वन अति रमणीयथा १ जोकि शाल ताल तमाल के वृक्षोंसे व नालिकेरों से शोभित था पूगीफल मातुलिंग व सुन्दर जँभीरी निम्बूके तरुओं से विराजमानथा २ चम्पा कठचम्पा पाड़र डांड अर्क मन्दार कँदेल अशोक मौनश्रीआदि नानाप्रकार के वृक्षों से अलंकृत था ३ वह पुण्यवान् पर्वत सब ओरसे पुष्पित वृक्षोंसे शोभित था व सब कहीं नानाप्रकारके धातुओं से समाकुल था ४ वहांपर गोल एक बड़ा सुन्दर तड़ाग पुण्य निर्मल जलसे परिपूर्ण पुष्पित नानाप्रकारके कमलोंसे व सुवर्णके रंगके कमलों से शोभितथा ५ व श्वेतनीरज रक्त कमल नीलपंकज कुमुदआदि पुष्पोंसे मनोहरथा हंस जलकुक्कुट ६ कारण्डवआदि पक्षियों के शब्दों से कूजित था नानाप्रकार के अन्य जलजन्तुओं से समाकुल था व अनेक प्रकार की धातुओं से युक्त भी था ऐसा सब ओरसे सुन्दर तड़ाग था तीरपर पुष्पित नानाप्र-

कारके वृक्षोंपर नानाजाति के पक्षी बोलते थे ७ कोकिलों के सुन्दर स्वरसे उपशोभित व मोरोंके शब्दों से मधुर होरहाथा ८ भ्रमरों के नादसे सब ओरसे शोभित था इस प्रकारका रम्य पर्वत व उत्तम वन ९ तड़ाग उसने देखा व सखियों के संग क्रीड़ा करती हुई वैदर्भी पद्मावती १० सब ओर फूलोंसे युक्त पुण्यकारी वनको देखकर चपलता के प्रभाव से स्त्रीभावसे लीलापूर्वक ११ व तड़ाग में सखियोंके संग जलक्रीड़ा करती हुई बारबार हँसने व गानेलगी १२ सुखसे उस सरमें वह भामिनी क्रीड़ा करतीरही हे विप्र ! वह बड़े सुखसे वहां स्थितरही १३ विष्णुभगवान् राजा वेनसे बोले कि उसी ब्रीचमें गोभिलनाम दैत्य जोकि कुबेरजीका सेवक था दिव्य विमान पर चढ़ा व सब भोगविलास की वस्तु उसपर धरे १४ आकाशमार्ग होकर जाताथा उसने ऊपरही से निर्भय जलक्रीड़ा करती हुई विदर्भराजकी कन्या पद्मावती को देखा १५ जोकि सब स्त्रियों में श्रेष्ठ व उग्रसेन की प्राणप्रिया भार्या थी व रूपमें उसके समान लोकोंमें दूसरी योषित् न थी व सर्वांग सुन्दरी थी १६ यही जान पड़तीथी कि कितो कामकी स्त्री रतिहै वा श्रीहरिकी स्त्री लक्ष्मी हैं अथवा पार्वती देवीहों वा इन्द्राणीहो १७ जैसी स्त्रियों में उत्तम व वर यह दिखाई देतीहै अन्य ऐसी भूमण्डल में नहीं दिखाईदेती १८ नक्षत्रों के मध्य में जैसे पूर्णमासी का चन्द्रमा शोभित होताहै वैसेही यह वरानना गुणरूप व कलाओं से शोभित होतीहै १९ जैसे पुष्करों में राजहंस शोभित होताहै वैसेही यह चारुहासिनी शोभित होतीहै अहोरूप अहोभाव इसका दिखाई देताहै २० किसकी यह शोभनवाला है जिसके सुन्दर व गोल मोटे कुचहैं ऐसा अपने मन से कहता हुआ श्रेष्ठ मुखवाली पद्मावती को अच्छी तरह देखकर वह गोभिलदैत्य २१ क्षणमात्र चिन्तना करके कहनेलगा कि भाई यह किसकी है फिर बड़े ज्ञानसे उसने जाना कि यह विदर्भदेशके राजाकी कन्या है इसमें कुछ सन्देह नहींहै २२ व उग्रसेनकी प्राणप्रियाहै और पातिव्रत धर्म में परायणहै अपने बलसे यहां स्थितहै व पुरुषों को बड़े दुःखसे मिलने के योग्यहै २३ उग्रसेन महामूर्खहै

जिसने ऐसी श्रेष्ठ स्त्रीको पिताके गृहमें भेजाहै वह उग्रसेन अब भा-
ग्यरहित होगया है २४ इसके बिना कैसे जीसक्ताहै क्या सदैव कूट
बुद्धि राजा नपुंसक तो नहींहै जो ऐसी स्त्रीको छोड़दिया है २५ तिस
को देखकर गोभिलदैत्य तिसी क्षणसे कायरत्न होगया यह पति-
व्रता स्त्री पुरुषों को दुःखसे प्राप्त होने योग्यहै २६ कैसे हम जाकर
इसको भोग करेंगे क्योंकि काम तो अतीव हमको पीड़ित करता है
जो अब बिना इसके संग भोग कियेहुये हम जायेंगे तो हमारा म-
रणही होजायगा २७ इसमें कुछ भी तय्येह नहींहै क्योंकि काम स-
हायनी है इस प्रकार चिन्तासे युक्तहो यह मनसे सोचकर २८ उस
दुष्टने मायासे राजा उग्रसेनजीका रूपधारण करलिया जैसे सांगोपांग
उग्रसेन थे वैसाही तद्रूप बनगया २९ व उसीप्रकार की चालवैसाही
बोल बनाकर गोभिल वहां गया जैसे उग्रसेनके वस्त्र व जैसा वैष व
अवस्था थी वैसाही बनालिया ३० दिव्यमाला वस्त्र धारण किये
दिव्यमाल्य व अनुलेपन लगाये सब आभरणों की शोभासेयुक्त
जैसे मथुराके राजा उग्रसेन थे ३१ वैसाही होगया व उग्रसेनमय
होके उससमय वह दैत्य परममायासे युक्तहो रूप व तरुणताकी
सम्पदासे बनाय वैसाही हो ३२ पर्वत के ऊपर अशोक वृक्षकी
छायामें बैठा शिलातलपर बैठकर उस दुष्टात्माने वीणा का दण्ड
अपने हाथमें लिया ३३ व विश्वमोहन गीत सुन्दर स्वरसे गाने
लगा वह गीत तालमान व लययुक्त था व निषादादि सातो स्वरोंसे
युक्तथा ३४ सो वह दुष्टात्मा पद्मावती के रूपसे मोहित होकर गीत
गाने लगा पर्वत के आगे स्थित हो व महाप्रहर्षसे युक्तहुआ ३५
उसका गाना सुन सखियों के मध्यमें प्राप्त श्रेष्ठमुखवाली पद्मावती
सखियों से बोली कि यह कौन है जो ताल लयसहित गीत गारहा
है यह तो जानो बड़ा धर्मात्मा है जो ऐसे स्वर तालमानसे गाताहै
यह गीत तो सत्कार करने के योग्य है क्योंकि सब भावसे युक्त है
३६।३७ इतना कह वह राजकुमारी उत्सुकहोकर अपनी सखियों के
साथ वहांगई व देखा तो अशोकवृक्षकी छाया में गिरिह शिलाके
ऊपर बैठाहुआ वह दानवों में अधम मुकुट धारण किये पुष्प माला

सुन्दर वस्त्र धारण किये व दिव्य गन्ध अनुलेपन किये ३८।३६ सब आभरणों की शोभासे युक्त उसे पतिव्रता पद्मावती ने बनाय समीप जाकर देखा तो अपने मनमें कहने लगी कि धर्मपरायण मथुरा-नाथ हमारेपति कब यहां आये हमारे महात्मानाथ राज्य छोड़कर इतनी दूर कैसे आये जबतक वह पतिव्रता विचारना चाहे तबतक उस पापी दुरात्माने ४० । ४१ आतुर होकर उसको बुलाया कि हे प्रिये ! यहां आओ तब वह बहुत चकड़ाई व शङ्कितहुई कि हमारा भर्ता यहां कैसे आया ४२ व लज्जित दुःखितहोकर उसने नीचे को मुख करलिया व मनमें कहनेलगी कि मैं पापिनी दुराचारिणी बड़ी निश्शंक ठहरी ४३ मुझको ऐसी धृष्ट देखकर ये महाभाग कोप करेंगे इसमें संदेह नहीं है जबतक वह ऐसा विचारने लगी तबतक उस पापीने ४४ आतुर होकर फिर बुलाया कि हे हमारी प्यारी ! यहां आओ हे देवि ! हे श्रेष्ठ मुखवाली ! हम विना तुम्हारे अपने प्राण नहीं धारण करसके इससे यहां चले आये ४५ क्योंकि वहां तो जीही नहीं सके थे फिर राज्य कौनकरे तुम्हारे स्नेह के हम लुब्ध हैं तुमको छोड़कर हम कहीं नहीं ठहरसके इसीसे यहां आये हैं ४६ ब्राह्मणी अपनेपति वसुदत्तसे बोली कि जब उसदुष्टने ऐसा कहा तो लज्जायुक्तहो अपना पतिजान उसके पास वह पतिव्रता गई व उस का मुख देख दुष्ट दैत्यको वह सती छपटी व अच्छी प्रकार आलिङ्गनकिया ४७ तब वह दैत्य उसे एकान्त में लेजाकर अच्छे प्रकार उसके संग इच्छापूर्वक भोगकिया इस प्रकार गोभिलदैत्य व राजा सत्यकेतुकी कन्या बड़े आनन्दसे रमे ४८ सुकला अपनी सखियों से बोली कि राजा उग्रसेन के कोई अण्डके स्थान में चिह्न था जब उसे उसने न देखा तो भट उसने अपना वस्त्र धारण करलिया व शंकित तथा अतिदुःखितहुई ४९ व क्रोधयुक्त होकर दानवाधम गोभिलसे बोली कि हे पाप समाचार अधम ! तू कौनहै क्या कोई दानवहै ५० ॥ चौ० यह कहि शापदेन परबाला । उद्यतभे करिकोप कराला ॥

वेपमान पीडित दुखभारा । दुष्ट दैत्यसों वचन उचारा ५१

दुष्टकीन मम प्रतिकर रूपा । ब्रह्मसों आयहुबनिममभूपा ॥

पातिव्रत ममधर्म विनाशा । जो उत्तम सबलोक प्रकाशा ५२
 वृथाकीन तुम जन्म हमारा । इमिकहे पुनि २ रुदनप्रचारा ॥
 शापदानमहँपुनिमनकीना गोभिलदुखितरुभयहुमलीना ५३।५४
 इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषातुवादेवेनोपाख्याने सुकला
 चरित्रे एकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ४६ ॥

पचासवां अध्याय ॥

दो० पचासवेंमहँ तो बहुत गोभिल भाष्यो धर्म ॥

पुंश्चलि भावारोपकिय कहि पद्मावति कर्म १

सुकला सखियों से बोली कि पद्मावतीका ऐसा वचन सुनकर गोभिल दैत्य उससे बोला कि आप मुझको क्यों शाप देना चाहती हैं इसका मुझसे कारण बतावें १ मैं किसदोषसे लित हूँ जिसपर तुम शाप देनेपर उद्यत हुई हो हे शुभे ! मैं कुबेरका भट गोभिल नाम दैत्य हूँ २ अपने दैत्यके आचारसे बर्ताव करता हूँ उत्तम विद्याजानता हूँ वेदशास्त्रका अर्थ व कलाशास्त्रका अर्थ अच्छीतरह जानता हूँ अब दैत्याचार मेरा सुनो पराया धन व पराई स्त्री बलसे सदा भोगता हूँ निर्वलता के साथ कभी नहीं भोगता ३ । ४ हम दैत्य हैं इसलिये हमको सदा दैत्योंकाही कार्य करना चाहिये सो अपनी जातिके भावसे वर्तते हैं यह सत्यही तुमसे कहते हैं ५ हमलोग प्रतिदिन ब्राह्मणों के छिद्र देखा करते हैं व उनलोगों के तपकानाश विघ्नों से किया करते हैं इसमें कुछभी संशय नहीं है ६ व फिर छिद्रही पाकर ब्राह्मणों का नाशभी कर डालते हैं इसमें भी सन्देह नहीं है हे भद्रे ! हे श्रेष्ठमुखवाली ! ब्राह्मणलोग सदा देवयज्ञ किया करते हैं ७ व इससे हम यज्ञों व धर्मयज्ञका नाश करते हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है परन्तु सुब्राह्मणों को व प्रभु नारायणदेवको छोड़कर अन्य ब्राह्मण व अन्यदेवों का नाश करते हैं ८ व जो स्त्री पतिव्रता होती अपने पतिकी सेवामें सदा तत्पर रहती है इन सबोंको तो हमलोग दूर से बरादेते हैं इसमें भी संशय नहीं है ९ क्योंकि ब्राह्मण व महात्मा हरिका तथा पतिव्रता स्त्रीका तेज दैत्य कभी नहीं सहसके १० पति-

व्रता के व विष्णु के व सुन्दर ब्राह्मण के भयसे सब दानव व राक्षस
 श्रेष्ठ दूरही से नष्टहोजाते हैं ११ सो हम दानवधर्म से महीतलमें
 विचरते हैं फिर क्यों तुम हमको शत्रुदेना चाहती हो हमारा दोष
 तो विचारो १२ यह सुन पद्मावती बोली कि हमारा धर्म व सुन्दर
 शरीर तुम्हींने नष्ट किया व हम पतिव्रता व साधुहैं और पति के
 लिये सदा तप करती हैं १३ हे पाप ! अपने मार्ग पर स्थितथीं
 परन्तु तुमने वाचासे हमको अष्ट करदिया इससे हे दुष्ट ! तुमको
 हम भस्म करवालेगी इसमें कुछ भी संशय नहीं है १४ यह सुन
 गोभिल दैत्य बोला कि हे राजपुत्रि ! जो आप मानें तो हम धर्मकी
 बात कहें वह धर्म अग्निमें नित्य हवन करनेवाले ब्राह्मण का है १५
 जो दोनों कालों में अग्नि में आहुति देत है उससमय चाहे कोईभी
 कार्यलगे पर देवमंदिर को नहीं छोड़ता वह अग्निहोत्री होता है
 जो प्रतिदिन इसप्रकार से हवन करता रहता है १६ हे वरानने !
 अब और भृत्योंका धर्म कहते हैं मन कर्म व वचन से भृत्यको सदा
 शुद्ध रहना चाहिये १७ व नित्य अपने स्वामीकी आज्ञाकरे पीछे व
 आगे बैठे वही भृत्य कहाता है हे देवि ! जो ऐसा करता है वही भृत्य
 पुण्य भोगता है इसमें संशय नहीं है यह भृत्यका लक्षण तुमसे कहा
 अब पुत्रका लक्षण कहते हैं १८ जो पुत्र शुभज्ञाता गुणवान् होकर
 अपने पिता का पालन करता है व माताका पालन पितासेभी विशेष
 करता है सो भी मनसा वाचा कर्मणा १९ उसको दिन २ गंगास्नान
 का पुण्य मिलता है व जो इसके विपरीत करता है माता पिताका
 पालन नहीं करता वह महापापी होता है इसमें कुछभी सन्देह नहीं
 है २० अब उत्तम पातिव्रत धर्मका लक्षण कहते हैं हे सुन्दरि !
 सुनो वचन से मनसे व कर्म से २१ प्रतिदिन पतिकी सेवा करे व
 भर्त्ता के प्रसन्न होने में आप प्रसन्न रहे कोप न करे २२ उसके दोष
 न ग्रहणकरे ताड़ित होनेपर भी सन्तुष्टही बनी रहै व पतिके सब
 कामों के करनेमें सदैव आगे स्थित रहै २३ उसी स्त्रीको पातिव्रत
 में परायण कहते हैं ऐसेही पुत्रों को चाहिये कि चाहे पिता पतितभी
 होगया हो व बहुतसे दोषों से युक्तभी हो २४ कोढ़ी वा क्रोधीहोपर

उसको कभी न त्यागे इसप्रकार जो पुत्र पिता माता की सेवा करते हैं २५ वे सर्वोपरि श्रीविष्णु भगवान् के परमपदको जाते हैं व इसीप्रकार भृत्यलोग जो अपने स्वामी की सेवा करते हैं २६ वे भी स्वामी के प्रसाद से पतिके लोकको जाते हैं व जो ब्राह्मण कभी अग्निहोत्र करना नहीं छोड़ता वह ब्रह्मलोकको जाता है २७ व जो अग्नित्यागी विप्र है वह शूद्रीका पति कहाता है व स्वामी को जो भृत्य त्यागता है वह स्वामिद्रोही होता है इसमें कुछ संशय नहीं है २८ इससे अग्नि पिता व स्वामी इनको कभी न छोड़े हे शुभे ! ब्राह्मण अग्नि को पुत्र पिता को भृत्य स्वामी को न छोड़े यह हम सत्य २ कहते हैं २९ व जो कोई इनको छोड़ते हैं वे नरकको जाते हैं ऐसे ही जातिभ्रष्ट रोगी विकल कुष्ठ रोगयुक्त ३० सब कर्मों से हीन व द्रव्यहीन व पतिकात्याग स्त्री कभी न करे जो अपना कल्याण चाहती हो ३१ व जो स्त्री अपने पति के विपरीत कार्य करने की इच्छा करती है वह पुंश्चली नारी के समान होती व सब धर्म कर्मों में बाहर समझी जाती है ३२ व जो स्त्री पति के विदेशादि जाने पर भोग व शृङ्गार करती है व बहुत चन्दनादि सुगन्धित वस्तु धारण करती है वह भी पुंश्चली कहाती है ३३ ऐसे वेदशास्त्रों से संस्कार किये हुये धर्म हम जानते हैं अब जिस हेतु से दानव राक्षस व प्रेतोंको जो आदिसे ब्रह्माने बनाया है ३४ तुमसे कहते हैं इसमें संदेह नहीं है जितने ब्राह्मण दानव पिशाच राक्षस हैं वे सब धर्म के अर्थ कहे गये हैं और उन्होंने पढ़ा भी है सब सबके धर्म जानते हैं परन्तु दानव धर्म नहीं करते ३५।३६ इससे ज्ञान वर्जित जो मनुष्य विधिहीन कुछ करते हैं वा अन्यायसे कोई कर्म करते वेदविधिसे नहीं करते ३७ उन दुष्ट अज्ञानियों को दण्ड देने के लिये हम लोगों को ब्रह्माजी ने बनाया है इसीसे जो अधम नर विधिहीन धर्म करते हैं ३८ उनको हम लोग बड़े दण्डसे सिखाते हैं सो तुमने बड़ा दारुण व निर्घृण कर्म किया है ३९ गृहस्थाश्रमके कर्मको छोड़ यहां क्यों आई हो व अपने मुखसे कहती हो कि हम पतिव्रता हैं ४० परन्तु तुम्हारा कोई कर्म हम पतिव्रता स्त्रीका नहीं देखते यदि पतिव्रता थी तो पतिको छोड़ यहां क्यों आई ४१ फिर

पति तो उतनी दूरपर बैठा है तुम शृङ्गार भूषण व वेष किसके लिये बनाये हो हे पापे! यह शृङ्गार किस लिये व किसके देखने के लिये किया है हम से कहो तो ४२ भला पतिव्रता स्त्री निश्शङ्क होकर कौन पर्वत व वनमें घूमेगी बस हमने तुम पापिनीको बड़े दण्ड देकर सिद्ध किया ४३ क्योंकि तू बड़ी अधर्मचारिणी दुष्टा है जो अपने पति को छोड़ यहां आई है वह पातिव्रत धर्म तेरा कहां है हमारे आगे दिखावे तो ४४ तेरा तो पुंश्चली नाम ठीक है क्योंकि तूने अपने पतिको छोड़ दिया क्योंकि जब स्त्री अपने पतिकी शय्या पर से अलग रही वही पुंश्चली कहाती है ४५ सो अलग शय्या को कौन कहे तू अपने पति से सौयोजन अलग चली आई है अब तेरा पातिव्रत धर्म कहां रहा हां पुंश्चलीका धर्म तो ठीक २ तुझ में दिखाई देता है ४६ हे निल्लज्जे! हे निर्धृणे दुष्टे! क्या हमारे सम्मुख अपनेको पतिव्रता बताती है तपका भाव तेरे कहां है व तेज बल कहां है ४७ जो कुछ बल वीर्य पराक्रम हो हमको अभी दिखाव देखें तो कैसा है यह सुन पद्मावती बोली कि हे असुराधम! सुन हमारा पिता स्नेहसे पति गृहसे अपने यहां लाया है इसमें कौन पाप हुआ न लोभ से न काम से न मोहसे न मत्सरसे ४८ ४९ हम पतिको छोड़ कर यहां आई हैं हां अब हमारे पतिके रूपके बलसे तुम्हें दुराचारी ने छला ५० तुमको पति जान तुम्हारे सम्मुख हम गई पर हे दान-बाधम जैसेही तुझको हमने मायावी जाना ५१ अब एकही हुङ्कार से तुम्हें भस्म करती हैं तब गोभिल दैत्य बोला कि सुनो नेत्रहीन मनुष्य नहीं देखते ५२ फिर धर्म नेत्रों से रहित तुम हमको कैसे जानती हो सुनो जब तुम्हारा भाव पिताके गृहमें रहनेको हुआ ५३ तब तुमने पतिका भाव त्याग दिया इससे तुम्हारा ध्यान पातिव्रत धर्मसे अलग होगया व ज्ञानसे तुम तभी नष्ट होगई व तुम्हारा हृदय फूटगया ५४ तुम फिर ज्ञान नेत्रोंसे रहित होकर कैसे हमको जानती हो किसकी माता किसका पिता किसके स्वजन बांधव ५५ सब स्थानों में स्त्रीके लिये एक पतिही श्रेष्ठतर है इसमें संशय नहीं है ऐसा कह दानवोंमें अधम गोभिल हँसकर बोला ५६ कि हे पुंश्चलि!

तुम्हारा हमको कुछ भी भय नहीं है तुम्हारे शापसे हमारा क्या होगा जो तुम हमको देखहीकर कांपती हो ५७ हमारे घरमें चलकर मनो-वाञ्छित भोगोंको भोगिये यह सुनकर पद्मावती बोली कि हे पापस-माचर निघूर्ण ! क्या बकता है ५८ हम अब भी पातिव्रत में परायण सती के भावसेही स्थित हैं जो ऐसा कहेगा तो हे महापाप ! अभी तेरा वध करूंगी ५९ जब पद्मावतीने ऐसा कहा तो वह एकान्तमें पृथ्वीपर बैठ गया व बड़े दुःख से युक्त उस पद्मावती से बोला ६० कि शुभे तुम्हारे पेटके भीतर जो हमने अपना बीज स्थापित किया है उससे तीनों लोकों के जो भकरनेवाला पुत्र उत्पन्न होगा ६१ ऐसा कह गोभिलदानव तो चला गया ॥

चौ० दुराचारि पापी दानव जब । गयहु तहां सों नृप तनयातव ॥

महादुःखयुत है त्यहि ठामा । रोदन करन लगी सोवामा ६२।६३

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने

सुकलाचरिते पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ५० ॥

इक्ष्वावनवां अध्याय ॥

दो० इक्ष्वाक्ये महुँ शूकरी पद्मावति पति पाव ॥

बहुरि सुदेवा त्यागकी कथा कही अतिचाव १

वह ब्राह्मणी अपने पतिसे बोली कि हे द्विजोत्तम ! जब दुराचारी पाप चित्तवाला गोभिल दैत्य चला गया तो बड़े दुःखसे युक्त होकर पद्मावती रोदन करने लगी १ हे द्विजोत्तम ! उसका रोना सुनकर सब श्रेष्ठमुखवाली सखियोंने उस राजकन्यासे रोदनका कारण पूछा २ कि तुम्हारा कल्याण हो हम लोगों से बताओ क्यों रोती हो महाराज मथुराके अधिपति कहांगये ३ जिन्होंने तुमको प्रिया कहकर अपने समीप को बुलाया था इसका कारण सब हमसे कहो तब बड़े दुःखसे बार २ रोदन करती हुई वह अपनी सखियों से बोली ४ व सब कहा जो बात अज्ञान से होगई थी तब वे सब कांपती और अत्यन्त दुःखयुक्तको पिताके गृहको लिवाले गई ५ व उसकी माता के आगे उन स्त्रियों ने सब वृत्तान्त कहा इस बातको सुनकर वह रानी

अपने पतिराजा के समीपगई ६ व पति से सब कन्याका वृत्तान्त सुनाया उसे सुन राजा महादुःखी हुआ ७ व बहुतसे वस्त्र भूषणादि दे पालकीपर चढ़ाय कन्याको परिवारयुक्त मथुराको भेजदिया वह अपने पतिके मन्दिर में पहुँची ८ पिता माताने कन्याका दोष छिपा डाला व धर्म्मात्मा उग्रसेन ने देखा कि पद्मावती आई ९ देखकर बड़े हर्षितहुये व अपनी प्राणप्रिया पद्मावतीसे बोले कि हे वरानने! तुम्हारे विना तो हम जीही नहीं सके १० हम तुम्हारे गुणोंसे व शीलसे और बड़ी दीप्ति से बहुत प्रसन्न हैं व तुम्हारी भक्तिसे और सत्यवाणीसे पातिव्रतके गुणोंसे अतीवप्रसन्न हैं ११ इसप्रकार पद्मावती अपनी प्रिया भार्या से कहकर राजा उग्रसेनजी उसके संग विहार करनेलगे १२ व पद्मावती का वह सबलोगों के भयदेनेवाला दारुण गर्भबड़ा पद्मावती जानों उस गर्भ का कारण जानतीही थी १३ इससे अपने गर्भ में बढ़तेहुये उस बालक के विषय में रात्रिदिन चिन्ता किया करती थी क्योंकि यह जानती थी कि जो यह लड़का उत्पन्नहोगा तो तीनोंलोकों का नाश होगा १४ इस से इस दुष्टपुत्र से हमारा कुछ भी प्रयोजन नहीं है इसलिये गर्भपात कराने के लिये सब स्त्रियों से बहुधा ओषधियां पूछा करे १५ व महौषधियों को लेकर प्रतिदिन खायाकरे इसरीति से गर्भपात होने के लिये उसने बहुतसे उपाय किये परन्तु वह गिरा नहीं १६ वरन सबलोक भयङ्कर दारुण गर्भ बढ़ताही गया जब बनाय उत्पत्ति का समय आगया तो वह गर्भ अपनी माता पद्मावती से बोला १७ कि हे मातः ! तुम क्यों प्रतिदिन ओषधियों के पीने से दुःखित होती हो पुण्य से आयु बढ़ती है व पापसे थोड़े दिन प्राणी जीताहै १८ अपने कर्म के विपाकसे प्राणी जीते मरते हैं कोई २ कच्चेही गर्भ से चलेजाते हैं कोई पापी जन्म लेकर तुरन्त मरते हैं कोई कुमारावस्थामें कोई ज्वान होनेपर कोई बाल कोई वृद्ध कोई तरुणही मरते हैं जिसकी जैसी आयुहोती वह उतने दिन जीताहै १९।२० बस सब अपने कर्मविपाकसे जीते हैं व मरते हैं ओषधियां मन्त्र व देवता मरण जीवन के निमित्त नहीं हैं इसमें संशय नहीं है २१ परन्तु

हमको आप नहीं जानती हैं कि हम जैसे हैं तुमने भी देखा सुना होगा कि कालनेमि बड़ा बलीया २२ सब दानवों में महावीर्य्य व तीनों लोकों को भयदायी था सो हम कालनेमि दानव हैं देवासुर संग्राममें विष्णुसे मारेगये हैं २३ सो उनसे अपना वैर साधन करनेके लिये तुम्हारे उदरमें आये हैं सो तुम्हारा साहस हम ने सुना कि गर्भपात के लिये नित्य ओषधियां खातीहो अब ऐसा न करो २४ हे द्विजश्रेष्ठ ! इस प्रकार मातासे कहकर वह गर्भ चुप होरहा व माता ऐसे उग्र गर्भको धारण करके महादुःखसे पीड़ित हुई २५ जब दशमास बीते तो वह महाबुद्धिको प्राप्तहुआ पीछे उत्पन्नहुआ वही महाबली कंसहुआ २६ जिसने तीनोंलोकोंके निवासियों को व्याकुल करदिया व फिर वासुदेव भगवान् के हाथसे मारागया इससे मुक्त होगया इसमें कुछ संशय नहीं है २७ हे द्विजोत्तम ! हमने ऐसा सुना है कि जो काल होनेवाला होगा वह होगा यह सब पुराणोंमें जो निश्चित कहा है वह हमने तुमसे कहा २८ बस पिता के घरमें रहने से कन्या इसी प्रकार नष्ट होजाती है इससे अपने गृहमें रखनेके लिये कन्या का मोह न करना चाहिये २९ अब इस महापापिनी दुष्टाका परित्याग करके स्थिरहोओ नहीं तो लोकमें महापाप व दारुण दुःख तो मिलेहीगा ३० हे कांत ! आप हमारे साथ लोकमें कल्याणकारक भोग भोगिये तब शूकरी बोली ऐसा वचन अपनी स्त्रीका सुन वे द्विजोत्तम ३१ हमको बुलाकर बोले कि हमने तुम्हारा त्याग किया इतना कहकर हमारे पिताजी ने वस्त्र भूषणादि हमको बहुत दिया ३२ व कहा कि तेरेही दुराचार से द्विजों में उत्तम बुद्धिमान् शिवशर्मा चलागया हे दुष्टे ! हे कुलदूषण करनेवाली ! ३३ इससे जा जहां तेरा भर्त्ता है वहीं तू भी जाकर रह इस में संदेह नहीं है अथवा जहां का रहना तुझको प्रसन्नहो वहां जाकररह ३४ हे महाभाग ! हे श्रेष्ठमुखवाली ! पिता माता व सब कुटुम्बवालोंने ऐसा कहकर मुझको त्यागदिया तब निर्लज्ज होकर मैं वहांसे चलखड़ीहुई ३५ हे शुभे ! परन्तु मैंने बहुतलोगोंसे रहनेकेलिये कहा पर कहीं रहने न पाई जैसेही मुझको देखें वकनेलगे

कि देखो यह पुंश्चली आई ३६ इस प्रकार कुलमान से वर्जित हो
घूमती २ गुर्जरदेशमें जो पुण्यकारी सौराष्ट्रदेश है वहां एक शिव
मन्दिर है वहां पहुँची ३७ वहां एक वनस्थल नाम अति प्रसिद्ध
वृद्धियुक्त नगर है वहां क्षुधासे अति पीड़ित हुई ३८ तब हाथ में मिट्टी
का खप्पर ले भिक्षा मांगने लगी सबके गृहों के द्वारपर दुःखित हो-
कर जाकर मांगूँ ३९ जब मेरा रूप देखें तो सब लोग निन्दा करने
लगे व कहें कि यह पापाचार करनेवाली आई व फिर भिक्षा भी
सुभक्तों न दें ४० इस प्रकारके दुःखों से समाक्रान्त व दारिद्र्य से
पीड़ित हो एक दिन घूमती २ मैंने एक उत्तम गृह देखा ४१
वह सदन बड़ी भारी छहरदीवारीसे व बड़े भारी खावांसे युक्त व वेद
शालासे युक्त था वेदध्वनि उसमें हो रही थी व बहुत वेदपाठी विप्रों
से भरा था ४२ धन धान्यसे समाकीर्ण व दासी दासों से शोभित था
लक्ष्मी से मुदित उस सुन्दर गृहमें मैं पैठी ४३ परन्तु वह गृह सब
ओरसे कल्याणदायक उन्हीं शिवशर्माजी का था तब दुःखसे पी-
ड़ित मुझ सुदेवा ने कहा कि भिक्षादो ४४ तब द्विजों में उत्तम शि-
वशर्माने भिक्षाका शब्द सुना व अपनी लक्ष्मीरूप श्रेष्ठमुखी मं-
गलानाम भार्यासे ४५ हँसकर कहा कि यह जो बड़ी दुर्बल भिक्षा
के लिये द्वारपर आई है ४६ इसे बुलाकर हे प्रिये ! हे शुभे ! भोजन
दे दो तब परमकृपासे युक्त हो उसको आई हुई जानकर ४७ मंगला
अपने पतिसे बोली हम प्रिय भोजन देवेंगी यह कह मंगलयुक्त हो
मंगलाने ४८ अति मीठे भोजन सुदेवा को कराये जब मैं अच्छी-
तरह भोजन कर चुकी तो महामुनि धर्मात्मा शिवशर्मा जी मुझ से
बोले कि ४९ ॥

चौ० तुमहो कौन कहाँ से आई । भ्रमत जगतमहँ किमि अकुलाई ॥
है तब कार्य्य कौन सबकाहीं । कहूँ हमसन यहँ कुछ भयनाहीं ५०
इमिनि जपतिके सुनि शुभवैना । भाष्यहु जौन महा सुखदैना ॥
स्वरसे लक्षित करि मै पापिनि । जानेहुँ निज स्वामिहि सुनु भामिनि ५१
जब देख्यो निज पतित बलजित । भइ उँ बहुत विधि दुखसों मज्जित ॥
चारुसर्वतनु सुमुखि मंगला । बोली पतिसों वचन शृंगला ५२

को यह तुम्हें देखिभै व्रीडित । अति दुखसों मानो है पीडित ॥
कहहुकान्त हमसों समुझाई । यहहै कौन यहां किमि आई ५३

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेसुकला
चरित्रेएकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ५१ ॥

बावनवां अध्याय ॥

दो० बावनयें महुँ नरकगत दुःखशूकरी गाव ॥

लै राज्ञीकर पुण्यगै दिव्य स्वर्गयुत भाव १

सुकला अपनी सखियोंसे व शूकरी इच्छाकु महाराज की रानी
सुदेवा से बोली कि मङ्गलाका वचन सुन शिवशर्मा बोले कि हे
मङ्गले ! जो तुमने इस समय पूँछा उसका उत्तरसुनो जिसलिये तुमने
पूँछा है हे वरानने ! वह ऐसा है १ कि यह बेचारी जो इससमय
भिक्षुकीरूप धारणकरके आई है हे चारुलोचने ! यह वसुदत्त
नाम विप्रकी कन्या है २ सुदेवा इसका नाम है व हमारी प्यारी भा-
र्या है ३ किसी कारणसे देश छोड़कर यहां आ गई है ३ व हे वरा-
नने ! हमारे वियोगके दुःखसे जली हुई है हमको जानकर भिक्षुकी के
रूपसे तुम्हारे गृहमें आई है ४ ऐसा जानकर हे भद्रे ! इसका सुन्दर
आतिथ्य तुमको करना चाहिये क्योंकि हमारी यही इच्छा है कि
इसका आदरभाव जो तुमसे हो सके करो ५ ऐसा पतिका वचन सुन
उस बड़े आनन्दयुक्त पतिव्रता मंगलाने ६ हमको स्नानवस्त्र और
भोजन कराये रत्न और सुवर्णयुक्त गहने पहनाये ७ और हमसे अर्थात्
सुदेवासे कहा कि हे भद्रे ! हमभी तुम्हारे ही पतिकी कामनासे भूषित
रहती हैं यह कहकर उसने नानाप्रकारके भूषणों से हमको भूषित
किया व विविधप्रकारके भोजन कराये ८ व हमारे पति शिवशर्मा
जीनेभी हमारा बड़ा मान व आदर किया हे भद्रे ! तब हमारे हृदय
में सब प्राणनाशक महा तीव्र इतना दुःखहुआ जिसका अन्त नहीं
है ९ उनका वैसामान व अपनी दुष्टताको देख हमारे ऐसी दारुण
चिन्ता हुई कि अवतो हमारे प्राण निकलजाते तो अच्छा होता १०
क्योंकि मुझ पापिनीने कभी पतिसे सुवचन नहीं कहाथा वरन इन

विप्र श्रेष्ठकेसाथ पापही किया ११ न कभी इनका पैर धोया न मर्दन किया व न इन महात्माके संग कभी एकान्तमें शयनही किया १२ अब इन महात्मासे पापिनी में कैसे बोलसकूंगी उस शत्रिमें ऐसी चिन्ता करतीहुई मैं दुःखके सागरमें डूबगई १३ व ऐसी चिन्ता करतीथी कि मेरा हृदय फटगया व हे वरानने ! शरीरको छोड़ मेरे प्राण निकलगये १४ तब हाथोंमें गदा चक्र खड्ग धारण किये वीर दारुणक्रूर धर्मराजके दूत आये १५ और रोतीहुई अत्यन्त दुःखित मुझको दृढ़ बन्धनवाली जंजीरोंसे बाँधकर यमपुर लेगये १६ मुद्गरोंसे ताड़ितहुई दुर्ग मार्गसे पीड़ितभई यमराजके आगे डाटीगई और दूतोंने मुझे यमराजके पास पहुँचादिया १७ तो क्रोधयुक्त महात्मा यमराजने मुझे देखा और अङ्गारसंचय और नरकसंचयमें डालदिया १८ फिर लोहका पुरुष अग्निसे तपाकर अपने स्वामीके छलनेसे मेरेहृदयमें लगायागया १९ अनेकप्रकारकी पीड़ासे अत्यन्त संतप्त और नरककी अग्निसे तापयुक्त हुई फिर करंभ बालूके ऊपर तेलकी नावमें छोड़ीगई २० तलवारके समान पत्तोंसे छिन्न भिन्न कीगई जलमंत्रसे वाहितहुई व मुझको छिन्न भिन्न करतेहुये यमपुरको लेगये फिर कूटशाल्मलिवृक्ष नरकमें महात्मा यमराज की आज्ञासे छोड़ीगई २१ फिर पीब रुधिर व विष्ठाके कुण्डमें जहां नानाप्रकारके कृमि भरेथे मुझको उसमें लेकरडाला हे राजकुमारि ! कहांतक गिनाऊं एकमें से दूसरे में डालतेहुये सब नरकों में मुझे यमदूतों ने डाला २२ जिनमें कि नानाप्रकारके तीव्र दुःख होतेथे खड्गलेकर बीचसे मुझको चीड़डाला शक्तियोंसे ताड़ित किया २३ अन्य सब नरकोंमें मैं गिराईगई फिर नानाप्रकारकी नारकी योनियोंमें गिराईगई २४ व उन्हीं धर्मराजनेसब नरकोंमें मुझको गिरवाया फिर वगुलीकी योनिमें उत्पन्न होकर बड़े २ दारुण दुःख मैंने भोगे २५ फिर शृगालीकी योनिमें जन्मी फिर कुत्तोंकी योनिमें जन्म पाया फिर मुरगीकी योनिमें फिर माज्जारीकी योनिमें फिर मूसकी योनिमें २६ इस रीतिसे जितनी पाप योनियांथी सबोंमें मेरा जन्म हुआ जिन २ योनियों में जन्म लेनेसे बड़ी पीड़ा होती है धर्मराज

ने उन सबोंमें मुझको डलवाया २७ हे नृपनन्दिनि ! इसीक्रमसे मैं भूतलपर आकर शूकरीहुई पर हे महाभागे ! तुम्हारे हाथोंमें अनेक तीर्थ हैं २८ सो उन्हीं हाथोंसे मुझको तुमने स्नान कराया इससे हे श्रेष्ठवर्णवाली ! हे सुन्दरि ! हे देवि ! तुम्हारे प्रसादसे मेरे सब पूर्वजन्मके पाप जातेरहे २९ व हे वरानने ! तुम्हारेही तेजके पुण्य से मैंने ज्ञानपाया अब नरकसंकटमें पड़ीहुई मुझको उबारो ३० जो अब उद्धार न करोगी तो फिर दारुण किसी नरकयोनिमें जाऊंगी इससे हे महाभागे ! मुझ दुःखिनीकी रक्षाकरो ३१ पापभावसे मैं इसदशाको पहुँचीहूँ व और कोई मेरा रक्षक नहीं है जिसके शरण में जाऊँ यह सुन सुदेवा महारानी बोली कि हे भद्रे ! पूर्वजन्म में हमने कौन पुण्य कियाहै ३२ जिससे तुम्हारा उद्धार करें हमसे इस समय कहो यह सुन शूकरी बोली कि ये मनुके पुत्र महाराज इक्ष्वाकुजी ३३ साक्षात् महाबुद्धिमान् विष्णुभगवान् हैं व आप लक्ष्मी हैं इसमें संदेह नहीं है क्योंकि तुम पतिव्रता महा भाग्यवती व पातिव्रत धर्ममें परायणहो ३४ हे भद्रे ! जिससे तुम पतिव्रताहो इससे सर्वतीर्थमयीहो व स्वर्गमें भी सर्वदेवमयी तुम थीं व अबभी सर्वदेवमयीहो ३५ क्योंकि इसलोकमें महापतिव्रताओं में तुम एकहीहो क्योंकि आप अपने भर्ताकी शुश्रूषा पुण्यके लिये सदा करती हैं ३६ हे देवि ! हे वरानने ! यदि तुम हमारा प्रिय करती हो तो पति सेवा का एक दिनकाभी पुण्य मुझको देदो ३७ मेरी मातापिता व सनातनी गुरु तुम्हींहो मैं तो पापिन दुराचारिणी झूठी व ज्ञानवर्जितहूँ ३८ हे महाभागे ! अब मेरा उद्धारकरो क्योंकि मैं यमराज के दण्डोंसे बहुत व्याकुलहूँ सुकला अपनी सखियोंसे बोलीकि यह सुन महारानीने महाराजकी ओर देखकर कहा ३९ कि हे महाराज ! अब हम क्याकरें सुनो यह पशु शूकरी क्या कहती है यह सुन राजा इक्ष्वाकुजी बोले कि हे शुभे ! यह बेचारी पापयोनिमें पड़ी है ४० इससे इसका उद्धार अपने पुण्यों से करो तुम्हारा बड़ा कल्याण होगा जब इसप्रकार से चारु मङ्गलवती महारानी सुदेवासे महाराजने कहा ४१ तो उन्होंने उस शूकरी से कहा कि हे श्रेष्ठमु-

खवाली ! हमने जो पतिकी सेवाकी है उसमें एक वर्षका पुण्य तुमको देती हैं जैसेही उन देवी महारानी जीने ऐसा कहा है कि उसी क्षण ४२ रूपयौवन सम्पन्न दिव्यमालासे विभूषित तेज की ज्वालासे युक्त वह शूकरी दिव्य देहहोगई ४३ सब भूषणोंकी शोभा से युक्त व नानारत्नोंसे शोभितहुई दिव्यरूप होकर दिव्य गन्धानुलंपन से युक्त हुई ४४ व दिव्य विमान पर चढ़कर जा अन्तरिक्ष में होरही व वहीं से मस्तक झुंकाय प्रणाम करती हुई बोली ४५ कि हे महाभाग ! हे सुंदरि ! तुम्हारा कल्याणहो मैं तुम्हारे प्रसादसे पापोंसे छूटकर अति पुण्यतम शुभ स्वर्गलोकको जातीहूँ ४६ इसप्रकार महारानी के प्रणामकर सुदेवा स्वर्गको चलीगई ॥

चौ० सुकलानिजसखियनसोंबोली । वचनसुधासमअतिहिअमोली ॥

कहा सुदेवा चरित अनूपा । तुमसन हम बहुभांति सुरूपा ४७ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने
सुकलाचरित्रेसुदेवास्वर्गारोहणं नामद्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ५२ ॥

तिरपनवां अध्याय ॥

दो० तिरपनयेंमहँ देवपति सुनि सुकला दृढ़ताइ ॥

मन्मथसम्मत दूतिका तहँ पठई सो जाइ १

यदपिकरी बहुयुक्तिपर सुकलापहँ न बिसान ॥

तासुवचन वेदान्तसों खण्ड्योसहित बिधान २

सुकला अपनी सखियोंसे बोली कि पुराणोंमें पूर्वसमय हमने ऐसा धर्मसुनाहै फिर पतिहीनहोकर अकेले भोगके पदार्थ कैसे भोजनकरके पापिनीहोवें १ इससे अब बिना अपने स्वामीके जीव को शरीरमें धारण न करेंगी विष्णुजी बोले कि हे राजन् वेन ! इस प्रकार से उत्तम पातिव्रतधर्म सुकलाने कहा २ उसे सुन वे सब श्रेष्ठ स्त्रियां अति हर्षितहुई व नारियोंको गति देनेवाला परमउत्तम पातिव्रत धर्म सुनकर ३ धर्मवत्सल महाभाग्यवती उस सुकलाकी सब स्तुतिकरनेलगीं वे सब स्त्रियां व ब्राह्मणलोग व सब देव भी उसकी स्तुति करनेलगे ४ उस सुकलाका ध्यान व पतिकी कामना

विचारकर इन्द्र अपने लोकमें बहुत प्रसन्नहुये ५ व सुकलाका परम भाव विचारनेलगे व फिर कहनेलगे कि इस सुकलाका भाव व धैर्य हम पतित करा देंगे इसमें कुछ संशय नहीं है ६ तुरन्त देवराजने कामदेवका स्मरण किया जैसेही स्मरण किया है कि पुष्प का धन्वा हाथ में लिये कन्दर्प वहां आगया ७ अपनी प्रिया रति को भी सङ्गही लाया व इन्द्रको देखकर दोनों हाथ जोड़ सहस्राक्ष से बोला कि ८ हे नाथ ! इस समय मेरा स्मरण आपने क्यों किया जो कार्य हो सब भावसे आज्ञा दीजिये ९ यह सुन इन्द्र बोले कि यह महाभागा सुकला पातिव्रतधर्ममें परायण है हे कामदेव ! सुनो व इस विषय में उत्तम सहाय करो १० इस महाभागा पुण्यमङ्गला सुकलाको आकर्षित करो तिस इन्द्रके वचन सुनकर कामने कहा ११ देवराज बहुत अच्छा ऐसाही करूँगा इसमें संदेह नहीं है हे देव देवेश ! तुम्हारे कौतुक के अर्थ सहाय करूँगा १२ ऐसा कह मुनियों से भी दुर्जय महातेजस्वी काम कहने लगा कि ऋषियों मुनियों सहित देवगणों के जीतनेमें मैं समर्थ हूँ १३ फिर हे देव ! कामिनी के जीतनेमें क्या है जिसके अङ्गों में कुछ बलही नहीं होता क्योंकि हे देव ! कामिनियों के अङ्गों में मैं निवास करता हूँ १४ मस्तक कुच नेत्र व ग्रीवा के अग्रभाग में सदा रहता हूँ व नाभि कटि पीठ दोनों मोटी जांघों में और योनिमण्डलमें १५ ओष्ठ दांत व कांखोंमें मेरा वास रहता है इसमें संदेह नहीं है अङ्गों और प्रत्यङ्गों में सबसे मैं रहता हूँ १६ हे देव ! नारी हमारा घर है सदैव तहां हम बसते हैं और वहां स्थित होकर सब पुरुषों को निस्सन्देह मारते हैं १७ स्त्री स्वभावहीसे हमारे बाणोंसे सन्तप्त रहती है पिता माता और स्वजन बान्धव रूपवान् गुणवान् को देखकर हमारे बाणोंसे हत हुई चलायमान होजाती है इसमें संदेह नहीं है विपाककी चिन्तना नहीं करती है १८। १९ व इसी कारणसे जब स्त्रियां किसी सुन्दर पुरुषको देखती हैं तो उनकी योनि से बीजयुक्त जल बहने लगता है इससे हे सुरराज ! उसमें कुछभी धैर्य नहीं है सुकला को मैं नाश कर डालूँगा २० इन्द्र बोले कि हे काम ! धनीगुणवान् व रूपवान् पुरुष हमहोंगे व कौतुकसे इस स्त्री

को चलायमान करेंगे २१ न काम से न डरसे न लोभसे न कारण से न मोहसे न क्रोधसे चलायमान करेंगे यह हम सत्य सत्य कहते हैं २२ तिसका बड़ा सत्यपतिव्रत हमको कैसे दिखाई देगा इससे जाकर आकर्षण करूंगा मोहही इस में कारण है २३ इस प्रकार कामदेव को आज्ञादेकर इन्द्रजी चले गये जो कि स्वभावही से रूपवान् गुणवान् हैं फिर सब भूषणोंकी शोभासे अंगयुक्त व सब भोग विलासकी सामग्री समेत भोगलीला से समाकीर्ण हो व सब प्रकार से उदारता युक्त हो इन्द्र २४ । २५ जहां वह पतिव्रतादेवी कृकलकी स्त्री सुकलाथी वहां अपनी लीला गुणरूप व भाव जाकर दिखाया २६ परन्तु उस ने इनकेरूप व धनसम्पदा की ओर देखाही नहीं जहां २ वहजाय वहां देखे तो इन्द्र आगे खड़े २७ व साभिलाष मनसे स्थित उन्हीं इन्द्रको देखे इन्द्र नाना प्रकारकी कामचेष्टाओं को दिखाते हुये २८ चौरहा व तीर्थ में जहां २ वह देवीजाय वहां दिखाई दें व सहस्राक्ष वहां उसको भी देखें २९ फिर इन्द्रने एक दूतीको भेजा वह उसके पास गई व महाभाष्यवती सुकलासे बहुत हँसकर बोली ३० कि अहोसत्य अहोधैर्य्य अहोकांति व अहोक्षमा इसके रूपकी तो कोई नारीही संसार में नहीं है ३१ हे कल्याणि ! तुम कौनहो व किसकी भाय्या होवोगी व जिसकी तुम गुणवती भाय्याहोगी वह पुरुष पुण्यवान् धनी पृथ्वी में होगा ३२ उसका वचन सुन वह मनस्विनी सुकला बोली कि वैश्यजाति में उत्पन्न धर्म्मात्मा सत्यवत्सल ३३ सत्यप्रतिज्ञ धीमान् एक कृकलनाम महानुभाव वैश्यहैं हम उन्हीं की भाय्या हैं तुम से सत्यही कहती हैं ३४ सो सुधी धर्म्मात्मा हमारे भर्ता तीर्थयात्रा करनेको गयेहैं हे महाभागे ! उन हमारे भर्ता को गयेहुये ३५ इस समय तीन वर्ष बीतगये हैं इससे उन महात्मा विना हम अत्यन्त दुःखितहैं ३६ यह सब हमने अपना वृत्तान्त तुमसे कहा व आप जो हमसे पूँछती हैं तो आप कौनहैं व क्यों हमको पूँछतीहैं ३७ उसका वचनसुन वहदूती उससे आभाषणकर फिर बोली कि भद्रे ! हमको पूँछतीहो तो सब हम तुम से कहती हैं ३८ हे वरवर्णिनि ! हम तुम्हारे पास किसी कार्य के

लिये आई हैं सुनो कहेंगी व सुनकर उसे धारण करो ३६ हे वरानने ! जो निर्दयी भर्ता तुमको छोड़कर चला गया उसको लेकर तुम क्या करोगी ४० व सुंदर आचारसमन्वित तुमको छोड़कर जो पापी चला गया है हे वाले ! अब नहीं जानती कि कहीं मृतक होगया वा जीता है ४१ व जो हो तुम उस पापीका क्या करोगी हमारी जान तो आप बिन प्रयोजन खेद करती हैं अपने इन दिव्य सुवर्ण समान दीप्ति वाले अंगोंको क्यों नष्ट करती हो ४२ बाल्यावस्थामें मनुष्य इस सुखको नहीं पाता जोकि युवावस्थामें पाता है क्योंकि बाल्यावस्था में शरीरमें बलतो रहताही नहीं इससे क्रीड़ाका सुख उसको नहीं मिलता ४३ वैसेही वृद्धावस्था में भी क्रीड़ाका सुख नहीं मिलता क्योंकि बुढ़ापाके मारे सब इन्द्रियां शिथिल होजाती हैं इससे हे वरानने ! सब सुख व भोग तरुणावस्थाही में भोगे जाते हैं ४४ जबतक तरुणता रहती है तभीतक मनुष्य भोग विलास करते हैं व सुख भोगादि सब में अपनी इच्छासे मनुष्य क्रीड़ा करता है ४५ जबतक तरुणता है तभीतक भोगभी हैं सो हे भद्रे ! जब तारुण्यावस्था चलीजायगी तो फिर क्या करोगी ४६ हे देवि ! जब वृद्धावस्था आवेगी तो कुछभी कार्य न सिद्धहोगा क्योंकि वृद्ध सुख करनेकी इच्छा करता है परन्तु कुछ कार्य तो उससे होताही नहीं सुख कैसे करे ४७ जैसे जब वर्षा होजाती है तब सेतुका बांधना वृथा होता है वैसेही तारुण्य बीतजाने पर सुख करने का अनुभवहै ४८ इससे सुखभोगो व बहुसाधवी आनन्दसे पान करो हे चारुलोचने ! देखो ये कामयाप तुम्हारे अंगोंको जलाये देतेहैं ४९ रूपवान् गुणवान् धनी व युवा यह पुरुष तुम्हारेलिये आया है यह पुरुष सर्वज्ञ व पुरुषोंमें श्रेष्ठहै ५० व हे वरवर्णिनि ! तुम्हारे अर्थ सदा स्नेहहीकेसाथ रहना चाहताहै यह सुन सुकला बोली कि जीवको न बाल्यहै न कभी तरुणताहोतीहै ५१ बुढ़ापाभी नहीं होता अपने आप सिद्ध अच्छी सिद्धि का देनेवाला अमर बुढ़ापा रहित व्यापी अच्छा सिद्ध सब जाननेवाला ५२ कामरहित संसार में कामना का देनेवाला आत्मरूप से वर्त्तमान है जैसे घरका संस्थान है तैसेही

देहका दिखाई देना है ५३ जैसे वृद्धावस्थासे देह तैसेही सूत्रसे म-
न्दिर है अनेकों काष्ठ समूहों से नानाप्रकार के काष्ठ समुच्चयोंसे ५४
मिट्टी और जलसे चारों ओर से बनाया जाता है लेपन करनेवालों से
घर लीपा जाता है चित्र बनानेवालों से काष्ठचित्र होता है ५५ पहले
रूपको प्राप्त होता है और सूत्रसे घर सूत्रित होता है फिर दिनदिन
में लेपनसे अपने आप पुष्ट होता है ५६ नित्यही पवन से घर मलिन
हो जाता है मध्यम वर्तुतकाल घरका कहाता है ५७ तिस घरकी
रूपहानि होती है तो घरका स्वामी अपनी इच्छा से लिपाता है तब
रूपवान् घर हो जाता है ५८ हे दूतिके ! तिस घरकी युवावस्था
कही फिर काष्ठसमूहों से बहुत काल में पुराना हो जाता है ५९
स्थान से भ्रष्ट होकर इन्द्रियां अलग २ होरहती हैं इससे बल व
भार को नहीं सहती बस इसी को देह की वृद्धता कहते हैं हे दू-
षण करनेवाली ! जब गृहको गिरता हुआ जानता है तो गृहका स्वा-
मी उसे छोड़ देता है ६० । ६१ व दूसरे घरको शीघ्रही चला जाता
है तैसेही बाल्य तारुण्य व वृद्धता ये सब क्षणिक हैं ६२ बाल्याव-
स्था में ज्ञानहीन होने से बालरूप रहता है केवल वस्त्र अलंकार
भूषण व सुन्दर शरीरकी इच्छा करता है ६३ व चन्दनादि सुगन्धित
वस्तुओंके लेपन व ताम्बूलादि के भक्षणकी इच्छा करता है जब श-
रीर तरुणताको पहुँचता है तो अतिरूप हो जाता है ६४ तब बाहर
व भीतर सब कहीं रसों से उसे पुष्ट करता है उस पोषणभावसे शरीर
पुष्ट हो जाता है ६५ व गण्डस्थल पृष्ठ उदर इत्यादिमें मांसकी वृद्धि
हो जाती है ऐसेही और भी सब अंग वृद्धिको प्राप्त होते हैं ६६
इसीप्रकार प्रत्येक अंग रसयुक्त होनेसे रूपवान् दिखाई देने लगते
हैं व हे दूतिके ! दन्त ओष्ठ स्तन बाहु कटि पीठ दोनों जंघा ६७
हाथ और पादतल ये सब बढ़ जाते हैं व रस मांस दोनों के बढ़ने
से सब अंग बढ़ते हैं ६८ व तभी सब अंग स्वरूपयुक्त होते हैं व
उन्हीं स्वरूपों से मनुष्य रसवद् होता है ६९ फिर लोक में स्वरूप
कौन पदार्थ कहा जाता है हे दूतिके ! यह शरीर तो विष्ठा व मूत्रका
स्थान है ७० इससे महाअपवित्र वस्तु शरीर है क्योंकि दिन रात्रि

इससे निर्घृण मल मूत्रादि चुआकरते हैं सो हे शुभे ! जलके बुल्ले के समान नश्वर इस शरीर का रूप कैसे वर्णन करती है ७१ जब तक पचासवर्ष नहीं बीतते तब तक यह शरीर दृढ़ रहता है पीछे फिर दिन २ प्रति हीनही सब अंग होते जाते हैं ७२ दांत शिथिल हो जाते हैं व मुखसे राल टपकने लगती है नेत्रों से दिखाई नहीं देता न कानों से सुनाई देता है ७३ व हे दूतिके ! पैरों से चला नहीं जाता न हाथों से कुछकर्म करसक्ता है जराकालमें पीड़ित होकर यह शरीर नष्ट होनेपर आजाता है ७४ वह सब रस वृद्धता के अग्निसे सूख जाता है फिर सब कुछ करने में असमर्थ होजाता है फिर हे दूतिके ! रूपत्व इसमें कैसे है ७५ जैसे जीर्णगृह क्षय होजाता है इसमें सन्देह नहीं है वैसेही वृद्धावस्थामें जीर्णशरीर भी नष्ट होजाता है ७६ फिर हमारे रूपको क्या बार २ वर्णन करती है किस कारणसे हमको रूपयुक्त जानती है ७७ जैसे जीर्णघर त्राता है वैसेही शरीर भी त्राता है व किससे इस पुरुषको बली मानती है जिसके अर्थ तू आई है उसकी कौनसी प्रशंसनीय बात है ७८ व हमारे अङ्गोंमें तुमने कौनसी विलक्षणता देखी इस समय हमसे कह तिसके अङ्गोंसे अधिक वा हीन नहीं है ७९ बस जैसे तेरे अङ्ग हैं वैसेही इस पुरुषके व वैसेही हमारे इसमें सन्देह नहीं है फिर किसमें रूप नहीं व भूतलमें रूपवान् नहीं है ८० हे शुभे ! जितने ऊँचे वृक्ष व पर्वत हैं सबका अन्त गिरपड़ना है ऐसेही कालसे पीड़ित होकर सब प्राणी अन्तमें नाशको प्राप्त होते हैं ८१ हे दूतिके ! है अरूप पर रूपवान् होकर दिव्य आत्मा पवित्र सबमें टिका है सब स्थावर व जङ्गलों में आत्मा वही है ८२ सबोंमें एक वही शुद्धआत्मा विद्यमान है जैसे छोटे बड़े चाहे जैसे घटमें जल भरा हो पर वह अकेला शुद्धस्वरूप है कुछ अन्य २ कुम्भमें भरनेसे और नहीं होजाता व अन्तमें जब घट फूट जाते हैं तो फिर वही अकेला शुद्धजल दिखाई देता है इस बातको तू नहीं समझती ८३ पिण्डों के नाशसे ऐसेही आत्माभी एक रूप होजाता है हमने एकहीरूपसे संसार में बसेहुये आत्माको सदा देखा है ८४ सो जिसके लिये आई है उससे जाकर ऐसेही कहदे कि जो

हमारे सङ्ग भोग किया चाहताहो तो कुछ अपूर्वता दिखावे ८५ सुन जब व्याधि से प्राणी पीड़ित होताहै तो कफसे युक्तहोताहै अङ्ग से रक्त चलायमान होताहै तब स्थानसे भ्रष्ट होजाताहै ८६ सब अङ्ग सन्धियों में भीतर मांस है एकसे नाशको प्राप्त होजाता है अपन रूपको छोड़देताहै ८७ तब शीघ्रही कृमियों से युक्त विष्ठाके भावको प्राप्तहोजाताहै तैसेही दुःख करनेवाले अपने रूपको जब परित्याग करताहै ८८ तब पीछेसे दुर्गन्धयुक्त कीड़ा होताहै व फिर यूका वा कृमि योनियोंमें उत्पन्न होताहै इसमें सन्देह नहींहै ८९ व जबतक नरकों में पड़ा रहताहै तबतक कृमि नानाप्रकारके खजुलीआदि दारुणदुःख देते हैं शरीरमें व्यथा उत्पन्न करातेहुये वे यूका उसे इधर उधर छटपटवाते हैं ९० वह खजुली नखों से खजुवानसे कुछशान्त होजाती है तैसेही भोगकी सुनिये इसमें सन्देह नहीं है ९१ अच्छे रसों को मनुष्य भोजन करता पीछे से पान करताहै तो प्राणवायु पाकस्थान को लेजाती है ९२ जो प्राणी भोजन करते हैं तो फिर पाकस्थानको प्राप्तहोजाताहै तब वायु सब मलको गिरादेतीहै ९३ सारभूतरसका रक्तहोजाताहै व जो निर्मल शुद्धवीर्य होताहै वहतो ब्रह्मस्थानको चलाजाताहै ९४ व जो यहां औरोंको दुःखदेताहै वह अपनेहीसमान दुष्टकृमिसे व्याकुल हुआकरताहै एक स्थान पर उस का वीर्य नहीं रहता चञ्चलताको प्राप्त रहताहै ९५ व बहुधा सब प्राणियोंके शिर में पांचकृमि सदा रहते हैं दोतो कर्णमूलोंमें व दो नेत्रोंमें ९६ ये कनिष्ठिका अंगुली के समान होतेहैं लाल इनकी पूँछ होती है हे दूतिके ! व एक नैनूके रङ्गका होताहै व काली उसकी पूँछहोतीहै इसमें संशयनहीं है ९७ हे भद्रे ! उन सबों के नाम कहती हुई हमसे सुन पिङ्गली व शृङ्गली नामके दो कृमि कानों के मूलोंमें रहते हैं ९८ चपल व पिप्पल ये दो कृमि नाकके अग्रभाग में रहते हैं व शृंगली व जंगली ये दोनों नेत्रोंमें रहते हैं ९९ व डेढ़सौ कृमि पुरुषों के माथेके अंत में राई के प्रमाण से रहते हैं १०० सब नि-रसंदेह मस्तक रोगी करते हैं दो बाल तिसके मुखमें विद्यमान रहते हैं १०१ उसी क्षणमें प्राणियों का नाश जानो इस में संदेह नहीं है

अपने स्थानमें स्थित प्राजापत्य के मुखमें १०२ वह वीर्य रसरूप से निस्सन्देह गिरताहै मुख से वीर्य पीताहै तिससे मत्त होजाता है १०३ व तालुस्थान में अतिचञ्चल होता है व जिह्वाके नीचे सूक्ष्म रूपसे इडा व पिङ्गला व सुषुम्णा नामकी तीन नाड़ियां रहती हैं १०४ ये तीनों नाड़ियां चलाकरती हैं व हे दूतिके ! सब प्राणियों के कन्दर्प में बड़ी भारी खजुहट होती है १०५ इससे पुरुषकालिंग खजुलाने लगताहै व स्त्रीकी योनि जब स्त्री पुरुष दोनों प्रमत्त होजाते हैं तब दोनोंका संगम होताहै यही इसकी व्यवस्था है १०६ ॥

चौ० काय कायसों घर्षण करई । मैथुन समुक्ति मोदमन भरई ॥
नाहि अपूर्व मिथुन महँ । कोई । व्यर्थ नारि नर प्रमुदित होई ॥
मो महँ नहि अपूर्व विधि कोई । यासों मैथुन सुखद न होई ॥
मैनहिंकरहुँ कवनिविधिपाहीं । जायकहसि किनपहुँ चितहांहीं १०७, १०८

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रेत्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः ५३ ॥

चौवनवां अध्याय ॥

दो० चौवनयें महँ दूतिके सुनिके वचन सुरेश ॥

ताहि कामरति संगलै गे सुकलाके देश १

श्रीविष्णु भगवान् राजा वेनसे बोले कि जब सुकलाने ऐसाकहा तो वह दूती चलीगई व संक्षेपरीति से उसके वचन कहे सुनकर व विचार करके इन्द्र १ सत्यधर्मयुक्त सुकला के वचन मन में गुन कर व उसका साहस व धैर्य ज्ञानदेख जानकर २ दूती से बोले कि नारीहोकर ऐसा वचन भूतलमें कोई भी न कहेगी क्योंकि सब उस के वचन योगरूप संसिद्ध व ज्ञानजलसे धोयेहुये हैं ३ यह महाभागा सत्य रूप पवित्र है इसमें कुछ भी संशय नहीं है यह तो सब त्रिलोकीको धारण करसक्ती है ४ यह विचार करके इन्द्र कामदेवसे बोले कि तुम्हारे साथ हम उस कृकलकी प्राणप्रिया को देखने चलेंगे ५ तब बलसे दर्पित मन्मथ इन्द्रसे बोला कि हे देवेश ! जहां वह

पतिव्रता है वहां चलो ६ पहुँचतेही हम उसका मान वीर्य बल धैर्य सत्य पातिव्रत धर्म नाश करदेंगे हे सुरेश्वर ! यह प्रतिज्ञा करके कहते हैं ७ कामका ऐसा वचन सुन इन्द्र बोले कि हे कामदेव ! सुनो हमारे विचार से तुमने बहुत अधिक कहा ८ क्योंकि हमने भी उसे देखा है कि सत्य वीर्य व धर्म कर्मों से युक्त रहती है इससे इस सुकलाको तुम नहीं जीतसकें वहां तुम्हारा कुछभी पौरुष न चलेगा ९ यह सुन अतिक्रुद्ध हो काम सहस्राक्ष से बोला कि हमने ऋषियोंका व देवताओंका बल नष्ट करदिया है १० फिर इसका बल कितना है आप देखें हम मन्थनकरते हैं कि नहीं हे देवेश ! तुम्हारे देखतेही देखते उस स्त्रीका नाश करडालेंगे ११ जैसे नवनीत को अग्नि पिघलादेता है वैसेही हम अपने तेज व रूपसे उसे पिघलादेंगे १२ इससे चलिये व इससमय उपस्थित महाकार्य हमारा देखिये तीनों लोकों के नाशनेवाले हमारी निन्दा क्यों करतेहो १३ विष्णुभगवान् राजावेनसे बोले कि कामका वाक्य सुनकर जाना कि यह काम से असाध्य नहीं है व यहभी विचारा कि अच्छा उस धैर्यवती पतिव्रता पुण्यशील के दर्शन होंगे १४ फिर काम से कहा कि अच्छा अब चलकर तुम्हारा वीर्य बल देखते हैं यह कह काम व रति व उस दूतीके संग इन्द्र तिस पतिव्रता के वहां गये १५ जहां कि अकेली पुण्यशीला पतिव्रता सुकला अपने पतिका ध्यान करतीहुई अपने गृहमें टिकी थी वह अपने पतिकाध्यान ऐसे करतीथी कि जैसे योगीलोग अतिगोप्य परमेश्वरका करते हैं १६ मदन अतिमोहन रूप धारणकर व लीलायुक्त भोगसहित पुरन्दरको आगेकर वहां को चला व जाकर पहुँचा अतिमनोहर रूप धारण किये काम व इन्द्रको कृकल वैश्यकी पतिव्रता स्त्री सुकलाने देखा १७ । १८ जिसकी शोभा इन्द्रके साथ ऐसी होतीथी जैसी कि कमलों के संग जल की होती है तैसेही सत्ययुक्त स्वभाव तिस पतिव्रता का हुआ १९ देखतेही सुकलाने जानलिया कि इसी पुरुषने प्रथम दूती भेजी थी जो स्त्री इनको गुणका जाननेवाला कहतीथी लीला स्वरूप बहुधा आत्मभाव हमको यह सब दिखाता है २० हमको प्रबल काल

चिन्तनाकर दुष्ट हमारे पतिके गुणोंसे आया है रति समेत यह मुझ
सतीके पत्थरके भावसे मर्दित कैसे जीवेगा २१ मेरा भाव ग्रहणकर
अच्छी बुद्धियुक्त कांत क्या जीता है हमारा शरीर तो कामादिकों से
शून्य है इससे कुछ चेष्टा ही नहीं करसक्ता जैसे कि मृतक कुछ नहीं
करसक्ता २२ हां कामके ग्राममें रहनेवाली जो सकाम प्रजा होंगी वे
भले नष्ट होंगी हमारे शरीरमें तो पतिके वियोगसे काम ही नहीं है फिर
हमारा कोई क्या करेगा क्योंकि जबतक प्राणी जीता रहता है तभी
तक जो चाहे करे करावे फिर मरनेपर मृतक शरीर लेकर कोई क्या
करसक्ता है इससे जो यह हमारे संग भोग किया चाहता है इससे भी
अवश्य वार्त्ता करनी होगी पर अभी नहीं २३।२४

चौ० इमिविचारिसोसतीसयानी । गृहप्रवेश निजकीन सुठानी ॥

नियमजानि ताकेमघवाना । तहँथिररहेन कछु कियआना २५

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलचरित्रेवतुःपंचशततमोऽध्यायः ५४ ॥

पचपनवां अध्याय ॥

दो० पचपनयें महुँ इन्द्रकहि सती कथा बहुमार ॥

समभायहुपुनिमदननिजसैन्यहिदीनप्रचार १

श्रीविष्णु भगवान् वेन से बोले कि सुकला का अभिप्राय जा-
नकर देवराज कामसे बोले कि हे मदन ! तुम्हारी सामर्थ्य नहीं है
कि इस पतिव्रताको जीतसको क्योंकि यह ध्यानयुक्त है १ व यह
धर्मरूप धन्वा अपने हाथ में लिये है व ज्ञान नाम बाण उसपर
चढ़ाये है व युद्ध करनेके लिये यह पतिव्रता सन्नद्ध है जैसे कि समर
में अच्छे वीरलोग निर्भय होकर युद्ध करने को सन्नद्ध होते हैं २ इ-
सने तो अपने तेजसे सबको जीतलिया हे पुत्र ! अब तुम अपना
पौरुषकरो हमतो जानते हैं कि यह तुम्हारे जीतनेमें इस समय
समर्थ है इससे अच्छे प्रकार शोच विचारकर युद्ध करने में उद्यत
होना चाहिये ३ क्योंकि तुमने पूर्व समय में महात्मा शम्भुजीसे
विरोध कियाथा तब उन्होंने भस्मही करडालाथा उसका फल यह

हुआ कि तबसे तुम अनंग सत्यही होगये ४ जैसे तुमने पूर्व समय में कर्म किया था तैसेही तीव्रफल प्राप्तहुयेथे निश्चय इसपतिव्रताके साथ निंदित योनिको प्राप्त होगे ५ जे ज्ञानवान् पुरुष तीनोंलोक में महात्माओंके साथ वैर करते हैं वे पापही भोगते हैं दूसरे नाना प्रकारके दुःख भोगने पड़तेहैं व रूपका भी विनाश होताहै ६ इससे अच्छा होगा कि हम तुम दोनों इस महापतिव्रता को छोड़कर अपने स्थानको चलेचलें क्योंकि पतिव्रताके संग भोग करनेका असह्यपापमय फल हम एकबार पाचुके हैं ७ वह चरित्र तुम भी जानते हो गौतमजी ने शाप दियाथा उससे नपुंसक होगयेथे व तुम हमको वहीं छोड़कर भागगये थे ८ पतिव्रताओं के तेजका प्रभाव अतुल होताहै उसके नष्ट करनेको ब्रह्मा व सूर्यभी नहीं समर्थ होसके पूर्वकाल में अनसूया पतिव्रताके शापसे सूर्य को कुष्ठरोग होगया था यद्यपि सूर्य ने अनसूयाके पति अत्रिजी का अपराध किया था अपने भर्ताकी ओर होकर अपने पातिव्रत धर्मके प्रभावसे उन्होंने सूर्यका मार्गही रोक दियाथा यद्यपि सूर्यका बड़ाभारी तेजहै पर सब नष्ट करदिया था व अपने पति माण्डव्यजीकी मृत्यु जानकर उनकी पतिव्रता कौण्डिनी नाम स्त्रीने मृत्युही को शाप देदियाथा ९।१० व अत्रिजी की भार्या अनसूयाजी ने अपने पातिव्रत धर्म के प्रभाव से ब्रह्मा विष्णु महादेव इन तीनों देवदेवों को अपना पुत्र बनाया हेमन्मथ ! तुमने इन सतियोंकी कथा न सुनी होगी पतिव्रता सदैव सत्कार योग्य होतीहैं ११ ऐसेही द्युमत्सेन राजाकी कन्या महापतिव्रता सावित्री ने मरेहुये अपने पतिको यमलोकसे बुलालिया व उससे सत्यवान् नाम पुत्र उत्पन्न कराया १२ हे काम ! भला अग्निकी शिखाको हाथोंसे कौन पकड़सक्ताहै व भुजोंके बलसे तैरता हुआ समुद्रके पार कौन जासक्ता है उसमेंभी गले में शिला बांधकर और रागरहित पतिव्रताको कौन वशकरसक्ता है १३ जब बहुत नीतियुक्त वचन इन्द्रने कामदेव की अच्छी शिक्षाके लिये कहे तब कामदेव सुनकर इन्द्रसे बोला १४ कि आपकी आज्ञासे धैर्य सुहृत्त्व और पुरुषार्थ त्यागकर मैं आया था तिसी के लिये हमको निसत्त्व

रूप बहुत भययुक्त कहतेहो १५ हे सुरेश ! जब हम चलेजावेंगे तब संसार में हमारे यशका नाशहोजायगा और इससे जीतेहुये हमको सबमान विहीन कहेंगे १६ जे देवसमूह दानव और तपस्यासेयुक्त मुनीन्द्र पूर्वसमय में मैने जीते हैं वे शीघ्रही हमको हँसेंगे कि यह भयानक कामदेव स्त्रीसे हारगया १७ तिससे हे इन्द्र ! तुम्हारे साथ जाताहूँ इस अबला का बल व मान व तेज व धैर्य्य अभी नष्ट किये देताहूँ आप भयभीत न हों १८ इसप्रकार इन्द्रको समझाकर काम ने अपने धन्वापर बाण चढ़ाया व आगेखड़ी हुई क्रीडा से कहा कि आप मायाकरके वहां जायँ १९ जहां कि सुपुण्या सत्यस्थिता धर्म जाननेवालियों में श्रेष्ठ वैश्यकी भार्या सुकलाहै यहांसे जाकर सा-हाय्यरूप यह हमारा कामकरो हे प्रिये ! २० इसप्रकार क्रीडा से भी कहकर फिर कन्दर्प ने समीप में स्थित प्रीतिको तुरन्त बुलाया व उससे कहा कि तुम हमारा यह उत्तम कामकरो कि सुन्दर स्नेहों से इस सुकला को परिभावितकरो २१ जिससे कि इन्द्रकोदेखकर मारे स्नेह के वह अपने चारुनेत्रों से देखने लगे ऐसे २ प्रभावों व गुणों से भरेहुये वाक्यों से उसको वश करो जिससे इन्द्रही में वह अपना चित्तलगावे २२ ॥

चौ० पुनि कोकिलसों कहाबुलाई । सफल पुष्पतरु बैठहुजाई ॥
कूजहु कलरव सहित विधाना । जासों सुकला करै प्रमाना ॥
पुनि मकरन्द वीरसों बोला । सकल रसास्वादित अनमोला ॥
जाय प्रफुल्लित करहु विशेषी । वैश्य प्रिया दीखै अवलेषी ॥
तुम सब रसनापर है सुस्थिर । तासु बसहु जासों सो पुष्टिर ॥
इमिनिज सैन्यहि दीन्ह निदेशा । कामभली विधिसों उपदेशा ॥
तीनिलोक मोहन के हेतू । सैन्यहि कह्यहु तबहि भूषकेतू ॥
पुनि सुरराज प्रीतिके हेता । जगमोहनहितभयहुसचेता २३।२५

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानं

सुकलाचरित्रेपञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ५५ ॥

छप्पनवां अध्याय ॥

दो० छप्पनकरे महँ कह्यो सुकला धर्म सँबोधि ॥

सकलज्ञानसुरपतिकुमतिकामकुगतिबहुशोधि १

विष्णुभगवान् राजावेनसे बोले कि उसके सत्यके विनाश करने के लिये कन्दर्प व इन्द्र दोनों चले तब इस वृत्तान्त को जानकर सुकला धर्म से बोली १ कि हे महाप्राज्ञ धर्म! कामकी चेष्टादेखो अब मैं तुम्हारे व अपने पुण्य व महात्मापति के अर्थरसुख देनेवाले अपने धनसे भरे पुरे इस स्थान को छोड़ती हूँ पर इस शरीररूप स्थानको नहीं छोड़ती ३ क्योंकि इसका वसुप्रिय नाम है व इस उत्तम गृहमें सदा हर्षही बना रहता है सो यह प्रमत्त बुद्धिवाला अत्यन्त दुष्टकाम इसको नष्ट किया चाहता है क्योंकि वह हमारा शत्रुरूप है इसमें कुछ संशय नहीं है ४ जो पतिव्रतास्त्री होती उसका पति तपोरूप ब्राह्मण के तुल्य होता है इससे इस मेरे शरीर गृहमें भी ऐसा ही है व घरका राजा धर्म है व सत्य भी है ये सब अवश्य मेरे गृहकी रक्षा करते रहेंगे व जिसके गृहमें सत्य ज्ञान आदि पुष्ट होते हैं हे धर्म! वहां तुम बसते हो इसमें सन्देह नहीं है व उसी गृहमें पुण्य भी आकर श्रद्धा के साथ क्रीडा करता है ५।६ क्षमा शान्ति व कृपा भी आती हैं मेरा भी गृह ऐसा ही है इससे ये सब बसते बसती हैं ऐमेही सत्य दम दया सौहृद ७ प्रज्ञा निल्लोभ ये सब जिस मन्दिर में मैं रहती हूँ रहते हैं पवित्रता स्वभाव भी रहते हैं व कामके बान्धव तो अप्रीति निर्दयता आदि हैं वे मेरे गृह में आनेही नहीं पाते अहिंसा सहनशीलता वृद्धि धन्यता ये सब मेरे गृहमें निवास करती हैं हे धर्मराज! ८।९ व गुरुओंकी शुश्रूषा भी व लक्ष्मीयुक्त विष्णुभगवान् का ध्यान भी मेरे गृहमें रहता है व अग्नि आदि सब देवता भी मेरे गृहमें सदा आते हैं १० मोक्ष मार्ग का प्रकाश व ज्ञानदीप भी मेरे गृहको प्रकाशित करता है इन सबों के व धर्मात्माओं व पतिव्रताओं के सङ्ग सदा मैं बसती हूँ ११ व साधु श्रोता लोग भी मेरे गृह में सदा रहते हैं इनके सङ्ग हे धर्मजी ! तुम मेरे गृहमें बसते हो व जितने

साधु स्वभाववाले तपस्वी हैं वेभा मेरेगृह में रहतेहैं व इन्हीं के संग स्वच्छन्दता से लीलापूर्वकमें आनन्द से विचराकरती हूं १२ व जगत्स्वामी वृषवाहन तीन नेत्रवाले ईश्वर भी मेरे गृह स्वरूप शरीर में पार्वतीयुक्त सदा बसते हैं वे मङ्गल करते हैं १३। १४ सो गृहरूप महादेवजी से प्रार्थनाकर संसारसे पार होऊंगी ऐसा मेरा सदन है उसको दुष्ट मदन नाशना चाहता है १५ एकसमय जो विश्वामित्र उत्तम तपकर रहेथे इतने में मतवाले कोकिलों को व कामको सङ्गले मेनकानाम अप्सरा वहां आई पर उसका कुछ वहां किया नहींहुआ गौतमकी महापतिव्रता प्यारी शुभस्त्री अहल्याको इसीदुरात्मा कामने सत्यसे चलायमानकरदिया १६। १७ व सत्य धर्म जाननेवाले बहुतसे मुनि तथा बहुतसी बेचारीपतिव्रता स्त्रियां इसदुष्टात्मा कामके अग्निसे जल गई १८ वही दुर्धरदुःसह अत्यन्त सत्यमें निष्ठुरपापी काम नित्य मुझको देखताहै सत्य कहां ठहरताहै १९ व मुझको अकेलीजान हाथोंमें धनुर्बाण लिये वीतिहोत्र नाम अपने सैनिकोंके संग मारनेके लिये आता है व पापकरनेके लिये पाखण्डकिये अपाखण्डी हम लोगों के खण्डन करने में उद्यत है व पाप बुद्धिसे पापीमदन मुझको पीड़ादेना चाहताहै इसके तेजसे जलीहुई मैं अब अन्य नथेगृहमें चलीजानीहूँ जो नवीन हो व उसमें की स्त्रियों का पति कोई महाप्रबल राजाहो पुण्यात्माकृकलका यह मंगल व कल्याणदायक गृह है जिसका सुकलानाम है उसके भस्म करने को यह दुष्ट काम उद्यत है २०। २४ व यह बलीइन्द्रभी उसी कामके साथलगा है इससे आता है कामही के संग जाने में जो दुर्दशाहुई है उसपूर्ववृत्तान्त का स्मरण नहींकरता जोकि अहल्या केसंग भोगकरने से नपुंसक होगया था पीछे बड़ी प्रार्थना करने से फिर पौरुष को पाया था वहां से काम तो प्रथमही भागखड़ाहुआ था २५। २७ इन्द्र ने दारुण दुःखभोगे थे व बड़ाभारी शाप गौतमजीने दियाथा कृकलकी प्रिया पुण्यचारिणी इस सुकला के २८ यह कामसंयुक्त इन्द्र मारनेमें उद्यतहैजैसे इन्द्र समेत काम न आवे तैसा करो २९ हे महाबुद्धिमान् ! बुद्धिमानों में श्रेष्ठ धर्मराज तव धर्म-

२२०

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

राजबोले कि तेज कम करदूंगा और कामकी नाश ३० यह एक उपाय मैंने देखा है तिसको यहां देखो यह महा बुद्धिमती के शकुन जाननेवाली रूपचारिणी है ३१ पुण्यकारी स्वामी का आगमन शकुन के प्रभाव से स्वामी के आगमन से ३२ स्वस्थ चित्त निस्संदेह हो जाय दुष्टों से नाश को प्राप्त न हो यह कह प्रज्ञा को भेजा वह सुकला के गृह को गई ३३ व ज्योतिर्विवत्पण्डित बनकर बड़ा शब्द करती हुई पहुँची तब सुकला ने बड़ा मान व पूजन धूप दीपादि से उसका किया ३४ वह ब्राह्मण का रूप तो धारण ही किये थी प्रथम विचारती थी कि हमसे कुछ सुकला पूछेगी पर जब उसने कुछ न पूछा तो आप विप्ररूप से बोली ॥

चौ० तव पति आवन वैश्य कुमारी । होइ हि गये दिवसतिन चारी ॥
स्थिरमति होहु न करहु सँदेह । सतये दिन आपन पतिलेहू ३५।३६
यह सुनि मंगल वचन पुनीता । प्रमुदित भई सुथिर करि चीता ॥
धर्म शकुन सुनि निश्चय जाना । स्वामि आगमन मन ललचाना ३७

इति श्रोपाद्ये महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने
सुकलाचरित्रे पंचाशत्तमोऽध्यायः ५६

सत्तावनवां अध्याय ॥

दो० सत्तावनये मैं मदन प्रेरित क्रीड़ा जाय ॥
सुकला कहँ लाई वनहिँ सुरपपास यह गाय १

श्रीविष्णु भगवान् राजावेन से बोले कि जब ब्राह्मण के रूप से क्रीड़ा ने सुकला के पति के आगमन की कथा कही भी पर पुरुष जानकर सुकला पतिव्रता ने विशेष कुछ न पूछा तब वहाँ से जाकर क्रीड़ा फिर एक पतिव्रता स्त्री का वेष धारण कर चारुपतिव्रता सुकला के गृह में गई व उसको आई हुई देख वह सत्य स्वरूप युक्त धन्यरूप सुकला आदर समेत बोली सुन्दर पुण्यवाक्यों से क्रीड़ा की बड़ी पूजा की तब क्रीड़ा मुसुकाकर विश्वविमोहन वचन बोली कि सखि! और तो हमारे सब अच्छा है परन्तु हमारे स्वामी कहीं विदेश को चले गये हैं १।२ वे हैं तो बड़े गुणज्ञ व प्रबल धीर विद्वान् महिमा युक्त अत्यन्त पुण्या-

त्मा परन्तु अत्यन्त पापिनी हमको छोड़कर कहीं चले गये हैं इस बात को क्रीडाने बहुत पल्लवित करके विधिपूर्वक जब सुकलासे कहा तो उसे सुनकर सुकलाने अपने शुद्ध भावसे क्रीडासे पूँछा कि हे सुन्दरि ! तुमको तुम्हारे पति क्यों छोड़ गये ३।४ उसने कहा कि छोड़ने का कारण मैं नहीं जानती मैं तो जिस २ कामकी इच्छा वे करते थे सब तुरन्त करती थी व सब पुण्य कर्म करके अपने भर्ताके वचन मानती थी व सदा उन्हींका ध्यान स्मरण किया करती थी व एकान्तमें सदा अपने गुणों से उनको प्रसन्न करती थी शुश्रूषा से सदा प्रसन्न रखती थी ५।७ यह सुन सुकलाने कहा कि हमभी कर्म मन वचनसे अपने स्वामी की सेवा यथाशक्ति सदा करती थीं आज्ञा के प्रतिकूल कभी नहीं चलीं परन्तु यह कुछ हमारे पूर्वजन्म के कर्मका बिपाक है जिससे हमारा भर्ता हम अभागिनी को छोड़ कर चला गया ८ हे सखे ! मैं अपने जीव व देहको न धारण करूंगी पति से हीन निर्धृण स्त्रियां कैसे जीवती हैं ९ रूप शृङ्गार सौभाग्य सुख संपदा महाभाग स्वामीही स्त्रियोंको शास्त्रों में कहा है १० क्रीडा यह सुन कुछ न बोली कुछ विचारने लगी व सुकलाने जो क्रीडा ने क्रीडा के अर्थ कहा उसको सत्यही माना ११ व जाना कि यह हमसे भी अधिक प्रतियूता है इससे वह पतिदेवता महाभागा सुकला उसके विश्वास में आ गई व अपने पूर्वके पति सेवा रूप कर्म क्रीडासे कहे जब सुकलाने अपने पूर्वके समाचार संक्षेपसे कहे जैसे कि उसका पति उसे छोड़ पुण्य तीर्थयात्रा करने को गया था व उसको संग नहीं ले गया था १२।१३ हे मनस्विनि ! जैसे २ उसको इन्द्रकी ओरसे दुःख मिले सत्य तप सब उसने क्रीडा से वर्णन किये व क्रीडा भी पतियूता का वेष धारण कर वहीं रहने लगी १४ एक दिन उस क्रीडा ने सुकलासे कहा कि हे सखे ! देखो एक दिव्यवन तुमको दिखावें जो दिव्यवृक्षोंसे अलंकृत रहता है १५ वहां एक तीर्थभी ऐसा पुण्यदायक है कि ब्रह्महत्यादि महापातकों का नाश करता है नानावल्ली वितानोंसे व विविध प्रकारके पुष्पोंसे शोभित रहता है १६ हे श्रेष्ठमुखवाली ! अब पुण्य के हेतु

हम तुम दोनों जनी चलें ऐसे मायारूप वचन सुन एक दिन वह सुकला क्रीडाके साथ उस वनको गई वह नन्दनवनही के समान उत्तम था सब ओरसे सुगन्धित पुष्प फूलरहे थे सैकड़ों को-किला नाद कररहीथीं १७। १८ अमर मधुर शब्दोंसे सबओरसे गारहे थे कूजतेहुये पुण्य पक्षियोंके शब्दों से वह वन मनमनारहा था १९ चन्दन आदि सुगन्धित वृक्षोंसे विराजित था सब भोगोंसे सम्पूर्ण व पापी वसन्तऋतुसे युक्तथा २० वसन्त व कामने सुकला के मोहनेके लिये बनायाथा उस क्रीडाके साथ सुकला उस सर्वभाव-न वनमें पैठी २१ जोकि सुखदायी और पुण्यकारी था हे राजन् ! उसके साथ सुकला वन देखतीभई और मायाके भावको नहीं जाना २२ फिर देव मूर्ति से प्रकाशित इन्द्रजी आये और तिसी दूती के साथ कामदेवभी तहाँ आगया २३ सब भोगोंके पतिहोकर कामलीला से युक्त इन्द्रकामसे बोले कि यह सुकला प्राप्तहै २४ हे महाभाग ! प्रहारकीजिये क्रीडा के आगेस्थितहै क्रीडाने मायाकरके तुम्हारे निकट प्राप्त कियाहै २५ अब पौरुष दिखाओ जो होतो नि-श्रयकरो यहसुन कामदेवइन्द्रसे बोला कि प्रथम तुम अपना दिव्य रूपसुकलाको दिखाओ तब हमअपने पांच दारुणबाणोंसे इसेमारेंयह सुन इन्द्रबोले कि हे मूर्ख ! वह तेरापौरुष कहाँहै जिसके बलसे तूने तीनोंलोकोंकी विडम्बनाकीथी २६। २७ अब हमारे आश्रयसे इससे युद्धकरना चाहताहै तब काम बोला कि उन देवदेव महादेव शूलीने २८ पूर्व समय में जबसे हमाराशरीर नष्टकिया है तबसे हमारे शरीरही नहीं है जब पुरुषको देखकर स्त्री इच्छा करती है तो हम फिर शरीर धारणकरके उसके शरीर में प्रवेशकरते हैं व जब पुरुष स्त्रीको देख मैथुनकी इच्छा करताहै तो उसके शरीरमें प्रवेशकरके प्रेरितकरतेहैं २९। ३० स्त्रीने पूर्वसमय जिसरूपको देखा उसके भीतर प्रवेशकरके फिर उसीरूपका स्मरण में कराताहूँ यदि पुरुषने प्रथम स्त्रीको देखा तो उसके अङ्ग २ में प्रविष्टहोकर उस स्त्रीकेरूपका स्म-रण बार २ कराताहूँ ३१ अदृष्टको आश्रयकर पुरुषको मैं उन्माद युक्त कराताहूँ तैसेही निस्संदेह नारी रूपको भी उन्माद युक्त

कराताहूँ ३२ हे इन्द्र ! स्मरणसे स्मर हमारा नाम हुआ है तिसको देखकर तैसाहीरंगवस्तुरूप आश्रय करताहूँ ३३ अपने तेजके प्रकाश से बाध्य बाधकताको प्राप्त होता है नारी रूपको आश्रयकर धीरे पुरुषको मोहित कराताहूँ ३४ पुरुषको आश्रयकर अच्छी स्त्रीको मोहित कराताहूँ हे इन्द्र ! रूपहीन मैं हूँ हमको रूपदीजिये ३५ आपके रूपको आश्रयकर तिसयथेप्सितको साधन करूंगा ॥

चौ० इभिकहिसुरपतिसों करिक्रोधा । कामप्रबलविजयीबड़योधा ॥
परमसखा ऋतुराजहि टेरा । पुष्पायुध करि निजमन हेरा ३६
कृकलबधू पातिवृत भूषित । सुकला सबविधि पापअदूषित ॥
तासुहननकी करि अभिलाषा । मदन वसन्त पाहिं यह भाषा ३७
उद्यत होहु हनत हम याके । नयन माहिं शर पञ्चक बांके ॥
यहकहि मनसिज बाणचलाये । ललकि हिये सुकलाकेछाये ३८

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनो

पाख्यानेसुकलाचरित्रेसप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ५७ ॥

अट्टावनवां अध्याय ॥

दो० अट्टावन महँ इन्द्र अरु सगण मदन लहिहारि ॥

सुकलासों निजगेहगे यहकह बहुत विचारि १

श्रीविष्णुभगवान् राजा वेनसेबोले कि वैश्यकी प्राणप्रियासुकला महापतिव्रता क्रीडाके साथ उस मायारूपवनमें प्रवेशकर सब ओर से मनोहर सघनवन देखकर उस सतीने उसी अपनीसखीसे पूँछा १ कि यह पुण्यदायक दिव्य मनोभिराम सिद्ध व सब श्रेष्ठ कामप्रवरोंसे युक्त वन किसका है हे सखे ! हमसे कहो २ इतनासुन क्रीडा बोली कि सब गुणों से युक्त पुष्पों से आकुल कामफलों से युक्त अपने स्वभाव से परिमथनशील कामने बनाया है सब ओर देखो तो कैसादिव्य है ३ ऐसावाक्य सुनकर बड़ेहर्ष से युक्तहोकर सुकलाने जो चारों ओरदेखा तो दुरात्मा कामके बड़े वृत्त देखे ४ व सब ओरसे पवन के आकर्षणसे सुगन्ध चला आताथा व वायु पुष्प गन्धकी लपटों से सनाहुआ सब ओरसे आरहा था ५ वह सुगन्ध

अपने आप सुकलाके घ्राणोंमें पैठाजाताथा वह वरांगना अपनेआप पुष्पोंकी सुगन्ध को नहींसँघती थी ६ व उन पुष्पों के रसोंको उस महापतिव्रताने न ग्रहणकिया उसमें भ्रमण तो करतीरही परन्तु कामदेव के उन सुखदायक पदार्थों से रहितरही ७ वृक्षोंके लाल २ जोपत्र कामने बनायेथे सब लज्जितहोकर भूतलपर गिरपड़े मञ्जरियोंसे पुष्प अपनेआप उसके आगे गिरे पर उसने न सूँघा ८ तिससे जीताहुआ यह लवरूप रस भूमि में गिरा फिर अत्यन्त दीनात्मा मकरंद फलसे भूमिमें गिरा ९ उन पुष्पोंकेरसों कोकेवल मक्षिका खातीथी जैसे रणमें मरा तैसेही मक्षिकासे खायाहुआ नदीके प्रवाहके साथबहताथा १० पवन मारेलज्जाके अति मन्द २ बहनेलगा तिसको पक्षी हँसने लगे सुखमानन्द निर्भर अनेकप्रकारके शब्दों से चलतेभये ११ वनके बीचमें वृक्षोंमें स्थित पक्षीलोग प्रीति से रहते भये इस प्रकार सुकलासे पराजित होकर सब नीचेहोगये १२ तब प्रीति से काम की स्त्री रतिजाकर सुकला से हँसकर बोली कि हे भद्रे ! तेरा कल्याणहो अच्छीतरह से तो आई अब प्रीतिपूर्वक इन इन्द्रके संग विहारकर १३ इन्द्र महात्माको तुम्हारा निर्मलरूप इष्ट है जो तुमको इष्टहो तो कहिये मैं निस्सन्देह लेआऊंगी १४ सूतजी बोले कि उन स्त्रियों को बतलाती हुई देखकर अच्छे वचन सुनकर बोली कि रतिको ग्रहणकर मेरा महाबुद्धिमान् स्वामी चलगया है १५ जहां मेरा स्वामी स्थित है तहां मैं भी पति संयुक्त रहूंगी तहां कामना मेरीजानेकी है इसमें मेरी प्रीति है यहदेह आश्रयरहित है १६ रति और प्रीति दोनों ये वचन सुनकर लज्जित होगये और लज्जितही दोनों जहां महाबलवान् कामथा वहां गई १७ इन्द्रकी देहमें महावीर काम आश्रित था धनुषको खींचता नेत्रको लक्ष्य और महाबलवान् था इस वीरसे रति और प्रीति दोनों बोलीं १८ कि हे महाप्राज्ञ ! यह दुर्जय है अपने पौरुष को त्यागिये पतिकी कामना वाली महाभाग्यवती और सदैव पतिव्रता है १९ तब कामदेवजी बोले कि इसको महात्मा इन्द्र का रूप देखना चाहिये हे देवि! जो देखेगी तो निस्सन्देह मैं मारूंगा २० तब इन्द्र अन्यवेष

धारणकर महारूपवान् उसके पीछे २ घूमनेलगे २१ सब भोगके पदार्थोंसे समाकीर्ण व सब आभरणोंसे भूषित दिव्यमाला दिव्य वस्त्र धारणकिये दिव्यसुगन्धित अनुलेपन लगाये २२ उस दूतीके संग वहां आकर आगे खड़ेहुये जहां वह पतिव्रता सुकलाथी व वह दूती सत्यचारिणी महाभागा सुकला से बोली २३ जैसे कि पूर्ववाली दूती प्रीतिसे बोलीथी कि हे सखि ! यहां आयेहुये इन पुरुषोत्तमको तुम क्यों नहीं जानती हो २४ यह सुन सुकला बोली कि हे भद्रे ! तुम्हारा कल्याण हो मैं अपने भर्ताके महात्मा पुत्रोंसे रक्षित हूँ किसी का मुझ को भय नहीं है २५ क्योंकि वे बड़े शूर हैं व पुरुषों का रूप धारणकिये सब ओरसे मेरी रक्षा करते रहते हैं मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ सदा अपने पति के कर्मके करने में व्यग्र रहती हूँ २६ हमारे साथ रमण करते हुये आप क्यों न लज्जित होंगे २७ मरणसे भी निर्भय आप कौन आये हैं तब इन्द्र बोले कि वनके मध्यमें प्राप्त तुमको इस प्रकार देखती हैं २८ तुमने शूरस्वामी के पुत्र कहे हैं कैसे हम देखें हमारे आगे दिखाइये २९ तब सुकला बोली कि अपने सब वर्ग के स्वामी भावमें प्रवेश कराकर धृति बुद्धि गति मति इनसे सत्य को संन्यास कराय अचल सब धर्म वाला नित्य युक्त महात्मा मदन बलसहित धर्मात्मा सदैव मेरी रक्षा करते हैं ३० हमको दमगुण पवित्रता से धर्म सदैव इस प्रकार रक्षा करता है जितनी देर मैं नेत्र फड़कता है उतना भी अवकाश मुझे नहीं है व न हमको अवकाश है देखो हमारे आगे सत्य खड़ा है व शांति क्षमा भी खड़ी है महाबलवान् ज्ञान भी खड़ा है व बड़ा भारी यश भी हमारे सम्मुख खड़ा है व हमारी सदा रक्षा करता है व दृढ़ बन्धनों से हम को ऐसे बांधे हैं कि किसी ओरको मुख नहीं कर सकती इसके विशेष हम अपने गुणों से भी नित्य रक्षित हैं ३१ व सत्यादिक सब सदा हमारी रक्षा किया करते हैं व धर्म बुद्धि दम पराक्रमादि सबके सब रक्षा करते रहते हैं ३२ जब इतने हमारी रक्षा करते हैं तो क्या हमारी बलसे प्रार्थना करती है ३३ आप कौन हैं जो निर्भय होकर दूतीके साथ आये हैं सत्य धर्म पुण्य ज्ञानादिक बड़े प्रबल रक्षक हैं व ये सब हमारे

२२६

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

पतिकी आज्ञासे सदा हमारी रक्षाकरते हैं ३४ व दम शान्ति में परायण हम अपने आपभी रक्षितरहती हैं हमको जीतने को साक्षात् इन्द्रभी समर्थ नहीं हैं ३५ व यदि रूपधारणकरके काम भी आवेगा तो वह भी न जीतसकेगा क्योंकि हम सत्यादिकोंसे सदा रक्षित रहती हैं ३६ इससे काम के बाण निरर्थकहोंगे इसमें कुछभी संशय नहीं है यहां से भागजा नहीं तो धर्मादिक महाभट तुझीको मारडालेंगे ३७ दूरहो भागजा यहां इस समय न खड़ी हो व जो रोंकने परभी खड़ी रहेगी तौ भस्म होजायगी ३८ क्योंकि विना हमारेपति और किसी पुरुष में ऐसी शक्ति नहीं है जो हमारारूप देखसके जैसे अग्नि काष्ठ भक्षण करता है वैसेही वह हमारा भक्ष्य होजायगा इस में संदेह नहीं है ३९ ऐसा सुनकर इन्द्रने कामकी ओर देखकर कहा कि इस का पौरुषदेखो अब अपने पौरुषोंसे इस के संग युद्धकरो ४० यह कहकर इन्द्रादिक जैसे आये थे वैसेही अपने २ स्थानों को चलेगये शाप के भयसे आतुरहुये कि ऐसा न हो कि चलेजाने पर भी शापदे ४१ जब सब चलेगये तो महापतिव्रता सुकला पतिके ध्यानसे पुण्यसंयुक्त अपने गृहको आई ४२ ॥ चौ० सर्व्वतीर्थमयसबमुखदाई । पुण्ययज्ञमयस्वगृहसुहाई ॥

सुकला पातिव्रत परनारी । महीपाल निज गेह पधारी ४३

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाष नुवादेवेनोपाख्याने
सुकलाचरित्रेऽष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ५८ ॥

उनसठवां अध्याय ॥

दो० उनसठमहैं मगकल सों बिन भाग्यके धर्म ॥

सफलहोतनहिं यहकहा धर्म अपर नहिंकर्म १

श्रीविष्णुभगवान् राजवेन से बोले कि इतनेमें कृकलवैश्य सब तीर्थोंकी यात्राकर अपने गृहको चला व सब साथियों समेत बड़े आनन्द से आताथा १ मार्गमें चिन्तना करता था कि संसार मेरा सफल हुआ अब मेरे पितर तृप्त होकर स्वर्गको जायेंगे इसमें सं-

शय नहीं है २ तबतक धर्म उसके पितामहोंको बांधकर प्रत्यक्ष उस के आगे आन खड़ा हुआ व आगेसे बोला कि तेरा उत्तम पुण्य नहीं है ३ दिव्यरूप धारण कियेहुये बड़ी देहयुक्त होकर कृकलसे बोला कि तुमको तीर्थफल नहीं है वृथा परिश्रम किया है ४ अपने आप सन्तोष कररह तेरा उत्तमपुण्य नहीं है ऐसा सुनकर कृकलवैश्य अतिदुःख से पीड़ित हुआ ५ व बोला कि आप कौन हैं जो मुझसे ऐसा कहते हैं किस कारण से पितामहों को बांधा है व किस दोषके प्रभावसे इसका कारण हमसे कहिये ६ कैसे तीर्थका फल नहीं है वहमारी यात्रा कैसे सफल नहीं है सब हमसे कहो यदि इसका फल जानतेहो ७ तब धर्म बोले कि जो कोई पवित्र अत्यन्त पुण्यकारिणी अपनी भार्या को छोड़कर तीर्थयात्रादि धर्म करनेजाता है उस के पुण्यका सब फल वृथा होजाता है इसमें संशय नहीं है ८ धर्माचारमें पर पुण्यरूप साधुव्रत में परायण पतिव्रतमें रत सुगुणवती व पुण्य के ऊपर वत्सल अपनी भार्याका परित्याग करके जो कोई धर्म कार्य करनेजाते हैं उनका कियाहुआ धर्म सब वृथा होजाता है इसमें संशय नहीं है ९ । १० सब आचारों में पर भव्यरूप धर्म साधन में तत्पर अतिशय पतिव्रता व सर्वदा ज्ञानमें तत्पर ११ इस प्रकार के गुणोंसे युक्त जिसकी महापुण्य पतिव्रता भार्या होती है उसके गृहमें महा पराक्रमी देवगण सदा ठिके रहते हैं १२ व गृह के मध्यमें ठिकेहुये उसके पितरलोग उसका कल्याण चाहते हैं गंगादि पुण्य नदियां व सब सागर भी उसके गृहमें रहते हैं इसमें अन्यथा नहीं है १३ जिसके गृहमें पुण्यमें तत्पर पतिव्रता स्त्री होती है उसके गृहमें सब यज्ञ धेनु व ऋषिलोग रहते हैं इसमें अन्यथा नहीं है १४ वहीं विविध प्रकारके पुण्यकारी सब तीर्थ रहते हैं भार्या के योगसे ये सब वहां स्थित रहते हैं इसमें अन्यथा नहीं है १५ पुण्यरूप भार्याही होने से उत्तम गृहस्थी का धर्म होता है व गृहस्थाश्रम से श्रेष्ठ कोई धर्म भूतल पर नहीं है १६ गृहस्थका गृहही पुण्य सत्यपुण्ययुक्त होता है हे वैश्य ! गृहस्थका घर सर्व तीर्थमय व सर्व देवमय होता है १७ क्योंकि गृहस्थाश्रम के अश्रित

होकर सब जन्तु जीते हैं इससे गृहस्थाश्रम के समान अन्य आश्रम हम नहीं देखते १८ जिस पुरुष के घर में मंत्र अग्निहोत्र देवताओं की पूजा होती सब सनातन धर्म दान आचार वर्तमान रहते हैं १९ इस प्रकार जो भार्यासे हीन होता है तिसका घर वन समान है यज्ञ और अनेक प्रकारके दान नहीं सिद्ध होते हैं २० स्त्री हीन पुरुषके महाव्रत सब पुण्यकारी अनेक प्रकार के धर्म कर्म सिद्ध नहीं होते हैं २१ धर्मसाधन के हेतु भार्या के समान तीर्थ नहीं है इसको तुम सुनो गृहस्थका तीनों लोकमें और धर्म नहीं है २२ पुरुषके जहां स्त्री है वहीं घर है अन्यथा नहीं है गांव अथवा वन में सब धर्मका साधन होता है २३ भार्याके समान कोई तीर्थ नहीं है न भार्या के समान कोई सुख ही है न भार्याके समान कोई पुण्य ही तारने के लिये बहिरके लिये है २४ हे नराधम ! सो धर्मयुक्त पतिव्रता अपनी भार्याको छोड़ कर और धर्म युक्त घरको छोड़कर तीर्थयात्राको जाता है तेरे धर्म कारुण्य कहां है २५ क्योंकि स्त्री विना जो तीर्थ श्राद्ध दान तूने किया उसदोष से तेरे पूर्वज पितामह बंधुआ हैं २६ तुम चोरहो जिसने विना स्त्रीके श्राद्ध दानादिकिये वे चोर हैं जिन्होंने तुम्हारे हाथ कादिया लिया व खाया तुमने विना अपनी स्त्रीके जो अन्न श्राद्धमें दिया उसका कुछ भी पुण्य नहीं हुआ २७ क्योंकि पुत्र वह है जो श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करे व भार्याके हाथ के बनाये हुये पिण्डलेकर दान करे ऐसा करनेसे जो पुण्य होता है उसका फल कहते हैं २८ अमृतके पानसे जैसे मनुष्योंको तृप्ति होती है तैसे पितरों को श्राद्ध से होती है हम सत्य सत्य कहते हैं २९ क्योंकि गृहस्थीके सब धर्मोंकी स्वामिनी भार्या होती है सो हे मूढ़ ! तूने उससे छलकरके चोरीसे तीर्थ यात्राकी इससे तेरा किया हुआ सब वृथा हुआ ३० ये तेरे पितामह भी चोर हुये जिन्होंने विना स्त्रीके सङ्ग दिये हुयेको ग्रहण किया क्योंकि भार्याके हाथके पकाये हुये अन्न अमृतोपम हैं ३१ क्योंकि उनको पितर हर्षित मन से भोजन करते हैं उसीसे तृप्त होते हैं व सन्तुष्ट भी होते हैं ३२ इससे विना भार्याके पुरुषका धर्म नहीं सिद्ध होता ॥ चौ० भार्यासम नहीं तीर्थ कोई । सङ्गतिदायि पुरुष कहँ होई ॥

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० । २२६
भार्या बिनकर पुण्यबहुता । विफल होय सब नहिं मजबूता ३३।३४

इति श्रीराज्ञेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखंडेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रेएकोनषष्टितमोऽध्यायः ५६ ॥

साठवां अध्याय ॥

दो० सठयें के महँ कृकलसह सुकला कीनशराध ॥

तासों ब्रह्मादिक मुदित वर दै हरे पराध १

यह सुनकर कृकलवैश्य धर्मजीसे बोला कि मेरी सिद्धि कैसे हो
व मेरे पितरोंकी मुक्ति कैसे हो हे धर्मराज ! वह विस्तारपूर्वक हम
से इसी समय कहो १ धर्मजी बोले कि हे महाभाग ! गृहको जाओ तुम्हारे
बिना तुम्हारी भार्या बहुत दुःखित है इससे धर्मचारिणी अपनी
पत्नी को जाकर संबोधन करो २ व गृहमें जाकर उसीके हाथ से पा-
यस व पिंड बनवाकर श्राद्ध दान करो व पुण्यतीर्थों का स्मरण करके
उत्तम देवताओं की पूजा करो ३ तब तीर्थयात्रा करने की तुम्हारी
सिद्धि होगी क्योंकि बिना भार्याके जो कोई धर्म करना चाहता है ४
वह गृहस्थाश्रम को लोपकर अकेले वनको जावे संसार में उसका
किया विफल होता है उसको देवता नहीं मानते हैं ५ व जब गृहस्थ
अपनी गृहिणी के संग यज्ञ करता है तो उसके सब यज्ञ सिद्ध होते
हैं व अकेले धर्म अर्थ साधन के लिये समर्थ नहीं होता है ६ विष्णु
जी बोले ऐसा कहकर धर्म जैसे आये थे वैसे ही चले गये व धर्मा-
त्मा कृकल भी अपने गृहको चला ७ व अपने घरमें पहुँचकर उस
बुद्धिमान् ने अपनी पतिव्रता स्त्री को देखा व उसने भी पतिके संग
जो भारवाहक गया था उसके कहने से जाना कि हमारा स्वामी
आया ८ तब उस स्त्रीने धर्मके जाननेवाले स्वामीको देखकर स्वामी
के आने में पुण्यकारी मंगलाचार किया ९ फिर धर्मात्मा ने धर्मका
विचेष्टित कहा तब महा भाग्यवती ने आनन्द देनेवाले स्वामी के
वचन सुने १० और धर्मवाक्यकी प्रशंसा की व मान किया विष्णुजी
बोले कि पहुँचने के पीछे उस कृकल वैश्यने अतिपुण्यदायक ११

श्राद्ध देवपूजा के गृह में स्थित होकर उस पतिव्रता भार्या के संग किया तब पितर देव व गन्धर्व विमानों पर चढ़कर आये १२ व मुनिलोग भी आये सबके सब उन दोनों महात्मा स्त्री पुरुषोंसे बोले उनमें हम व ब्रह्मा और पार्वतीसहित महादेव १३ सब देव गन्ध-
 र्वादि इस तुम्हारी स्त्रीके सत्य से बहुत संतुष्टहुये व फिर सब देव-
 गण महात्मा व धर्मज्ञ सत्य पण्डित उन दोनों स्त्री पुरुषों से बोले
 भी कि १४।१५ हे सुव्रत!स्त्री समेत तुम्हारा कल्याण हो वरमांगो तब
 कृकल बोले कि हे सुरोत्तमो ! किमके पुण्य के प्रसंग से वा तपस्या
 से १६ आपलोग स्त्री समेत हमको वरदेने के लिये आये हैं तब
 इन्द्र बोले यह चारुमंगलरूप पतिव्रता महाभाग्यवती सुकलाहै १७
 इसके सत्यसे हमलोग संतुष्ट होकर वरदेने के लिये आये हैं जो
 चाहो वरमांगो संक्षेप से पूर्वका वृत्तान्त कहा है १८ जब अपनी
 भार्याके पतिव्रतादि धर्मयुक्त माहात्म्य देवताओं के मुखोंसे सुना
 तो भर्ता अत्यन्त हर्षितहुआ व उसके संग वह धर्मात्मा अति
 प्रसन्नहो व प्रेमके मारे व्याकुल नेत्र होगया १९ व बार बार
 उन दोनोंने उन देवताओंके दण्डवत् प्रणाम किया व कहा कि हे
 महाभागो ! जो सनातन आप तीनों देवदेव प्रसन्नहुये हों २० व
 अन्य देवता व ऋषिलोगभी प्रसन्न हुयेहों तो मेरे ऊपर कृपा क-
 रके यह वरदे कि जन्म २ हम दोनों देवताओं की भक्तिही किया
 करें २१ व आप लोगोंके प्रसादसे धर्म व सत्यमें हमारी प्रीति हो
 पीछे स्त्री और पितामहों सहित हम श्रीवैष्णवलोकको जायँ वस हे
 देवदेव ! यदि हमारे ऊपर सन्तुष्टहुये हो तो यही वरदेवो और कुछ
 हमको न चाहिये तब सब ब्रह्मादि देवदेवेश बोले कि ऐसाही हो
 हे महाभाग ! जो २ चाहतेहो सबहोगा २२।२३ फिर उन दोनोंके
 ऊपर सब देवताओंने फूलोंकी वर्षाकी गीतके तत्त्वके जानने वाले
 गन्धर्वों ने महापुण्यकारी ललित सुन्दर स्वर से गीतगाये अप्स-
 राओंने नाचकिया फिर गन्धर्वों समेत देवता अपने २ स्थानोंको
 २४।२५ वर देकर उस पतिव्रता सुकलाकी स्तुति करतेहुये चलेगये
 हे महाराज ! तुमने पूछा था कि भला स्त्री कैसे तीर्थहोती है सो

नारी तीर्थ इस प्रकारसे होती है हमने कहा अब और क्या पूछते हो वह भी कहें २६ ॥

चौ० यह तुमसनहमभूप बखाना । पुण्याख्यान पुनीत पुराणा ॥
जो यहि सुनत भूप सो प्रानी । छूटत अधगण सों हमभानी २७
श्रद्धा सों सुकला की गाथा । जो नारी सुनि नावे माथा ॥
सो सौभाग्य पौत्र सुत पावै । सत्य लहै निजपति मनभावै २८
धन अरु धान्य मोदयुत लहई । पति सँग सुखसों नित्य विहरई ॥
जन्म जन्म पातिव्रत धर्मा । पावै भावै स्वाभिसुकर्मा २९
ब्राह्मण पढ़े वेदविद होई । क्षत्रिय पढ़ि विजयी नहिं गोई ॥
वैश्य पढ़े धन धान्य समेता । होय न संशय गुनहु सचेता ३०
शूद्रपढ़े करि आदर जोई । सुख सुत धन युतसों नितहोई ॥
अरु सब साधारण नरनारी । यहि पढ़िहोत धर्म अधिकारी ३१
सदाचार युत सदा सुखारी । विपुल धान्यधन रमा विहारी ॥
धर्म कर्मकारक अघ हीना । होत वंश महँ अतिहि प्रवीना ३२

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्विर्तायेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

सुकलाचरित्रेषष्ठितमोऽध्यायः ६० ॥

इकसठवां अध्याय ॥

दो० इकसठयें महँ सुत तिरथ सूचन हित कह गाथ ॥

कुण्डलसुत पितृ भक्ति अरु पिप्पल तप यकसाथ १

यह इतिहास सुनकर राजावेन श्री विष्णुभगवान् से बोले कि सब तीर्थोंसे उत्तमोत्तम भार्यातीर्थ आपने कहा अब पुत्रोंके तारनेमें श्रेष्ठ पितृतीर्थ हमसे कहिये १ श्री भगवान्जी बोले कि महा क्षेत्र कुरुक्षेत्र में एक महाप्राज्ञ कुण्डलनाम ब्राह्मण अपनी भार्या समेत रहते थे कुण्डल महात्मा का सुकर्मानाम सज्जन पुत्रहुआ २ पिता माता धर्म के जाननेवाले शास्त्र में निपुण महात्मा थे वे अति वृद्ध होने के कारण दोनों प्राणी पीड़ित रहते थे ३ परन्तु उनदोनों की सेवा बड़ी भक्ति व कृपा से उनका पुत्र करताथा जो कि बड़ा धर्मज्ञ व भावनायुक्त था वह रात्रिदिन माता पिताकी शुश्रूषा छोड़

कुछ अन्यकार्य करताही न था ४ व उसी अपने पिताही से उसने चारोवेद व अनेक शास्त्र पढ़े थे इससे आचारमें तत्पर चतुर धर्मज्ञ व ज्ञानमें वत्सल था ५ माता पिताके चरणादि सब अंग अपनेही हाथों से चापे पाद भी प्रक्षालन करे स्नान भोजनकी सब क्रिया अपनेही हाथों से ६ बड़ी भक्तिसे करे व उनके स्वभाव के अनुकूल सब कर्म करतारहै यहांतक कि सेवा करते २ तन्मय होगया हे राजेन्द्र ! ध्यानदेकर माता पिताकी ऐसी शुश्रूषा उसनेकी ७ सतजी इसी कथा को शौनकादिकों से कहते थे इससे बोले कि उन्हींदिनों में महात्मा कश्यपजी के कुलमें एक पिप्पलनाम विप्र था ८ वह मत्सर व आत्मा को जीतकर निराहार तप करताथा दया और दान युक्तथा इंद्रियोंको दमन करलियाथा व काम क्रोधसे रहित होकर ९ शांतिमें परायण व ज्ञान ध्यानमें तत्पर वह ब्राह्मण दशारण्य देश को गया वहां सब इन्द्रियों को जीतकर मनसहित सबों को अपने वशमें करलिया और तपस्या करतारहा १० तिनके तपके प्रभावसे सुन्दर युगमें लड़ाई छोड़कर प्राणी सगेभाइयों के समान बसते थे ११ मुनिलोग तिसकी तपस्या देखकर विस्मयकरते भये कि किसीने ऐसातप नहीं किया जैसा इसमुनिने किया १२ इन्द्रादिक देवता बड़े विस्मय को प्राप्त हुये इसकी तपस्या बड़ी तीव्र शम इन्द्रिय संयम १३ निर्विकार उद्वेगहीन काम क्रोधरहित शीत वात घाम को सहता पर्वतकी नाई स्थित था १४ विषयमें विमुख धीर मनसे अतीत संग्रहथा जब वह द्विजसत्तम किसीका शब्द सुनता १५ तो उसस्थान को छोड़ अन्यत्र चलाजाता व वहां एकाग्रमनकरके ब्रह्मके ध्यान में मग्न होजाता इससे उसका कमल समानमुख सदा आनन्दयुक्त रहता १६ यहांतक कि सुस्थिरहो ध्यान करते २ वह धर्मवत्सल पत्थर व काष्ठके समान होगया चेष्टारहित पहाड़की नाई स्थित भया तपस्या से क्लेशयुक्त शरीर अत्यन्त श्रद्धावान् निन्दारहित था इसप्रकार का धर्म व ध्यान करते २ उसको सहस्रवर्ष बीतगये १७। १८ इससे च्युँटियों ने उसके ऊपर बामी व व्यमौर लगाई १९ उसी बामी के बीचमें बैठाहुआ वह पिप्पल जड़की नाई स्थित

होकर बड़ा तप करतारहा २० व उसके ऊपरसे कालेसर्प सब ओर से लपटगये और पिप्पल को काटते भये परन्तु उस उग्रतपस्वी के अङ्गों में अतिउल्वण सर्पों का विष प्रवेश न करसका न उसके सु-कुमार अंगोंको भेदनही करसका तिस ब्राह्मणके तेजसे सर्प शांति को प्राप्तहोजातेभये २१।२२ व उसके शरीरसे प्रकाशित तेजसेयुक्त बहुत ज्वाला निकलने लगीं जैसे कि अग्नि से लपकें निकलती हैं वैसेही उस तपस्वी के अंगों से जैसे इन्धनों के बीचमें प्रवेशकरके अग्नि प्रकाशित होताहै और जैसे मेघोंके बीचमें प्रवेशकर किरणों से सूर्यप्रकाशित होताहै २३।२४ वैसेही वह ब्राह्मण बायीके बीचमें तेजसे प्रज्वलित होताथा सर्पलोग बड़े क्रोधसे अपने विषारीदांतों से काटते थे २५ परन्तु उस विप्रके शरीर के चर्म को नहीं छेद सकते थे हे राजेन्द्र ! इसप्रकार तप करते २ सहस्रवर्ष बीतगये व वह महात्मा मुनि वैसेही त्रिकाल बराबर तप करतारहा शीत घाम व वर्षा अपने ऊपर सहतारहा २६ व उस महात्मा ने वायु भक्षण के विशेष और कुछ नहीं भक्षण किया २७।२८ तीनसहस्र वर्षतक वायु भक्षण किये तप करतारहा तब देवताओंने उसके शिरपर पुष्पों की वर्षाकी २९ व कहा कि हे महाभाग ! तुम ब्रह्मज्ञहो व धर्मज्ञहो इस में कुछ सन्देह नहीं है व सर्वज्ञानमयहो सो अपनेही कर्म से तुम ऐसे हुयेहो ३० इसलिये जो २ मनोरथ तुम चाहतेहो सब तुमको प्राप्तहोंगे अन्यथा नहीं कहते व सब काममयी सिद्धि तुमको अपने आप होगी ३१ जब पिप्पल महात्मा ने ऐसे वचन सुना तो भक्ति से मस्तक झुँकाकर सब देवताओं के प्रणामकर ३२ बड़े हर्षसे युक्त होकर देवताओंसे यह वचन बोला कि यह सब विश्व हमारे वशमें जैसे होजाय ३३ हे देवेन्द्रो ! ऐसा आपकरें व हमको सब विद्या आजायें हे नृपोत्तम ! ऐसा कहकर वह मेधावी विश्रामकररहा ३४ देवताओं ने कहा सब ऐसाही होगा जैसा तुम चाहतेहो इसप्रकारका वरदेकर देव सब चलेगये ३५ उन विप्रोंके जानेके पीछे श्रेष्ठ ब्राह्मण पिप्पल नित्यही ब्रह्मण्य साधनकर संसार वश करने की चिन्तना करते भये ३६ तबसे लेकर श्रेष्ठ ब्राह्मण पिप्पल विद्याधर के पदको प्राप्त

होकर जहां चाहें तहां जासकेभये इस प्रकार वह पिप्पल विद्याधर होगया इसलिये देवलोकों का ईशहो सर्व शास्त्रों में विशारद होगया ३७। ३८ एक समय महातेजस्वी उस पिप्पलविप्रने अपने मनसे यह चिन्तना की कि हमको देवताओंके वर देनेसे जो अवश्य भी थे सब हमारे वश्य होगये ३९ अब इसकी परीक्षा भी कर लेनी चाहिये ऐसा विचारकर जिस २ को चिन्तना की उसको अपने वशमें कर लिया ४० ऐसा होनेसे जो उसके मनमें संकल्प विकल्प था सब जातारहा व उसने विचारा कि अब लोकमें हमारे समान और दूसरा पुरुष कोई नहीं है ४१ सूत शौनकादिकों से बोले कि जब महात्मा पिप्पलने अपने मनमें ऐसी कल्पना की तो उसके मनका भाव जानकर एक सारसपक्षी तालाब के किनारे अच्छेस्वर से पिप्पलसे बोला ४२ । ४३ कि इस प्रकार क्यों अभिमान करते हो सबके वशकी आत्मा की सिद्धि हम नहीं मानते ४४ वश्यावश्य इस अर्वाचीनकर्म पराचीन को तुम नहीं जानते हो हे पिप्पल ! तुम मूढ़ बुद्धिहो ४५ तुमने तीन सहस्र वर्ष तपस्या की है तिसीसे व्यर्थ अभिमान करते हो ४६ कुण्डल का धीर बुद्धिमान् सुकर्मा नाम जो पुत्र हुआ तिसके सबसंसार वश होगया सो इस समय सुनिये ४७ अर्वाचीन पराचीन को वही बुद्धिमान् जानता है हे पिप्पल ! संसार में तिसके समान ज्ञानी नहीं है ४८ कुण्डल के पुत्र सुकर्माके सदृश तुम नहीं हो उसने न तो दान दिया न ज्ञानकी परिचिन्ता कभी की ४९ न होम यज्ञादि कोई कर्म किया न किसी तीर्थयात्राके लिये गयान अग्निकी उपासना की ५० व हे विप्र ! न कभी उसने उत्तम धर्म सेवन किया सदा स्वच्छन्दचारी बनारहा व ज्ञानात्मा भी बना रहा परन्तु पिता माता की सेवा सदैव की ५१ वेदाध्ययन किया सब शास्त्रके अर्थको जाना इससे हमारे मतसे जिस प्रकार उस सुकर्मा नाम बालक के ज्ञान है ५२ वैसा ज्ञान तुम्हारे नहीं है वृथा क्यों अहंकार करते हो यह सुन पिप्पलब्राह्मण उससारससे बोला कि आप कौन हैं जो पक्षीकारूप धारणकर हमारी ऐसी निन्दा करते हैं ५३ हमारे ज्ञानकी क्यों निन्दा करते हो बताओ तो पराचीन ज्ञान कैसा

हैं सो हमसे विस्तार से कहो वयह भी कि तुमको इस बातका ज्ञान कैसे हुआ ५४ अब अवर्षाचीन व पराचीन की सब गति हमसे विस्तारपूर्वक कहो व हे पक्षिश्रेष्ठ ! तुम ज्ञानपूर्वक समझाकर हमसे कहो ५५ व हे पक्षिराज ! तुम ब्रह्मा किंवा विष्णु अथवा रुद्र तो नहीं हो तब वह सारस पक्षी बोला न तुम्हारे तपका भावही है न उस बालक के समान तपका फलही तुम में है ५६ जो तुमने इतना तप किया है उसका समाचार सुनो कुण्डल के पुत्र उस बालक में जैसा गुण है ५७ वैसा तुम्हारे ज्ञान नहीं है और तिस पदको नहीं जाना व हे द्विजोत्तम ! उसी बालकसे जाकर हमारा रूपभी पूछलेना ५८ वह धर्म्मार्त्मा सब ज्ञानसे कहदेगा ॥

चौ० इमिलुनिसारसवचनरसाला । जोसबभांतिपुनीतविशाला ॥

पिप्पलगयहुदशारणदेशाः सुनिखगवरकरपरमनिदेशा ५६।६०

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादे

वेनोपाख्यानैकषष्टितमोऽध्यायः ६१ ॥

बासठवां अध्याय ॥

दो० बासठयेंमहँ पिप्पलहु गयहु सुकर्म्मातीर ॥

तिनभाषीपितृमातृकी भक्तिमहाव्रतधीर १

विष्णु भगवान् राजा वेन से बोले कि हे नृपोत्तम ! कुण्डल के सत्य धर्म्मोंसे समाकुल आश्रमको व महाभक्तिसे अन्वित शान्त सर्व्व पिप्पल गये तब सुकर्म्माको देला कि पिता माताकी सेवा करते १ सत्य पराक्रमी महारूप महातेज महाज्ञान से युक्त २ माता पिता के चरणोंके पास बैठे ज्ञाननिधि ३ कुण्डलके पुत्र सुकर्म्मा महात्मा हैं पिप्पलनाम विप्र वहां आये व उनको आयेहुये देखकर सुकर्म्माने आसनसे उठकर द्वारही पर जाकर अतिवेग से उनका अभ्युत्थान किया व कहा कि हे महानते ! हे महाभाग विद्याधर ! यहां आओ ४।५ यह कह आसनपाद्य अर्घ्य आचमनीय सब उनको दिया व फिर कहा कि हे महाप्राज्ञ ! निर्विघ्न तो हो व कुशल तो विद्यमान है व निरामय तो है और यहभी कहा कि हे पिप्पल ! जिस

कारण से तुम्हारा आगमन यहां हुआ वह सब हम तुमसे कहते हैं
 ७ तीन सहस्र वर्षतक जब तुमने तप किया तो हे महाभाग ! तुमने
 देवताओं से वरपाया ८ वश्यत्वभी तुमने पाया और यथेच्छगमन
 भी पाया इससे तुम मत्तहोगये अपनेको न जाननेसे बड़ा भारी
 गर्व तुमने किया ९ तब तुम्हारा सब चेष्टित एक महात्मा सारस
 ने देखकर मेरानाम तुमसे कहा कि उसमें उत्तमज्ञान है १० तब पि-
 प्पलजी बोले कि नदी के तीरपर जिस सारसने हम से तुमको सब
 ज्ञानमय बताया है प्रथम बताइये वह कौन है ११ यह सुन सुकर्मा
 विप्र बोले कि नदीके किनारे आपसे जिन्होंने वार्त्तालाप किया है
 उनको तुम महात्मा परमेश्वर ब्रह्माजी जानो १२ और क्या पूछते
 हो कहो वह भी तुमसे कहेंगे विष्णुजी बोले ऐसा कहकर धर्मात्मा सु-
 कर्माजी विराम कर रहे १३ तब पिप्पलजी फिर बोले कि हमने
 भूतलपर सुना है कि सब संसार तुम्हारे वशमें है सो हे विप्र ! यह
 कौतुक हमको यत्नसे दिखाओ १४ तब धर्मात्मा सुकर्मा पिप्पल
 जीसे बोले कि सब जगत् हमारे वश्यावश्यहोनेका कारण देखो
 १५ इन्द्रादि लोकपाल व अग्निआदि सब देवगण व विद्याधरा-
 दिकं सब हमारे बुलाने पर आते हैं फिर विसर्जन करने से चले
 जाते हैं इतना कहते ही इन्द्रादि देवगण वहां आये व महात्मा
 सुकर्माजी से बोले १६ । १७ कि किसलिये आपने हमलोगों का
 स्मरण किया है हे विप्र ! इसका कारण कहो तब सुकर्माजी बोले कि
 ये पिप्पलनाम विद्याधर यहां आये हैं १८ इन्होंने हमसे कहा कि विप्र
 तुम्हारे वशमें सब विश्व है सो हमने इन महात्माके विश्वासके लिये
 आपलोगोंको बुलाया है १९ अब अपने २ स्थानों को जाओ यह
 देवताओंसे सुकर्माने कहा तब सब देवगण महात्मा सुकर्मासे
 बोले २० कि हे विप्र ! व हे विद्याधर ! हमलोगोंका दर्शन सफल
 होता है इससे जो तुम्हारे मनको रुचता हो वह वर मांगो तुम्हारा
 कल्याण हो २१ वह तुमको देंगे इसमें सन्देह नहीं है यह सुरोत्तमों
 ने कहा तब भक्ति से देवताओं के प्रणामकर उन द्विजोत्तमने वर
 मांगा कि हे देवेन्द्रो ! माता पिता के चरणों में हमको अचल भक्ति

देवों बस यही उत्तम वर आप लोगों से मांगते हैं २२।२३ व हमारे पिता वैष्णव लोक को जायँ एक यह उत्तम वर दो व ऐसे ही माता जी भी उसी लोक को जायँ बस और कुछ भी वर नहीं चाहते २४ तब देवगण बोले कि हे विप्रेन्द्र ! पिता के भक्त तो तुम हो उसी तुम्हारी पितृभक्ति से हम लोग सदा तुम्हारे ऊपर प्रीतियुक्त रहते हैं २५ हे महाराज ! ऐसा कहकर सब इन्द्रादि देव अपने लोक को चले गये इस रीति से सुकर्माजी ने सब अपना ऐश्वर्य पिप्पल को दिखा दिया २६ व पिप्पल ने भी महाअद्भुत कौतुक देखा तब सुकर्माजी पिप्पल कुण्डल के पुत्र सुकर्मा से बोले कि २७ अर्वाचीन व पराचीन रूप कैसे होते हैं हे कहने वालों में श्रेष्ठ ! दोनों का प्रभाव हम से कहो २८ तब सुकर्माजी बोले कि अब पराचीन रूप का चिह्न तुम से कहते हैं जिससे इन्द्रादि सब देव व चराचर विश्व प्रमोहित हो रहा है २९ व जो सब विश्व में व्यापक प्रभु सब में प्राप्त संसार का स्वामी है उसका रूप किसी योगी ने भी नहीं देखा ३० वेद कहता है कि ऐसा है पर उसको भी कहने की शक्ति नहीं है इससे नहीं कह सकता क्योंकि वह पदहीन कररहित नासिकाहीन अकर्ण व मुखवर्जित है ३१ परन्तु तीनों लोकों के रहने वालों के सब कर्म क्षण क्षण के किये हुये देखता रहता है व उन लोगों के कहे हुये व अन्तःकरण के सब वचन अच्छी तरह बिना कान के सुन लेता है ३२ है गतिहीन पर सब कहीं चला जाता है व उसका कुछ रूप नहीं है पर सर्वत्र दिखाई देता है हाथ उसके नहीं पर सब पदार्थों को अच्छे प्रकार ग्रहण करता है व पादहीन है पर अतिवेग से दौड़ता है ३३ व हे विप्र ! वह सब कहीं दिखाई देता है व बिना पैरों से सब कहीं पहुँचता है व जिसको सब देवेन्द्र तथा तत्त्वदर्शी मुनिलोग भी नहीं देखते ३४ व वह उन सबों को देखता है व्यापक विमलसिद्ध सिद्धि के देने वाले सब के नायक को ३५ महायोगी धर्म अर्थ के जानने वाले तेजोमूर्ति व्यासजी जानते हैं आकाश एकवर्ण अनन्त ३६ सो यह निर्मलरूप निरिक्त श्रुति कहती है व्यासजी और मार्कण्डेयजी तिस पद को जानते हैं ३७ अब अर्वाचीन को कहते हैं एकाग्र

मन होकर सुनो जब भूतात्मा संहारकर अकेलेही रहे ३८ जलमें शेषजी के ऊपर शय्याबनाकर बहुतकाल जनार्दनजी सोये ३९ तब जलके अन्धकार से तपेहुये योगी महामुनि मार्कण्डेयजी स्थानकी इच्छाकर घूमनेसे कष्टयुक्तहो ४० घूमते २ शेषकी शय्यापर सोतेहुये करोड़ सूर्यों के समान प्रकाशित सुन्दर आभरणों से भूषित ४१ दिव्यमाला और वस्त्रधारे सब व्यापियों के ईश्वर योगनिद्रामें प्राप्त मनोहर शङ्ख चक्र गदा धारण किये दिखलाई पड़े ४२ और महाभाग्यवती काले अञ्जनके समान काली डाढ़ों से कराल मुखवाली भयानकरूपयुक्त एकस्त्री भी दिखाईदी ४३ तब उस स्त्रीने महामुनि मुनिश्रेष्ठजी से कहा कि मत डरो फिर पांच योजन के विस्तारवाले कमलपत्र में ४४ महादेवी ने मार्कण्डेयजी को बैठाला और कहा कि केशवजी सोते हैं अब तुमको डर नहीं है ४५ तब योगियों में श्रेष्ठ मार्कण्डेयजी बोले कि हे भामिनि ! तुम कौनहो इस प्रलयमें तुम्हीं रहगईहो ४६ जब मुनिने देवीसे इसप्रकार पूछा तब आदर समेत देवी बोली कि हे ब्राह्मण ! जो शेषकी शय्यापर केशवजी सोते हैं ४७ इनकी वैष्णवीशक्ति मैंहूँ जो यहां कालरात्रि कहातीहूँ हे वि-
 प्रेन्द्र सब मायासे युक्त हमको इसप्रकार जानो ४८ संसार के मोह के लिये पुराणों में महामाया कहातीहूँ ऐसा कहकर देवी अन्तर्धान होगई ४९ मार्कण्डेयजी के देखते हुये देवीके जाने में भगवान्की नाभि में सुवर्ण के समान दीप्तिवाला कमल उत्पन्नहुआ ५० कमल से महातेजस्वी लोकपितामह ब्रह्माजी उत्पन्न हुये ब्रह्मा से सब स्थावर जङ्गम संसार उत्पन्न हुये ५१ इन्द्रादिक लोकपाल अग्नि इत्यादिक देव सब ब्रह्मासे उत्पन्न हुये विष्णुजी राजा वेनसे कहते हैं कि हे राजन् ! अर्वाचीन स्वरूप मैंने तुमको दिखाया ५२ यह अ-
 र्वाचीन स्वरूपहै पराचीन निराश्रयहै जब वह देह दिखलाताहै तब देहरूप वे होजाते हैं ५३ हे पिप्पल ! ब्रह्मादिक सब लोक अर्वाचीन हैं जे तीनों लोकमें मनुष्य होते हैं वे अर्वाचीनहैं ५४ और वह भू-
 तात्मा पराचीनहै जिसको योगीजन देखते हैं वह मोक्षरूप परंस्थान परब्रह्म स्वरूप ५५ अव्यक्त अक्षर हंस शुद्धसिद्धियुक्तहै हे विद्याधर !

पराचीनका जो रूप है वह तुम्हारे आगे ५६ सब कहा और क्या तुम से कहें तब पिप्पल बोले कि हे सुव्रत ! किससे तुम्हारे महाज्ञान उत्पन्न हुआ है ५७ अर्वाचीन की गति और पराचीनकी भी गति जानते हैं तीनों लोकका श्रेष्ठ ज्ञान तुममें इसी प्रकार वर्तमान है ५८ हे सुव्रत ! तपस्या की परानिष्ठा को नहीं देखते हैं यजन याजन तीर्थ वा तपस्या तुमने की है ५९ तिसका प्रभाव कहिये किससे तुमको सब ज्ञान प्राप्त हुआ है तब सुकर्मा बोले कि तप नहीं जानते देहको सुखलाया नहीं ६० यजन याजन वा तीर्थ साधन नहीं जानते पुण्य काल सुन्दर कर्म से उत्पन्न ध्यान मैंने नहीं साधा ६१ केवल पिता माता की पूजन जानता हूँ दोनों हाथ से माता पिता के नित्य ही ६२ पुण्यकारी चरणों को धोता हूँ अङ्गचापता स्नान भोजनादिक करता हूँ ६३ तीनों कालमें ध्यानमें लीन दिन दिनमें साधन करता हूँ तिन माता पिता के चरण जलको दिन दिन में ६४ भक्ति भाव से पीता और अच्छे भाव से पूजन करता हूँ जब तक हे पिप्पल ! मेरे माता पिता जीवते हैं ६५ तब तक हमको अतुल लाभ है शुद्ध भाव चित्त से दोनों को हम पूजते हैं ६६ स्वच्छन्द लीलापूर्वक चलते हैं इस प्रकार हम वर्तते हैं हमको अन्य तपस्यासे क्या है देह के सुखलाने से क्या है ६७ अच्छी तीर्थयात्रा और अन्य पुण्यों से इस समय में क्या है सब यज्ञों का जो फल प्राप्त होता है ६८ वह फल मैंने पिता की और माता की सेवामें देखा है माता पिता की सेवा पुत्रों को गतिकी देनेवाली है ६९ सब कर्मोंमें सर्वस्व तीनों लोकमें सारभूत है माता की सेवासे पुत्रको लोक होता है ७० तिसी प्रकार पिता की शुश्रूषासे भी होता है बड़ी पुण्य होती है गङ्गा गया पुण्य तहां ही हैं ७१ पुत्र के जहां माता पिता स्थित हैं इसमें सन्देह नहीं है और भी पुण्यकारी अनेक प्रकार के तीर्थ तहां हैं ७२ ये पुत्रको पिता की सेवा से होते हैं पिता की सेवा से तिस दान तपका फल ७३ अच्छे पुत्रको होता है और धर्म से श्रमही है पिता की सेवा से अत्युत्तम पुण्य पुत्र पाता है ७४ अपने कर्म का सर्वस्व यहां और परलोक में है जीवते हुये अपने माता पिता की ७५ पुत्र होकर सेवाकरे तिसके पुण्यफल

२४०

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

को सुनिये तिसके ऊपर देव पुण्यवत्सल ऋषि ७६ और तीनों लोक प्रसन्न होते हैं माता पिता के चरणों को नित्यही धोताहै ७७ तिस को दिन दिन में गङ्गा स्नान का फल होताहै पुण्यकारी भिद्यज्जपार्यों से जो माता पिता को ७८ भक्तिसे नित्यही भोजन कराता है तिस के पुण्य को हम कहते हैं पुत्रको अश्वमेध यज्ञ का फल होताहै ७९ पान छादन भोजन पीनेवाले भोजन और पुण्यकारी अन्नसे भक्तिसे जो माता पिता की पूजन करताहै ८० वह सर्व ज्ञानी होताहै यज्ञ और कीर्त्ति पाता है माता पिताको देखकर आनन्द से पुत्र गीलताहै ८१ तिसके ऊपर प्रसन्न होकर निधि उसके घरमें बसती हैं गौर्वे स-दैव पुत्रको सुख देतीं और प्रसन्न होती हैं ८२ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेमातृपितृतीर्थं

माहात्म्येद्विषष्टितमोऽध्यायः ६२ ॥

तिरसठवां अध्याय ॥

दो० तिरसठयें महँ मातु पितु सेवनकेर विधान ॥

जासों होवें पुत्र के सकल काम अरु ज्ञान १

सुकर्माजी बोले कि हे द्विजश्रेष्ठ ! तिन माता पिताके स्नान करानेमें जो जलके कण पुत्र के सब अङ्ग में पड़ते हैं १ तो पुत्र को सब तीर्थ के स्नान के समान फल होताहै पतित विकल वृद्ध सब कर्मों में अशक्त २ व्याधि युक्त और कोढ़ी पिता माताकी जो पुत्र सेवाकरता है तिसके पुण्य को हम कहते हैं ३ तिसके ऊपर विष्णुजी प्रसन्न होजाते हैं इसमें सन्देह नहीं है और वैष्णव लोक को जाता है जो योगियों को भी नहीं मिलता ४ पिता माता विकल दीन वृद्ध और महारोगीहों ऐसे को जो पापबुद्धि त्याग करदेताहै ५ तो पुत्र घोर कीड़ेयुक्त नरक को पाताहै और वृद्ध माता पिता का बुलाया हुआ ६ पुत्र होकर जो न जावे तो तिसके पापको हम कहते हैं वह मूर्ख मैला खानेवाला गांवका सुअर होताहै इसमें सन्देह नहीं है ७ सहस्र जन्मतक सुअर होने के पीछे फिर कुत्ता होता है पुत्रके घरमें स्थित बूढ़े माता पिताको ८ जो विना भोजन कराये आप खाता है

वह सहस्रवर्ष तक मूत्र और मैला खाता है ९ और दोसौ जन्म तक वही पापी पुत्र काला सांप होता है वृद्ध माता पिता का जो अपमान करता है १० वह दुष्ट सौ करोड़ जन्म तक मगर होता है जो पुत्र माता पिता को कटुक वचन कहता है ११ वह पापी व्याघ्र होकर फिर वृद्ध होता है जो दुष्टबुद्धि पुत्र माता पिता का मान नहीं करता है १२ वह सहस्र युग तक कुम्भीपाक में बसता है पुत्रों को माता और पिता के समान तीर्थ तारने और कल्याण करने के लिये इसलोक और परलोक में नहीं है हे महाप्राज्ञ ! तिससे हम पितृदेव और मातृदेव को पूजते हैं जिससे सब देवों में श्रेष्ठ योगी होवें और माता पिता के प्रसाद से उत्तम ज्ञान प्राप्त हुआ है १३ । १५ ये सब तीनों लोक हमारे वश हुये हैं इन महात्मा देव वासुदेवजी की अर्वाचीन गति हम जानते हैं हे महामते ! और पराधीन गति को भी जानते हैं पिता माता के प्रसाद से हमारे सब ज्ञान उत्पन्न है १६ । १७ कौन विद्वान् पिता माता को पूजन न करे सांगोपांग वेद और शास्त्र पढ़ने से क्या है जिसने पिता और माता को नहीं पूजा तिसके वेद निरर्थक हैं १८ । १९ हे विप्र ! यज्ञ तपस्या दान पूजनों से क्या है तिसके सब विफल होजाते हैं जिसने माता २० और जीवते हुये पिता जो कि घरमें स्थित हैं उनको नहीं पूजा यही पुत्रका धर्म है और मनुष्यों में यही तीर्थ है २१ यही पुत्रका निश्चित मोक्ष व यही शुभ जन्म का फल है इसमें कुछ संशय नहीं है व यही पुत्रका यज्ञ दान है २२ कि पिताकी पूजा नित्य भक्तिभावसे करता रहै जो पुत्र इसप्रकारसे पिता माताकी सेवा करता है कि जिनसे उत्पन्न हुआ है व जिनसे पालित पोषित हुआ है २३ बस उसके तीर्थ दान यज्ञ तप का फल यही है व जिसने माता की उपासना की उसको सब यज्ञों का फल मिलता है इसमें सन्देह नहीं है २४ व जिसने नित्य सुन्दरी भक्तिके साथ पिताकी उपासना की है उसकी सब पुण्यदेने वाली यज्ञादिक क्रिया सिद्ध होती हैं २५ इस अर्थ में हमने धर्म शास्त्र भी सुना है कि पुत्रको चाहिये कि पिताकी भक्तिमें नित्यही तत्पर रहै २६ पिताके सन्तुष्ट होनेपर पूर्वकाल में राजा पुरुने बड़ा सुख

२४२

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

पाया व पिता के रुष्टहोने पर पूर्वकालमें यदुजीने महापाप पाया २७ क्योंकि उनके पिताने उनको शाप दिया था ऐसा जानकर मैंने अपने वृद्ध माता पिता की सेवा भक्तिसे की है २८ व इन्हीं दोनों जनों के प्रसाद से महाफल पाया २९ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेमातापितृतीर्थ
माहात्म्येऽष्टमोऽध्यायः ६३ ॥

चौसठवा अध्याय ॥

दो० चौसठवें महँ नहुष सुत नृपययाति वृत्तान्त ॥

मातलिसौ तनुआत्मके विषय विचारनितान्त १

ये समाचार सुन पिप्पल विप्रने प्रश्न किया कि पिता के प्रसाद के भावसे पुरुजीने कैसे उत्तम सुखपाया व भोगा सो हमसे विस्तार सहित कहो १ व पापका प्रभाव भी दूसरे ने कैसे भोगा हे द्विजोत्तम ! सब हमसे विस्तार से कहो २ सुकर्मजी बोले कि सुनो पापनाशन चरित कहेंगे जिसमें नहुष व उनके पुत्र महात्मा ययातिका वृत्तान्त है ३ सोमवंश में उत्पन्न नहुषनाम राजाहुये उन्होंने अतुल दान धर्म अनेक किये ४ व नानाप्रकार के उत्तम यज्ञ किये सो भी सब उत्तम २ अश्वमेध और वाजपेय यज्ञ सौ सौ किये व और भी बहुत से किये ५ अपने पुण्यके प्रभावसे इन्द्रलोकको प्राप्तहुये सब धर्म युक्त गुणसहित अपने पुत्र ययाति को राजा बनागये ६ जोकि सत्यसम्पन्न धर्मवीर्य व महामति थे जब राजा नहुष ऐन्द्रपद भोगने लगे तो उनके पुत्र ७ ययाति सत्ययुक्त प्रजाओं को धर्मसे पालनेलगे अपने आप जा २ कर प्रजाओंके कर्म देखते व जो २ यज्ञादि धर्म सुनें व जो २ पुण्यतीर्थ सुनें उसकी यात्राकरें व सब धर्म कर्म सदाकरें ८ । ९ यज्ञ तीर्थ दान पुण्यादिक करतेहुये धर्मपूर्वक वे भेधावी राज्यकरते धर्म के अनुकूलही सब कार्य करते इसप्रकार राज्यकरते २ राजा ययातिको अस्सीसहस्र वर्ष १० बीत गये व उन महात्माके राज्यमें कुछ अन्तर न पड़ा राजा ययातिजी के उन्हींके बल व वीर्य के समान चार पुत्रहुये ११ हे पिप्पल ! उन

के नाम कहते हैं एकाग्रमन होकर सुनो उनके ज्येष्ठपुत्र महाबल प-
राक्रमी यदुनामहुये १२ व एक पूरुनाम पुत्रहुये तीसरे अनुनाम
हुये व चौथे द्रुह्युनाम धर्मात्मा हुये १३ इस रीतिसे महात्मा यया-
तिजी के चारोपुत्र तेज पौरुष व पराक्रमसे अपने पिताही के तुल्य
हुये १४ व बहुत दिनों तक राज्यकरके उन धर्मात्मा ययाति जीने
ऐसा राज्यकिया कि उनका यश तीनों लोकों में बहुतहुआ १५ श्री-
विष्णु भगवान् राजा वेन से बोले कि हे राजन् ! एकसमय में देवर्षि
नारदजी ब्रह्माजी के पुत्र इन्द्र के देखने के लिये इन्द्रलोक को गये
१६ अग्निसमान तेजस्वी विप्र सर्वज्ञ ज्ञानपण्डित नारदजी को
आयेहुये देखतेही देव इन्द्र आसनपर से उठे १७ व प्रणाम करके
मधुपर्कादि से शिरझुकाकर भक्तिपूर्वक उनकी पूजाकी और अपने
पुष्पकारी सिंहासनपर बैठाकर मुनिश्रेष्ठ से पूछा कि १८ आप का
आगमन कहां से इस समय हुआ व उसका कारण क्या है हे महा-
मुने विप्र ! आपका कौन प्रिय इससमय हमकरें १९ नारदजी बोले
कि हे देवराज ! जो तुम भक्तिसे बोले सब कुछ तुम ने किया हम
तुम्हारे ऊपर बहुत प्रसन्न हुये अब तुम्हारे प्रश्न का उत्तर कहते हैं
सुनो २० इस समय हम महीलोकसे आकर तुम्हारे मन्दिर में प्राप्त
हुये हैं सो तुम्हारे देखनेही के लिये आये हैं और नहुषको भी देख
आये हैं २१ इन्द्र बोले कि आज कल सत्यधर्म से कौन राजा
पृथ्वी का सदैव पालन करताहै व आपभी सर्व धर्म से युक्त
वेद शास्त्र पढ़े हुये ज्ञानवान् व गुणीहो २२ व वेदज्ञ ब्राह्मणप्रिय
ब्रह्मण्य वेदवादी शूरवीर यज्ञकर्त्ता दाता व भक्तिमान्हो २३ नारद
जी बोले कि इनगुणों से युक्त तो अतिबली राजा नहुषका पुत्र यया-
ति है जिसके सत्य व वीर्य से सब लोक प्रतिष्ठितहैं २४ आपके
समान भूलोक में नहुष का पुत्र ययाति है आप स्वर्गमें हैं और ऐ-
श्वर्य बढ़ानेवाला ययाति पृथ्वी में है २५ हे महाराज ! पिताते श्रेष्ठ
पृथिवीका पति ययाति है उसने सौ अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञ
किये हैं २६ और अनेकप्रकारके दान भक्तिसे दिये हैं लाखों करोड़ों
गोदानकिये हैं २७ कोटि होम व लज्जहोम किये हैं भूमिदानादिक दान

ब्राह्मणों को दियाकरता है २८ व सब साङ्गोपाङ्ग से सुरुपवान् धर्म का परिपालन करनेवाला है इन सब गुणोंसे युक्त नहुष का पुत्र महाराज ययाति २९ पृथिवी पर राज्य करता है अस्सी सहस्र वर्ष तक सत्य धर्म के साथ पृथ्वी का राज्य उस धर्मात्माने किया है जैसे स्वर्गमें आप राज्य करते हैं ३० मुनीश्वर नारदजी से ऐसा सुनकर मेधावी इन्द्र धर्म के पालनसे डरे और पीछे से कहा ३१ कि हां सुकर्माजी बोले सौ अश्वमेधयज्ञ करके इसके पिता नहुष ने पूर्वकालमें हमारा राज्य बहुत दिनों तक कियाथा यहां ऐन्द्रपद पर आकर वह वीर देवराज होगया था ३२ जब इन्द्राणी के सङ्ग भोग करने की इच्छाकी तो फिर नीचे गिरादिया गया उसी अपने पिताके तुल्य पराक्रमी यहभी महाराज है ३३ तो यह भी इन्द्रपद पर आजायगा इसमें सन्देह नहीं है इससे जिस किसी उपायसे उस राजा को स्वर्ग को लाना चाहिये ३४ इस प्रकार से इन्द्रने अपने मनमें चिन्ता की और तिससे डरा ययाति राजाके बड़े भयसे ३५ इन्द्र ययाति के लेने को दूत मातलि सब काम युक्त नहुषके विमान समेत भेजते भये मातलि जहां नहुषके पुत्र ययातिजी थे वहां पहुँचा देखा तो जैसे सभामें विराजमान इन्द्र शोभित होते हैं ३६। ३८ वैसेही धर्मात्मा ययाति जी अपनी सभामें शोभित हो रहेथे सो जाकर सत्यभूषण महात्मा राजा से मातलि बोला कि ३९ हे राजन् ! हम देवराजके सारथि हैं हमारा वचन सुनो हम इन्द्र के भेजेहुये तुम्हारे समीप इस समय आये हैं ४० जो देवराज ने तुमसे कहाहै वह एकाग्र मन होकर करो इसी समय आप इन्द्रलोकको चलें क्यों कि देवराज ने कहाहै कि अब पुत्रको राज्य दे अन्त्येष्टि कर्म उत्तम करके आवें महातेजस्वी इलराजा यहीं आकर बसते हैं ४१। ४२ क्योंकि पुरुरवा महावीर्यवान् विप्रचित्ति शिवि मनु इक्ष्वाकु राजा ४३ बुद्धिमान् सगर नहुष तुम्हारे पिता ऋतवीर्य शन्तनु ४४ भरत युवनाश्व कार्तवीर्य ये सब बहुत यज्ञोंको कर स्वर्ग में आनन्दित रहते हैं ४५ व इन राजाओं के तुल्य और भी यज्ञकर्म्मों में तत्पर राजा यहां आकर निवासकरते हैं सबके सब अपने अपने कर्मों से

स्वर्ग में भी इन्द्रही के सङ्ग प्रमुदित होते हैं ४६ फिर तुम सब धर्म जाननेवाले और सब धर्मों में स्थित हैं हे महीपते ! इन्द्रके सङ्ग स्वर्ग में आनन्द कीजिये ४७ यह सुन ययातिजी बोले कि हमने कौन सा कर्म किया है जिससे देवराज इन्द्रजी अपने साथ स्वर्गसुख भोगनेको बुलाते हैं मातलि सब हमसे कहो ४८ तब मातलि बोले कि हे राजेन्द्र ! अस्सीसहस्रवर्ष पर्यन्त तुमने जो दान पुण्य यज्ञादि कर्मोंका साधन किया है ४९ हे महाराज ! उन्हीं अपने कर्मों से स्वर्गको चलो हे महीनाथ ! चलके देवराजजी से सख्यकरो ५० व पञ्चभूतात्मक इस शरीरको यहीं भूमिपर छोड़ कर चलो व दिव्य शरीर धारणकर अपने मनमाने भोग वहांचल कर भोगो ५१ तुम्हारेभोगके लिये सब पदार्थ स्वर्ग में जैसे तुमने यहां दान पुण्य यज्ञतपकिये हैं वैसे २ बनकर तैयारहुये हैं ५२ महाराज ययातिजी बोले कि हे मातलिजी ! जिसशरीरसे पृथ्वीपर बहुत से सुकृत और पाप सिद्ध होते हैं उसको यहींछोड़कर उसी के इकट्ठे किये हुये पदार्थोंके भोगने को कैसे चलें ५३ मातलि बोले कि हे नृप ! जहां इन पृथ्वी जल वायु तेज आकाश पञ्चतत्त्वों से यह शरीर उत्पन्न हुआ इसे वहीं छोड़ दिव्य शरीर से सब लोग स्वर्ग में जाते हैं ५४ व अन्य सब मनुष्यभी जोकि पाप पुण्य सबके साधक हैं वे भी इसशरीरको यहीं छोड़कर नीचे वा ऊँचे को जाते हैं ५५ राजा ययाति बोले कि हे मातलिजी ! इसी पञ्चात्मक शरीरही से पुण्य पापकरके मनुष्य ऊपर वा नीचे को जाते हैं ५६ तो फिर क्या विशेषता हुई जो शरीर को भूमिही पर छोड़कर जाना होता है जो पाप पुण्यकेही प्रभाव से देहका पात होता है ५७ तो हे सूत ! मर्त्य लोकमें यह प्रत्यक्ष दृष्टान्तही दिखाई देता है पाप व पुण्यकरने की कुछ विशेष अधिकता न हुई ५८ जिस शरीर से मनुष्य यहां सत्य धर्मादि इकट्ठाकरता है उसको मनुष्य यहां कैसे छोड़े ५९ आत्मा व काय ये दोनों मित्ररूप हैं फिर काय मित्रको छोड़कर आत्मा चला जाता है ६० मातलि बोले कि हे राजन् ! तुमने सत्य कहा आत्मा कायको यहां छोड़हीकर जाता है क्योंकि आत्माका कायकेसंग कुछ

सम्बन्धही नहीं है ६१ क्योंकि यह शरीर सदा पंचत्वरूपही रहता है देखो जबसे उत्पन्न होता है सदैव जर्जितही बनारहता है वृद्धावस्था से पीड़ित होता है और व्याधियों से सदैव दूषित रहता है ६२ व जब जरा के दोषोंसे यह काय प्रभग्न होजाता है तो फिर यहां का रहना नहीं चाहता आकुल व्याकुलहो जीवको छोड़कर आप चलाजाता है ६३ धर्म सत्यसे जो पुण्य उसने किये हैं व दान नियम संयम किये हैं व अश्वमेधादि यज्ञ तीर्थ संयम जो कुछ उसने धर्म कर्म किये हैं ६४ व जो तप पुण्य और भी किये हैं वे इस जरा को नहीं रोकसके व न वे पातकही शरीरको दुःख देनेवाली वृद्धता को निवारित करसके हैं ६५ तब राजा ययानिजी फिर बोले कि जरा कहां से उत्पन्न होती है व क्यों शरीरको पीड़ित करती है हे सूत ! यह हमसे तुम विस्तार से कहनेके योग्यहो ६६ मातलि बोले कि हे नृपोत्तम ! हम तुम से जराका कारण कहते हैं जिससे कि यह कायके मध्यमें उत्पन्न होती है ६७ यह शरीर पृथिव्यादि पांचभूतों से बना है इसी से पांचों से सदा युक्त रहता है व हे राजन् ! जिससे कि इन सबों से यह उत्पन्न होता है इसी से काय कहाता भी है ६८ जब यह वह्निसे प्रज्वलित होता है तो इसमें से रस उत्पन्न होता है उस रससे धूम उत्पन्न होता है व धूमसे मेघ होते हैं ६९ व मेघों से जल उत्पन्न होता है व जलसे पृथ्वी होती है फिर वह पृथ्वी ऋतुकाल को प्राप्त होती है जैसे कि नारी रजस्वला होती है ७० उससे गन्ध उत्पन्न होता है व गन्धसे फिर रस होता है रससे अन्न होता है अन्न से वीर्य होता है इसमें संदेह नहीं है ७१ वीर्य से कुरूप देह होता है जैसे पृथ्वी गन्धोंको उत्पन्न करती है रसों से पृथ्वी तलमें चलती है ७२ तैसेही देह नित्यही रसके आधार सब ओर चलता है तिससे गन्ध उत्पन्न होता है गन्ध से फिर रस होता है ७३ हे राजन् ! रससे महावह्नि होती है इस में दृष्टान्त देखिये जैसे काष्ठ से अग्नि होती है और फिर काष्ठ को प्रकाशित करदेती है ७४ तैसेही देहके मध्यमें रससे अग्नि उत्पन्न होती है वही नित्यही संचारकर देहको पुष्ट करती है ७५ जबतक रसकी

अधिकता होती है तबतक जीव शांतिमान होता है तैसेही अग्नि चारप्रकारकर क्षुधारूपसे वर्तमान होता है ७६ फिर यह तीव्र जल समेत अन्नकी इच्छा करता है तो अन्न और जलके दान को पाता है ७७ अग्नि रक्त को चारप्रकार करती है तैसेही वीर्यकोभी इस में संदेह नहीं है तिससे फिर सब देहका नाश करता यक्ष्मरोग होत है ७८ रस की अधिकता होती है तब अग्नि शांत होजाती है रससे पीड़ित हुआ तो ज्वररूप होजाता है ७९ ग्रीवा पीठ कटि गुदा और सब सन्धियों में अग्नि स्थित होता है देह में अग्नि वर्तमान होता है ८० जब रस की आधिक्य होती है तो काय को पुष्ट करती है रस जब कुछ बन्धनको प्राप्त होता है उसीसे बल होता है ८१ व उसी बलसे फिर काम उत्पन्न होता है वह इस शरीर का शल्यरूप होता है ८२ व वही कामाग्नि कहाता है वह बलका नाश करता है मैथुनके प्रसङ्गसे देहमें विनाशभाव को प्राप्त होजाता है ८३ जब पुरुष स्त्रीका हाथ पकड़ता है तब कामाग्नि से पीड़ित होता है व मैथुनके प्रसङ्ग से फिर उसकी इन्द्रियको सूच्छा आजाती है ८४ व शरीर तेजहीन होजाता है और बलकी हानि होती है जब बलहीन होजाता है तो अग्नि की प्रेरणा से दुर्बल होजाता है ८५ व उस वक्त्र के प्रचार से पुरुषके शरीरमें शुक्र व शोणित उत्पन्न होता है व जब शुक्र व शोणित दोनों का नाश होजाता है तब देह शून्य होजाता है ८६ व तब काय में अनिलोलुपता उत्पन्न होती है तब शरीर की आकृति अतिप्रचंड होकर बिगड़ उठती है व अंगोंमें विवर्णता छाजाती है उससे दुःखके मारे मन्तप्त होकर काय बुद्धिहीन होजाता है ८७ व जब कभी नारी को देखता वा सुनता है तब चित्त सदैव उसी में लगकर भ्रमण करनेलगता है व कायमें तृप्ति नहीं होती चित्त लोलुप होकर उसीमें दौड़ता रहना है ८८ फिर सुरूपवती व अरूपवती सब स्त्रियों में उसका चित्त जाता है तब मांस व शोणित के संक्षय से काय बलहीन होजाता है ८९ व कामाग्नि से नाशित होनेके कारण शरीरमें पलित आजाता है बस तब उसी से शरीर में दिन दिनमें जरा आजाती है ९० तब

सुरतमें नारीकी चिंतना करता है जैसे वार्द्धषिक नर करता है तैसे तैसे इस के तेजकी हानि होती है ६१ तिससे देह नाशहोजाता है फिर जरारूप अग्नि उत्पन्न होता है इसमें सन्देह नहीं है ६२ ॥
 चौ० तब तनु में दारुण ज्वरहोई । प्राणिप्राणनाशक नहिं गोई ॥
 स्थावर जङ्गम सकल जरार्दित । पीड़ितहोत तासुपरिमर्दित ॥
 बहु पीड़ा पीड़ित है सारे । नष्टहोत करि दीन पुकारे ॥
 यहकहिइन्द्रसारथीमातलि । कीनविरामयुक्तिकहिकैभलि ९३ । ६५

इति श्रीपाद्मयेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेमातापितृतीर्थ
 कथनेचतुष्पष्टितमोऽध्यायः ६४ ॥

पैंसठवां अध्याय ॥

दो० पैंसठयें महुँ पुनि नृपति मातलिकर संवाद ॥

ज्यहि सुनि भूपतिके मिटे मन के सकल विषाद १

राजा ययातिजी मातलिसे बोले कि हे मातलिजी ! यह शरीर धर्मका रक्षकहै पर तोभी आत्माके संग स्वर्ग को नहीं जाता इसका कारण हमसे कहो १ मातलि बोले कि हे भूपाल ! पृथिव्यादि पंच महाभूतों की संगति आत्माके साथ नहीं है केवल एक स्थान पर रहते पर वे पांचों आत्मासे संगति नहीं रखते २ इनपांचोंके एकत्र होने से यह शरीर बनकर शोभित होनेलगता है परन्तु जब ये सब जरा से पीड़ित होते हैं तब अपने २ स्थान को चले जातेहैं ३ हे महाराज ! रस अधिक वाली पृथ्वी प्रकल्पित है फिर रसोंसे भीगी हुई पृथ्वी कोमल होतीहै ४ तो चींटी और मुसरियोंसे भेदन कीजातीहै फिर छिद्र होजाते हैं बामी बड़ीभारी होजातीहैं ५ तैसे देहमें गण्डमाला विचर्चिका उत्पन्न होजातीहैं फिर यह देह कीड़ोंसे काटा जाताहै ६ तो शीघ्रही पीड़ा करनेवाले गुल्म होजातेहैं इन दोषों से युक्त यह देहहै तो प्राणोंके संग कैसे स्वर्गको जासके ७ यह शरीर पृथिव्यादिकों का भाग है अपनी पृथ्वी में मिलजाता है स्वर्ग को नहींजाता क्योंकि जैसेही पृथ्वी वैसेही शरीर जहां पृथ्वी रहती उसीमें मिलकर रहजाताहै ८ हे पार्थिवोत्तम ! यह हमने तुमसे सब

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० । २४९
वर्णन किया जो कि तुमने शरीर व आत्मा के विषयमें पूँछा ६ ॥

इति श्रीपाद्ममेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने
मातापितृतीर्थमाहात्म्येपञ्चमोऽध्यायः ६५ ॥

छासठवां अध्याय ॥

दो० छासठयें महँ नहुषसुतसों मातलि यह गाव ॥

सृष्टि देहकी मलिनता भाव शुद्धि करि चाव १

पुनि पिप्पलरु सुकर्म द्विज कर संवाद अनूप ॥

मातु पिता सेवा सुतहि पुण्य अधिक सुनि रूप २

ययातिजी बोले कि हे मातलिजी ! जो शरीर पापसे पतित होता है व धर्म से भी पतितही होता है तो पुण्यकरने में भूतलपर कुछ विशेषता हम नहीं देखते १ व जैसे पूर्वजन्म में पतितहोकर इस जन्ममें हमलोगों का शरीर उत्पन्नहुआ है फिर अबकी पतितहोकर कैसे उत्पन्नहोगा यह हम से विस्तार सहित कहो २ मातलि बोले कि नारकी पुरुषों का शरीर अधर्म करने के कारण जबरदस्ती उत्पन्न करायाजाता है इस से एक क्षणमात्रमें सब पृथिव्यादि भूतोंसे उत्पन्न होजाता है ३ ऐसेही एक धर्मकरने के कारण देवताओं का शरीर भी पञ्चभूतों के सारसे बहुत शीघ्र उत्पन्न होताहै ४ व कर्मों के मिलने से जो महात्माओंके शरीर उत्पन्नहोतेहैं व पंचभूतों के एकमें मिलनेसे चार प्रकारके होते हैं ५ उद्भिज्ज स्थावर जाननेचाहिये तृण गुल्मादि रूपी कृमि कीटपतंगादिक स्वेदज हैं ६ अंडज सब पक्षी सांप मगर हैं जरायुज मनुष्य चौपाये जानने चाहिये ७ तहां जलसे भूमि सींचीगई व ऊपरसे सूर्य की ऊष्मा व नीचेकी शीतलता से युक्तहुई फिर वायुने उसे आकर्षित किया तो खेतों से बीज जमआये बस वृक्ष वल्ली अन्नादि उत्पन्न होआये ८ जैसे कि स्त्रीकी योनि जब पुरुषके संयोगसे संसिक्त होती है व फिर उष्णता पहुँचतीहै तब मृदु होजाती है बस बीज उसमें स्थित होजाताह ९ उसी सेमनुष्यादिकों की उत्पत्ति होती है ऐसेही शीतलता व उष्णताके योग से बीजसे अंकुर निकलआते हैं व अंकुरसे फिर पत्ते निकलते

हैं फिर पत्तेसे नाल फिर नालसे काण्ड व काण्डसे प्रभव १० प्रभव से दुग्ध व दुग्ध से तण्डुलकी उत्पत्तिहोती है फिर तण्डुल परिपक्व होने से ओषधियां पकीहुई होजाती हैं उन्हीं ओषधियों कोही अन्न कहतेहैं ११ वे यव आदि व धानपर्यन्त श्रेष्ठ होते हैं जिनके फलों में सारांश होताहै वे मुख्य ओषधियां कहाती हैं नहीं तो क्षुद्र तो बहुतहैं १२ इन्हीं ओषधियोंको पकनेपर काटकर फिर माड़तेहैं तब ओखड़ी में कूटकर सूपसे पछोड़ कर जलभरकर आग पर चढ़ाकर पकातेहैं और १३ छः प्रकारके रसके स्वादु निकालते हैं फिर उनको पाक कर भक्ष्य भोज्य पेय लेह्य चोष्य खाद्य पदार्थ बनाते हैं तिन के भेद ६ और मधुर आदिक ६ गुण हैं १४। १५ फिर वह अन्न कवल बनाय २ भोजन करतेहैं उन्हीं कवलोंके परिपाकके रससे सब प्राण पुष्टहोते हैं १६ व जो बिना अग्नि में परिपक्व किये अन्न खायेजाते हैं उनसे भीतर का पवन वैर रखताहै इससे उसकेभीतर प्रवेश करके बिगाड़ देताहै व जठराग्नि भी उसे कम पचाताहै इसलिये उस से विकार उत्पन्न होजाते हैं व जो अग्निमें पक्क करके पदार्थ भक्षण किये जाते हैं उनको जाठराग्निभी अच्छे प्रकार पाचित करताहै नहीं तो सामान्यतः कच्चे पक्के जो पदार्थ भोजनकिये जातेहैं उदर में पहुँचतेही पवन उनमें प्रवेश करके जलको अलग करदेता है व अन्नको शुष्क करके अलग १७ फिर उदरके अग्निके ऊपर जल को स्थापित करता है व जलके ऊपर उस अन्न पिण्ड को स्थापित करता तदनन्तर अग्निके नीचे वह पवन जाकर उसे धमताहै फिर पवन से धमायाहुआ अग्नि जलको अतिउष्ण करदेताहै उस अति उष्ण जल के संयोग से अच्छे प्रकार पचकर सब ओरको फैलताहै १८। १९ व फैलनेहीके समय दो स्थानोंपर होजाताहै एक रस रूप होकर व दूसरा मलरूप होकर वह मल कीट बारह स्थानों में होकर बाहर को निकलताहै २० दोनों कान दोनों नेत्र दोनों नासिका के पुट जिह्वा दन्त ओष्ठ शिश्न व गुद रोम व सब देहपर का चर्म वस उस अन्नकी कीट और पसीना निकलने के येही बारह मार्ग हैं २१ हृदयसे सब नाडियां कर चरणादिकों में लगी व बँधी रहती

हैं व उन्हीं नाड़ियों के मुख में होकर वह अन्नरस सर्वत्र पहुँचता है २२ व उसी रससे नाड़ियां प्राणोंको परिपूर्ण करती हैं व प्राण सब देह भरको तृप्त कराते हैं २३ व प्राणों में जो नाड़ियां टिकी हैं उनमें शरीर की ऊष्मा से जो जो पचने के योग्य होते हैं सब पचजाते हैं २४ व उन्हींसे त्वचा मांस हड्डी मज्जा मेदा रुधिर उत्पन्न होते हैं रक्त से रोम और मांस उत्पन्न होते हैं केश तथा सब नसे मांस से होती हैं २५ व नसों से मज्जा व हड्डियां होती हैं व मज्जा और हड्डियों से नख उत्पन्न होते हैं व मज्जाही के अधिक होनेसे बल होता है व बीज प्रभव से होता है २६ ये बारहों के परिणाम हमने तुमसे कहे बस देहका मुख्य परिणाम काम है शुक्रही से देह की उत्पत्ति होती है २७ मैथुनके समयमें योनि में जैसा निर्दोष होता है वा शुक्र में निर्दोष होता है वह स्त्री के रुधिर के सङ्ग मिलकर एक होजाता है निर्दोष दोनोंहुये तो शुद्ध सद्दोष हुये तो अशुद्ध उत्पत्ति होती है २८ सृष्टि होने में शुक्रही कारण होता है व उसी बीजके द्वारा अपने कर्मों से जीव योनि में पैठता है २९ पुरुषका शुक्र व स्त्रीका शोणित गर्भाधान के समय एकमें मिलजाते हैं सो दोनोंके मिलने से एक रात्रि में तो कलल अर्थात् कुछ ढवैलेरङ्गका होजाता है फिर पांच रात्रियोंमें वही कलल बुल्ला होजाता है ३० व एक मासमें फिर पांच प्रकार का होजाता है अर्थात् ग्रीवा शिर स्कन्ध पृष्ठ वंश व उदर ये एक मासमें बन जाते हैं ३१ हाथ पैर बगलें कटि ये सात दो मासों में बनते हैं व जितने जोड़ है वे भी दूसरेही मास में बनते हैं ३२ व तीन मासों में सैकड़ों सन्धि बनजाते हैं व चार मासों में हाथों पैरों की सब अंगुलियां बनती हैं ३३ मुख नासिका व कान पांच मासों में होते हैं दांतों के जमने के स्थान जिह्वा नख ३४ व कानों के छेद ये सब छठें मास में होते हैं पायु लिङ्ग उपस्थ वृषण ३५ व गात्रों के सब सन्धि ये सब सातवें मास में होते हैं अङ्ग प्रत्यङ्ग सम्पूर्ण केशसहित शिर ३६ सब अवयव स्पष्टतापूर्वक जाके अठार्वे मासमें होते हैं फिर किसी अङ्गमें कुछ न्यूनता नहीं रहती इसप्रकार से जब आठमासका गर्भ होता है तो उसको भूखभी ल-

गती है ३७ इसी से जब माता छः प्रकार के रस भोजन करती है उस का कुछ रस उसके भी मुखमें जाता है व उसको सब रसों का ज्ञान हो- जाता है व दिन २ उसको भूख बढ़ने लगती है ३८ जब इसप्रकार से शरीर पूर्ण हो जाता है तो फिर जीव स्मृति पाता है व सुख दुःख भी जानता है व फिर उसको अनेक जन्म का स्मरण आता है निद्रा स्वप्न को भी जानता है ३९ कि मैं मरा था फिर उत्पन्न हुआ व फिर मरा फिर हुआ व नाना प्रकार की सहस्रों योनियों मेंने अनेक बार देखीं ४० पर अबकी जैसे मेरा जन्म हो व संस्कार जैसे ही हों वैसे ही अपने कल्याण के कर्म करूं जिससे फिर गर्भ में वास न हो व यह भी चिन्तना क- रता है कि जैसे ही अबकी गर्भ से निकला कि संसार से निवृत्त होने- वाला ज्ञान जानूंगा ४१ ४२ इसप्रकार गर्भ के दुःखों से पीड़ित होकर कर्म के वशीभूत जीव गर्भ ही में मोक्ष के उपाय की चिन्ता करने ल- गता है ४३ जैसे कि पर्वतों से दबा हुआ कोई दुःख से स्थित होता है ऐसे ही ओझड़ी से बँधा हुआ प्राणी दुःख सहित अपना समय बिताता है ४४ व जैसे किसी को समुद्र में डूबने में दुःख होता है वैसे ही वह दुःख से आकुल होता है गर्भ के जल से सब अङ्ग उसके भीगे हुये होते हैं व अतिव्याकुल रहता है ४५ जैसे कि कोई अग्नि से तपाये हुये कराहके तैल में पड़कर छटपटाता है वैसे ही गर्भ में पेट की अग्नि से कष्ट पाता है ४६ फिर अग्नि के समान तीक्ष्ण सूजियों से छिन्न भि- न्नाङ्ग होकर दुःखित होता है जो दुःख सूजियों के लगने से होता है उससे अठगुना गर्भ में दुःख होता है ४७ गर्भ वास से कष्टदायक और कहीं का वास नहीं होता है प्राणियों को अतुल दुःख व सुघोर सङ्कट ग- र्भ वास में होता है ४८ ये चर स्थिर सब प्राणियों के गर्भ का दुःख अपने गर्भ के अनुरूप से कहा ४९ गर्भ से कोटिगुण पीड़ा जब ज- न्म के समय योनि में दबता है तब होती है यहां तक कि ऐसे सङ्की- र्ण मार्ग से निकलने से देही मूर्च्छित हो जाता है ५० जैसे ऊख को लहू में पीड़ित होती है वैसे ही जन्म के समय प्राणी योनि सङ्कट में पड़कर पीड़ित होता है जब जब गर्भ से निकलने पर प्राणी होता है तो प्र- बल प्रसूतिका पवन प्रेरणा करता है व अयोमुख करके नीचे को गिराया

जाताहै ५१ व महादुःख भोगताहै व रक्षा अपनी कहीं से नहीं पाता जैसे कोल्हू में ऊख पेरी जाती है व पीड़ित होती है ५२ वैसेही योनि यन्त्रमें पीड़ितहोकर प्राणी दुःखित होताहै व गर्भ के भीतर जब तक रहताहै नेत्रमूँदे राल कफयुक्त ओझरी से बँधा ५३ रक्त मांस वसा से लिप्त व विष्ठा मूत्रका पात्र बनारहताहै केश लोम नखसे ढँका व रोगोंका उत्तम स्थान ५४ आठ भरोखासे भूषित मुखही एकबड़ा द्वार रहताहै दो ओष्ठ दांत जीभ गला ५५ कफपित्तयुक्त नाड़ी स्वेद प्रवाह रहताहै व वहाँ जब रहता तभी वृद्धताके शोकको करताहै कि जन्म लेनेपरजरा अवश्य समय पाकर आवेगी व काल चक्रभी आवेगा ५६ इसप्रकार काम क्रोधसे युक्त रहताहै पवनोसे मर्दित रहता है नानाप्रकारके भोगविलासोंकी इच्छा से आतुर गूढ़ व रागद्वेषके वशानुग रहताहै ५७ व सब उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग जरायुसे वेष्टित रहते हैं ऐसा प्राणी बड़े संकटसे योनिमार्ग होकर बाहरनिकलताहै ५८ जब उत्पन्न होताहै तो वैसेही विष्ठा मूत्र व रुधिर से लपटाहुआ होता है व इस मनुष्यादि के शरीर को हड्डियों का पिंजड़ा समझना चाहिये ५९ इस शरीर में साढ़े तीन करोड़ तो रोम होते हैं यह शरीर सूक्ष्म व स्थूल के भेदसे दोप्रकार का होताहै सूक्ष्म अदृश्य व स्थूल दृश्य रहताहै व इसमें एक कोटि नसें होती हैं ६० । ६१ व अपवित्र पसीना भीतर रहताहै बत्तीस दांत होते हैं व बीस नख ६२ पित्त कुड़व भर होताहै बीस टकाभर तो इसमें वसा रहतीहै व दश टका भर कफ ६३ व पांच अर्बुदटका भरसे किसीका शरीर अधिक नहीं होता दशटकाभर मेदा तीन टकाभर रक्त व रक्त से चौगुनी मज्जा शरीर में होती है ६४ शुक्र इसमें आधे कुड़वभर होताहै व वही प्राणियों का बल होताहै व एक सहस्र पल मांस का सब प्रमाण होता है ६५ व सौ टकाभर रक्त इसमें मुख्य होताहै व विष्ठा मूत्र अप्रमाण होताहै हे राजन् ! गृहरूप देहमें इतने २ ये पदार्थ नित्य रहते हैं इसीमें आत्मा का वास है ६६ सब अशुद्ध पदार्थों से भराहुआ होता है व शुक्र शोणित के संयोगसे देह उत्पन्न होताहै ६७ व नित्यही विष्ठा मूत्रसे परिपूर्ण रहता है इसी से अपवित्र कहाजाता है

जैसे विष्ठासे भरा हुआ घड़ा भीतर बाहर सब अपवित्र होता है ६८ ऐसे ही ऊपरसे धोने आदिसे स्वच्छ रखने पर भी भीतर विष्णामूत्र भरे हुये के कारण बाहर भीतर सब कहीं अपवित्र होता है जिस शरीर में जाकर अतिपवित्र पंचगव्य व पायस आदि पदार्थ भी ६९ शीघ्र अपवित्र हो जाते हैं तिससे यह देह अपवित्र है व नाना प्रकारके उत्तम अन्न व जल जिस शरीर में जाकर ७० शीघ्र भ्रष्ट हो जाते हैं उससे और कौन अपवित्र अधिक होगा हे लोगो ! देखते नहीं कि प्रतिदिन इस शरीरसे कितना मल सब छिद्रों के द्वारा बाहर निकलता है फिर उस मलके रहने का आधार यह देह कैसे पवित्र हो सकता है यह देह पंचगव्य कुश जलादिकों से शुद्ध करने पर भी ७१।७२ चिताके अग्नि के समान अपवित्र होता निर्मल नहीं हो सकता जिससे निरन्तर कफ मूत्रादि अपवित्र वस्तुओं के सोते बहाकरते हैं जैसे पर्वत से जलके झरने बहते हैं वह ऐसा अपवित्र देह कैसे शुद्ध हो ७३।७४ सब ओर से अशुचि इस शरीरकी शुद्धि किसी एक अंग में भी नहीं हो सकती दिन वा रात्रि में मिट्टी व जलसे शुद्ध करने पर भी हाथकी शुद्धता नहीं होती और मनुष्य विरागको नहीं पाते हैं इस शरीर को धूपादि सुगन्धित पदार्थों से धूपित भी करो ७५।७६ पर इसकी दुर्गन्धि नहीं मिटती बनी ही रहती है जैसे नवाई हुई कुत्तेकी पूँछ तैसे ही जातिही से काली ऊन कभी सफेद नहीं होती तिसी प्रकार शुद्ध की हुई मूर्ति निर्मल नहीं होती अपनी भी विष्ठाको सूँघ देखकर लोग नाक मूँद लेते हैं विरागको नहीं प्राप्त होते हैं यह बड़ा भारी मोहका माहात्म्य है व इससे सब जगत् मोहित है ७७।७८ कि शरीर से निकले हुये मलको सूँघकर तो नाक मूँदते हैं व शरीर को सूँघकर नहीं जो अपने शरीरको तुच्छ समझ इससे विराग नहीं करता ८० फिर उसको और क्या विराग कारण उपदेश दिया जावेगा सब जगत् पवित्र है केवल देह ही अपवित्र है ८१ कि जिसके मलके स्पर्श से पवित्र भी पदार्थ अपवित्र हो जाते हैं दुर्गन्धि मिट जाने के लिये मृत्तिका व जलसे शौच करना कहा है ८२ परन्तु इन दोनों से शौच करनेके पीछे जब भावसे शुद्धि

कीजाती है तब शरीरकी शुद्धि होती है क्योंकि चाहे गंगाजी के सब जलसे व ढेरकी ढेर मृत्तिकासे शौचकरें ८३ परन्तु दुष्टात्मा दुर्गन्ध देहवाला पुरुष नहीं शुद्ध होता तीर्थ स्नान और तपस्यासे दुष्टात्मा मनुष्य नहीं शुद्ध होता है ८४ कुत्तेको चाहे तीर्थ में भी धोवे पर वह शुद्ध नहीं होता ऐमेही जिसका अन्तःकरण दुष्ट है उसको जो अग्नि आप आकर शुद्धकरें तोभी नहीं शुद्ध होता ८५ दुष्टात्माको न स्वर्ग पवित्रकरे न मोक्ष न अग्नि इससे जो भावसे शुद्ध है वह परमशौच युक्त कहाता है व सब कर्मोंमें उसीका प्रमाण होता है ८६ ऊपरसे चिह्न चाहे जैसे रखे परन्तु भावसे सब पापों को दूरकरे व मनसे धर्मकी वृद्धिकरे ८७ पतिव्रता और तरहसे पुत्रको औरही तरहसे पतिको चिन्तना करती है वस जिसका जैसा स्वभाव होता उसका वैसा अभिप्राय होता है ८८ जो स्त्रीको आलिंगन करे पर भावसे हीन कभी न करे विविधप्रकारके भोजन मिलें परन्तु उनको भी न खावे ८९ अभावसे मिलनेसे सब रस हीन होजाते हैं व भावसे मिलनेसे सब रस युक्त होते हैं ९० इससे सब यत्नोंसे चित्तको शुद्ध करो बाहरके शोधन से क्या है ९० यदि भाव पवित्र हुआ तो यह शुद्धात्मा प्राणी स्वर्ग और मोक्षको पाता है ज्ञान जलसे देहके मल धोवे व सदैराग्यको मृत्तिका बनावे ९१ व अविद्या रागरूपमल मूत्रोंको धोवे इसप्रकारसे स्वभावहीसे अपवित्र शरीरको शुद्धकरे ९२ क्योंकि यह शरीर केलाके खम्भेके तुल्य निस्सार है सो ऐसे दोषी देहको जो प्राज्ञ शिथिल समझता है ९३ वह संसारको अतिक्रमण कर डालता है व दृढ़तापूर्वक ग्रहण करके स्थित होता है इसप्रकारसे महाकष्ट युक्त जन्ममें नाना प्रकारके दुःख होते हैं ९४ व पुरुषोंके अज्ञानके दोषसे व नानाप्रकार के कर्म के वशसे गर्भ में टिकेहुये प्राणी को जो मति आती है वह उत्पन्न होने में नष्ट होजाती है ९५ अथवा योनिसंकटमें से निकलने से मूर्च्छित होजाने के कारण से वह बुद्धि जाती रहती है अथवा बाहर के पवनके लगतेही प्राणियोंको मोह होजाता है ९६ इससे जैसेही उत्पन्न होता है कि ज्वर से पीड़ित होजाने के कारण मोहको प्राप्त होता है व उसी बड़ेभारी ज्वर से महामोह उत्पन्न होता है ९७ जब

बनाय मूढ़ होजाताहै तो शीघ्रही उसकी स्मृतिका भ्रंश होजाताहै व स्मृतिभ्रंश होने से व पूर्व जन्मके कर्म के वशसे ६८ उस प्राणी की प्रीति उसी जन्ममें होजाती है व ऐसा मूढ़ होजाता है कि अकार्य्य कर्म करने लगताहै ६९ न आत्माको जानताहै न अन्य किसीको जानताहै न देवताओंकोही जानता है न परमकल्याण की बातें सुनताहै व नेत्र सहित है पर नहीं देखताहै १०० व समान मार्गपर भी चलनेपर पद २ पर गिर २ पड़ता है बुद्धि विद्यमान भी होती है पर पण्डितों के समझानेपरभी नहीं समझता १०१ इसी से लोभके वशीभूत होकर इस संसारमें नानाप्रकार के क्लेशों से क्लेशित होताहै गर्भ के स्मरण के न रहने के कारण शिवजी का कहा हुआ शास्त्र भी भूलजाताहै १०२ जोकि दुःख कहने के लिये स्वर्ग व मोक्षका साधक है व जिसके जानने से धर्म अर्थ प्राप्त होताहै १०३ सो यहां आकर अपना कल्याण नहीं करते यह महा अद्भुत है जिससे कि बुद्धि इन्द्रियों के विषय को अच्छेप्रकार नहीं जानती इससे बाल्यावस्थामें महादुःख होताहै १०४ बोलने की इच्छा करता है पर क्याकरे बोल नहीं सक्ता व चञ्चल वायु भी बालपनमें बहुत दुःखदेती है दांतों के निकलने से बड़ा दुःख होता है १०५ व नानाप्रकारके बालरोगों से पीड़ित होताहै व बालग्रहोंसे भी पीड़ा होती है प्यास व भूखके मारे कभी २ बहुत पीड़ित होता है १०६ व मोहसे बालक विष्टा व मूत्रभी खा पी लेताहै व कौमारावस्था में कर्णवेध आदि संस्कार करने से माता पिताके ताड़नों से १०७ व अक्षर आदि के पढ़ने को गुरुआदि के शासनसे बालक बहुत दुःख बताते हैं व प्रमत्तेन्द्रिय होने के कारण कामरागादिकों से पीड़ित होते हैं १०८ इसप्रकारसे बाल्यावस्था के पीछे युवावस्था आती है उसमेंभी रोगोंकी वृद्धिके कारण सुख नहीं होता व सब ईर्ष्या करने से दुःख व मोहके कारण पीड़ित होताहै १०९ नेत्र रक्तपित्तके कारण अरुण रहते हैं इससे महादुःख मिलता है व कामाग्नि के खेद से रात्रिमें नींद नहीं आती ११० फिर दिनमें धन उपाज्जनकी चिन्ता से सुख कैसे मिलसक्ता है स्त्री को देखकर युवावस्था में पुरुषों के

काम के बिन्दु चूने लगते हैं १११ पर वे सुखके लिये नहीं होते जैसे कि पसीने के बिन्दु सुखके लिये नहीं होते जैसे पापी कोढ़ी को कीड़ों के ताड़न करने से सुख होता है ११२ वैसेही पुरुषों को स्त्रियों के सङ्ग प्रसङ्ग करने से सुख होता है जैसा सुख प्राणी धनके उपार्जन करने में मानता है ११३ वैसेही स्त्रीके सङ्ग भोग करने से होता है उस से अधिक नहीं मनुष्य को सोई वेदना है जिसके बिना चित्त निवृत्ति है ११४ परस्पर पहले प्राप्त अन्तमें और प्रकार की होवे तैसेही बुढ़ापासे ग्रस्त रोगों से युक्त ११५ अपूर्वकी तरह से आत्मा होजाता है क्योंकि बुढ़ापा से पीड़ित रहता है जो देखतेहुये भी विराग युक्त नहीं होता उससे और अचेतन कौन है ११६ बुढ़ापासे युक्त प्राणी स्त्री पुत्रादिक बांधव और दुराचारी नौकरों से अशक्त होनेके कारण अनादरको प्राप्त होता है ११७ बुढ़ापासे युक्त धर्म अर्थ काम और मोक्ष के साधन करने में नहीं समर्थ होता है इससे चाहिये कि युवावस्थाही में धर्म आचरणकरे ११८ क्योंकि जब वृद्धावस्थामें वात पित्त कफादिकोंकी विषमता होगी फिर वही तो व्याधि कहावेगा व वातादिकों के समूहही से यह देह बना है ११९ इससे इसको व्याधिमय शरीर जानना चाहिये वातादिकों के व्यतिरिक्त सब व्याधियों का तो पिंजराही देह है १२० इससे नानाप्रकारके रोगोंसे शरीरी अनेक प्रकारके दुःख पाता है वे दुःख अपनेही आत्माको जान पड़ते हैं और तुमसे क्या कहें १२१ इस देहमें एक सौ एक मृत्यु स्थित हैं तहां एक काल संयुक्त है सौ आगंतु हैं १२२ जो आगंतु कहे हैं वे तो औषधोंसे निवृत्त भी होजाते हैं परन्तु काल मृत्यु जप होम व विशेष दान देनेसे भी नहीं शान्त होता १२३ व जब मृत्यु नहीं होता तब विषादिकों के खालेने से भी नहीं होता व न बिना काल आये अकाल मृत्यु किसी का होता है १२४ फिर मृत्यु होने के समयमें मारने के लिये विविध प्रकार के व्याधि व सर्पादिजीव खड़े होजाते हैं व विष जलकी धारा अग्नि येही सब प्राणियों के मरने के द्वार हैं १२५ व चाहे अपने आप धन्वन्तरिहों पर मरण के समय सब रोगों से पीड़ित को नहीं आराम करसक्ते हैं १२६ व काल जब आजाता है तो कोई उसको वशीभूत

नहीं करसक्ता कि वह छोड़कर चलाजाय न औधष न तप न दान न माता न बांधव काल से पीड़ित नरकी रक्षा करसक्ते हैं १२७ रसायन तप जाप योग सिद्ध महात्मा ये कोई भी मृत्युको नहीं हटासक्ते व बड़े २ विज्ञानी भी मरनेपर कोटियों योनियों में जाकर जन्मलेते हैं व मरने पर कर्म के अनुसार देह पाते हैं व देह भेदसे जो पुरुषों का वियोग होताहै १२८ । १२९ उसको मरण कहते हैं पर परमार्थ से नाश नहीं होता जब कर्म के वशीभूत होकर प्राणी महापथ को प्राप्त होताहै १३० उसमें जो दुःख मरण के समय पाताहै वैसा कभी नहीं पाता मार्गमें अतिदुःखित होके हा तात ! हा मातः ! हा कांत ! ऐसा कह २ कर बड़े आर्त्तस्वरसे रोदन करते हैं व पुकारते हैं १३१ जैसे मण्डूक को सर्प निगलजाताहै ऐसेही मृत्यु सब जन्तुओं को निगल लेताहै तब बान्धवोंसे त्यागा हुआ व प्रियों से धिराहुआ १३२ ऊधीश्वासें लेता हुआ व उष्ण श्वासें लेने से मुख सूखे हुये लोग खट्वापर पड़ेहुये बार २ मोहित होते हैं १३३ व मूर्च्छित होकर इधर उधर हाथ पैर फटकारते हैं खट्वापर से भूमिपर आने की इच्छा करते हैं व भूमिपर से खट्वाकी व खट्वा पर से फिर पृथ्वी पर आने की इच्छा करते हैं १३४ व विवश होजाते लज्जा छोड़देते मूत्र व विष्ठा देहमें लगी होती कण्ठ तालु ओष्ठ सूखजाते हैं बार २ पानी पीने को मांगते हैं १३५ व पड़े २ चिन्ता करते हैं कि हमारे मरने पर हमारे ये सब द्रव्य किसके होंगे इतने में यमराज के दूत कण्ठ में फांसी लगाकर खींचने लगते हैं १३६ व सबके देखतेही देखते मरने लगताहै तो कण्ठ घुरघुराने लगता है व जीव इस शरीर से निकल कर दूसरे सूक्ष्म शरीर में प्रविष्ट होजाता है जैसे तृणजलौका नाम कीड़ा आगेके तृणको पकड़कर पीछेवाले तृणको छोड़देताहै १३७ जब देहान्तर को प्राप्त होताहै तो जीव पूर्वदेह को छोड़ताहै विवेकियों को मरण से अधिक दुःख किसी से प्रार्थना करनेमें होताहै १३८ क्योंकि मरण में एक क्षणमात्र का दुःख होताहै व प्रार्थना करने से अनन्त दुःख होताहै देखो जगत् भरके रक्षक श्रीविष्णुभगवान् वामनताको प्राप्तहुये १३९ फिर उनसे अधिक श्रेष्ठ कौन है

जो मांगे व लघुताको न प्राप्तहो यह अमृतोपमज्ञान हमने तुमसे कहा १४० इससे माता पिता व गुरुसे भी बार २ न प्रार्थनाकरे इस मांगने में प्रथम दुःख व मध्य में दुःख अन्तमें देने के समयमें भी दारुण दुःख होताहै १४१ इससे किसी से कुछ पदार्थ मांगने के समान और कोई दुःख नहीं है व वर्तमान भूत इतने दुःख जो हमने कहे १४२ उनको पुरुष नहीं शोचते न जन्मको शोचते और न उससे विरागको प्राप्त होते हैं देखो अतिआहार करने से महादुःख होताहै व विना आहार करनेसे उससे भी अधिक दुःख होताहै हां मध्यम भोजन करने से कुछ सुख होताहै वह कियाही नहीं जाता फिर सुख कहां मिलसक्ता है क्षुधा सब रोगों से व्याधि श्रेष्ठ है क्योंकि रोग तो औषध करने से शान्त होजाते हैं इससे क्षण-मात्रही दुःख देते हैं परन्तु क्षुधाकी पीड़ा ऐसी है कि पुरुष के सब बलका नाशही करडालती है १४३ । १४५ जैसे अन्य महारोगों के होने से नर मरजाताहै ऐसेही क्षुधा से युक्त होने से भी मृत-कही होजाता है व जिह्वाके आगे वर्तमान अन्नदिक के रसमें भी कौनसा सुखहै १४६ क्योंकि जबतक प्राणी युवा रहताहै तभीतक तो जिह्वाको रसादिका सुख जान पड़ताहै व जैसेही वृद्धावस्था आती है फिर तो वह बहुधा गलेके नीचेही नहीं उतरता फिर सुख कैसे हो वस क्षुधाके तापसे तापितपुरुषोंके लिये केवल अन्नही औषधकी नाई है और कुछ भी नहीं १४७ सो भी परमार्थता से कुछ सुखकेलिये नहीं होता क्योंकि मरना तो एकदिन पड़ताही है फिर सुख किसकाम का ठहरा हां जो सब कामों से विवर्जित रहे उसका कल्याण अ-मृतके तुल्य होताहै उसमें भी जो नेत्रोंसे देखनेका काम न लियाजा-य तो सबओर से जीवको अन्धकारही जानपड़े तो कौनसा सुखहो जो नेत्र मूँदरहे तो सुखको पकरताहै व जो देखतारहे तो नानाप्रका-रके रूपों के देखने से व उनमें लगजानेसे आत्माही हतहोताहै १४८ । १४९ पुरुष सुखकेलिये खेती वाणिज्य नौकरी चाकरी गोरक्षादि करते व और भी नानाप्रकारके परिश्रम करते हैं व उससे जो पाते हैं उसको सुखसमझते हैं प्रातःकाल मूत्र और पाखाना फिरना दुपहरमें भूख और

२६० पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

प्यास से १५० तृप्त कामनासे बाधित होते हैं रात्रिमें प्राणी निद्रासे सोते हैं द्रव्यके पैदाकरने में दुःख इकट्ठाकीहुई द्रव्यके रक्षणकरने में दुःख १५१ द्रव्यनाश में दुःख द्रव्यके स्पर्श में दुःख द्रव्ययुक्तको कह; सुखहै चोर जल अग्नि भैयाचार और राजा से १५२ नित्यही द्रव्यवानोंको डरहै जैसे देहधारियोंको मृत्युसेहै परन्तु जैसे पक्षीलोग आकाशमें मांसभक्षण करते व व्याघ्र सिंहादि पृथ्वी में मांसभक्षण करते हैं १५३ व जलमें मछलियां जलके विकार बहुतसे खाती हैं व आनन्दित रहती हैं ऐसेही धनवान् लोग अपने धनके भोग से आनन्दित रहते हैं इससे सम्पत्ति से विनोद करते हैं शोकहोने से दुःखही मानते हैं १५४ द्रव्यके इकट्ठा करनेके समयमें खेद करते हैं कब सुख का देनेवाला द्रव्यहोगा जो धनादिकोंके बटोरने में उद्विग्न रहता है पीछे उसको सबसे निःस्पृह होना पड़ता है १५५ इससे वह धनका स्वामी छोड़ने के समय बहुत दुःखीहोताहै उससे बढ़कर और कोई दुःख नहीं होताहै हेमन्तके शीतसे व ग्रीष्म के तापसे वर्षाकीधारा से धनादि उपार्जन करनेवालों को १५६ वात घाम व वृष्टिसे नानाप्रकारके दुःख होते हैं फिर उनको सुख कहां से आया विवाह कार्य करने में भी नानाप्रकार के दुःख होते हैं व फिर उससे उत्पन्न लड़के बालों के विष्ठादिक उठाने से दुःखही होते हैं वस इसीप्रकार यह विश्वमूर्ख होकर नानाप्रकारके कर्मों से घिराहुआ रहता है जब पुत्रादिकों को कोई दांत वा नेत्र में रोग हुआ तो उसे देख रोदन करताहै कि हा बड़े कष्टकीबातहै अब मैं क्याकरूं १५७। १५८ वाहन खोगया खेती भ्रष्टहोगई भार्या बड़ी प्रबलहुई पिता माता वृद्धहुये थे महिमानआये हैं नेत्रफूटगये हैं वस इत्यादि कर्म गृहके देख २ सदा दुःखितही रहता है १५९ मेरी स्त्री के छोटा बालक है इससे रन्धन कौन करेगा इसका शोक करताहै व विवाह के समय नहीं जानते कन्याको कैसा वर मिले १६० वस इन चिन्ताओं से तिरस्कृत कुटुम्बवालों को सुख कैसे होसکتाहै १६१ ॥

कुं० ॥ चिन्ता जाहि कुटुम्बकी होत पुरुष कहैं जब्ब । ताके श्रुत गुण तुरतही नष्ट होतहैं तब्ब ॥ नष्टहोतहैं तब्ब यथाकाचेघटमार्हीं ।

जलभरनेसों टपकजात ठहरत तहँ नाहीं॥ इमि देहहिं केसंग सकल
विज्ञान भनिन्ता । नष्टहोत हैं तामुजासु स्वकुटुम्बीचिन्ता १६२ ॥

व राज्य पानेपर भी इससे मिलाप करनाहै इससे बिगाड़ करना
है इस चिन्ताके मारे कहांसुख मिलसक्ताहै क्योंकि उसमें तो पुत्रसे
भी भय बना रहताहै कि ऐसा न हो कि किसीयुक्तिसे हमको मार
कर राज्य यह न लेले फिर उसमें सुख कैसे है १६३ व उसकी जाति
वाले प्रायः सब उसके वैरी रहते हैं व उससे ईर्ष्या करते रहते हैं
क्योंकि एकही उसी राज्यके अभिलाषी सब होते हैं इससे परस्पर
कुत्तोंकासा कलह हुआ करताहै १६४ इससे हे राजन् ! राज्यादिमें
भी पुरुषको कोई सुख नहीं मिलता केवल सुख उसीको मिलता है
जो सबको छोड़कर निर्भय हो एकान्तमें बैठ रहताहै १६५ देखो
बड़ाभारी महाराजाधिराज कार्तवीर्यार्जुन को प्रतापी ऋषिके पुत्र
अकेले परशुरामजीने युद्धमें मारडाला १६६ व उन महात्माका भी
वीर्य महाराज दशरथजी के पुत्र श्रीरामचन्द्रजी ने नष्ट करदिया
१६७ जरासंधने रामजी के यशको तेजसे नाश किया जरासंध को
भीमसेनने मारा भीमसेन को हनुमान्जी ने परास्त किया १६८
हनुमान्जी सूर्यजी के फेंकेहुये पृथ्वीपर गिरपड़े व जिन अर्जुन ने
सहाबल से दर्पित निवातकवचनाम दानवों को मारडाला उनको
पीछे से गोपालों ने जीतलिया सूर्य बड़े प्रतापसे युक्तभी हैं परन्तु
कभी २ बादलों से आच्छादित होजाते हैं १६९। १७० व उनबादलों
को पवन दूर २ उड़ा लेजाताहै व उस पवनके वीर्य को पर्वतों
ने जीतलिया व पर्वतों को अग्नि जलादेता है उसको जल शान्त
करदेता है १७१ उस जलको सूर्य शोषलेते हैं व सूर्य जलादि
सब ब्रह्माजी के एकदिन में नष्ट होजाते हैं १७२ व ब्रह्माभी पित-
रों व देवताओं के संग परार्द्ध द्वय कालके अन्तमें परमात्मा शिव
में मिल जाते हैं १७३ इस प्रकार इस संसारमें सर्वोत्तम बलवान्
परमात्मा जगन्नाथ अव्ययको छोड़ और कोई नहीं है १७४ ऐसा
सातिशय परमेश्वरको जानकर प्राणीको चाहिये कि अतिमानन करे
इस प्रकारके जगत् में कौन देवता वा पण्डित १७५ कोईभी सर्ववेत्ता

नहीं है व न अत्यन्तमूर्खही कोई है जो जबतक कुछ जानता है तब तक पण्डित कहाता है १७६ परन्तु सदा उसका प्रभाव समान नहीं बनारहता कहीं २ ऐसा एकआधा मनुष्य वा देव दिखाई देता है कि जिसका प्रभाव जन्मपर्यन्त एकसा चला गया हो १७७ दानव लोग कभी २ देवताओं को जीतलेते हैं फिर देवगण उनको जीतलेते हैं एकान्ततः सदा एकहीका जय वा पराजय नहीं हुआ करता १७८ राजा भी दो वस्त्र व प्रस्थमात्र भोजन कुछ पीनेका पदार्थ सवारी शय्या सब व बैठने के लिये एक चौकीआदि इतनेहीका अधिकारी है अन्य पदार्थ तो दुःखद हैं क्योंकि उनकी देखाभाली उसको करनी पड़ती है १७९ सैकड़ों शय्या व मन्दिरहों पर उसके अधिकारमें एक खट्वा मात्र रहती है व हजारों जलपात्र गृह में रहते पर सब दुःखद केवल एक जलपात्रसे उसका प्रयोजन चलता है १८० प्रातःकाल सब नगरनिवासियोंके शब्दकेसहित नगरों का शब्दहोना केवल राज्यका अभिमानमात्र है कि हमारे गृहमें नगारे बाजते हैं १८१ सब आभरण भार रूप हैं व सब आलेपन भी मलही हैं व सब गाना मुहबाना है व सब नाचना उन्माद का साजना है १८२ इस प्रकारके राज्यभोगों से जो विचारकरे तो कहां सुख है क्योंकि परस्पर जीतने की इच्छा कियेहुये राजाओं को विग्रहकी चिन्ता बनीरहती है १८३ प्रायः लक्ष्मीमदवाले नहुषादिक बड़े राजा स्वर्ग में प्राप्तहुये और फिर पृथ्वीमें पतित हुये लक्ष्मीसे कौन सुखपाता है १८४ व स्वर्गमें भी कहां सुख है क्योंकि दूसरे की शोभा अधिक देखवहां भी तो स्पर्धा करने लगते हैं क्योंकि अपनेसे ऊपरवाले देवोंको जब अधिक शोभावानु देखते हैं तो इच्छा होती है पर वह उनको नहीं मिलता १८५ क्योंकि मनुष्य जितना यहां दान पुण्यादि करता है उतनाही स्वर्ग में भोगने को मिलता है किसीका अधिक देखकर उसे कैसे मिले तब वहां मन करता है कि अबकी भूमिपर जन्म होगा तो अधिक पुण्य दान यज्ञादि करेंगे १८६ जब पुण्य क्षीणहुआ कि फिर पृथ्वीपर गिरपड़े व ऐसेही अन्य देवगण भी पुण्यक्षीण होनेपर स्वर्ग से पृथ्वीपर गिरते हैं १८७ सुखकी अभिलाषाही में निष्ठा कियेहुये देवोंका जब स्वर्गसे पातहोता है तो

अकस्मात् पतित होनेके कारण स्वर्गवासियोंको भी दुःखही होता है १८८ इसप्रकार विचार करनेपर स्वर्ग में देवताओंको भी कुछ सुख नहीं है स्वर्ग के सुख भोगने से जो कर्म यहां करके स्वर्गको जाता है उनका नाश होजाता है १८९ वहां फिर महादारुणकष्ट स्वर्गवासियोंको होता है यह कष्ट तो ऐसाही होता है जैसे नरकवासियोंको होता है जोकि यहां मनवचन व शरीरसे तीनप्रकारके पापकरके जाते हैं वे भोगते हैं १९० पापीलोग जैसेही नरकमें पहुँचते हैं कि कुल्हाड़ियों से उनके अङ्ग छिन्न भिन्न करडालेजाते हैं तो पत्थरों की वर्षा ऊपरसे होती है कहीं २ वृक्ष उखड़ २ ऊपर गिरते हैं कहीं प्रचण्ड पवनका वेग चलता है कहीं २ उठाकर एकस्थान से दूसरे में फेंक दियेजाते हैं १९१ कहीं २ मर्दन करडालेजाते हैं कहीं २ गजोंसे मर्दन कराते व कहीं २ अन्य प्राणियोंसे कहीं २ दावानलोंसे जलाये जाते कहीं २ अत्यन्त शीत में डाल दियेजाते हैं व कहीं कहीं अन्य स्थावरों वा जङ्गमों से दुःखपाते हैं १९२ ऐसेही बड़े २ विषधर क्रोधी सर्पों से कटाये जाते हैं जिससे दारुण दुःख उत्पन्नहोते हैं दुष्टोंका घात लोकही में पाशोंसे बांधकर यमदूत करते हैं १९३ व फिर कीटादि योनियों में बार २ जन्म लेना पड़ता है व सर्पादिकोंकी योनियों में भी जन्मना पड़ता है इसप्रकार अनेक प्रकारके दुःख भोगने पड़ते हैं १९४ पशुओं की आत्मा का शमन दंड से ताड़न नाक के छेदने से त्रास कोड़ा से ताड़न १९५ बेंत काष्ठादिक निगड़ों और अंकुश से अंगबन्धन भाव मनसे क्लेशों से भिक्षा युवादि से पीड़न १९६ अपने यूथ के वियोगों से जबर्दस्ती लाकर बांधने में इसप्रकार पशुओं की देहों में अनेक प्रकार के दुःख होते हैं १९७ वर्षा शीत व घामसे बड़ा दुःख मिलता है व ग्रहोंसे पक्षियों से अत्यन्त दुःख मिलते हैं ऐसेही अन्यभी बड़े २ शरीरवाले प्राणियोंसे दुःखमिलता है इसप्रकार नानाभांति के दुःख प्राणीको होते हैं १९८ गर्भवास में दुःख जन्महोने पर भी मनुष्यों को सब दुःखही दुःख हैं क्योंकि बाल्यावस्थामें सुचाल चलने के लिये गुरु शिक्षा होनेसे दुःखमिलता है १९९ व युवावस्था में काम व नाना

प्रकारके रागोंसे और ईर्ष्या से अपनेआप दुःख होते हैं कृषी वाणिज्य सेवा गोरक्षादि कर्मोंसे भी दुःखही होते हैं २०० व वृद्धतामें जरा व व्याधियों से पीड़ित होने से दुःखहोते हैं व मरण में महादुःख और किसीसे कुछ मांगने में उससे भी अधिक महादुःख होता है २०१ राजा अग्नि मेघ चौर व शत्रुओं से महादुःख मिलते हैं व धनकी रक्षामें धननाश और धनके खर्चमें नानाप्रकारके दुःख मिलते हैं २०२ कार्पण्य मत्सर दम्भ और धनकी अधिकता में महाभय बनारहता है अकर्तव्य करनेमें प्रवृत्त धनवानों को तो सदा दुःखही दुःख रहते हैं २०३ ब्याजलेना भृत्योंकीसी वृत्ति है व परतन्त्रताको दासत्व कहते हैं इष्ट अनिष्टके योगसे संयोग हजारों तरहके होते हैं २०४ दुर्भिक्ष पड़नेपर अभाग्यता मूर्खता व दरिद्रता किसीके अधीन होकर रहना व राजासे विग्रहये सब नरक हैं २०५ परस्परके तिरस्कार का दुःख व परस्परका भय परस्परसे क्रोधहोना ये सब दुःख राजाको राजाओं से रहते हैं २०६ भावोंकी अनित्यता कृतकाम्य देहधारी को होते हैं परस्पर एक दूसरेका मर्म भेदन किया करता है व नित्य एक दूसरेकी पीड़ा चाहता है २०७ परस्पर पापके भेदसे लोभी हैं व अन्योन्य एक दूसरे को भक्षण भी करलेता है जिससे कि इत्यादि दुःखों से चर अचर सब भय युक्त रहता है २०८ नारकी योनिवालों से लेकर मनुष्य पर्यन्त सबको ये दुःख होते हैं इससे पण्डित को चाहिये कि इन सबोंको त्यागे जैसे इस कन्धेपरसे उतारकर भारको दूसरेकन्धेपर धरनेसे मनुष्य सुस्ताना समझता है २०९ ऐसेही सब संसार एक दुःखदके करनेसे दूसरे दुःखदको सुखद समझता है इसीप्रकार परस्पर की अतिशयता को देख मारे दुःख के व्याकुल होकर देवलोग भी सदा दुःखितही बनेरहते हैं व बहुतदिनों के पीछे जब उनका पुण्य क्षीण होता है तो फिर मनुष्यादिकों में जन्म पाते हैं २१० । २११ व विविध प्रकारके रोग देवलोकमें भी होते हैं यज्ञका शिरकटाहुआ अश्विनीकुमारोंने जोड़ा २१२ तिसीदोष से यज्ञके सदैव शिरकारोग होता है सूर्यके कोढ़ वरुणके जलोदर २१३ पूषाके दाँतोंकी विकलता इन्द्रके भुजोंका रुकना चन्द्रमा के बड़ा

भारी क्षयीरोग है २१४ व दक्षप्रजापति के बड़ा भारी ज्वर बहुतदि-
नोंतक बनारहा व कल्प २ में बड़े २ देवताओंका भी नाश होताहै
२१५ व द्विपरार्द्धावसानमें ब्रह्माका भी नाशहोताहै व दक्षकी कन्या
जो कि उनकी पौत्रीथी ब्रह्माने उससे भोगकरना चाहाथा २१६ प-
रन्तु जब वह देवी अपने योगाभ्यास से अन्तर्दान होगई तो ब्रह्मा
भी उसको शाप देतेभये जहां काम क्रोध स्थित रहते हैं वहां उसी
प्रकारके दोष हुआ करते हैं २१७ व सब दुःखभी वहां स्थित रहते
हैं इसमें कुछभी संशय नहीं है वृद्धता व जन्म मरण सब भोजन
करना हविका भोजन २१८ स्त्रीका वधकरना कामासक्तहोना व पा-
ण्डवों के दलमें सारथ्यकरना श्रीकृष्णचन्द्रजी को भी पड़ा व रुद्रने
क्रोधकर त्रिपुरको भस्मकिया व दक्षका यज्ञविनाश २१९ ऐसेही स्क-
न्दकाभी जन्महुआ व सहस्रों क्रीड़ायें उन्होंने ने कीं इसीप्रकार तीनों
देवदेवभी रागादिकों से युक्तरहते हैं २२० व जो इन तीनों से परे
सनातन शान्त परिपूर्णस्वामी है वह मुक्तिदायक है ऐसेही सब ज-
गत् परस्परकी अतिशयतामें स्थित रहताहै २२१ व नानाप्रकारके
दुःखों से व्याकुल रहता है ऐसा जानकर इस संसार से निम्मोह
होनाचाहिये क्योंकि निम्मोह होनेसे विराग होताहै व विरागसे ज्ञान
की उत्पत्ति होतीहै २२२ ॥

चौ० ज्ञानपाय परमेश्वर जानी । अनघअनादि सकलगुणखानी ॥
परब्रह्म परमात्महि पावै । कोटि जन्मके पाप नशवै ॥
सब दुखरहित स्वस्थचित होई । है निर्मुक्त सुखी नर सोई ॥
पुनि सर्वज्ञ पूर्ण है मुक्तिग । मुक्ति कहावत नर है भुक्तिग ॥
यह तुमसन सब चरित सुनावा । जो पूँछ्यहु भूपति मनभावा ॥
धर्माधर्म विवेक सुहावन । होत ज्ञान सों अतिशय पावन ॥
अब चलिये ययाति नृप आप । इन्द्र बुलावत हैं गत पापू ॥
अपरकथाकुछपूछनचहहू । तोपुनिगुनिमनमहँसोंकहहू २२३ । २२५ ॥

इति श्रीपाद्मवेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

पितृमातृतीर्थमाहात्म्येष्टपष्ठितमोऽध्यायः ६६-॥

सरसठवां अध्याय ॥

दो० सरसठयें महँ नरन के भाषे कर्मविपाक ॥

तहँ प्रसङ्ग सों पापकर जनन जात कह नाक १

इतनी कथा सुन राजाययाति मातलिसे बोले कि हमारे भाग्य के प्रसंग से आपने हमको दर्शन दिया व इन्द्र के सारथि आप हमारे अतिथि हुये यह भी हमारे भाग्यहीका प्रभाव है १ मनुष्य लोग मर्त्यलोक में नित्य दारुण पाप करते हैं हे मातलिजी ! उनके कर्मोंका विपाक हमसे इस समय कहो २ मातलि बोले कि सुनो हम पापाचार का लक्षण कहेंगे उसके सुनते २ महाज्ञान इस लोक में होता है ३ जो कोई वेदोंकी निन्दा करते हैं वा वेदविहित आचारकी निन्दा करते हैं ज्ञानी पण्डितों ने इसको महापापों में बताया है ४ व जो कोई सब साधुओं को पीड़ित करता है यह भी महापातक है प्रायश्चित्तही से जाता है ५ व जो कोई अपने कुलके आचार को छोड़कर अन्य कुलका आचार करता है यह भी बड़ाघोर पाप कृत्यके जानने वालों ने कहा है ६ व जो कोई माता पिताकी निन्दा करता है वा अपनी भगिनी को ताड़ित करता है व फूफू की निन्दा करता है वह भी महापापी है ७ हे राजन् ! श्राद्धकाल आने पर भी पांच कोसके भीतर में टिकेहुये कन्यासहित अपने जामाता और नाती को जो नहीं निमन्त्रण देकर बुलाता ८ वा अपने बहनोई व बहिन को नहीं बुलाता व औरों को बुलाता खिलाता है चाहे कामसे वा क्रोध से वा भयसे ९ तो उसके पितर श्राद्ध में भोजन नहीं करते व विश्वेदेव भी परित्याग करके चलेजाते हैं यह पाप पिताके मारनेके समान होता है १० व दानके कालमें भी जो दान के समय ब्राह्मण के आजाने में बड़े दानको छोड़ कुछको दान देवे ११ व एक को दान दे व औरोंको कुछ भी न दे तो यह अतिघोर पाप दान का नाश करनेवाला कहा गया है १२ व यजमान के गृह में जितने ब्राह्मणहों जो उनको छोड़कर दान करता है वह दानका लक्षण नहीं है १३ धर्म आचार से युक्त आश्रित ब्राह्मणको सब उपायों से

बहुत दान देवे १४ मूर्ख विद्वान् न गिने ब्राह्मण सदा पालने योग्य है बहुत दानोंसे दाता सब पुण्योंसे युक्त होता है १५ व जहां सदाका पूज्य ब्राह्मण आवे व उसकी पूजा किसी कारणसे न की जाय व औरोंकी की जाय १६ तो उसके दान हवन सब निष्फल हो जाते हैं इसमें संदेह नहीं है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य चौथा वर्ण शूद्र १७ पुण्यकालमें आश्रित ब्राह्मण चाहे पढ़ा लिखा हो वा मूर्ख ही ब्राह्मण हो जो उसको दान दे तो उसके पुण्यका फल हमसे सुनो १८ अश्वमेध यज्ञ करनेका फल होता है कोई मनुष्य किसी कार्य के लिये किसीके समीप आवे तो यदि उसके करने से होसक्ता हो तो उसे विमुख न करे १९ और ब्राह्मण तिस समय श्राद्धकर्ममें आवे तो दोनोंकी भोजन और वस्त्रोंसे पूजा करे २० ताम्बूल दक्षिणा देवे क्योंकि ऐसा करनेपर उसके पितर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं श्राद्ध भोजन किये हुये ब्राह्मणको सदैव दान दक्षिणा देना चाहिये २१ जो श्राद्धकर्त्ता नहीं देता तो उसको गोहत्या के समान पाप होता है तिससे श्रद्धासे दो ब्राह्मणों की पूजा करे धनहीन में एकहीको पूजे क्योंकि इनमें से कुछ भी करने से ब्रह्महत्या का दोष उसे लगता है वैसेही श्राद्धकर्त्ता भी जो ऐसा करता है ब्रह्महा होता है इससे श्राद्ध करनेवाले व भोजन करनेवाले दोनोंको ब्रह्मचर्यसे रहकर ऊपरके लिखे हुये आचार से रहना चाहिये २२।२३ हे नृपोत्तम ! जब व्यतीपात वा वैधृतियोग आवे व अमावास्या तिथि आवे वा क्षयाह की तिथि आवे तो ब्राह्मणादि तीनों वर्णों को इनमें श्राद्ध करना चाहिये २४ हे महाराज ! जैसे यज्ञमें ऋत्विज् करे वैसेही श्राद्ध में सदैव ब्राह्मण करने चाहिये २५ जाननेवाला मनुष्य बिना जाना हुआ ब्राह्मण श्राद्ध में न करे जिसका वंश और तीन पीढ़ी जानता हो उसे करे २६ जो ब्राह्मण आचारसे युक्त हो उसको श्राद्धमें निमन्त्रित करे जिसका कुल न जानता हो उसे आचारसे विचारना चाहिये २७ श्राद्ध दान में शुद्ध वेदवेदाङ्ग का पारगामी जाना हुआ ही ब्राह्मण हो २८ तब श्राद्ध दान करना चाहिये तिससे ब्राह्मणको निमन्त्रण करे और अपूर्व आतिथ्य करे २९ अन्यथा जो षापी करता है वह निश्चय नरक को जाता है तिससे दान श्राद्ध और

पर्वों में ब्राह्मण करना चाहिये ३० श्राद्ध दान में पहले ब्राह्मण की परीक्षाकर श्राद्ध दान करै ब्राह्मण के विना भोजन कराये तिसके घर में पितर भोजन नहीं करते हैं ३१ व जिस श्राद्धमें ब्राह्मणों को भोजन नहीं दिया जाता पितर कर्त्ता को शाप देकर चलेजाते हैं व वह महापापी होता है चाहे ब्रह्मा के समान भी हो ३२ व जो आचार नहीं करता मोहसे श्राद्धके दिन मैथुनादि कर बैठता है वह महापापी जाना जाता है व सब धर्मों से बाहर समझा जाता है ३३ जो लोग वैष्णव वा भोगदाता शैव ब्राह्मणको त्याग देते हैं वा ब्राह्मणके धर्म की निन्दा करते हैं उनको महापापी जानना चाहिये ३४ व जो शिव के आचारको त्याग देते हैं वा शैवोंसे वैर करते हैं व जो हरिकी निन्दा करते हैं व ब्राह्मण मात्र से वैर रखते हैं ३५ व जो आचार की निन्दा करते हैं वे महापापी हैं पहले श्रेष्ठ ज्ञानयुक्त पुण्यकारी भागवत पूजनी चाहिये ३६ फिर विष्णुपुराण हरिवंश मत्स्य वा कूर्म और पद्मपुराण पूजना चाहिये जे पूजते हैं तिनके कल्याण को हम कहते हैं ३७ तिसने प्रत्यक्ष मधुसूदन देवको पूजा तिससे वैष्णव ज्ञान विष्णु के प्रियको पूजै ३८ देव स्थान में नित्यही वैष्णव पुस्तक को पूजै तिसके पूजने से लक्ष्मीपतिजी पूजित होजाते हैं ३९ हरिकी ज्ञानवाली पुस्तक की विना पूजा किये जे गाते और लिखते हैं और विना जाने तिसको देते सुनते उच्चारण करते हैं ४० लोभसे कुत्सित ज्ञान नियमसे बेंच डालते हैं और इष्ट मित्रको विना झारी बहारी भूमि में बैठा देते हैं ४१ हरिका ज्ञान यथा क्षेम प्रत्यक्ष से प्रकाशित करै जो समर्थ होकर पढ़ा है परन्तु प्रमाद करता है ४२ वा अपवित्र आप अपवित्र स्थानमें उसे पढ़ता है वा सुनता है वह भी पापी होता है यह संक्षेप रीति से ज्ञानका माहात्म्य व प्रकार हमने तुमसे वर्णन किया अभी और ज्ञानकी बातें कहते हैं ४३ जो विना गुरुकी पूजा किये उससे शास्त्र सुनता है व विना उसकी शुश्रूषा किये भाव से आज्ञा भंग करने लगता है ४४ व जो गुरुवचन का प्रमाण नहीं करता व उसको बहुधा उत्तर देता है व गुरुका कर्म उसके करने से होसका है पर उसकी उपेक्षा करता है ४५ व गुरु दुःखित अशक्त वि-

देश गये शत्रुओं से पीड़ित हों पर पापी मनुष्य गुरुको छोड़कर कहीं चलाजाता है ४६ वह महापापी गिना व समझा जाता है व जो कोई किसी स्थान पर पुराण पढ़ाजाता हो व उसमें विघ्न करता है तिसके पाप को हम कहते हैं वह तबतक कुम्भीपाक नाम नरक में पड़ा रहता है कि जबतक चौदह इन्द्र भोग करते हैं ४७ व पढ़तेहुये गुरु की जो पापी उपेक्षा करता है वह बहुत दिनोंतक घोर नरकों में निवास करता है ४८ व जो अपनी पतिव्रता भार्या व आज्ञाकारी पुत्र और मित्रका अनादर करता है इसका पाप भी गुरुनिन्दां समान होता है ४९ ब्राह्मण का मारनेवाला सोनाचुरानेवाला मदिरा को पीनेवाला गुरु की शय्या पर जानेवाला और पांचवां तिनका संयोगी ये महापापी कहाते हैं ५० क्रोध द्वेष लोभ व भयसे विशेष करके ब्राह्मण की कोई हानि करता है वह ब्राह्मण का मारनेवाला होता है ५१ व जो मांगते हुये निर्द्धन ब्राह्मण को बुलाकर पीछे से कहदेता है कि हमारे पास कुछ नहीं है वह ब्रह्मघाती कहाता है ५२ जो विद्याके अभिमान से सभा के मध्य में ब्राह्मण को निस्तेज वा उदासीन करता है वह ब्राह्मण का मारनेवाला कहाता है ५३ व जो मिथ्या गुणों से अपनी प्रशंसा करता है व जो गुरु से विरोध करता है वह भी ब्रह्मघाती कहाता है ५४ व क्षुधा तृष्णा से व्याकुल होकर भोजन करने की इच्छा कियेहुये किसी प्राणी के विषय में जो विघ्न करता है उस को पण्डित लोग ब्रह्मघाती कहते हैं ५५ सब मनुष्यों का चुगल छिद्र दूँदनेमें तत्पर उद्वेजन करनेवाला और क्रूर ये भी ब्राह्मण के मारनेवाले हैं ५६ देवता ब्राह्मण और गौवोंकी पहले दीहुई और कुछ कालसे नष्ट हुई भूमिको हरलेता है तिसको ब्राह्मण का मारनेवाला कहते हैं ५७ जो ब्राह्मण की द्रव्य हरलेता है जो कि धरोहर धरी थी तिसको उत्तम ब्रह्महत्याके समान पाप होता है ५८ पञ्चयज्ञ कर्म के अग्निहोत्र को करके फिर छोड़ देता है व माता पिता गुरुकी कूट करता है वह भी ब्रह्मघाती कहाता है ५९ व जो कोई शिवभक्तों का अप्रिय करता है और अभक्ष्य मांस मत्स्यादि भोजन करता है व जो प्राणियों को मारा करता है ६० गौवों के गोंठ

में वन में ग्राम में व नगर में अग्नि लगादेताहै ये सब घोर पाप
 मदिरापानके समानहैं ६१ व जो दीन किसीका सर्वधन हरलेताहै
 व परस्त्री गज व अश्व किसीके हरलेताहै व गो भूमि चांदी कपड़ा
 ओषधियों के रस ६२ चन्दन अगर कूपर कस्तूरी रेशमी वस्त्र हर
 लेताहै और पराई धरोहर हरलेताहै ये सब पाप सुवर्ण हरनेके समान
 होते हैं ६३ व कन्या जब वरके योग्यहुई व वह देता नहीं उसे भी
 सुवर्णही हरनेका पाप होता है व जो पुत्र वा मित्रकी भार्या को वा
 बहिनों में गमन करताहै ६४ व जो विना विवाहीहुई किसी कन्याके
 संग भोग करताहै व जो ब्राह्मण क्षत्रिय होकर पासी कोरी चमार
 आदि अन्त्यजोंकी स्त्रीके संग भोग करताहै व अपने वंशकी किसी
 स्त्री से भोग करताहै उसे गुरुकी स्त्री के संग भोग करने के समान
 पाप होताहै ६५ व अन्य भी महापापों के तुल्य पाप जो कहेहैं वे
 सब पातकहैं उनसे कम उपपातकहैं ६६ ब्राह्मणोंको देने लो कहकर
 फिर जो नहीं देताहै व फिर ब्राह्मण का स्मरण नहीं करता यह उप-
 पातकों में गिना जाताहै ६७ ब्राह्मणकी द्रव्य का हरना व मर्यादा
 के विपरीत करना अतिमान अतिकोप करना व दम्भ कृतघ्नता ६८
 व और जगह विषय में आसक्त होना कृपणता व मत्सरकरना पर-
 स्त्रीगमन करना साध्वी कन्याको दूषित करना ६९ व परिवित्ति वा
 परिवेत्ताको कन्या देना वा उनके यहां यज्ञ कराना ये भी उपपातकों
 में हैं ज्येष्ठकी विद्यमानतामें जो कनिष्ठ भाई अपना विवाह करे वा
 राज्य भोगने लगे व ज्येष्ठ का विवाह न हुआहो व उसको राज्य न
 दियाहो तो ज्येष्ठपरिवित्ति व कनिष्ठपरिवेत्ता कहाताहै ये दोनों देव
 पितृकार्य से रहित होजाते हैं ७० व जो पुत्र मित्रकी स्त्री स्वामी
 को धनके अभावमें परित्याग करदेताहै वा भार्या साधु तपस्वी ७१
 धेनु क्षत्रिय वैश्य स्त्री शूद्र व शिव विष्णुके पूजन के वृक्ष बिल्व
 तुलसी पिप्पल आमलकी आदिको जो काटता है व पुण्यवाटिका
 फुलवाड़ी आदि का विनाश करताहै ७२ व जो जनों के रहनेवाले
 स्थानों में थोड़ी भी पीड़ा करताहै ऐसेही जो अपने भृत्यवर्गों को
 पीड़ित करताहै वा पशु धन धान्य वन किसी के हरलेताहै ७३ व

सब धान्यों में जो किसी प्रकार का विघ्न करता है पशुकी चोरी यज्ञके अयोग्यों को यज्ञ कराना यज्ञ तड़ाग वाटिका पुत्र स्त्री इनको जो बेंच डालता है ७४ तीर्थयात्रा व्रतादि सुकर्म इनको जो बेंचते हैं व जो स्त्री के धनसे जीते हैं स्त्री की भगसे अत्यन्त जीवित रहते हैं ७५ व जो अपना धर्म बेंचते हैं व धर्मका वर्णन करते हैं व जो पराये दोष कहते व जो पराये छिद्र देखा करते हैं ७६ जो परधन हरने की अभिलाषा करते हैं व परस्त्री को कुदृष्टि से देखते हैं हे महाराज ! सब पाप गोघातके समान हैं जो सब अस्र शस्त्र बनाता है व गऊ हरलेता व जो गऊ को बेंचता और जो अपने नौकर चाकरों के ऊपर निर्दयी होता व जो पशुओंको दमन कराता है ७७ ७८ व जो मिथ्यावचन बोलता है व मिथ्यावचन सुनता है व जो स्वामि-द्रोही गुरुद्रोही मायावी चञ्चल शठ ७९ स्त्री मित्र पुत्र बालक वृद्ध दुर्बल आतुर नौकर अतिथि बन्धु इन सबको भूखेहुये छोड़कर आप भोजन करता है ८० व जो लोग मीठे उत्तम पदार्थ अकेले भोजन करते हैं व औरों को मांगने परभी नहीं देते वे पृथक्पाकी कहाते हैं व सब वेदवादियों में निन्दित होते हैं ८१ व जो अजितेन्द्रिय किसी कार्यके करनेकेलिये नियमोंको ग्रहण करके फिर नहीं करते और मदिरा पीनेवालों से युक्त होकर जे पराई स्त्री में गमन करते ८२ क्षयरोगसे पीड़ित प्यास और भूखसे आतुर गऊको यज्ञ से नहीं पालते वे गऊ के मारनेवाले नारकी हैं ८३ सब पाप में रत चौपाये और खेतके काटनेवाले व साधु विप्र गुरुओं और गऊको ताड़ित करता है ८४ व जो अपनी पतिव्रता स्त्रीका परित्याग करते हैं व जो आलस्यके वशीभूत होकर बार २ सोताही रहता है ८५ व जो दुर्बलोंको जे नहीं पुष्ट करते नाशहुओं को नहीं ढूँढ़ते वा भारसे पीड़ित मनुष्योंको और भी पीड़ित करते हैं वा घावयुक्तको चलाते हैं ८६ सब पापमें रत व जो पापियों के संग बैठकर एकत्र भोजन करते हैं व जो अंग भंग घाव रोगसे पीड़ित गोरूप भूखसे आतुर ८७ इनका पालन यज्ञसे नहीं करते ये सब नरकको जाते हैं व जो पापीलोग बैलों के अण्डे कुटाते हैं ८८ व गाइयों के बछड़ोंको बाधा करवाते

हैं वे सब महानारकी होते हैं जो आशाकरके द्वारपर आयेहुये भैख
 प्यास श्रमसे पीड़ित=९ अतिथिको नहीं मानते वे नरकगामी होते हैं
 अनाथ विकल दीन बाल वृद्ध व बीमारके ऊपर ९० जो मूढ़ दया
 नहीं करते वे सब नरकगामी होते हैं व ब्राह्मण होकर जो बकरियां
 पालता है वा भैंसोंको गाड़ी हल आदिमें जोतता है व शूद्रकी स्त्री
 और दासीको अपने घर बैठा लेता है ये भी सब नरकगामी होते हैं
 ९१ व शूद्रहोकर जो कोई ब्राह्मण वा क्षत्रियके आचार करने में प्रवृ-
 त्त होता है ब्राह्मण होकर जो राज बढई दरजी आदि शिल्पियों का
 काम करता है व किंदिहिर आदि बनाता है वा वैद्यकी करता है और
 देवताके मन्दिर में जीविकालेकर पूजा करता है ९२ नौकर और मन्त्री
 के कर्मके करनेवाले सब नरकजाते हैं जो कहे हुयेको अतिक्रमणकर
 अपनी इच्छासे कर लेता है ९३ वह नरकों में पचता है और जो वृ-
 था दण्ड देता है वह अधिकारी उत्कोचक और चोरों से पीड़ित हो-
 ता है ९४ जिस राजाकी राज्यमें प्रजा नरकोंमें पचते हैं और जे ब्राह्म-
 ण क्षत्रिय वैश्य पापवर्त्ती राजा को ग्रहण करते हैं वे भी निस्संदेह
 घोरनरकों में जाते हैं पराईस्त्री से गमन करनेवाले व चोरोंको जो पाप
 होता है वह न रक्षा करनेवाले राजा को होता है परस्त्रीगामी व चोरों
 से रक्षा न करनेवाले राजाको वेही नरक होते हैं जोकि परस्त्रीरतोंको व
 तस्करोंको होते हैं व जिसके राज्यमें चोर अचोरके समान व अचोर
 चोरोंके समान समझे जाते हैं ९५ । ९७ कुछ निर्णय नहीं होता उस
 राजा को नरक होता है व घृत तैल अन्न पानादि मधु मदिरा मांस
 आसव ९८ गुड़ ऊख दुग्ध शाकादि मूल फल दधि तृण इन्धन पु-
 ष्प पत्र व कांस्य के पात्र ९९ जूता छतुरी पालकी कोमल आसन
 ताघ सीसक पित्तल व जलसे उत्पन्न सब पदार्थ १०० बाजा बाँस
 घरकी सामग्री ऊन कपास रेशम वा रेशमीवस्त्र व भेड़ी ऊँटके रोमोंसे
 बनेहुये कम्बलादि १०१ रुई सूक्ष्मवस्त्र लोभसे जो कोई इनकी चोरी
 करता है वा नानाप्रकार की औरही द्रव्य हर लेता है १०२ वह शीघ्र
 नरकों में जाता है थोड़ी सरसोंभरभी दूसरेकी द्रव्य हरता है तो नि-
 स्संदेह नरकमें जाता है बहुत वा थोड़ी दूसरेकी द्रव्य १०३ । १०४

हरकर मनुष्य निस्संदेह नरकको जाता है इसी प्रकारके पापों से मनुष्य १०५ शरीरघातन के लिये पहलेके आकारको प्राप्त होते हैं फिर शरीर में स्थित यमराजकी आज्ञासे यमलोकको जाते हैं १०६ मार्ग में यमदूत अतिकराल ताड़ना करते हैं व उनके सङ्गजाने से महादुःख भोगते हैं फिर धर्मराज की आज्ञासे पापी देव मानुष वा तिर्यग्योनियों में जन्मपाते हैं १०७ धर्मराज शासन करनेवाले विनय आचार युक्त और प्रमादसे मलिन आत्मावालों को अनेक प्रकारके घोरवधों से पीड़ित करते हैं १०८ यहां तो विनय आचार युक्तको देख दण्डदेनेवाला चाहे कुछ शील संकोच भी करजाय परन्तु यमराजजी कुछभी शील संकोच नहीं करते पापानुसारदण्डदेही देते हैं परस्त्रीगामी व चोरों को तथा अन्याय करनेवालों को १०९ राजा दण्डदाता कहा है छिपेहुओंको धर्मराज हैं इससे जो कोई कुछ पापकरे भी उसको चाहिये कि उसका प्रायश्चित्तभी यहीं अपने वित्तकुलके अनुसार करडाले ११० नहीं तो वहां जाकर कोटि कल्प पर्यन्त नरक भोगकरते हुये पापके फल भोगनेहोंगे ॥

चौ० कर्मकरत वा आनकरावत । अनुमोदित करि त्यहिहरषावत ॥
कर्मवचन मनसों जो प्राणी । जात अधोगति सत्यवखानी ॥
धन अरु धान्य नारि परिहारी । उनकी गति संक्षेप उचारी ॥
पापकारि नर नारिन केरी । कही विचित्र कुगतिकी ढेरी ॥
अपर कहेंका कहहु भुआला । जो पूछन तुम चहुत रसाला ॥
धर्म अधर्म सकलफल गाउब । भलीभांति नृपतुम्हें सुनाउब ॥
बोले हरि सुनु भूप महाना । इमिमातलि सबकीन बखाना ॥
धर्म प्रसङ्ग ययाति नृपाला । सुनिगुनिमनपुनि मयहुनिहाला ॥
सकल अधर्म प्रसङ्ग सुनावा । तासु त्यागकर यत्न बतावा ॥
पुनियममार्ग कहन सो लागा । राजा सुनतसंहितानुरागा १११११५

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डे भाषानुवादेवेनोपाख्यानेपितृ

तीर्थवर्णनेययातिचरित्रेसप्तषष्ठितमोऽध्यायः ६७ ॥

अड़सठवां अध्याय ॥

दो० अड़सठयें महुँ कह बहुत दान मान करिजोय ॥

विप्रनकहुँ आदरकरे यममग सुखलहसोय १

राजा ययातिजी बोले कि हे मातलिजी ! अधर्म का फल सब हमने सुना अब धर्मका फल कहिये क्योंकि धर्म फल सुननेमें हम को कौतूहल है १ मातलि फिर राजा ययातिजी से बोले कि इन सब पापों के करनेवाले चार प्रकार के जन सब यमपुरको जातेहैं जहां नानाप्रकारके घोरभय दिखाई देतेहैं जिससे सब प्राणी विवश हो-जातेहैं २ गर्भके भीतरहीसे वा उत्पन्न होनेसे बाल्यावस्थासे अथवा तरुण अवस्था से व मध्यमावस्था से पुरुष स्त्री वा नपुंसक वा वृद्ध सबको पाप करनेपर यमपुर जाना पड़ताहै ३ वहां प्राणियोंके शुभा-शुभकर्मोंका विचारहोताहै विचार सब देखनेवाले चित्र गुप्तादिकोंके सङ्ग और मध्यस्थ लोग करते करातेहैं ४ ऐसे प्राणी यहां कोई नहीं हैं जो यमपुरको नहीं जाते व उनके विचारेहुये कर्म अवश्य भोगने पड़तेहैं ५ वहां जो शुभकर्म करनेवाले सौम्यचित्त व दयायुक्त लोग होतेहैं वे लोग सौम्यमार्ग होकर यमपुरको जातेहैं ६ जो कोई यहां ब्राह्मणोंको जूता खराऊँ आदि देतेहैं वे लोग बड़े भारी विमानपर चढ़ सुखसे यमालय को जातेहैं ७ व जो यहां ब्राह्मणको छत्र दान करते हैं वे मेघोंकी छायामें जातेहैं व वस्त्र देनेवाले सुन्दरवस्त्र धारण कियेहुये जातेहैं ८ व पालकी के देनेसे वहां विमानपर चढ़कर सुखसे जातेहैं व नालकी तामदानादि सुखासन देनेसे उन्हींपर चढ़कर सु-खपूर्वक प्राणी जाताहै ९ व पुष्पवाटिका वा साधारण वाटिकाके देने-वाले पुष्पकविमानपर चढ़कर शीतल छायामें सुखसे यमपुरको जाते हैं १० व विष्णु शिव देवी आदि देवताओंके मन्दिर बनवाने वाले लोग व संन्यासियों योगियों के स्थान बनवानेवाले अनाथ मंडपों के बनवानेवाले दिव्य मकानों के भीतर २ होकर धर्म राजपुरको जातेहैं ११ देव अग्नि गुरु व ब्राह्मण व माता पिताकी पूजा करने-

वाला भी १२ उत्तम गृहों के भीतरही भीतर होकर आनन्दपूर्वक सब देखता भालता चला जाता है ॥

कुण्डलियां ॥

श्रद्धासौगुणयुक्तदुःखभरेजननकोजोय । अल्पवस्तुहृदेतनरअति प्रसन्नचितहोय ॥ अतिप्रसन्नचितहोयदानकरु युतअभिलाषा । सो सुखसौयमलोकजाय निर्गत मदमाषा ॥ जासोबुधजन सकल सदा भाषहियहअद्धा । दानवहीहै श्रेष्ठ दीनकरिकै जोश्रद्धा १३ हितसों श्रद्धासहित जो दान करत चितलाय । वारिमात्र तृणधान्य कुठसो असंख्यहैजाय ॥ सोअसंख्य हैजाय नहींयामहँ कछुशङ्का । वर्णत हैंश्रुतिशास्त्र विप्रदीन्हें यहडङ्का ॥ विनयसनयकरि पात्रकाहिदेवत जो चितसों । सोपावतफल सकलदान सोजोकियहितसों १४ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानमाह

पितृतीर्थवर्णनेययातिचरित्रेऽष्टषष्टितमोऽध्यायः ६८ ॥

उनहत्तरवां अध्याय ॥

दो० उनहत्तरें महँ स्वर्ग के उपयोगी सब धर्म ॥

मातलिकह्यो ययातिसों पिप्पलपाहिसुकर्म १

मातलि राजाययातिजी से बोले कि जो धर्म हमने इस समय कहे हैं शिवजीने अपने तन्त्रमें कर्मयोगके प्रसंगसे बहुत प्रकार के कहे हैं १ वे सब धर्म हिंसादि दोषों से निर्मुक्तहैं व क्लेश परिश्रम रहित सब प्राणियोंको हित शुद्ध सूक्ष्म परिश्रमवाले बड़े फल देनेवाले २ अनन्त शाखाओं में कलित शिवमूलही में एक आश्रित ज्ञान ध्यान सुन्दर फूलोंसे युक्त सनातन शिवधर्म हैं ३ उन धर्मों को सनातन शिवजी धारण करतेहैं इसलिये सब शिवभक्तोंको भी धारण करने चाहियें व इसीसे वे शिवधर्म कहातेहैं जिससे कि संसारसागरके तारक हैं ४ अहिंसा क्षमा सत्य लज्जा श्रद्धा इन्द्रिय संयम दान यज्ञ करना तप दान ये दश धर्म के लक्षणहैं ५ इन्हीं सबोंसे क्रमसे वा उत्क्रमसे शिवधर्म बनाहै यद्यपि ये धर्म अकेले शिवजीकेही कहेहुये हैं पर सबके उपयोगी हैं ६ जैसे यह पृथ्वी

सब प्राणियों का साधारण स्थान है इससे सर्व साधारण के लिये उत्तम हैं व शिवभक्तों के लिये तो अत्युत्तम हैं ७ जैसे इस पृथ्वीपर सब प्राणियों के भोगविलास के पदार्थ विद्यमान हैं ऐसे ही नाना पुण्य विशेषता से शिवपुर में भी सब भोग हैं ८ जब तक सब प्राणी शुभाशुभ फल भोगते हैं तब तक भोगते हैं व जब शिवधर्म का फल भोगते हैं तो उसी अकेले ही से सब भोग भुक्त हो जाते हैं ९ जिसको पात्रविशेष के दानादि देने में श्रद्धा है उसको शिवपुर में जाकर बैठे २ सब भोग भोगने को मिलते हैं इससे प्रियतर व उत्तम भोग सब शिवपुर में स्थित हैं हे महाभाग ! इससे स्वर्गादि जीतने की इच्छा से पुण्यधर्म सदा करने चाहिये क्योंकि उस शिवपुर में सर्वाधिपत्य नहीं है किंतु आत्मभोगाधिपत्य है जितने दान पुण्य यहां करोगे उतने ही भोगने को मिलेंगे १० । १२ कोई २ ज्ञान योग में रत मनुष्य उस शिवपुर में जाकर मुक्त हो जाते हैं फिर और भोग में तत्पर संसार में लौट आते हैं १३ तिससे मुक्त की इच्छा करे तो भोग की आसक्ति को छोड़ देवे फिर शान्तचित्तात्मा शिव ज्ञान को प्राप्त होता है १४ जिनके महादेवजी में हृदय है और प्रसंग से शिवजी को पूजते हैं तिनको ईशजी भाव के अनुरूप से स्नान देते हैं १५ सो वे ही लोग जो यहां एकबार भी शिवका पूजन करते हैं उनके पाप हत हो जाते हैं उनको यमलोक में भी नाना प्रकार के भोगविलास शिवजी देते हैं १६ व जो शिव विष्णु आदि देवों की आराधना यहां नहीं करते वे प्राणी बड़े दुःखभार से पीड़ित होकर मरते हैं जो किसी को अन्नदान करता है वह पुण्यदाता कहा जाता है व प्राणदाता जानो सर्वदाता होता ही है १७ इससे अन्नदान करने से सब दानों का फल होता है तीनों लोकों में जितने रत्न व भोग करने के योग्य स्त्रियां और वाहन हैं १८ अन्नदान ही के फल के भीतर सब हैं क्योंकि अन्नदान से यहां वहां सर्वत्र प्राणी सुखी रहता है जिसके अन्न खाने व जल पीने से पुष्टाङ्ग होकर कोई पुण्यकर्म करता है १९ उसमें से आधा पुण्य अन्नदाता को व चतुर्थांश जलदाता को मिलता है इसमें संदेह नहीं है धर्म अर्थ काम व मोक्षों का परम साधन देह है २० व उसकी

स्थिति अन्न और जलादि पान करने के पदार्थों से होती है इससे
 अन्नदान सब का साधक होता है अन्नसाक्षात् ब्रह्माका रूप है व अन्न
 विष्णु रूप है तथा अन्नही शिवरूप है २१ इससे अन्नके समान कोई
 दान न हुआ है न होगा व जल तीनों लोकों का भी जीवन कहाता
 है २२ क्योंकि वह पवित्र दिव्य शुद्ध व सर्व रसायन है अर्थात्
 इसके बिना कोई भी रस नहीं बनसक्ता यमपुरके ये आठदान बड़े
 उपयोगी हैं १ अन्न २ जल ३ घोड़ा ४ धेनु ५ वस्त्र ६ शय्या ७
 सूत्र ८ आसन २३ इससे इतने दान अवश्य करने चाहिये इन
 दानों व धर्मों के करने से धर्मराजके पुरको जिससे कि प्राणी सुख
 से जाता है इससे इनका दान व धर्म अवश्य करना चाहिये व हे
 नृपनन्दन ! जो लोग क्रूर कर्म हिंसादि करते हैं व अन्य महापाप
 करते व दानसे वर्जित हैं २४।२५ वे नरकमें पड़कर दारुणदुःख
 भोगते हैं व वैसेही दान करनेवाले वहीं सुख भोगते हैं २६ क्योंकि
 सुख उन्हींकेलिये बने हैं जो सुकर्म करनेमें निरत हैं वे लोग अप्रमेय
 गुणों से युक्त यथेच्छगामी सब कामना देनेवाले विमानों पर चढ़कर
 व सब प्राणियोंके उपकारक असंख्य पुण्यफल भोगतेहुये सहस्र च-
 न्द्रमाके समान दिव्य व सूर्यके तेज के समान दीप्तिवाले शिवलोक
 को जाते हैं व जो शिवके भक्त होते हैं वे उसी शिवलोकही में जाते
 हैं जोकि सब गुणसंयुक्त रुद्रलोक भी कहाता है २७ । २८ व रुद्रके
 क्षेत्र काशी आदिमें मरेहुये सब जंगम शिवलोकको चले जाते हैं ॥
 चौ० एकहु दिन जो शिव आराधै । भक्ति सहित पूजन करिसाधै ॥
 सोउ जाय शिवपुर नर आसू । जो बहु पूजै कहूँ का तासू ॥
 वैष्णव विष्णु ध्यान महँ चातुर । विष्णुभक्ति भूषित नहिँ आतुर ॥
 ते वैकुण्ठ जाहिँ हरि रूपा । ह्वै सुखलहहिँ स्वमनअनुरूपा ॥
 ब्रह्म भक्ति भूषित जो प्राणी । जात तहां जहँ वसुविधि वाणी ॥
 यासों सदा ईश शिवकायी । करें भली विधि नर समुदायी ॥
 अथवा करै भक्ति हरिकेरी । लहै तुरत नर मुक्ति घनेरी ॥
 ज्ञानवान ह्वै जो हरि ध्यावै । सो वैकुण्ठ जाय सुद पावै ॥
 इमिश्री विष्णु प्रभाव सुकर्मा । अरु शुभ किये सकल निजधर्मा ॥

देश प्रभाव सकल दुखनासी । पुरुष होत वैकुण्ठ निवासी ॥
 अरु शिवभक्त जाहिं शिव लोका । मुदित होहिं तहँ विगत विशोका ॥
 प्राणि ऊर्ध्वगति हेतु विचारो । है शिवलोक अशोक निरारो ॥
 शिवपुर सो ऊपर हरिलोका । विगत विकार अपार अशोका ॥
 तहँ सब वैष्णव मानव, जाहीं । जो हरिध्यान निरत शकनाहीं ॥
 ब्राह्मण जाहिं ब्रह्मपुर पावन । जो सब भांति द्विजन मन भावन ॥
 यज्ञकर्म रत जो द्विज पुंगव । वेदवादि कोविद गुण संगव ॥
 ब्रह्मलोक ते बसहिं सदाहीं । पुनरावृत्ति न लहहिं कदाहीं ॥
 जो क्षत्रिय रणमाहिं प्रचारी । करत युद्ध खड्गादि प्रहारी ॥
 इन्द्रलोक ते जाहिं न शंका । मुदित वदन सुनते सुर डंका ॥
 अन्य पुण्यकारी नरनारी । पुण्यलोक महँ होहिं विहारी ३०।३६ ॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने
 पितृतीर्थे ययातिचरित्रे एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ६६ ॥

सत्तरवां अध्याय ॥

दो० सत्तरवें महँ कह विविध यमयातना अनेक ॥

जो पावत पापी पुरुष जिन नहिं कीन विवेक १

मातलि राजाययाति से बोले कि महातीव्र व दारुण यमपीड़ा
 का वर्णन करते हैं जिसे सब क्रूर ब्राह्मण के मारनेवाले पापी पुरुष
 भोगते हैं १ कहीं तो तीव्र अग्नि से जलते हुये पापी प्राणी पचते हैं
 व कहीं २ दारुण सिंह व्याघ्र वृक व अन्य दंशक जन्तुओं से पी-
 डित होते हैं २ कहीं महाजोंकों से व कहीं महा अजगरों से कहीं
 अतिभयङ्करी मल्लिकाओं से व कहीं सर्पों के उलबण विषों से ३ कहीं
 मत्त हस्तियों के यूथों से जो कि बड़े बल से ऊंचे से नीचे को गिरा देते
 हैं व कहीं मार्गों की तीक्ष्ण शृंगों से खोदते हुये बैलों से ४ कहीं दुष्टों
 की देह में बाधा करनेवाले बड़ी २ सींगोंवाले भैंसों से कहीं अतिरौद्र
 डाकिनियों से कहीं अति विकराल राजसों से ५ व कहीं महाघोर
 व्याधियों से पीड्यमान पापी चले जाते व बड़ी तराजू पर चढ़े हुये
 दावानल में जलते हैं ६ महाप्रचण्ड वायु से महावेग से कांपते हैं

महापाषाणकी वर्षासे सब ओरसे भेदनको प्राप्त हैं ७ वज्रपातके समान
शब्दवाली दारुण उल्कापात होरहीं और प्रदीप्त अंगारकी वर्षा से
पीड़ित जाते हैं ८ बड़ी धूलिकी वर्षासे पूरित यमराज के यहां जाते हैं ॥
चौ० जो नर पापकरत अति दारुण भोगत सो फल जामु न बारुण ॥
इमिकरि पाप विशेष अभागे । पापी नरक जाहिं यकलागे ॥
नरक जाहिं भोगहिं अरुरोवत । अति पीड़ा पीड़ित तनुगोवत ॥
पर न होत रक्षा क्यहु भांती । गिनी जात तिनकी अधपांती ॥
यह सब पुण्यरुपाप विवेका । तुम सन कहे महीप अनेका ॥
अपर कहें तुम सनका उत्तम । साधन धर्म कहहु सो वित्तम ६।११

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने

पितृतीर्थवर्णने ययातिचरित्रे सप्ततितमोऽध्यायः ७० ॥

इकहत्तरवां अध्याय ॥

दो० इकहत्तरवें मैं कह्यो गुण बहु लोकन केर ॥

पर वैष्णव शाम्भव उभय गुणवर्ण सुघनेर १

इतनी कथा सुन राजा ययातिजी मातलिसे बोले कि जो तुमने
उत्तम धर्म अधर्मका विषय हमसे वर्णन किया वह तो हमने सुना
परन्तु अब फिर हमारे श्रवण करनेकी इच्छा और है इससे जो पूछें
सो सुनाओ १ अब आप देवताओं के लोकोंका संस्थान हमसे ब-
तावें व जिस पुण्यके प्रसंगसे जिसने जो लोक पायाहो वह भी हमसे
कहें २ मातलि बोले कि अच्छा जिस २ तपसे जिसने जिस लोक
की प्राप्तिकी है सबका योग हम कहेंगे व सुख भोग देनेवाले देव-
ताओं के वासस्थान भी कहेंगे ३ व धर्मका भाव भी कहेंगे जो कि
लोगोंने परिश्रम से अलग २ उपार्जन किया है व ऊपरके लोकोंका
स्वरूप भी क्रमके साथ कहेंगे ४ उनमें राक्षसों का ऐश्वर्य आठगु-
णोंसे युक्त होता है इससे वे देवताओं के व नरोंके भी समान होते हैं
५ व राक्षसों के सोलह गुण राजा होते हैं व जो उनसे शेष हैं वे सब
पवित्र व तेजस्वी होते हैं ६ गन्धर्वों के वायव्य याक्ष सब हैं इन्द्रके
पाञ्चभौतिक चालीस बड़े गुण हैं ७ चन्द्रमा का दिव्य मानस है

संसारके स्वामी पाँचभौतिकहैं बुध प्रजापति ईशोंसे अहंकार गुण में अधिक हैं ८ ब्रह्माजी के चौंसठगुण अधिक तेजहैं व ऐश्वर्यभी इतनेही गुण अधिकहैं व विष्णु भगवान्का ऐश्वर्य व गुण ब्रह्मासे असंख्यगुण अधिक है पर वे तो सनातन ब्रह्महैं इसलिये वहां ब्रह्म पदमें सब शून्यहीहैं कुछभी गुण नहींहैं व ऐसेही श्रीशिवके पुरमें सब दिव्य ऐश्वर्यहैं व सर्व काममाओंको पूरा करताहैं इससे शिवकेभी अनन्तगुण ऐश्वर्यहैं ९।१० व आदि मध्य अन्तहीन विशुद्ध उनका लक्षणहैं व सब देवताओंका प्रकाशक सूक्ष्म अनौपम्य परसे पर ११ सुसम्पूर्ण जगद्रूप पशुओंकेपाश छुड़ानेवालास्थानहैं जो इस स्थानको पहुँचजाताहैं उसको सदाके लिये भोग भोगनेको मिलते हैं १२ व ईशके प्रसाद से तिसके समान विमान होताहैं व जो ये नक्षत्रों के किड़ोरों रूप दिखाई देते हैं १३ उनमें अट्ठाईस अच्छी दीप्तिसे पुण्यात्माओं को प्रकाशित हैं जो कोई ईश्वर के कभी कभी संपर्क से कौतुक और लोभसे नमस्कार करते हैं उस विमान को वे प्राप्त होते हैं व जो कोई प्रसंगसे भी शिवजीका नाम कीर्तन करता है १४ । १५ वा उनके नमस्कार करताहैं उसके सब कर्म सफल होते हैं ये इतनी सब महागतियां शिवजी के कर्म में हैं १६ इससे विना कर्म किये पुरुषों को ईशके अनुभावसे आनन्द नहीं होता प्रसङ्गसे भी जो लोग शिवका स्मरण करते हैं १७ वे अतुलसुख पाते हैं फिर जो शिवमें परायण हैं उनको क्या कहनाहैं व जो मनुष्य ध्यानसे विष्णु भगवान्की चिन्ता करते हैं १८ वे उसविष्णुभगवान् के परम उत्तमसर्वोपरि स्थानको जाते हैं हेनरोत्तम ! शैव व वैष्णव रूप दोनों एकरूपके हैं १९ दोनों महात्माओंके रूपोंमें अन्तर नहीं है क्योंकि एकहीरूप दोनों हैं शिव विष्णुके रूपहैं व विष्णु शिव के रूपहैं २० शिवके हृदय विष्णुहैं व विष्णु के हृदय शिवहैं व एकही मूर्ति ये तीनों हैं पर ब्रह्माविष्णु महेश येतीननाम होगये हैं २१ तीनों में अन्तर कुछ नहींहै पर गुणोंमें भेदहैं हे राजेन्द्र ! तुम शिवकेभक्त हो व वैसेही भगवद्दासहो २२ इससे ब्रह्मा विष्णु महादेव तीनों देव तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहैं हे राजन् ! तुम्हारे कर्म से अच्छे प्रकार वि-

स्वस्तहैं व तीनों वर देनेपर उद्यत हैं २३ वहम तो तुम्हारे समीप इन्द्रजीकी आज्ञासे आयेहैं ॥

चौ० यासों प्रथम इन्द्रपद जाहू । पुनि ब्रह्मा को सुपद लहाहू ॥
पुनि शिवपद कहैं किह्यहू पयाना । तहैं रहि कुछ दिन भूप महाना ॥
प्रलय दाह वर्जित पुनि जायहू । विष्णुलोक कहैं तब हरपायहू ॥
तहैं सों पात कबहुँ नहि होइहि । वस्यहुसदा तुमकहैं हरिगोइहि ॥
दिव्यगामि सब गामि विमाना । यह हम तुमसन भूप बखाना ॥
यासों जाय दिव्यसुर भोगा । भोगहु चलि द्वैकै गतशोगा ॥
जो वाञ्छित सो भोगहुनीके । सकल विचारहुकरि मनठीके ॥
चढ़िकै पुष्पक नाम विमाना । भूप अवहिं तहैं करहुपयाना ॥
मौन भये मातलि कहि येहू । सुनु द्विज अबतव गयहु सँदेहू ॥
नहुष तनय राजाग्रययाती । मुदित भयहु सुनिवातप्रसाती २४।२७

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे देवोपाख्याने माता

पितृतीर्थे ययातिचरित्रे एकसप्ततितमोऽध्यायः ७१ ॥

बहत्तरवां अध्याय ॥

दो० बाहत्तरयें महँ नृपति मातलिसों कह येह ॥

हमन स्वर्गकहैं चलब यहँ करबनाकनसँदेह १

पिप्पलजी सुकर्माजी से बोले कि हे महाप्राज्ञ ! राजाययातिजीने मातलिका वचन सुनकर फिर क्या किया यह हमसे विस्तारसे कहो १ हे प्राज्ञ ! सर्व पुण्यमयी पुण्यकारिणी और पापनाशिनी यह कथा है हमको सुनने की इच्छा है हम इसके सुनने से अभी तृप्त नहीं हुये २ यह सुन सुकर्माजी बोले कि सब धर्मधारियों में श्रेष्ठ व नृपों में सत्तम राजा ययातिजी इन्द्र के साराथि आयेहुये दूत उनमातलि से बोले कि ३ हे मातलिजी ! हम अपने इस शरीरको न छोड़ेंगे न स्वर्गको विना इस पार्थिव शरीर के आवेंगे इस में कुछभी संशय नहीं है ४ यद्यपि तुमने प्रथम ऐसे शरीर के बहुत से दोष कहेथे व गुण अवगुण भी कहे ५ परन्तु न हम अपना शरीर छोड़ेंगे न स्वर्गको आवेंगे सो यहां से जाकर देवदेव पुरन्दर से यह कहो ६ कि हे म-

हामते! एकाकी शरीरसे व अकेले जीवसे सिद्धि नहीं होसक्ती क्योंकि यह सांसारिक व्यवहार है ७ कि प्राण विना शरीर नहीं रहसक्ता व विना शरीरके प्राण नहीं रहते इन दोनोंकी मैत्री है इससे हम इन दोनोंको सङ्गही लावेंगे अलग २ न छोड़ेंगे ८ जिस शरीरके प्रसाद से यह प्राण अपने मनमाने अनेक भोग विलास करताहै व बहुत सुख भोगताहै ९ ऐसा जानकर अब प्राण कैसे शरीरको छोड़ स्वर्गके सुख भोगनेके लिये चलाजाय हे मातलिजी ! यद्यपि यहां रहनेसे महा दुष्ट दुःखदायक महारोग उत्पन्न होंगे १० व जराके दोष से नानाप्रकारके पाप भी इस शरीर से असामर्थ्य के कारण होंगे पर अभी तो देखो हमारा शरीर पुण्ययुक्त सोलह वर्षकासा है ११ यद्यपि जन्मसे लेकर अबतक पचासवर्ष बीतगये तथापि अभी हमारे शरीर का नूतनही भाव दिन २ होता चला आताहै १२ हे दूत ! हमारी पचासवर्ष की अवस्था हुई परन्तु जैसे सोलहवर्ष के पुरुष की देह शोभित होती है १३ तैसेही बलवीर्य युक्त हमारा देह शोभित होताहै न हमको ग्लानि है न हानिहै न श्रम है न व्याधियां हैं न जराहै १४ हे मातले ! हमारे देहमें अभी धर्म उत्साहित कर रहाहै व सर्व्व अमृतमय परम औषध देताहै १५ पाप व्याधिनाशनेके लिये पूर्व्व समयमें हमने धर्म बहुत किये हैं उसी से हमारा शरीर शोधित है व रोगके दोष भी कुछ नहीं प्रकट होते १६ यह सब हषीकेश भगवानके ध्यानसे व नामके उच्चारणसे हे दूत ! हम उत्तम रसायन नित्यकरते हैं १७ इसी से हमारे व्याधिदोष व पापादि प्रलयको चलेगये संसारमें जब कृष्णनाम महौषध विद्यमान है १८ तोभी पापव्याधि से पीड़ितहोकर मनुष्य मरते हैं महामूढ़ कृष्णनाम रसायनको नहीं पीते १९ कि हे मातले ! उसी ज्ञानसे व ध्यानसे पूजाभाव से सत्य से दान पुण्य से हमारा शरीर निरामय है २० पापही से प्राणियों को रोगादिकी पीड़ाहोती है व पीड़ासेही प्राणियोंका मृत्यु होताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं है २१ इस पुण्य व सत्यके आश्रयसे मनुष्योंको धर्म करना चाहिये यह पंचभूतात्मककायसैकड़ों स्थानों पर जुड़ने के कारण महाजर्जरहै २२ इसको मनुष्य जोड़ता नहीं

रहता जैसे स्वर्णकार टूटे फूटे भूषणको जोड़ता रहता है इसमें नाना प्रकार के भय लगे हैं क्योंकि अनेक धातुओं से यह बना है २३ हे विप्र ! शतखण्डमय इस शरीरको जो जोड़ता रहता है वह बुद्धिमान है व जोड़ने के लिये केवल एक हरिका दिव्यनाम है उससे जोड़ता रहै २४ पञ्चात्मक इसमें जो खण्ड हैं वे सौ सन्धियों से जर्जर हो रहे हैं बस हरिनाम से जोड़ने से सब काय धातुओं के समान हो जाता है २५ हरिकी पूजा से व विचार से ध्यान से व नियम से सत्य भाव से दान से काय नवीन हो जाता है २६ ऐसा करने से शरीर के दोष नष्ट हो जाते हैं व हे मातले ! व्याधि भी सब नष्ट हो जाते हैं बाहर व भीतर पवित्र हो जाता है दुर्गन्धि आती नहीं २७ व हे सूत ! उन विष्णु भगवान् के प्रसाद से परमपवित्रता हो जाती है इससे हम स्वर्ग को न जायेंगे यहीं स्वर्ग बनावेंगे २८ तप से व प्रभाव से व अपने धर्म के प्रभाव से इसी महीतल पर स्वर्ग बनावेंगे बस उन्हीं चक्री भगवान् के प्रसाद से इसी को स्वर्ग रूप करेंगे २९ ऐसा जानकर तुम जाओ व इन्द्र से कहो सुकर्माजी बोले तब राजा का कहना सुनकर वह सारथि ३० आशीर्वाद देकर व महाराज से बिदा होकर चला गया व जाकर जो कुछ महात्मा राजाने कहा था इन्द्र से कहा ३१ ॥ चौ० सुनिमातलिके मुख नृपवाणी । जो ययाति नृप निज मुख भाणी ॥ ताहि स्वर्ग आनन के हेतू । कीन विचार बहुत सुरकेतू ३२ ॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने

मातापितृतीर्थययातिचरिते द्विसप्ततितमोऽध्यायः ७२ ॥

तिहत्तरवां अध्याय ॥

दो० तीहत्तरयें महँ कह्यो ज्ञानामृत सुरतोत्र ॥

जासुपदे सब नरनको होत विष्णु ही गोत्र १

पिप्पल मुनिने फिर सुकर्मा से पूँछा कि जब इन्द्र के सारथि महाभाग मातलि चले गये तो नहुषजी के पुत्र धर्मात्मा ययाति महाराजने क्या किया १ सुकर्माजी बोले कि जब देवदूत मातलि चले गये तो राजा ययाति चिन्तना करने लगे श्रेष्ठ दूतों को बुला

कर शीघ्रही धर्म अर्थ युक्त वचन बोलो २ कि हे श्रेष्ठदूतो ! उत्तम पुर देश सब द्वीप संसार में जावो हमारे धर्मयुक्त वचन करो भगवान् के सुन्दर मार्ग से मनुष्य प्राप्तहों ३ सुन्दर पुण्यकारी भाव अमृत सदृश ध्यान ज्ञान पूजन तपस्या यज्ञ दान पुण्यादिकों से मधुसूदन भगवान् की पूजा करो अन्य सब लोक के विषयों को छोड़दो ४ व सर्वत्र शुष्क आर्द्र स्थावर जङ्गमों में एक श्रीमुरारिजी को देखने लगे व मैघोंमें भूमि पर सब चराचरों में व अपने सब देहों में भी श्रीविष्णुजीही को देखने लगे ५ व उन्हीं के उद्देशसे दान पुण्य सब करनेलगे व सबों में परिपैत्रिक अतिथि के भावों से केवल देववर नारायणही को मानकर पूजन करनेलगे तो थोड़ेही कालमें दोषों से छूटजावोगे ६ व जो कोई लोभ व मोह से हमारी आज्ञा न करेगा उस निर्घृण चोर निकृष्ट मनुष्यको दण्डहोगा ७ राजाके ऐसे वचन सुनकर दूत लोग अति हर्षित होकर जा २ कर सब पृथ्वी में सब प्रजाओं से महाराजकी आज्ञा कहने लगे ८ हे ब्राह्मणादि सब लोगो ! महाराज के पृथ्वी में लायेहुये पुण्यकारी वैष्णव अमृतको पीवो जोकि दोषोंसे विहीन परिणाम में मीठाहै ९ श्री केशव क्लेशहर्त्ता श्रेष्ठ आनन्दरूप परमार्थस्वरूप दोषहारी राजाका लायाहुआ श्रीहरि का नामामृत सब लोग पानकरो १० खड्गपाणि मधुसूदन श्रीनिवास सगुण सुरेश दोषहर्त्ता राजा के लायेहुये नामामृत को सब लोग पानकरो ११ हे लोगो ! कमलेक्षण पद्मनाभ जगदाधार जगदीश श्रीहरिका नामामृत दोषहर्त्ता राजाका लेआयाहुआ पानकरो १२ व हे लोगो ! पापापहारी व्याधिविनाशन रूप आनन्ददायक दानवदैत्यनाशन दोषहारी श्रीहरिका नामामृत राजाकालायाहुआ पानकरो १३ यज्ञाङ्गरूप चक्रपाणि पुण्यकी खानि सुखदाता असद्रूप श्रीहरि का नामामृत दोषहारी राजाका लाया हुआहै तिसको लोगो पानकरो १४ हे लोगो ! संसारके वास स्थान विमल विराम राम रमण मुरारिजीका दोषहारी राजाका लायाहुआ नामामृत पानकरो १५ व हे लोगो ! आदित्यरूप अन्धकारों के विनाशक व अन्धकार कमलों के लिये चन्द्रप्रकाशरूप दोष हरनेवाला

राजाकालायाहुआ श्रीविष्णुजीका नामामृत पानकरो १६ यह नामा-
मृत नाम स्तोत्र जो कोई विष्णुभक्त नियतात्माहोकर प्रभातकाल
पढ़ेगा वह मुक्ति को पावेगा इसमें कारण विचारना न चाहिये १७॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने पितृ

तीर्थवर्णने ययातिचरिते त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ७३ ॥

चौहत्तरवां अध्याय ॥

दो० चौहत्तरवें मैं सकल प्रजा भूप इकरूप ॥

विष्णुभजन पूजनकरत जाहिसुने यमचूप १

सुकर्माजी पिप्पलसे बोले कि इसप्रकार से सब दूतलोग ग्रामों
में देशों में द्वीपों में नगरों में जाकर कहते थे कि हे लोगो ! सुनो राजा
की आज्ञा है कि तुम सब लोग सब प्रभावों से श्रीहरिकी पूजाकरो
१ व यज्ञ दान बहुत तप धर्माभिलाष पूजनों से श्रीमधुसूदनजीका
ध्यानकरो महाराजकी यही आज्ञा है २ इसप्रकारका पुण्यकारी प्रघो-
षण सुनकर पृथ्वीपरके रहनेवाले सब लोग तबसे श्रीहरिका पूजन
ध्यान करने गाने व जप करनेलगे ३ वेदके मन्त्रोंके पढ़नेसे व तन्त्रों
के मन्त्रों से अमृत के सदृश पुण्यकारी स्तोत्रों से श्रीकेशवजीकी
आराधना भगवान् में मन लगाकर मनुष्य करनेलगे व व्रत उपवास
नियम दानों से भी ४ अपने देह चित्त और वाणी से उत्पन्न सब
दोषोंको छोड़कर लक्ष्मीनिवास जगन्निवास श्रीवासुदेवकी पूजा राजा
की आज्ञासे प्रेममें रत सब मनुष्य करनेलगे ५ इसप्रकारकी आज्ञा
राजाकी क्षितिमण्डल भरमें होगई इससे वैष्णवभावसे सब लोग
पूजन करनेलगे ६ ज्ञान में पंडित लोग नामों से व कर्मों से पूजा
करनेलगे व उन्हीं विष्णु भगवान् का ध्यान उन्हीं का पूजन अर्चन
करके सब उन्हीं में परायण होगये ७ जितना सब भूमण्डल है व
जहां तक सूर्य तपते हैं वहां तकके सब मनुष्य भागवत होकर प्र-
काशितहुये ८ विष्णुके ध्यानके प्रभावसे व पूजा स्तोत्रोंसे सब मनुष्य
आधिव्याधियों से विहीन होगये ९ सब के सब शोकरहित सुपुण्या-
त्मा व तपस्वी वैष्णव होगये हे विप्र ! उनचक्री भगवान्जीके प्रसाद

से सब मानव ऐसे होगये १० कि सब रोगोंसे वर्जित दोष और रोष से हीन सब ऐश्वर्य संयुक्त अमर बुढ़ापा रहित व धनधान्य से युक्त श्रीविष्णुजी के प्रसादसे होगये ११ । १२ व सब पुत्र पौत्रादिकों से भरेपुरे श्रीभगवान्जी केही प्रसादसे हुये व हे महाभाग ! उन मनुष्यों के द्वारोंपर नित्यही कल्पवृक्ष अत्यन्त पुण्यकारी सब कामफलका देने वाला व धेनु सब मनोरथों को पूरण करनेलगीं व चिन्तामणि आदि महामणिसब के वाञ्छित पूरेकरनेलगे १३।१४ व उनलोगों के गृहोंमें पुण्यकारी ये सब कामोंको देनेलगे सब मनुष्य पुत्र पौत्रों से शोभित होकर अमर होगये १५ व श्रीविष्णुजी के प्रसाद से सब सब दोषोंसे विहीन होगये व सर्व सौभाग्योंसे सम्पन्न महामंगलों से युक्तहुये १६ व सुपुण्यदानों से संयुक्त ज्ञानध्यानमें परायणहुये न कभी दुर्बिभक्षहो न व्याधि न कभी मनुष्योंका अकाल में मरणहोने लगा १७ व उन धर्मज्ञ ययातिराजाके राज्य करने के समयमें सब वैष्णव होगये इससे सबके सब विष्णुके व्रतमें परायणहुये १८ व उन भगवान्जीके ध्यान करनेसे सब उन्हींके भावसे भूषितहुये व उन्हींमें तत्पर हुये व हे द्विज-सत्तम ! उनलोगों के गृह दिव्य व पुण्य होगये १९ सबके मन्दिर स-फेद पताकाओं से व शंख चक्र गदा और ध्वजाओं से युक्तहुये २० व पद्मादिकों से भी अङ्कितहोकर प्रकाशित होनेलगे व सबके गृह विमानों के तुल्य होगये व सबके गृहों की भित्तियां सुन्दर चित्रों से चित्रित होने से विचित्रहोगई २१ व सबके गृहों के द्वारों पर और दे-वादिकों के पुण्यस्थानों में हरी २ घाससहित दिव्य वृक्षोंके वन ल-गगये २२ व तुलसी के वृक्ष तो सब के यहां हरिमन्दिरों के आंगनों में लगगये व सदैव पुण्य दिव्य मन्दिर प्रकाशित हुये २३ व सर्व-त्र वैष्णवभाव होने के कारण मङ्गलही मङ्गल दिखाई देनेलगे व भू-ल्लोक भर में जहां सुनो शंख का शब्द २४ सुनाई देता जिसके सु-नाई देने से सबदोष पाप नष्ट होजाने लगे शंख स्वस्तिक पद्म सब के गृहोंके द्वारों पर व भीतियोंमें २५ विष्णुकी भक्तिसे युक्त नारियोंने बनादिये व सब वर्णके लोग ठौर २ ताल स्वरसमेत गीत गानेलगे उसमें यह नहीं कि टप्पा ठुमरी आदि रागिनियां गाईजायँ किन्तु

विष्णुके ध्यान करनेवाले नानाछन्दोंके श्लोकगाये जानेलगे २६। २७

हरिगीतिका ॥

मुरारि हरि वामन वराह नृसिंह गावहिं ध्यान कै ।
माधव रमेश कुजेश मेश सुरेश मानहिं मान कै ॥
कमलाक्ष केशव कान्ह कान्हर काम पूरण गावहीं ।
कमलेशकृष्ण कृपालु कालियकदनकाहि मनावहीं ॥
इमिशरणभरण सुभव्यकरण रमेश चरणसुपूजहीं ।
जपकरहिंधरहिंहृदयसदा पुनिऔरनहिंमनदूजहीं ॥
यकविष्णुध्यावहिंसबभुलावहिं सुकृतपावहितेभले ।
वैष्णवसमाजसुसाजभ्राजविराजअघदारिददले २८। २६

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेमाता
पितृतीर्थवर्णनेययातिचरितेचतुःसप्ततितमोऽध्यायः ७४ ॥

पचहत्तरवां अध्याय ॥

दो० पचहत्तरयें महँकह्यो जिमि हरि अरु नरलोक ॥

एकरूप हैं नृप भजन सों सब भये अशोक १

सुकर्मापिप्पलसे बोले किविष्णु कृष्ण हरि राम मुकुन्द मधुसूदन
नारायण विष्णुरूप नारसिंह व अच्युत १ केशव पद्मनाभ वासुदेव
वामन वाराह कच्छप मत्स्य हर्षिकेश सुराधिप २ विश्वेश विश्वरूप
अनन्त अनघ शुचि पुरुष पुष्कराक्ष श्रीधर श्रीपति हरि ३ श्रीनिवा-
स पीतवास माधव मोक्षद व प्रभु ३ इत्यादि नाम उच्चारण करतेहुये
मनुष्य सदा विचरने लगे ४ ऐसा सब नर बाल वृद्ध करनेलगे व
कुमारियां स्त्रियां सब अपने २ घरों में बैठीहुई व श्रीहरिको गाती
हुई सदैव अपने गृह के कर्म करतीं ५ व बैठे सोते जागते ध्यान
लगाते व ज्ञान करते समय माधवहीका स्मरण करते व बालक लोग
बालक्रीड़ा करनेके समय गोविन्दही को प्रणाम करते ६ इस तरह
दिन रात्रि हरिही का मधुर नाम कहते हे द्विजसत्तम ! विष्णुका उ-
च्चारण सर्वत्र सुनाई देता ७ सब मनुष्य भूतल देवताओं के मन्दि-
रों में प्रासाद कलशों के आगे ८में वैष्णव प्रभावसे युक्त होगये जैसे

सूर्य के किरण सब कहीं दिखाते हैं वैसेही चक्र प्रकाशित होगये जो भाव वैकुण्ठ में दिखाई देता है वह भूतलपर दिखाने लगा ६ उस समय भूतल व विष्णुजी में कुछ अन्तरही नहीं दिखाई देता उस महात्मा पुण्यात्मा राजाने भूतल व विष्णुलोककी समता करदी १० नहुषके पुत्र वैष्णव ययाति राजाने वैकुण्ठ व भूतलका एकही भाव करदिया ११ भूतल और विष्णुका अन्तर नहीं दिखाई देता भया जैसे वैकुण्ठमें वैष्णव लोग विष्णु भगवान्का उच्चारण करते हैं १२ उसीप्रकार का उच्चारण मनुष्य लोग भूतलपर करनेलगे व हे विप्र ! दोनोंलोकोंके सब भावएकहीसे दिखाई देनेलगे १३ क्योंकि भूतलपर जरा व रोग का भयनहीं रहगया सबमनुष्य मृत्युहीनप्रकाशितहोगये वैकुण्ठकी अपेक्षा दानभोगका प्रभाव भूमिपर अधिक दिखाई देने लगा १४ पुत्र पौत्रादिकोंका पुण्यकारी सुख मनुष्य भूतलपर अधिक देखते थे व अन्यभी बहुत से सांसारिक सुख मनुष्यलोग भूतलपर अधिक भोगनेलगे थे १५ विष्णुके प्रसाद के दानसे व उपदेश से मनुष्य सब व्याधियों से हीनहोकर सदैव वैष्णवही होगये १६ ऐसेही राजाने स्वर्गलोक का प्रभाव पृथ्वीपर करदिया पच्चीसहीवर्षों में उस महाराज ने ऐसा किया १७ कि सब मनुष्य रोगहीन होगये व ज्ञान ध्यान में परायण होगये व सब यज्ञदान में तत्पर हुये व सब दयाभावसे युत १८ सब उपकारमें रत पुण्यात्मा धन्य व यश के पात्र होगये सब धर्म कर्मों में पर व विष्णु भगवान्के ध्यानमें सब परायण १९ व राजाके दिये हुये ज्ञानसे सबके सब वैष्णवही होगये श्रीविष्णु भगवान् राजा वेन से बोले कि हे नृपसत्तम ! उन महात्मा राजा का चरित सुनो २० वे सर्व धर्म में पर व विष्णुकी भक्तिमें नित्य संलग्नहुये व राज्य करते करते राजाको एक लाखवर्ष पृथ्वीमें बीते २१ परन्तु शरीर ऐसा नवीन बनारहा जैसे कि पच्चीस वर्षकी अवस्थावालेका रहता है सो रूप व अवस्था दोनोंसे पच्चीसही वर्षके विदित हो शोभित होते २२ व उन श्रीविष्णुजी के प्रसाद से प्रबल और पुष्ट वैसेही बनेरहे मनुष्यभी पृथ्वी में स्थित होकर यमराजके यहां नहीं जातेभये २३ व रागद्वेष से सब रहितरहते क्लेश

की फैसरीसे वर्जित होते सब सुखी रहते बराबर दान पुण्य करनेमें तत्पर रहते व सब धर्म में परायण थे २४ व जितने प्राणी थे सबों की प्रतिदिन पुत्र कन्यासे बढ़तीही होती चलीजाती जैसे प्रत्येकवर्ष में दूर्वाकी शाखायें पृथ्वीपर फैलती बढ़ती हैं २५ वैसेही सब मनुष्य पुत्र पौत्रादिकों से फैलते बढ़ते थे सब मृत्युदोषसे विहीन होगये इससे चिरकाल तक जीतेही बने रहते २६ सबके शरीर स्थिर और सुखी रहते क्योंकि जरारोगसे तो सब रहितही होगये थे सब मनुष्य भूतल पर पच्चीसही वर्षके दिखाई देते २७ व सब सत्य आचारमें पर व विष्णुके ध्यानमें परायण रहते उन भगवान् चक्रधारी जी के प्रसाद से २८ सबके सब दान भोगमें परायण होगये यद्यपि मर्त्यलोकमें बसते थे परन्तु मृतक कोई भी सुनाई नहीं देता २९ शोक कोई देखताही नहीं न दोष कोई करता ॥

चौ० स्वर्गलोक कर जो रह रूपा । मर्त्यलोक कर स्वइ नरभूपा ॥
हरिप्रसाद सों भयहु अनूपा । किमिवर्णें कहतासु स्वरूपा ॥
जब यमदूत भूत हैं आवहिं । तब हरिदूत तिन्हेंतड़वावहिं ॥
रोदन करत जाहिं यम पाहीं । कहैं विष्णुचर कर्म तहांहीं ॥
सोसुनि मनगुनि प्रेतअधीशा । राजभक्ति जानी जगदीशा ॥
चिन्ता करनलगे नृपचेष्टित । समभिरहेचुपगुनिहरिवेष्टित ३०।३५॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादोपाख्यानेमाता

पितृतीर्थवर्णनेययातिचरित्रेपञ्चतस्रतितमोऽध्यायः ७५ ॥

ब्रह्मत्तरवां अध्याय ॥

दो० ब्रह्मत्तरयें महँ कह्यो यम जिमिगे पुरऐन्द्र ॥

सुरपतिसुनितिनवचनतहँ कामपठवजहँचमेन्द्र १

सुकर्मा जी पिप्पलसे बोले कि यमराज जी सब दूतोंके साथ देवसमूहों के बीचमें बैठेहुये इन्द्रके देखनेको स्वर्ग में जातेभये १ धर्मराज को आतेहुये सुरराज ने देखा इसलिये शीघ्रतायुक्त उठकर उनको उत्तम अर्घ्य दिया २ व पूँछा कि हमारे आगे सब अपने आनेका वृत्तान्त कहो देवराज का ऐसावचन सुनकर ३ धर्मराज

२६० पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

राजा ययाति के सब चरित कहते हुये बोले कि हे देवेश ! सुनो जिसलिये हमारा आगमन यहां हुआ है ४ जिस कारणसे हम आये सब तुमसे कहते हैं राजानहुष के पुत्र महाराज वैष्णव महात्मा ययाति ने ५ पृथ्वीतलपर सब छोटेबड़े मनुष्यों को वैष्णव करडाला व वैकुण्ठके समान मर्त्यलोकका रूपकरडाला ६ मनुष्य सब जरारोगसे रहित होकर अमर होगये पाप नहीं करते झूठ नहीं बोलते ७ काम क्रोधसेहीन लोभमोहसे वर्जित दानशील महात्मा व सब धर्म में परायण होगये ८ व सब धर्मों से अनामय श्री नारायणजी की पूजा करते हैं इससे सब मनुष्य पृथ्वीतल पर वैष्णव धर्मसेयुक्त ९ सब निरामय शोक रहित व सबकी सदा युवावस्थाही बनी रहती है जैसे दूर्वा सब ओर पृथ्वी में फैलती है १० वैसेही सबपुरुष पुत्र पौत्र प्रपौत्रों से बढ़ते फैलते हैं उनके पुत्र पौत्र प्रपौत्र वंशों से वंशान्तरको प्राप्त होगये ११ इसप्रकार सब वैष्णव होकर जरामृत्यु से रहित होगये यह सब मर्त्यलोक में राजा ययातिके कारण हुआ १२ व कुछ काम न रहनेके कारण हमभी पदसे भ्रष्ट होगये हैं इस प्रकार तुमसे अपने कर्म के विनाशनेवाला सब वृत्तांत कहा १३ ऐसा जानकर हे इन्द्र ! लोक का हितकरो जो तुमने हमसे पूँछाथा सो हम सब तुमसे कहा १४ व हे इन्द्र ! इसीकारण से तुम्हारे पास हम आये हैं इन्द्र बोले कि हमने बहुत दिनहुये तब उन महात्मा को यहां बुलाने के लिये दूत भेजाथा सो हे धर्मराज ! हमारे दूत से उन्होंने कहा कि हम न आवेंगे हम स्वर्ग के अर्थी नहीं हैं इस से स्वर्गको न आवेंगे १५ । १६ व हम सब पृथ्वी मण्डल स्वर्ग रूप बनालेंगे ऐसा कहकर राजा प्रजाओं को पालनेलगा १७ व उसके धर्म के प्रभावसे हम यहां बैठेहुये सदा डरते हैं यह सुन धर्मराज कहनेलगे कि जिस किसी उपायसे बने तिस राजाको यहां बुलालो १८ हे महाभाग देवराज ! जो हमारा प्रियकरना चाहो तो ऐसा करो धर्मराजका यह वचन सुनकर सुरराजने १९ सब प्रकार से इस विषय में बड़ी चिन्तनाकी कि क्या करना चाहिये शोच विचारकर इन्द्रने कामदेव और गन्धर्वों को बुलाकर उनसे कहा कि

तुम व मकरन्द व तुम्हारी स्त्री रति ये सब भूतलको जाओ व उन महात्मा राजा ययातिको जैसे बने यहां लाओ वही उपाय तुमलोग करना जिससे राजा यहां चलेही आवें २० । २१ वस अब हमारी आज्ञासे तुम लोग अभी भूलोकको चलेजाओ इसमें संशय नहीं है इस बातको सुन काम बोले कि आप दोनोंका पुण्यकारी प्रिय हम करेंगे इसमें संदेह नहीं है २२ । २३ इतना कहकर सब चले व राजा ययातिजीके निकट पहुँचे व वहां पहुँचकर नटोंका रूप धारण करके सबके सब राजाको आशीर्वाददे राजा से अच्छा नाटक कहते भये २४ तिनके वचन सुनकर पृथिवीकेपति बुद्धिमान् ययातिजी अच्छे पण्डितों से देवरूपिणी सभाकरते भये २५ व नहुषके पुत्र ज्ञान विज्ञानमें निपुण राजा आपभी सभामें आये और उनका नाटक देखा २६ ब्राह्मणरूपी वामनजीकी उत्पत्ति वा चरित्रका नाटक भया ऐसा रूप सर्वोंने धारण किया कि लोकमें किसी का उससमय वैसाथाही नहीं व गीतभी ऐसा उत्तम सुन्दर स्वरसे गाया कि उसकेभी अनुरूपका कोई न गासके २७ इसप्रकार गाती स्त्री अपना अद्वितीय रूप दिखाने लगी व हाव भाव गीत विलास सब दिखाने लगीं २८ उस गाने व कन्दर्प की माया से धर्म्मात्मा ययातिजी कुल मोहितहुये क्योंकि वे सब दिव्यभाव व चरितथे २९ कामदेवजीने राजा बलिका जैसा रूप पूर्व समयमें विध्यावली रानीका जैसारूप और वामनजीका जैसारूप था तैसाही रूपकिया ३० कामदेवजी आपही सूत्रधार हुये वसंत पारिपार्श्वक हुये प्रसन्नपतिवाली रति नटीका वेष धारण करतीभई ३१ यह रतिने पथ्यके भीतर नृत्य करती भई और भीतरही घूमती भई महा बुद्धिमान् मकरन्द राजा को क्षोभित करता भया ३२ जैसे जैसे राजा उत्तम नाच देखे गीत सुने तैसेही तैसे महा प्रभाव युक्त मकरन्द नटी के प्रणीत से राजा को मोहित करै ३३ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषातुवादेवेतोपाख्यानं

मातापितृतीर्थेययातिचरित्रेवत्सततितमोऽध्यायः ७६ ॥

सतहत्तरवां अध्याय ॥

दो० सतहत्तर अध्याय महँ नृपलखि युवती दीय ॥

कामविवश पूँछा सुना तासु चरित यह गोय १

सुकर्मा पिप्पलसेबोले कि कामके गानेके नादसे व ललितहास्यसे फिर राजा ययाति ऐसे मोहितहुये कि नटोंके समान होगये १ दिशा पेशावकरके आये व विनापैर धीये वैसेही आसनपर बैठगये जैसे कि नटलोग बैठजाते हैं २ यह इतनी अशुद्धता पाकर कामने इन्द्रका कार्य करलिया राजाको वृद्धावस्था प्राप्त करदिया ३ जब नाटक बन्द हुआ राजा वृद्धावस्थासे युक्त होगया तो वे कामादि अपने २ स्थान को चलेगये व धर्मात्मा महाराज ययाति कामासक्त मन होगये ४ काम मोह से ऐसे मोहित हुये कि बनाय विह्वल विकलेन्द्रिय होगये ऐसे धर्मात्मा राजा पर विषयों से अपवाहित अतिमुग्ध होगये ५ एकसमयमोह रागके वशमें प्राप्त राजा मृगया खेलने के लिये क्रीड़ा करते २ वनकोगये ६ वहां महात्मा राजाके क्रीड़ा करनेके समय उपमा रहित एक चारसींगोंका मृग आया ७ वह सब अङ्गों से सुन्दरबना था व रोम सब उसके सुवर्णके थे व रत्नोंकीसी उसकी ज्योतिथी इससे अतिदर्शनीय चित्रविचित्र व मनोहर था ८ उसे देखतेही धनुर्बाण धारण कियेहुये राजा अतिवेगसे उसके पीछे दौड़े उन मेधावी ने यह माना कि यह कोई दैत्य आया है ९ इसप्रकार वह मृग राजाको बड़ीदूर तक अपने पीछे २ दौड़ा लेगया बड़े वेगसे जो राजा का रथ उसके पीछे दौड़ा उसके खेदसे महाराज अतिश्रमित होगये १० व राजा देखतेही रहगये वह मृग वहीं अन्तर्द्धान होगया व राजाने अद्भुत नन्दनवनके सदृश वन देखा ११ वह वन दिव्यवृक्षों से युक्त दिखाई देने लगा जहां देखो पञ्चमहाभूतों से बनेहुये नानाप्रकार के पदार्थ दृष्टिगोचर होनेलगे बड़े २ भारी चन्दनों के वृक्षों से व पुण्यकेलों के भ्रमेलों से मनोहर होगया १२ बकुल अशोक पुन्नाग नालिकेर व तिन्दुओंसे मण्डित दिखाई देने लगा सुपारी खजूर कोकाबेलि शतावरी १३ कचनार चम्प अदि नानाप्रकारके वृक्षों से व अन्य सब ऋतुओं

में फरनेवाले वृक्षों से शोभित देख पड़ा पुष्पों की सुगन्धि से युक्त केतकी व पांढर ढांड के वृक्षों से भूषित १४ उत्तम तालाब देखा जो कि पुण्यकारी जल से पूर्ण पांचयोजन का चौड़ा १५ हंस चकई चकवा से युक्त जल के पक्षियों से शब्दयुक्त व कमलों से मुदित श्वेत कमलों से विराजित १६ व रक्त कमलों से व पीले पङ्कजों से शोभित नील पद्मों से प्रकाशित व बैजनीरंगवाले नीरजों से अत्यन्त शोभित १७ मत्तभ्रमरों से सर्वत्र नादित इस प्रकार के सब गुणों से युक्त वहां एक उत्तम तड़ाग देखा १८ वह पांच योजन का चौड़ा व दशयोजन का लम्बा था व सब दिव्य भावों से वह तड़ाग अलंकृत था १९ रथ के वेग से चलने के कारण जो राजा को कुछ श्रम हुआ था व उस वन में तालाब के किनारे एक अतिशीतल आँब की छाया में राजा बैठ गये व कुछ काल विश्राम कर २० स्नान कर कमलों से सुगन्धित व शीतल जल पान किया जो कि सब श्रम के मिटाने वाला और अमृत के तुल्य मीठा था २१ जब इस प्रकार वृक्ष की छाया में राजा बैठे तो अति मनोहर ताललय स्वरादिकों से युक्त गाना सुनाई दिया २२ व यह जान पड़ा कि मानों कोई दिव्य स्त्री गान कर रही है महाराज गीत के बड़े प्रिय थे चित्त लगाकर सुनने लगे २३ व चिन्ता करने कि यहां वन में स्त्री का गान कहां से सुनाई दिया इस प्रकार धर्मात्मा महाराज चिन्ता करते ही थे कि तब तक एक अतिश्रेष्ठ बड़े मोटे करिहाँ व और कुचों वाली अति मनोहर स्त्री २४ राजा के देखते ही देखते उसी वन में आई जो कि सब आभरणों से शोभित अङ्गवाली व शीलसुलक्षणों से युक्त थी २५ वह आकर राजा के आगे खड़ी हुई उससे महाराज बोले कि तुम कौन हो व किसकी भार्या बना चाहती हो २६ व किस अर्थ यहां आई हो इसका सब कारण तुम हमसे कहो हे पिप्पल ! राजा के पूछने पर उसने कुछ भी २७ शुभ अशुभ राजा से न कहा वैसे ही वह श्रेष्ठमुखी मन्द २ मुसकाती खड़ी रही व फिर अत्यन्त हास्य करके वीणा हाथ में लिये हुई वहां से चल खड़ी हुई २८ यह दशा देख महाराज बड़े विस्मित हुये व शोचने लगे कि हमने इससे सम्भाषण भी किया पर इसने कुछ भी उत्तर न दिया २९ यह विचार कर पृथिवीपति ययाति जी

फिर चिन्ता करनेलगे कि जो मृग हमने चारसीगोंवाला अच्छेवर्ण का देखा था ३० हमको जान पड़ताहै कि यह उसीकी स्त्री होगी सत्य हम जानते हैं कि बस वह कोई सत्य मायारूप दानवों का था ३१ नहुषके पुत्र राजा ययाति एकक्षणभर चिन्तना करके फिर उस की ओर देखकर विचारने लगे कि तबतक वह स्त्री उसीवनमें ३२ अन्तर्द्धान होगई व अन्तर्द्धान होते समय राजाकी ओर देखकर बहृत हँसी व इसी अन्तरमें फिर सुन्दर स्वरताललययुक्त गीत राजा ने सुना व जहां वह गीतकी महाध्वनि सुनी वहीं अति शीघ्रतासे राजा गये व देखा ३३ । ३४ तो सहस्र पखुरीवाले कमलों से युक्त उसी पुष्करके तीरपर दिव्यशीलगुणरूपसम्पन्न ३५ दिव्यलक्षणयुक्त दिव्य भूषणों से भूषित व दिव्यभावों से युक्त वीणा हाथमें लिये एक स्त्री शोभित होरही है ३६ व तालमान लयस्वर से युक्त मधुरगीत गारही है व उसगीतके प्रभावसे चराचरको मोहित करारही है ३७ देव मुनिगण दैत्य गन्धर्व व किन्नर सबों को मोहित कररही है व रूप तेजशालिनी उस विशालनयनी को देखकर ३८ राजाने विचारा कि बस इसचराचर संसारमें ऐसी और कोई नारी नहीं है यद्यपिराजाको प्रथमही नटने वृद्धकर दिया था ३९ तथापि उस समय फिर राजाके सर्वाङ्ग में महाकाम प्रकट होगया जैसे कि घृतके पड़तेही कैसाही मूर्च्छित अग्निहो पर उससे धूम निकलनेही लगताहै ४० ऐसेही उसस्त्री को देख राजाके अङ्गसे काम प्रकटहोआया व कामसे युक्त राजा उस सुन्दर लोचनवाली को देखकर बोला ४१ कि इसप्रकार की रूपवती संसारके मोहन करनेवाली स्त्री मैंने नहीं देखी राजाक्षणमात्र चिन्तनाकर काममें आसक्कमन होगया ४२ तिसके विरहसे तिससमय राजा लुब्ध होगया कामकी अग्निसे जलता और कामज्वरसे पीड़ित भया ४३ कि यह कैसे हमारीहोगी कैसे भाव होगा जो कमलमुखी कमलनयनी यह स्त्री हमको आलिंगनकरै ४४ प्राप्तहो तो जीवन सफलहो इसप्रकार चिन्तना कर पृथिवीपति धर्म्मार्त्मा ययातिजी ४५ उससे बोले कि हे शुभे ! तुमकौनहो व किसकी स्त्री हो प्रथम हम ने जिसस्त्रीको देखा था वही फिरभी तुम दिखाईपड़ीं

४६ इससे तुमसे पूँछते हैं कि तुम कौनहो इतने में फिर दो स्त्रियां दिखाई दीं तब धर्मात्मा राजाने प्रथमवाली से पूँछा कि तुम्हारे पास यह दूसरी कौन नारी है हे कल्याणि ! हमसे सब कहो हमतो नहुष के पुत्र हैं ४७ व सोमवंश में उत्पन्नहुये हैं और सप्तद्वीपवती पृथ्वी के स्वामी हैं व हे देवि ! ययाति हमारा नाम है व तीनों लोकों में हम विख्यात हैं ४८ व हमारा चित्त चाहता है कि तुम्हारे साथ भोगकरें इससे हे भद्रे ! हमको संगम दो व हमारा प्रियकरो ४९ हे भद्रे ! जो २ पदार्थ तुम चाहोगी सब तुमको देंगे इसमें संशय नहीं है हे वरवर्णिनि ! हम दुर्जय कामसे पीड़ित हैं ५० अब उस कामसे हम दीन की रक्षाकरो हम तुम्हारे शरण हैं राज्य सब पृथ्वी व शरीर तुम्हारे समर्पण है ५१ व तुम्हारे संगम में तीनों लोक तुमको देंगे राजा के वचन सुन कमलनयनी वह स्त्री ५२ विशाला नाम अपनी सखी से बोली कि राजासे हमारी उत्पत्तिका स्थानबताओ व हमारे पिता माताका भी नाम बताओ ५३ व हमारा एकाग्रभाव भी इन राजाके आगे निवेदन करो उस स्त्री का वाञ्छित जानकर विशाला मधुर वचनों से राजासे बोली कि हे नृपनन्दन ! सुनो कामको पूर्वकाल में देवदेव महादेवजी ने भस्म कर डाला था ५४ । ५५ तब उसकी स्त्री रति पतिहीन होजाने के कारण बहुत रोई वह रति सदा इसी सरोवर में रहती थी ५६ उसका बड़े ऊँचे स्वर से करुणापूर्वक रोदन सुनकर बड़ी कृपासे युक्तहुये देवता ५७ हे राज-राजेन्द्र ! शङ्करजीसे यह वचन बोले कि हे महादेवजी ! कामको फिर जिआदो ५८ क्योंकि यह बेचारी रति पतिहीन होने से कैसे जीवेगी सो हमारे स्नेहसे इसे कामसे संयुक्तकरो ५९ महादेवजीने कहा कि हे महाभागो ! अच्छा कन्दर्पको हम फिर जिआ देंगे अब आज से यह शरीर से तो हीन होगा और सब के अङ्गों में रहेगा अनङ्ग इस का और एक नाम होगा ६० व यह वसन्त ऋतुका मित्र होगा इस में सन्देह नहीं है व अतिदिव्य शरीर धारण करेगा अन्यथा न होगा ६१ इसप्रकार महादेवजी के प्रसादसे काम फिर जिआ ऐसा आशीर्वाद देकर महादेवजी कामसे बोले ६२ कि हे काम ! यहां से

जाओ व अपनी प्रिया रति से मिलो तब स्थिति व संहार करनेवाला
महातेजस्वी काम महादेव पार्वतीजी की आज्ञालेकर ६३ फिर
इस तालपर आया क्योंकि यहां उसकी स्त्री दुःखयुक्त रतिथी सो हे
राजन् ! यह कामसरहै व वहरति यहां अबभी रहती है ६४ महाभाग
मन्मथ तो जानों भस्मही होगया था तब से रति यहीं विद्यमान है
व सदा दुःखिनी रहती है रतिके कोपसे दारुण उत्पन्न हुआ है ६५
इससे उसकी जलाई हुई रति अति मूर्च्छित रहती है हे नरोत्तम !
पतिहीन होने से सदा अश्रुपात किया करती है ६६ उसके दोनों
नेत्रों से जो आंसुओं के बूँद गिरते हैं उनसे सब सुखनाशक महा
शोक उत्पन्न होता है ६७ व उन्हीं आंसुओं से जराभी उत्पन्न होती
है व उन्हीं से दुर्बुद्धि वियोग भी होता है जो कि प्राणोंका नाश
करता है ६८ व दुःख और सन्ताप भी उन्हीं आंसुओं से उत्पन्न
हुये हैं व सुखनाशिनी दारुण मूर्च्छाभी उन्हीं से उत्पन्न हुई है ६९
व शोकसे कामज्वर उत्पन्न हुआ है व विभ्रमभी शोकही से उत्पन्न
हुआ है व शोकही से प्रलाप उत्पन्न हुआ व प्रलापसे विह्वलता और
उन्माद उन्माद से मृत्यु ७० बस ये सब विश्वके नाशक उसी के
आंसुओंके बिन्दुओंसेही उत्पन्न हुये हैं रतिके समीप में उत्पन्न हुये
इससे सब तापयुक्त अंगवाले ७१ मूर्तिधारणकिये व सद्भावगुणोंसे
संयुक्त हुये व कामभी किसी के कहने से यहां आया ७२ तब काम
को आये हुये देखकर रति महानन्दसे युक्त हुई व तब उसके दोनों
नेत्रों से जलकेभीतर आनन्दके आंसुओं के बिन्दुगिरे हे महाराज !
उन से सब आपत्त्यता से प्रजा उत्पन्न हुई प्रथम प्रीति हुई उससे
रूपाति व लज्जा ये दो हुई ७३ ७४ व उन्हीं से महानन्द व दूसरी
शान्ति उत्पन्न हुई इसी शान्ति से शुभ व सुख संभोग देनेवाली दो
कन्या उत्पन्न हुई ७५ व लीला क्रीड़ा मनोभाव व संयोग भी उत्प-
न्न हुये व महाराज रतिके वामनेत्र से जो आनन्दके आंसुओंके बिन्दु
गिरे थे ७६ हे राजन् ! जहां जल में पड़े थे वहीं से एक सुन्दर
कमलजामा व उसीकमल से सुन्दरमुखी यह स्त्री उत्पन्न हुई है ७७
इसका अश्रुबिन्दुमती तो नाम है और रतिकी कन्या है व इसकी प्रीति

से सुख कर हम इसके समीप सदा रहती हैं ७८ सुखीके भावसे सदैव प्रसन्न रहती हैं व विशाला हमारा नाम है व हम वरुणकी कन्या हैं ७९ सो स्नेह से इसके पास सदा रहती हैं व स्नेहही का बर्त्ताव इसके संग बर्त्तती हैं हे राजन् ! यह सब इसका व अपना वृत्तान्त हमने तुम से कहा ८० यह सुमुखी यहां पतिपाने की इच्छासे तप करती है इतना सुन राजाययाति बोले कि हे शुभे ! तुमने सब कहा व हमने सब जाना अब जो हम कहते हैं सुनो ८१ यह सुमुखी रत्नकीपुत्री हमीको भजे यह बाला जो कुछ चाहती हो हम इसे सब कुछ देंगे ८२ हे कल्याणि ! अब ऐसा करो जिसमें यह हमारे वश में होजावे यह सुनकर विशाला बोली कि हे भूपाल ! इसका नियम हम कहती हैं उसे सुनो युवावस्था से युक्त सब कुछ जाननेवाला वीर लक्षण देवराजके समान धर्माचारसमेत ८३ ८४ तेजस्वी महा प्राज्ञ दाता यज्ञ करनेवालोंमें श्रेष्ठ गुणोंके धर्म भावका जाननेवाला पुण्यका पात्र ८५ लोक में इन्द्र के समान सुन्दर यज्ञों से धर्म में तत्पर सब ऐश्वर्य्य से युक्त जैसे नारायण भगवान् होते हैं ऐसेही वह भी हो ८६ देवताओं का प्रिय व ब्राह्मणों का अतीव प्रिय करने वाला ब्रह्मण्य वेदतत्त्व जाननेवाला तीनोंलोकों में विख्यात विक्रम ८७ इन सब गुणों से युक्त व तीनोंलोकों से पूजित सुमतिवाला सुन्दर प्रीति करनेहारा ऐसा पुरुष जो होगा वही इसका पति होगा अन्यथा न होगा ८८ यह सुन राजाययाति बोले कि इन सब गुणों से युक्त आयेहुये हमको जानो इसी के अनुरूप भर्त्ता हमको ब्रह्माके बनाये हुये जानो इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ८९ विशाला बोली कि हे राजन् ! आपको पुण्यसे बड़ेहुये हम तीनोंलोकों में जानती हैं व जो २ गुण हमने कहे वास्तव में सब आपमें हैं ९० परन्तु एक ही दोषसे यह तुमको अपना पति बनानेको नहीं मानती बस वही हमको भी सन्देह है कि आप विष्णुमय हैं ९१ ययातिजी बोले कि जिस महादोषसे यह हमको अपना पति बनाने को नहीं चाहती उसे हमसे कहो व जिससे यह हमारे ऊपर प्रसाद से सुमुखी हो हम वही करें ९२ विशाला बोली कि हे पृथ्वीनाथ ! तुम अपना दोष कैसे नहीं

जानते वृद्धावस्था से तुम्हारा शरीर व्याप्त है वस इसी से यह तुम को अपना पति बनाने को नहीं मानती ६३ ऐसा अप्रिय उसका वचन सुन राजा बड़े दुःखसे युक्त होकर उस विशालासे फिर बोला कि ६४ हे भद्रे ! जरादोष हमारे शरीर में किसके संसर्ग से हुआ है यह हम नहीं जानते कि जराका आगमन कैसे हुआ ६५ जो २ दुर्लभ पदार्थ तीनों लोकों के यह चाहती हो वे सब हम इसको दिया चाहते हैं उत्तम वर मांगो ९६ विशाला बोली कि जब तुम वृद्धता से हीन होओ तो तुम्हारी यह प्रिया हो हे राजन् ! यह निश्चय तुमसे हम सत्य २ कहती हैं ९७ सो हे राजन् ! इस विषय में एक श्रुति है कि पुत्र भाई व भृत्य चाहे जो हो जिसके अंगमें जरा आती है उसके अंगों में फैलही जाती है ९८ सो यदि किसी के तरुणता हो उससे तुम ग्रहण करो व अपनी जरा उसको दो पर वह भी जो राजी हो तो ऐसा होसक्ता है ९९ सो जो कोई तुमको कृपाकर अपना रूप दे तो उसको पुण्य होगा इसमें कुछ सन्देह नहीं है १०० दुःख से इकट्ठा की हुई पुण्य और को दीजावे तो अच्छी पुण्य उसीकी होजायगी वही पुण्यका फल भोगकरेगा १०१ हे राजन् ! इससे तुम अपने पुत्रसे तरुणता ग्रहण करो व वृद्धावस्था और पुण्य देवो हे महाराज ! जाकर सुन्दरता ग्रहण करके फिर आओ १०२ जो तुम इसके संग भोग करना चाहते हो तो तो ऐसा करो ऐसा राजा से कहकर विशाला विश्राम कर रही १०३ सुकर्मजी बोले विशालाका ऐसा वचन सुनकर राजा उससे बोले कि हे महाभागे ! ऐसा ही हो हम तुम्हारा वचन करेंगे १०४ कामासक्त मूढ़ राजा ययाति गृह में आकर अपने पुत्रोंको बुलाकर यह वचन अनुपूरु यदु तुर्वसु अपने प्यारे सबसे बोले कि हे पुत्रो ! हमारी आज्ञा से यह करो जिसमें हमको सुख हो १०५ । १०६ सब पुत्र बोले कि शुभ वा अशुभ चाहे जैसा हो पर पिताका वाक्य पुत्रों को करना चाहिये इससे आप शीघ्र ही कहिये व किया हुआ ही समझिये इस में कुछ सन्देह नहीं है १०७ ॥

चौ० इमिसुनि वचन सुतन के राजा । कामातुर प्रमुदित मन आजा ॥

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० । २६६
बोले पुत्रन सों करिप्रीती । मदनातुर जानें किमि नीती १०८ ।

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादवेनोपाख्यानमातापितृ
तीर्थवर्णनेययातिचरित्रेसप्तसप्ततितमोऽध्यायः ७७ ॥

अठहत्तरवां अध्याय ॥

दो० अठहत्तर अध्याय महँ निज पुत्रन पहुँजाय ॥

नाहुष वयमांगीलही नहिंपुनि लहि तहुँआय १

ययाति बोले कि हे पुत्रो ! तुममें से दुःखदायिनी हमारी वृद्धता जो एक भी कोई ग्रहण करे व धीरहोकर तुम लोगों के मध्य में से अपनी तरुणता हमको दे १ और यह उत्तम स्वरूपदे क्योंकि इस समय हमारा मन कामासक्त हो एकछ्त्री में लगकर अत्यन्त चञ्चल होगया है २ इससे जैसे पात्रमें स्थित जलको अग्नि खलभलाता व सन्तप्त करता है वैसेही हमको कामका अग्नि सन्तप्त करता है व इससे हमारा मन कामासक्त होकर अत्यन्त चलायमान होरहा है ३ सो हे पुत्रो ! एक कोई दुःखदायिनी हमारी जराको ग्रहण करे व अपनी तरुणता हमको दे जिसमें हम कामसुख भोगें ४ जो कोई उत्तम पुत्र हमारी जराको ग्रहण करेगा वही राज्य भी भोगेगा व हमारा धन्वा भी वही ग्रहण करेगा ५ व उसीको धन धान्यादि अच्छी सम्पत्तिका सुख भी होगा व विपुल सन्तति भी उसीके होगी व कीर्ति यश भी उसीके होंगे ६ पुत्र बोले कि हे महाराज ! आप तो धर्मात्मा हैं इससे प्रजाओंको सत्यसे पालते हैं फिर आपका इस प्रकारका चञ्चल भाव कैसे होगया ७ राजा ययाति बोले कि हमारे पुरमें पूर्व समयमें नाचनेवाले लोग आये उनके नृत्य देखने से हमारा चित्त कामसे सम्मोहित हुआ ८ व हे पुत्रो ! वृद्धावस्था से देह व्याप्त होगया तबसे हमारा मन कामसे ऐसा व्याकुल होगया है कि कहतेही नहीं बनता इसी दशामें हम वनको गये वहां हमने ९ एक सुमुखी दिव्यरूपवती स्त्री देखी व हे पुत्रो ! हमने उससे पूँछा तो वह सती तो कुछ नहीं बोली १० उसकी एक विशालानाम सखी अतिचारु

चतुर है उसने हमसे शुभ व हमको सुख देनेवाला यह वचन कहा कि ११ जो तुम जराहीन होओ तो यह तुमको प्रसन्नकरे सो इस प्रकार तिसके कहेहुये वाक्यको अंगीकार कर हम अपनी जरा मिटाने के लिये घर आयें हैं १२ व उसीके लिये तुम लोगोंसे ऐसा कहा कि हमको कोई अपनी तारुण्यदेव हमारी जरा ले ऐसा जानकर हे पुत्रो! हमारे सुखका देनेवाला कर्म तुममें से एकको करना चाहिये १३ यह सुन उनमें अनुनाम पुत्र बोला कि पिता व माता के प्रसाद से पुत्र शरीर पाते हैं व हे राजन ! धर्म भी पण्डित लोग इसी शरीरही से करते हैं १४ व पुत्रोंको माता पिताकी शुश्रूषा विशेष रीतिसे करनी चाहिये परन्तु नवयौवन अवस्थाका देना नहीं होसता १५ क्योंकि हे नृप ! मनुष्य प्रथमावस्थाहीमें विषयवासनाको भोगते हैं सो इस समय हम लोगों के भोगका समय है इससे हम तुम्हारी जरा नहीं लेसके न अपनी तरुणता देसके हैं क्योंकि आप बहुत दिन सुख भोगचुके हैं अब वृद्धहुये हैं ऐसे सुखोंके भोगनेकी कौन आवश्यकता है अब इस अवस्थामें जो ऐसे भोगकरोगे तो आपका जीवन भी न होगा १६ । १७ इससे हे महाराज ! हम तुम्हारा वाक्य न करेंगे इस प्रकार राजासे ज्येष्ठपुत्र अनुने कहा १८ अनुका वाक्य सुनकर क्रुद्ध होकर राजाययाति बोले व यद्यपि धर्मात्मा थे पर मारे रोषके अरुण नेत्र कर उसको शाप दिया १९ कि हे पापचेतन ! तुमने हमारी आज्ञाका अपध्वंस किया इससे तुम सब धर्म से बाहर होकर पापी होओ २० शिख से विहीन होकर वेदशास्त्र से विहीन होओ व सब आचारों से तुम विहीन होगे इसमें संशय नहीं है २१ ब्रह्महा मद्यप दुष्टात्मा व सत्यवर्जित भी होगे व नराधम तुम अतिकोप के कर्म करनेवाले होओगे २२ मदिरा बेंचनेवाले भूखे पापी व गोघाती भी तुम होओगे दुष्कर्म करनेवाले व ब्रह्मद्वेषी सदा होगे २३ व परस्त्री गामी और महाप्रचण्ड लम्पटहोगे व सदा दुष्टबुद्धि होकर सर्वभक्षी होओगे २४ व अपने गोत्रकी स्त्री के संग भोगकरोगे व सब धर्मों का नाश करोगे पुण्य ज्ञानसे विहीन व कोढ़ी भी होओगे २५ व तुम्हारे पुत्र पौत्रभी ऐसेही सब पुण्योंके नाशनेवाले म्लेच्छ अत्यन्त

पापी होंगे इसमें सन्देह नहीं है २६ इसप्रकार अनुको शाप देकर यदुनाम अपने दूसरे पुत्र से राजा ययाति बोले कि हमारी जराको धारण करो व अकंटक राज्यभोगो २७ तब हाथजोड़कर यदु राजा से बोले कि हे तात ! हम जराका भार नहीं उठासक्ते इससे कृपा कीजिये २८ अतिशीत लगना मार्गमें न चलने पाना दन्तादिकोंके न रहनेसे कदन्न भोजन करना वृद्धस्त्रियों का सङ्गहोना व सब अपने मनके प्रतिकूल कामोंका देखना ये पांच जराके लक्षण हैं २९ इससे हे राजन् ! हम अभी पहिलीही अवस्था में वृद्धता के दुःख नहीं सहसक्ते व हम क्या कोईभी ज्वानीही में बुढ़ापेको नहीं धारण कर-सक्ता इससे अब हमारे ऊपर क्षमाकीजिये ३० हे द्विजनन्दन ! यह सुन क्रुद्धहोकर राजाने यदुकोभी शापदिया कि तेरे वंशमें उत्पन्नहो कर कोई कभी न राज्य के योग्यहोगा ३१ बल व तेज व क्षमा से हीन व क्षत्रिय धर्मसे वर्जित सब तेरेवंशके होंगे जिससे तुम हमारी आज्ञाके प्रतिकूलहो इससे ऐसा होगा सन्देह नहीं है ३२ यह सुनकर यदु बोले कि महाराज हमतो निर्दोषहैं आपने क्यों शाप दिया अब हमदीनके ऊपर कृपाकरो व प्रसन्नहोओ ३३ ययाति राजा बोले कि हे पुत्र ! देवदेव श्रीविष्णु अपने अंशसे तुम्हारे कुलमें अवतारलेंगे तब तुम्हाराकुल पवित्र होजायगा ३४ यदु बोले कि हे महाराज ! हम निर्दोष पुत्र को आपने शापित किया जो हमारे ऊपर दया हो तो अब अनुग्रह कीजिये ३५ राजा बोले कि जो ज्येष्ठपुत्र पिताके दुःखों को हरता है वह राज्य का भाग भोगताहै व भारउठाताहै ३६ तुम भव्य अभव्य सब करोगे इसमें संशय नहीं है परन्तु तुमने हमारी आज्ञा का नाश किया इससे हमने महादण्ड से तुमको घातित किया ३७ व अब अनुग्रह नहीं होसक्ता तुम्हारी जैसी इच्छाहो वैसा करो यह सुन यदु बोले कि हे नृप ! जिससे तुमने हमारा राज्य कुल व रूप नष्ट किया ३८ इससे अब हम व हमारे वंश का पति जोई होगा दुष्ट होगा अब हमभी कहते हैं कि तुम्हारे वंश में नाना भेद के क्षत्रिय होंगे ३९ उनके ग्राम व देश और स्त्रियों को व रत्नों को बड़े२ कोप करनेवाले महाबलवान् भोगेंगे इसमें संशय नहीं है ४०

व हमारे वंश से जो तुम्हारे शाप से तुरुष्क व म्लेच्छ उत्पन्नहोंगे वे भी सब भोग करेंगे जिनको कि तुमने दारुण शापोंसे नाशित किया है ४१ ऐसाराजासे कहकर यदु बहुत क्रुद्धहुये तब महाराज ययाति और भी क्रुद्धहुये और फिरसे शापदिया ४२ कि अच्छा जो तुम्हारे वंशसे उत्पन्न म्लेच्छादिक हमारी प्रजाओंका नाश करेंगे तो तुम हम से सुनो जबतक चन्द्रमा सूर्य पृथ्वी नक्षत्र तारागण रहेंगे ४३ तब तक जितने म्लेच्छ उत्पन्नहोंगे कुम्भीपाक नरक में गिरेंगे व रौरव नरकमें भी पड़ेंगे तब राजाने सबसे छोटे तुर्वसु नाम पुत्रको बालकों के संग खेलतेहुये देख बुलाकर बालक जान राजाने उससे कहा कि तुम तो लड़केहो तुमसे क्याकहें जाकर खेलो ४४।४५ फिर शर्मिष्ठा केपुत्र पुण्यात्मा पूरुको बुलाकर उससे कहा कि हेपुत्र! हमारी जरा तुम ग्रहणकरो ४६ व हमारा दियाहुआ अतिपुण्यदायक शत्रुरहित राज्य भोगो यह सुन पूरु बोले कि हे देव! राज्य हम न भोगेंगे क्यों आप अभी भोगते हैं भोगें ४७ पर आपकी आज्ञासे जरा हम ग्रहण करतेहैं दीजिये व हमारी तरुणतासे अभी सुन्दररूप धारणकरके ४८ विषयासक्तचित्तसे आप नानाप्रकारके भोग विलासकीजिये हेमह-भाग! जबतक इच्छाहो तबतक तिसके साथ विहार करो ४९ जब तक हम जीवेंगे तबतक आपकी वृद्धावस्था धारणकिये रहेंगे जब पूरुने ऐसा कहा तो महाराज ययाति ५० अतिहर्षित होकर उस पुत्र पूरुसे बोले कि हे वत्स! जिससे कि तुमने हमारी आज्ञा नहीं हतकी बरन अच्छेप्रकार से की ५१ इससे बहुत सुखके देनेवाला तुमको देंगे जिससे हमारी वृद्धावस्था ग्रहणकी और अपनी युवावस्था दी ५२ तिससे हेमहामते! हमारी दीहुई राज्यभोगो हेराजन्! जब राजाययाति ने पूरुसे ऐसा कहा तो ५३ पूरुने अपनी तारुण्य राजाको दी व उनकी जरावस्था आप ग्रहणकी पिता पुत्रके अवस्था बदलतेही ५४ उसीक्षण राजा युवा होगये व पूरु वृद्धहोगये राजाका रूप ऐसा दिखाई देनेलगा जैसा कि सोलहवर्ष के अतिस्वरूपवान् पुरुषका होताहै ५५ बड़ेरूपसेयुक्त हो राजा मानो दूसरे कामदेवही होगये धनुष् व सब पृथ्वीका राज्य छत्र पंखा सब आसन गज ५६

कौश देश सबसेना चामर रथ जो पदार्थथे सब महात्मा पूरुको राजा
ने देदिये ५७ व उन धर्मात्मा राजाने कामासक्तहोकर उसस्त्री की
चिन्तना की व उसी स्वच्छ जलवाले काम नाम तड़ागपर राजा
ययातिजी गये ५८ जहां कि वह अश्रुबिन्दुमती नामस्त्री थी व उस
विशालनयनी चारुपीन कुचवाली मनोहर स्त्रीको देख ५९ कामसे
अतिव्याकुल मन होकर राजा विशाला से बोले कि हे महाभाग !
हे चारुलोचने विशाले ! जराको त्यागकरके व तारुण्यको ग्रहणकरके
हम आगये अब हम तरुण होकर आये हैं इससे तुम्हारी यह सखी
हमको भजै ६० । ६१ व जो जो यह चाहती हो वह वह देंगे इसमें
संशय नहीं है यह सुनकर विशाला बोली कि जब अब आप दुष्ट
जराका परित्याग करके आये ६२ तो एक दोषसे और भी लिप्त होने
से यह आपको अपना पति नहीं बनाना चाहती यह सुनकर राजा
बोले कि जो निश्चय से हमारा दोष तुम जानती हो तो कहो ६३
उस गुणरूप दोषको हम अभी छोड़ देंगे इसमें संशय नहीं है ६४ ॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने माता

पितृतीर्थवर्णने ययातिचरिते ऽष्टसप्ततितमोऽध्यायः ७८ ॥

उनासीवां अध्याय ॥

दो० उनासी अध्याय महँ मदनसुता अरु भूप ॥

क्रीड़ाकरि हयमेधमख कीन गमन सुनि चूप १

राजाके वचन सुनकर विशाला बोली कि हे महाराज ! जिस आप
के शर्मिष्ठा व श्रेष्ठमुखवाली देवयानी नाम दोस्त्रियां विद्यमान हैं
वहां अन्यस्त्रीका सौभाग्य भूतलपर कैसे होसक्ता है १ हे महाभाग !
तिससे कैसे आप इसके कार्यवशहोंगे आप सापत्नभावसे युक्त पति
हैं २ हे महाराज ! जैसे सर्पसहित चन्दनका वृक्ष भूतलपर होता है
३ ऐसेही आपभी सौत्रियों से वेष्टित हैं क्योंकि सपत्नियां भी सर्प
हीके समान होती हैं ॥

दो० अनल प्रवेशसुवर शिखर पतन श्रेष्ठ नहिं शङ्क ॥

प्रबलसौति सँग नहिं भलो लहत अनेक कलङ्क ४

ये सब श्रेष्ठ हैं परन्तु सपत्नीयुक्त पति अच्छा नहीं बस यद्यपि आप रूपतेजयुक्त हैं पर सौतिसहित हैं सौतिरूपविषयुक्त ५ प्रिय कान्तवर को गुणसागरको अपना पति बनाना नहीं चाहती यह सुन राजा बोले कि न अब हमारा देवयानी से कुछ प्रयोजन है न शर्मिष्ठाही से ६ इस अर्थमें सत्यधर्म समन्वित हमारा कोश देखो तब अश्रुबिन्दुमती बोली कि हम राज्य भोग करने की इच्छा नहीं करती केवल तुम्हारे शरीरसे हमारा प्रयोजन है ७ जो जो हम कहेंगी सो सो तुमको निश्चय करना होगा बस इस अर्थके लिये हे धर्मवत्सल ! अपना हाथ हमको दीजिये ८ जो कि बहुत धर्मों से युक्त व चारु लक्षण सहित है राजा ययाति बोले कि हे बरवर्णिनि ! हम प्रतिज्ञा करते हैं कि आजसे तुमको छोड़ अन्य स्त्रीको अपनी भार्या न बनावेंगे व हमारा राज्य सब पृथ्वी शरीर और खजाना भोगो यह हाथ तुमको दिया है ९।१० व जो अन्यभी किसी कार्यके लिये कहोगी सब हम करेंगे अश्रुबिन्दुमती फिर बोली कि हे महाराज ! इसपर तो हम तुम्हारी भार्या होंगी ११ यह सुनकर राजा हर्षसे व्याकुल नेत्रहुये व राजा ययातिजी ने गान्धर्व विवाहकी रीतिसे १२ उस कामकन्या के साथ अपना विवाह कर लिया व वे महात्मा राजा उसके साथ क्रीड़ा करने लगे १३ समुद्र के किनारों पर वनों में व उपवनों में सुन्दर पर्वतों पर नदियों के तटों पर १४ उसके संग यथेष्ट भोगविलास करने लगे क्योंकि तारुण्य तो प्राप्त ही हो चुकी थी उसके संग भोग करते राजाको बीस सहस्र वर्ष बीत गये १५ व बराबर महात्मा राजाययाति रमते रहे श्रीविष्णु भगवान् राजा वेनसे बोले कि इस प्रकार महाराज ययाति उस स्त्री से मोहित हुये १६ इस विषय में इन्द्रके अर्थ कामदेवहीका सब प्रपञ्च था जिससे राजेन्द्र मोहित होगये सुकर्माजी पिप्पलसे बोले कि हे पिप्पल ! पृथिवी भूति राजा ययाति १७ उसके मोहसे कामसे व ललित सुरतादि से ऐसे मोहित हुये कि कामकन्या के वशीभूत होकर अब उनको यही नहीं विदित होता था कि दिन है कि रात्रि है बनाय उसीमें लीन ही होगये १८ तब एक समय सुन्दर नेत्रवाली अश्रुबिन्दुमती मोहित नम्र वश में प्राप्त राजाययाति से बोली १९

कि हे कान्त ! हमारे गर्भहै तिससे हमारा मनोरथ करो एक अश्व-
मेध यज्ञकरो २० राजा बोले कि बहुत अच्छा ऐसाही होगा हम
तुम्हारा प्रिय करेंगे इतना कहकर राजाने अपने पूरु श्रेष्ठ पुत्र को
बुलाया जो राज्य भोग में वाञ्छा नहीं करताथा २१ जैसेही महा-
राजने बुलाया कि भक्तिसे शिर झुँकातेहुये पूरु आये व दोनों हाथ
जोड़कर राजाके प्रणाम किया २२ फिर भक्तिसे माथ नवाकर उस
अश्रुबिन्दुमती के भी चरणों के प्रणाम किया व बोले कि हे राजन् !
आज्ञा दीजिये आपके बुलाने से हम आये २३ हे महाभाग ! अब
क्याकरें आपके दास और नम्रहैं राजा ययातिजी बोले कि हे पुत्र !
अश्वमेध यज्ञ की सब सामग्री इकट्ठीकरो २४ ब्राह्मणोत्तमोंको बुला-
कर ऋत्विक् बनाओ व सब पृथ्वीमण्डल के खण्ड मण्डलेश्वर
राजाओं को बुलाओ यह सुनकर महातेजस्वी परमधार्मिक पूरुजी ने
२५ जैसा उनके महात्मा पिताने कहा वैसेही सब यज्ञकी सामग्री
इकट्ठी की व उस कामकन्या के सङ्ग ग्रन्थिवन्धनकर महाराज यया-
तिजी यज्ञ करने के लिये दीक्षितहुये २६ व अश्वमेध यज्ञ किया
उसमें अनेक दान महाराज ने दिये व ब्राह्मणों को तो बहुत अनन्त
दान दिया २७ व अन्य दीन लोगों को भी विशेषकर दान पृथ्वी-
पतिने दिये व यज्ञके अन्तमें महाराज उस श्रेष्ठमुखी प्राणप्रिया से
बोले २८ कि हे वाले ! अब और तुम्हारा प्रिय क्याकरें सो कहो वह
सब हम करेंगे चाहे साध्यहो वा असाध्य २९ सुकर्माजी पिप्पल
से बोले कि जब राजाने ऐसा कहा तो वह महीपाल से बोली कि हे
महाराज ! हे पापरहित ! हमारे गर्भहै हमारी यह इच्छाहै उसे आप
परणकरें ३० प्रथम इन्द्रलोक को चलें फिर ब्रह्मलोक को तदनन्तर
शिवलोक को चलें फिर हे महाराज ! वहांसे श्रीविष्णु लोकको चलें
हमारे यह सब देखनेकी बड़ी मारी अभिलाषाहै ३१ हे महाभाग ! जो
हम तुमको अति प्रियहों तो हमको सब दिखाओ जब राजासे उस
ने ऐसा कहा तो उस अतिप्रिया से राजा बोले ३२ कि हे वरारोहे !
बहुत अच्छा बड़े पुण्यकी बात कहतीहो पर स्त्री के स्वभाव से चप-
लता व कौतुक से ऐसा कहतीहो ३३ क्योंकि यह तुम्हारा कहाहुआ

३०६

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

कार्य सर्वथा हम से तुम से दोनों से असाध्य है वह पुण्यदान यज्ञ तपस्यासे साध्य है ३४ अन्यथा साध्य तुम्हारा कहा हुआ नहीं है तुम ने जो पुण्य मिश्रित कहा वह असाध्य है ३५ मनुष्यलोक से इस शरीरसे पुण्यकर्ता मनुष्य स्वर्गको गया हुआ न सुना न अब तक देखा ३६ हे वरारोहे ! जो तुमने कहा वह असाध्य है हे प्रिये ! और करेंगे जो तुमको प्रिय हो सो कहो ३७ ॥

चौ० अश्रुबिन्दुमति यह सुनि बोली । वचन परमप्रिय अति हि अमोली ॥
सत्य सत्य हम कहत महीपा । सब तव साध्य अहै कुलदीपा ॥
तप व्रत दान यज्ञ शुभ कर्मा । क्षत्रियवरके अपर सुधर्मा ॥
सब तुम महँ नहिँ तुम्हें समाना । मर्त्यलोक महँ आन महाना ॥
तेज क्षात्र बल सब तुम माहीं । भूप प्रतिष्ठित संशय नाहीं ॥
तासों ममप्रिय यह नृप करहू । वचन विचारि हृदय महँ धरहू ३८ ॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने माता

पितृतीर्थवर्णने ययातिचरित्रे एकोनाशीतितमोऽध्यायः ७६ ॥

असीवां अध्याय ॥

दो० अस्सी के अध्याय महँ नूतन सौतिहि देखि ॥

देवयानि शर्मिष्ठा मिलि तासु सङ्ग विद्वेखि १

पिप्पल मुनि ने सुकर्मा से पूँछा कि हे द्विजोत्तम ! जब कामकी कन्या अश्रुबिन्दुमती को राजा ययातिजीने व्याहलिया तो उन प्रथमकी दोनों पुण्यवती भार्याओं ने क्या किया १ महाभाग्यवती शुक्राचार्य की कन्या देवयानी व दृषपर्वी दैत्यराजकी कन्या शर्मिष्ठा उन दोनोंका चरित हमारे आगे कहो २ सुकर्मा बोले कि जब राजाययाति कामकन्याको व्याह करके अपने गृहको लाये तो उसके साथ यशस्विनी देवयानी बड़ी स्पर्द्धा करने लगी ३ तिसीके लिये दो पुत्र उसके शापित हुये तब क्रोधसे आकुल आत्मा होकर यशस्विनी देवयानी ने शर्मिष्ठाको अपने पास बुलाकर उनसे बोली ४ बस रूप तेज दान पुण्य सत्य पुण्यव्रतों से शर्मिष्ठा व देवयानी दोनों एक होकर कामकन्याके साथ वैरभाव करने लगीं ५ जब दोनोंका दुष्टभाव काम-

कन्याने जाना तो राजासे उसने उसीक्षण सब कहा ६ तब महाराजने क्रोधकरके देवयानी के पुत्र यदुको बुलाया व कहा कि शर्मिष्ठाको अभी मारडालो व शुक्रकीपुत्री देवयानीको भी ७ पुत्र यह हमारा प्रियकरो जो कल्याण चाहतेहो पिताकी ऐसी बातसुनकर यदु ८ राजासे बोले कि हे तात! दोषवर्जित अपनी इनदोनों माताओं का हम न वध करेंगे ९ क्योंकि माताके वधमें वेदवादी पण्डितों ने बड़ा दोष कहाहै इससे हे महाराज! हम इनदोनों का वध न करेंगे १० हे महाराज! चाहे माता हजारों दोषोंसे युक्तहो ऐसेही बहिन कन्या इन को ११ पुत्र व भाई कभी नहीं मारते ऐसा जानकर महाराज इन दोनों माताओंको हम नहीं मारते १२ यदुकी बात सुनकर क्रुद्धहो राजा बोले व पीछे से ययाति राजाने शापभी दिया १३ कि जिससे हे पाप! तुमने हमारी आज्ञा आज नहीं की इससे हमारे शापसे मलिन हो तुम जाकर अपने मामाकी सेवाकरो १४ इसप्रकार यदु अपने पुत्रको शापदेकर राजाययाति पुत्रके शाप देने के पीछे अपनी उस नवीन स्त्रीके संग १५ फिर क्रीड़ा करनेलगे सुखसे भोग विलासभी किया करें व विष्णु भगवान्जी के ध्यानमें तत्परभी रहाकरें ॥ चौ० अश्रुर्विन्दुमतिविपुलसुलोचनिपतिसंगरमतकरतनहिंशोचनि ॥ चारुसर्व्व तनु विमल विलासिनि । नृपसंग भोगे भोग सुवासिनि ॥ इमि महान बलवान ययाती । भोगत भोग न गनु दिनराती ॥ अक्षय अमर जरा नहिं काऊ । सकल प्रजा इमि सुखी सुभाऊ ॥ विष्णुध्यानरत सब नरनारी । भजनपरायण राज्यकरारी ॥ नृपतपसोंसबप्रजासुखारी । प्रमुदितरहतलहतहितभारी १६।१७ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानं

मातापितृतीर्थवर्णनेययातिचरित्रेऽशीतितमोऽध्यायः ८० ॥

१०.५.६०

इक्यासीवां अध्याय ॥

दो० रतितनया नृपसों कह्यो बहुत इक्यासी माहिं ॥

स्वर्ग चलन कहुँ कालगति भूपकही शक नाहिं १

सुकर्माजी पिप्पलसे बोले कि दान पुण्यादियुक्त महात्मा यया-

ति का विक्रम देखकर महाप्राज्ञ इन्द्रजी सदा भयभीत रहते थे १
 इस लिये उन्होंने मेनका नाम अप्सरा को दूतता करने के लिये
 भेजा व कहा कि हे महाभागे! जाकर हमारा सन्देश कहो २ कामक-
 न्या से ऐसा कहना कि इन्द्रने यह कहा है कि किसी उपाय से अब
 राजाको तुम यहां लाओ ३ यह सुनकर इन्द्रकी भेजी हुई मेनका वहां
 गई व इन्द्रके कहेहुये सब वचन उससे कहे ४ इतना कहकर काम
 कन्याके कहनेसे मेनका तो चली गई व मेनका के चलेजाने पर मन-
 स्विनी रतिकी पुत्री ५ यशस्विनी राजासे धर्म संकेत वचन बोली कि
 हे राजन्! तुम सत्य वचनकी प्रतिज्ञा करके हमको पहले यहां लाये
 ६ व अपना हाथ हमको पकड़ाकर अङ्गीकार किया व घरमें लाये
 हमने कहा था कि राजन् जो २ हम कहेंगी वह तुमको करना होगा ७
 सो हे वीर! तुमने हमारा कहा नहीं माना इससे अब तुमको छोड़कर
 हम अपने पिताके मन्दिरको चली जायँगी ८ यह सुन राजा बोले कि
 हां हे देवि! जो तुमने कहा वह हमने नहीं किया इसमें सन्देह नहीं है
 अब असाध्यको छोड़ कोई साध्य कार्य्य कहो देखो कैसे करते हैं ९
 अश्रुबिन्दुमती बोली कि इसी लिये हमने सब लक्षण सम्पन्न सब
 धर्मसमन्वित आप ऐसे भर्ताको ग्रहण किया है १० यही जाना था
 कि आप सब कुछ करसक्ते हैं ऐसा कोई कार्य्य नहीं है जिसे आप न
 करसकेंगे क्योंकि सब धर्मों के कर्ता व पुण्यकर्मों के स्रष्टा ११
 तीनों लोकों के साधक जाना था क्योंकि तीनों लोकों में आपके समान
 कोई नहीं है व तुमको सब वैष्णवों में अतिश्रेष्ठ विष्णुभक्त हम जानती
 हैं १२ इसी आशासे हमने आपको पूर्वकालमें भर्ता बनाया था कि
 जिसके ऊपर विष्णुभगवान् का प्रसाद होता है वह सर्वत्र जासक्ता
 है १३ हे राजेन्द्र! चराचर इन तीनों लोकों में उसको कुछ दुर्लभ
 नहीं है इससे हे सुव्रत! आपकी गति सब लोकोंमें है १४ विष्णुजी
 के प्रसाद से आकाश में जानेकी उत्तमगति आपमें है क्योंकि इस
 मर्त्यलोकमें आकर तुम्हींको १५ ऐसी सामर्थ्य है कि हे वसुधाधिप!
 सब प्रजाओंको जरापलित से हीन करदिया है राज्यभरमें कोई रुद्ध
 होनेही नहीं पाता और मृत्युहीन मनुष्य किये हैं हे महाराज! सब

मनुष्योंके गृहोंके द्वारोंपर १६ अनेक कल्पवृक्षके पेड़ तुम्हींने लगवा दिये हैं व हे महाराज ! जिन तुमने मनुष्योंके गृहोंमें कामधेनु लेकर १७ एक २ सबके यहां बँधवादी हैं कि सदाके लिये स्थिर हैं उन सब मनुष्यों को तुमने सब कामोंसे सुखी कर दिया है १८ कुलीनोंके एक २ गृहमें सहस्रों मनुष्य दिखाई देते हैं ऐसी वंशकी वृद्धि मनुष्यों की तुमने की है १९ यमराज और इन्द्रके विरोधसे इस मृत्युलोकको तुमने व्याधि व पापसे विहीन कर दिया है २० अपने तेजके अहंकार से भूतलको स्वर्ग के तुल्य कर लिया है व सबको अपना प्रभाव तुमने ऐसा दिखाया है कि महाराज तुम्हारे समान भूतलपर कोई भी नहीं है २१ व न पूर्वकालमें भी ऐसा हुआ है न अब और कोई होगा हम आपको जानती हैं कि आप सब धर्मों के प्रकाश करने वाले हैं २२ इससे हमने आपको भर्ता बनाया है सो हमारे आगे आप ऐसा कहते हैं कि हम इन्द्रलोकादिको जायही नहीं सके हम तो जानती हैं कि हमारे आगे यह बात आपने हास्य करनेके लिये कह दी अब सत्य २ कहिये २३ यदि तुम्हारे सत्य व धर्म हैं तो हे महाराज ! देवलोकों के जानेमें और आकाशके जानेमें हमारी उत्तमगति नहीं है २४ सो अब सत्य वचनको छोड़कर जो तुम स्वर्ग नहीं चलोगे तो तुम्हारे वचन कूट होंगे इसमें सन्देह नहीं है २५ जो पूर्व समय में लुप्त तुमने किया है सब भस्मीभूत हो जायगा इतना सुन राजा ययाति बोले कि हे भद्रे ! तुमने सत्य कहा हमको साध्य असाध्य कुछ भी नहीं है २६ श्रीनारायण स्वामी के प्रसाद से तीनों लोकों में हमको सब साध्य ही है स्वर्ग नजाने में तुम कारण हमसे सुनो २७ जब हम स्वर्गको जायँगे तो फिर देवगण हमको मर्त्यलोकको न आने देंगे तब फिर हे वरानने ! हमारे सब मनुष्य प्रजालोग २८ हमारे न होने से मृत्युयुक्त हो जायँगे इसमें कुछ सन्देह नहीं है इसीसे हम स्वर्गको जाना नहीं चाहते यह हमने सत्य २ तुमसे कहा २९ यह सुन अश्रुविन्दुमती देवी बोली कि हे महाराज ! सब लोकोंको देखकर फिर हम व आप संगही संगचले आवेंगे हमको इस विषय में बड़ी श्रद्धा है सो इसको पूरण कीजिये ३० राजाययाति बोले कि अच्छा

तुमने जो कहा सब ऐसाही करेंगे इसमें कुछभी संशय नहीं है महा-
 तेजस्वी भी महाराज ययातिने ३१ स्त्रीसे ऐसा कहकर चिन्तना करने
 लगे कि मत्स्य जलके भीतर रहते हैं पर वेभी जाल में बँधजाते हैं
 ३२ पवन के समान वेगवाला भी मृग बागुरा में बँधजाता है सहस्र
 योजनमें स्थित मांसको पक्षी देखता है ३३ पर दैवसे मोहित कंठमें
 लगी हुई फँसरी को नहीं देखता कालही सम व कालही विषम का-
 लही सम्मान कराता है कालही हानि देता है ३४ व कालही अनादर
 कराता है व वह जहाँ कहीं विद्यमान रहता है पुरुषको दाता और
 वही दीन कर डालता है ३५ जितने स्थावर जंगम प्राणी हैं चाहे स्व-
 र्ग में हों वा भूतल पर हों सब कहीं काल पहुँचता है व कोईभी उसको
 रोक नहीं सका वह सब को समय पर ग्रासकर जाता है ३६ काल
 आदि और नाशरहित धाता जगत् का पर कारण है वह काल म-
 नुष्यों को पचाता है जैसे वृक्ष में आहित फल है ३७ न मंत्र न तप
 न दान न मित्र न बान्धव कालसे पीड़ित पुरुषकी रक्षा कर सकते हैं ३८
 ये तीन कालके किये हुये पाश होते हैं किसीके मिटाये नहीं मिटते
 एक विवाह दूसरा जन्म तीसरा मरण जब जहां जिसके संग होने
 को होता है होही जाता है ३९ जैसे मेघ आकाश में पवनके वशी-
 भूत जहां तहां भ्रमण करते हैं वैसेही यह जगत् कर्मयुक्त कालसे
 भ्रमण कराया जाता है ४० सुकर्मा पिप्पलसे बोले कि कर्मयुक्त इस
 कालकी उपासना सब मनुष्य किया करते हैं काल कर्मको प्रेरित
 किया करता है उसको काल नहीं करता है ४१ उपद्रव घातक दोष
 सर्पव्याधि ये सब कर्म की प्रेरणा से मनुष्य के ऊपर कालपाकर
 आजाते हैं ४२ पुण्यसे युक्त जितने उपाय सुखकेलिये किये जाते हैं
 वे सब कर्म से युक्त रहते शुभ वा अशुभ दिखाई देते हैं यह नहीं
 कि सुखकेलिये किये जायँ तो उनसे सुखही हो ४३ कर्मही के अ-
 नुसार भाग मिलता है व कर्मही के अनुसार बान्धव मिलते हैं व
 कर्मही पुरुषको सुख दुःखकी प्रेरणा करता है ४४ सुवर्ण वा चांदी
 जैसे गलाकर बनाने से एक रूपका भूषण बनजाता है वैसेही प्राणी
 अपने कर्मके वशीभूत होकर बँधकर एकरूप दिखाई देता है ४५

आयु कर्म धन विद्या व मरण ये पांच जब प्राणी गर्भमें रहता है तभी उत्पन्न किये जाते हैं ४६ जैसे मिट्टी का पिण्ड लेकर कुम्हार जो २ चाहता है सो २ बनालेता है इसी प्रकार पूर्व के किये कर्म कर्ता को प्राप्त होते हैं ४७ देवत्व मनुष्यत्व पशुत्व वा पक्षित्व तिर्यक्त स्थावरत्व सब अपने कर्मों से मिलते हैं ४८ जो जिसने कर रक्खा है वही उसको भोगता है जैसे अपना ही किया दुःख व अपना ही किया सुख सब कोई भोगता है ४९ गर्भ ही से जिसकी जैसी शक्ति होती है उसी के अनुसार पूर्व देह कृत सुखादि सब भोगते हैं पृथ्वी में कोई मनुष्य अपने कर्म नहीं छोड़ते हैं ५० कोई भी बल से वा बुद्धि से उसके विपरीत करने में समर्थ नहीं हो सक्ता अपने किये हुये ही दुःख वा सुख सब भोगते हैं ५१ व कारण ही पाकर मनुष्य नित्य कर्म बन्धों से बँधता है कि जैसे सहस्रों धेनुओं के बीच में खड़ी हुई अपनी ही माता को बछड़ा पहिचान लेता है ५२ ऐसे ही शुभ वा अशुभ कर्म करने वाले के पीछे २ चलता है विना भोग किये कर्म का नाश नहीं हो सक्ता ५३ इस पूर्व जन्म के किये हुये कर्म के विपरीत कोई नहीं कर सक्ता अतिशीघ्रता के साथ दौड़ते हुये पुरुष के पीछे २ वह भी दौड़ता है ५४ व सोते हुये के साथ सोता है जैसा कर्म पूर्व में किया है वैसा ही उसके पीछे लगा फिरता है बैठे हुये के समीप बैठ जाता है व चलते हुये के पीछे २ चलता है ५५ कुछ करते हुये के संग करता है इस प्रकार छाया के समान संग ही कर्म रहता है जैसे छाया व घाम से नित्य सम्बन्ध रहता है ५६ ऐसे ही कर्म व कर्ता का परस्पर सम्बन्ध रहता है ग्रह रोग विष सर्प शाकिनी राक्षस ५७ ये मनुष्य को पीछे से पीड़ित करते हैं जब कि प्रथम कर्म से पीड़ित हो लेता है जिसको जहां पर सुख वा दुःख भोगना होता है ५८ उस को मानो रस्सी से बांध कर जब दर्द स्ती भाग्य वहां पहुँचा देता है इस से प्राणियों के दुःख वा सुख के उत्पन्न करने वाला भाग्य ही प्रभु है ५९ क्योंकि अपने मन से प्राणी कुछ और विचारता है चाहे जागता हो वा सोता हो पर भाग्य उसके विपरीत वध करता वा बन्धन में माल देता है चिन्तित कार्य नहीं होने देता ६० जिसकी रक्षा किया

चाहता है शस्त्र अग्नि विष दुर्गम स्थानों से बचालेता है चाहे वह
 अरक्षितभी हो पर दैव रक्षा करलेता है ६१ व जिसको दैव अर्थात्
 भाग्य नाशता है उसकी रक्षा नहीं दिखाई देती जैसे पृथ्वी में वीर्य
 अन्न व धन रहते हैं ६२ ऐसेही शरीरमें कर्म रहते हैं व उत्पन्न भी
 होते हैं जैसे तेल न रहने से दीपक बुझजाता है ६३ ऐसेही कर्मक्षय
 होजानेपर प्राणी नाशको प्राप्त होजाता है व कर्म जय होनेहीपर तत्त्व
 ज्ञानी लोग मृत्युका होना भी कहते हैं ६४ प्राणी के रोगादि बहुतसे
 मृत्युके हेतु होते हैं राजा ययातिने कहा कि ऐसेही यह हमारे पूर्व
 कर्म का विपाक है अन्यथा नहीं है ६५ कि स्त्री रूप होकर मृत्युका
 कारण हुआ है इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कहां से हमारे गृहमें एक
 नाचनेवाली नटी व बहुत से नट आगये थे ६६ जिनके प्रसंगसे
 जरा हमारे शरीर में प्रवेशकर आई सो उसको भी हम पूर्वजन्मही
 का कर्म समझते हैं नहीं तो काहेको वे आते व काहेको हम उनकी
 ओर देखते काहे को वृद्धता आती ६७ इससे कर्मही को प्रधान
 मानना चाहिये उपाय निरर्थक हैं देखो पूर्वही काल में देवराजने
 हमारे बुलानेकेलिये उत्तमदूत ६८ भेजाथा सो हमने वैसे उत्तमदूत
 मातलि का कहा न किया उसी का यह कर्मविपाक है जो इससमय
 दिखाई देता है ६९ ऐसी चिन्तामें पर राजा बड़े दुःखसे युक्तहुये व
 कहनेलगे कि यदि इससमय हम इसका वचन प्रीति से सर्वथा नहीं
 करते ७० तो सत्य व धर्म दोनों जाते हैं इसमें कुछभी सन्देह नहीं
 है इससे अब इसका वचन करनाही है ॥

चौ० जो ममपूर्वजन्म परिपाका । प्रकट्यो सोय सत्य हम आंका ॥
 दैव दुरतिक्रम नहिं सन्देहा । जो भावी होइहि गत नेहा ॥
 इमि चिन्तापर भूप ययाती । पुनिसुस्थिर ह्वै गनि गुण पांती ॥
 क्लेशहरण हरिशरण पहुँचे । करन ध्यान लागे मन ऊँचे ॥
 नमन ध्यान स्तुति सीतावरकी । कीन्हभली विधि मतिनकुतरकी ॥
 गयहुशरणत्यहिमनहिमनावा । पाहिरमाप्रियशरणहिआवा ७१।७४॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेमाता
 पितृतीर्थवर्जनेययातिचरित्रेणकाशीतितमोऽध्यायः ८१ ॥

बयासीवां अध्याय ॥

दो० बायासी महँ नृपति निज राज्य पूरु कहँ दीन ॥

राजनीति उपदेश किय बहुविधि भूप्रवीन १

सुकर्माजी पिप्पल से बोले कि परमधार्मिक राजा जब इस प्रकार चिन्तना करने लगे तब श्रेष्ठमुखी वह रतिकी पुत्री बोली १ कि हे महामति भूपाल ! आप किस बातकी चिन्ता कर रहे हैं बहुधा स्त्रियां सब चंचल होती हैं इसमें सन्देह नहीं है २ परन्तु हम चंचलता के भावसे आपको चलायमान नहीं करतीं हम अब आपके पासका रहना नहीं चाहतीं ३ जैसे अन्य स्त्रियां लोकमें लोभ व मोहसे लम्पट होकर चपल भावसे अकर्तव्य कार्य करने को कहा करती हैं ४ वैसा हम नहीं कहतीं किन्तु हमारे हृदयमें लोकों के देखनेकी श्रद्धा है व देवताओं के दर्शन मनुष्यों को अत्यन्त दुर्लभ हैं ५ हे राजन् ! हम उन्हीं का दर्शन किया चाहती हैं हमसे कहो जिसमें जो कुछ दोषपाप हमारे संगसे हुये हों देवदर्शन से मिट जायें ६ आप तो ऐसी चिन्ता करते हैं जैसी कि कोई प्राकृतिक जन करता है व जैसे कोई महाभयसे डरा हुआ और मोहके गर्त में पड़ा हुआ करता है ७ हे महाराज ! चिन्ता छोड़ दो तुम स्वर्गको न चलो जिससे तुमको दुःख हो वह हमको कभी न करना चाहिये ८ जब उसने ऐसा कहा तो राजा उस वरांगनासे बोले कि हे देवि ! हमने जो चिन्तन किया है वह इस समय हमसे सुनो ९ हे प्रिये ! हमने आज तक अपना मानभंग कभी नहीं देखा जब हम स्वर्गको चले जायेंगे तो प्रजा दीन हो जायगी १० व दुष्टात्मा यमराज रोगोंसे प्रजाको पीड़ित करेगा परन्तु जो हो अब हम तुम्हारे साथ स्वर्गलोक को चलेंगे ११ ऐसा उससे कहकर राजा ने पुत्रों में उत्तम व सर्वधर्मज्ञ जरायुक्त महामति पूरु को बुलाया १२ कि हे वत्स ! हे सर्वधर्मज्ञ ! यहां आवो तुम धर्मको अच्छे प्रकार जानते हो हे धर्मात्मन् ! हमारी आज्ञासे धर्म तुमने पालन किया है १३ हे तात ! अब हमारी जरा हमको दो व अपनी तरुणता ग्रहण करो व कोश वाहन सहित वरत्न धन धान्य समेत समुद्रपर्यन्त

यह हमारा राज्यभोगो हे महाभाग ! हमारी दीहुई गांव वन देशसमेत पृथ्वी के सुख अच्छीतरह भोगो १४। १५ हे पापरहित ! प्रजाओं का पालन पुण्य सदा करतेरहना दुष्टोंको सदा दण्डदेतेरहना और साधुओं का परिपालन नित्य करना १६ सो हे वत्स ! दण्ड व पालन दोनों मन्वादि धर्मशास्त्रों के अनुसार करना व हे महाभाग ! अपने कर्म से विधिपूर्वक ब्राह्मणों की १७ पूजाकरना व भक्तिसे उनका पालनकरना क्योंकि वे तीनों लोकों में सबसे पूज्य होते हैं पांचयें सातयें दिन कोश देखते रहना १८ व प्रसाद धन भोजनों से सेना का पूजन नित्य करते रहना दूतों को नेत्र बनाये रहना व दान में सदा निरतरहना १९ व मन्त्र नित्य एकान्तमें बैठकर पण्डितोंकेही संगकरना हे पुत्र ! अपने आत्माको सदा नियतरखना और शिकार कभी न खेलना २० स्त्रियों में व कोशमें व सेनामें विश्वास कभी न करना कि ये हमारे वशमें हैं सब पात्रों का व कलों का संग्रह करते रहना २१ व पुण्यात्मा होकर यज्ञों से श्रीविष्णुभगवान् की पूजा सदा करतेरहना प्रजाओं के सब कण्टकों को प्रतिदिन मर्दन करते रहना २२ हे पुत्र ! प्रजाओं को सब वाञ्छित सुख सदा देना व उनको अच्छेप्रकार पालते रहना २३ अपनी विवाहिता स्त्रीके संग नित्य भोगकरना परस्त्रीगमन कभी न करना परधन लेने के लिये दुष्टमति कभी न करना २४ हे वत्स ! वेदों की व शास्त्रों की चिन्ता सदा सर्व्वदा करते रहना हे वत्स ! ऐसा करतेहुये व शस्त्र शास्त्र में सदा निपुणरहना २५ सदैव संतुष्टरहना और अपनी शय्यामें निरत होना गज अश्व व रथ इनपर चढ़नेका अभ्यास सदा रखना २६ ॥ चौ० इमिसुतकहँ अनुशासनदयऊ । आशिषयुत ताकहँ करिलयऊ ॥ निज करसों सिंहासन पाहीं । थाप्यो सब धन दैशकनहीं २७ लै निज जरा दर्ई तरुणार्ई । ताकी ताहि सहित निपुणार्ई ॥ स्वर्ग गमनकी करि मति भूपा । सुस्थिरभयहु भव्यअनुरूपा २८

इति श्रीपाद्म्येमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

मातापितृतीर्थवर्णनेययातिचरित्रेद्व्यशीतितमोऽध्यायः ८२ ॥

तिरासीवां अध्याय ॥

दो० प्रजहि बहुत समझाय नृप रहन कह्यो क्षितिमाहिं ॥
पर सब भूपति संगही गे हरिपुर चितचाहिं १
सुतहि राज्य दै नीति कहि दयितायुत हरिलोक ॥
गे नृप हरिपुर ख्याति कहि तीरासीमैं अशोक २

सुकर्माजी पिप्पलसे बोले कि इसके अनन्तर महाराज ययाति जीने अपनी द्वीपोंकी सब प्रजा बुलाई व महाहर्षके साथ उनसे यह वचन कहा कि १ इन्द्रलोक ब्रह्मलोक व शिवलोक देखते हुये सब पापनाशन व प्राणियों को गतिदायक वैष्णवलोकको २ इस अपनी भार्या के साथ हम जाते हैं इसमें अब कुछ सन्देह नहीं है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य व शूद्र जो सब हमारी प्रजाहो ३ सुख से अपने २ परिवारके साथ यहां निवासकरो अब यह महाभाग पूरु आपलोगों का पालक नियत कियागयाहै ४ इससे अब राज्य में स्थापित धीर यही है दुष्टों को दण्ड देता रहेगा जब ऐसा राजा ने कहा तो सब प्रजा भूपति से बोली ५ कि हे नृपोत्तम ! सब वेदों में व पुराणों में सुनाई देताहै कि धर्मही परमज्ञानहै पर देखा किसीने नहीं ६ पर हमलोगोंने दशोअंगोंसे युक्त सत्यवल्लभ धर्मको देखाहै वह सोमवंश में राजानहुषके गृहमें उत्पन्नहुआहै ७ हाथ पाद मुखदिसे युक्तहो सब आचारोंका प्रचार कर रहाहै ज्ञान विज्ञानसे सम्पन्न व पुण्योंका महानिधिहै ८ हे महाराज ! गुणोंका आकर व सत्यमें महापरिणत है जिस महाधर्म को सत्यवान् महापराक्रमी सदा कियाकरते हैं ९ उस धर्मको मनोहर रूप धारण किये हमलोगोंने देखा सो आप हैं सो काम के कर्ता ऐसे सत्यवादी आपको १० कर्म मन व वचन तीनों से हमलोग कभी नहीं छोड़सक्ते इससे जहां आप वहां हम लोग भी क्योंकि हमलोगोंके सुख व पुण्य आपही हैं ११ इससे जो आप नरकमें भी जावें तो हमलोग भी चलें इसमेंकुछभी सन्देह नहीं है हे महाराज ! बिना आपके हमलोगों को स्त्रियोंसे क्याहै व धनों से क्या भोगोंसे क्या जीनेसे क्याहै तिससे यहां कारण जीनेसे नहीं है

हेराजेन्द्र! तुम्हारे साथ हमलोग चलेंगे अन्यथा न होगा १२।१३
 इसप्रकार तिन प्रजाओंके वचन सुनकर बड़े हर्षसे युक्त राजा प्रजाओं
 से बोले १४ कि सब अच्छे पुण्यकर्ता मनुष्यो! हमारे साथ आओ फिर
 राजा उस काम कन्या के साथ रथ पर चढ़ा १५ जो रथ कि हंसके
 वर्णवाला चन्द्रमा के बिम्बका अनुकरण करनेवाला था चामर और
 व्यजन चल रहे हैं व्यथारहित था १६ और तिस पुण्यकारी सुन्दर
 बड़े पताका से जैसे देवताओं से देवोंके राजा पुरन्दर शोभित होते
 हैं १७ वैसेही ऋषियों वन्दीजनों चारणों और प्रजाओं से स्तुति
 किये गये नहुषके पुत्र ययाति आप शोभित होते हैं १८ सब प्रजालोग
 वाहनों पर चढ़ कर राजा के समीप आये कोई हाथियों पर कोई
 घोड़ों पर कोई रथों पर चढ़कर आये व सबोंने स्वर्ग जानेकी तैयारी
 की १९ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र व वैसेही अन्य अन्त्यज चण्डाला-
 दिभी सब विष्णुके ध्यान में परायण वैष्णव मनुष्य चले २० उन
 सबोंकी पताका श्वेतरंगकी उनमें सुवर्णके दण्डलगे सबके सब शंख
 चक्रसे अंकित दण्डों की पताका अपने अपने ऊपर लगाये थे २१
 इससे प्रजाओं के समूह में सब पवनसे प्रेरित पताका शोभित
 होती थीं व दिव्य तुलसीकी माला सब धारण किये थे व तुलसीदलों
 से शोभित होते थे २२ व सब दिव्य चन्दन के सुगन्ध से युक्त व
 दिव्य अरगजादि अनुलेपन अंगों में लगाये दिव्य वस्त्रों से शो-
 भित व दिव्य आभरणों से भूषित २३ व सबलोक सुरूप धारण
 किये राजाके समीप उपस्थित हुये इसप्रकार सैकड़ों लाखों कोटियें
 प्रजायें आकर इकट्ठी हुई २४ व अर्व खर्व सहस्र तक सबलोग
 आकर प्राप्त हुये व उन महाराज ययातिजीके सङ्ग चलने पर उद्यत
 हुये क्योंकि सब लोग चाहे किसी वर्ण के क्यों न हों वैष्णव थे इससे
 सब पुण्यकारी थे २५ विष्णुके ध्यान में सब पर थे व जप दान में
 परायण थे सुकर्मा पिप्पल से बोले कि इसप्रकार महाहर्षित होकर
 सबके सब चलने पर उद्यत हुये २६ तब अपने पूरु पुत्रको अपने
 राज्य पर अभिषेक कर महाराज ययातिजी इन्द्रलोकको गये २७ व
 उन महात्मा राजाके तेज पुण्य धर्म व तपसे वे सब प्रजालोग

उत्तम श्रीविष्णुलोक को चलेगये २८ जब राजा इन्द्रलोकमें पहुँचे तो सब देव गन्धर्व कित्तर चारण इन्द्र सहित अगुआनी लेने के लिये राजाके सम्मुख आये २९ व उन नृपोत्तम की पूजा करतेहुये इन्द्रजी बोले कि हे महाराज ! आप अच्छे प्रकार तो आये हमारे घर में प्रवेश करो ३० यहां अब दिव्य पुण्य अपने मनमाने भोग भोगों व नानाप्रकारके विहार करो तब राजा ययातिजी बोले कि हे महाप्राज्ञ सहस्राक्ष ! अब हम तुम्हारे दोनों चरणकमलों के ३१ प्रणामकरते हैं व ब्रह्मलोकको जाते हैं तब देवताओंसे स्तुतिकियेगये राजा ब्रह्मलोक में पहुँचे ३२ तब महातेजस्वी ब्रह्माजी मुनिवरों के साथ पाद्य अर्घादि सुन्दर विष्टरोंसे राजाकी आतिथ्य करतेभये ३३ और बोले कि तुम अपने कर्म से विष्णुलोक को जावो जब ब्रह्मा ने ऐसा कहा तो शिवमन्दिरको गये ३४ तब महादेव व पार्वतीने उनका बड़ा आतिथ्य सत्कार किया व पूजाभी बड़ी की और उनसे कहा ३५ कि हे राजेन्द्र ! तुम बड़े कृष्णभक्तहो इससे हमारेभी बड़े प्रियहो अब हमारेही मन्दिरमें निवासकरो ३६ व सब भोगों को यहां भोगो जो कि मनुष्योंको बड़े दुःख से प्राप्त होते हैं हे राजेन्द्र ! हममें व श्रीविष्णुमें कुछ अन्तर नहीं है इसमें कुछ सन्देह नहीं है ३७ जो रूपधारण किये विष्णुहैं वही शिवहैं इसमें कुछभी संशय नहीं है व हे राजन् ! जो शिवहैं वही सनातन विष्णुहैं ३८ दोनों में कुछ अन्तर नहीं है इससे ऐसा हम कहते हैं पुण्यात्मा तुम विष्णुजी के भक्तहो इसीसे तुमको यहां रहने का स्थान बताते हैं ३९ इससे हे पापरहित महाराज ! तुम यहां ठहरो जब शिवजीने ऐसा कहा तो श्रीहरिवल्लभ राजा ययातिजी ४० भक्तिसे मस्तक झुँकाकर शङ्करजीके प्रणामकर बोले कि हे महादेवजी ! जो आपने इससमय कहा वह सत्यहै ४१ आप दोनों में अन्तर नहीं है एकही मूर्तिहो दो होगयेहो पर हमको अब विष्णुलोक जानेकी इच्छाहै इससे तुम्हारे चरणोंके प्रणामकरते हैं ४२ तब महादेवजी ने कहा महाराज बहुत अच्छा वैष्णवलोक को जाइये जब शिवजीनेभी आज्ञादी तो राजा ययाति वहांसे चले ४३ तब देवलोकनिवासी महापुण्य विष्णुके वल्लभ वैष्णवलोग राजाके आगे

नृत्य करनेलगे ४४ व पापनाशन शङ्खशब्द व बड़े सिंहनाद करने लगे व सब चारणलोगकुछ इच्छासे नहीं योंही राजा की पूजा करने लगे ४५ व बड़े गानविद्यामें चतुर शास्त्रमें निपुण गन्धर्वलोग सुन्दर स्वर से राजाका यश गानेलगे ४६ व ऋषि तथा देववृन्द स्तुतियां करनेलगे अतिमुरूपवती अप्सरा महाराज ययाति की बड़ी सेवा करनेलगीं ४७ गन्धर्व किन्नर सिद्ध व चारण पुण्यमङ्गलों से राजाकी स्तुति करनेलगे इसीप्रकार साध्य विद्याधर पवन वसु ४८ रुद्र आदित्य लोकपाल दिक्पाल तीनोंलोकों के निवासियोंसे स्तुति कराते हुये राजा ययातिजी ने ४९ जाकर उपमा रहित विष्णुलोक को देखा जो कि निरामय व सुवर्ण के विमानों से सर्वत्र शोभित होरहाथा ५० वह लोक हंस कुन्द व चन्द्रके सम श्वेतरङ्गके विमानों से शोभित व सैकड़ों महलों से शोभित मेरु मन्दराचल के समान ऊँचे ध्वजरहरोंसे उपशोभित ५१ व शिखरों से अपने ऊँचेवाले आकाशको छूतीहुई अट्टालिकाओं से युक्त व अन्यनानाप्रकार के शिखरोंकी चमकसे जाज्वल्यमान होने से कलशों से अतिशोभित ५२ जैसे तारागणों से यह आकाश प्रकाशित होता है वैसेही विमानों की शोभा से वह लोक प्रकाशित होता बड़ी प्रज्वलित ज्वालाओं से ऐसा प्रकाशित मानों नेत्रों से सब ओर देखरहाथा ५३ व नाना प्रकार के सब रत्नों से व हरिलोक मानों दांतों से हँसरहा था व मानों उन नानाप्रकार के दिव्य पदार्थों से विष्णु के बल्लभ वैष्णवों को अपने यहां आनेको बुलाता था ५४ व ध्वजाओं के व्याज से मानों कहताथा कि तुमलोगों के पाप दूरको उड़ादेंगे पवनके चलने से कम्पित ध्वजाओं से यही विदित होताथा व सुवर्णकी डांडी लगे हुये व घण्टा बँधेहुये चामरों से सर्वत्र शोभित होरहा था व सूर्य के तेजके समान प्रकाशित गोपुर अट्टालिकादिकों से विराजमान था ५५।५६ गवाक्षोंसे व जालमालाओंसे व मनोहर वातायनोंसे अति शोभित बाहर के खावां व प्राकार से जोकि सुवर्ण के बनेथे अत्यन्त शोभित ५७ तोरणों से व बड़ी बड़ी पताकाओं से व नानाप्रकार के मंगल शब्दों से शब्दायमान होरहाथा व कलशों के ऊपर मणियों

के कोपर ऐसी युक्तिसे धरेथे कि देखनेवालोंकी दृष्टिमें उनकी चका-
चौंधी लगती थी ५८ सौ कक्षायेँ ऐसी बनीथीं कि स्थलपर मानों
जलसे भरीहुई दिखाती थीं दण्ड व छत्र युक्त सुवर्णके अनेक प्रकार
के कलशों से देदीप्यमान होताथा ५९ वर्षाकाल के मेघोंके आकार
मन्दिर शोभित थे कलशों से शोभित थे जैसे नक्षत्रों से आकाश
शोभित होताहै ६० दण्ड समूह पताका नक्षत्रों के समूहकी समान
दीप्तिवाले थे तैसही स्फटिकमणि के आकार व शङ्ख चन्द्रकी कान्ति
के समान नाना धातुमय देव मन्दिरों से उपशोभित था व कोटियों
अर्बुदों सर्वभोगयुक्त विमानों से वह श्रीहरिलोक शोभित होता
था जिन लोगों ने शंखचक्रगदाधर श्रीरमानिवासजी की आराधना
कीथी वा करते हैं ६१। ६३ उन ध्वरहरोंपर व उन हरिपुरके म-
न्दिरों में भगवान् के प्रसाद से वे लोग निवास करते हैं व सब पुण्य
रूप दिव्य भोगविलास के पदार्थों से भरेपुरे ६४ मन्दिरों में पुण्य
कर्मवाले सब पापरहित वैष्णवलोग निवास करतेथे ऐसे पुण्य गृहों
से श्रीविष्णु मन्दिर शोभित होता ६५ व नानाप्रकार के चन्दनादि
घने वृक्षों से समाकीर्ण होने से अत्यन्त शोभित होता वहां जितने
वृक्षथे सब सब कालोंमें फलेफूले बने रहते उनसे वह हरिपुर अलं-
कृत होरहाथा ६६ व वापी कूप तड़ाग सारसों से उपशोभित था व
उनमें हंस कारण्डव कल्लार कमल ६७ शतपत्र महापत्र पद्म उत्पल
विराजित थे आदि पक्षी व कमल विहरते थे तथा सुवर्णसे बनेहुये
के समान तालाबों से विराजमान था ६८ इस प्रकार इन सबोंसे व
देवताओं के देव श्रीहरिकी पुष्पवाटिकाओं से अलंकृत सब शोभा
से युक्तथा अन्य भी दिव्य शोभाओं से समाकीर्ण व वैष्णवों से शो-
भितथा ६९ व देववृन्दोंसे समाकीर्ण मोक्षके उत्तम स्थान ऐसे वैकु-
ण्ठको नहुष के पुत्र राजा ययातिजीने देखा ७० व सब प्रकार के
तापोसे वर्जित दिव्य श्रीहरिपुरमें राजा ययातिने प्रवेश किया व
सर्वक्लेशनाशन अनामय ७१ सब आभरणों से भूषित विमानों के
मध्यमें एक सर्वोपरि विमानपर बैठेहुये श्रीनारायणजी के दर्शन
राजाको हुये ॥

चौ० पीताम्बर धृत जगके नाथा । श्रीवत्साङ्क महाद्युति साथा ॥
 वैनतेय कृत वाहन नीके । परसे पर लक्ष्मीपति ठीके ॥
 सर्वदेव लोकप परमेश्वर । सबकी गति सर्वग भुवनेश्वर ॥
 परमानन्द रूप गुण सागर । मोक्षदानि शुभखानि रमावर ॥
 महापुण्य वैष्णवगण सेवित । सकल लोक पालकन निषेवित ॥
 देव वृन्दयुत नुत गन्धर्वा । किन्नर चारणादि सुरसर्वा ॥
 अरु अप्सरा सहस्र निषेवित । रमा निवास रमासों सेवित ॥
 केशहारि नारायण जी के । कीन प्रणाम भूप अति ठीके ॥
 निज दयिता युत बारहि बारा । कीन प्रणाम महीप उदारा ॥
 पुनि भूपति सँग वैष्णव जेते । गयेहते सब मानव तेते ॥
 सबन भूप सँग कीन प्रणामा । विनयविधान सहित अभिरामा ॥
 पादाम्बुज पहुँ प्रणमत देखी । भक्तिसहित गतमान विशेषी ॥
 तब श्रीहरि भूपति सों भाषा । नृप सन्तुष्ट काह अभिलाषा ॥
 मांगहु वर सब देहहुँ तोहीं । लखहु प्रसन्न महीपति मोहीं ॥
 तुम मम भक्त न कछु सन्देह । यासों करिकै कहत सनेह ॥
 यह सुनि भूपति वचन उचारा । सुनिय कृपालु दयालु उदारा ॥
 देव देव जो भयहु प्रसन्ना । मधुसूदन स्वहिँ गुनत प्रपन्ना ॥
 तो निज चरण दास्य अब दीजै । नाथ कृपाकरि अभय करीजै ॥
 श्रीहरि बोले सुनहु महीपा । एवमस्तु लहु भक्ति सुदीपा ॥
 महाराज अब मम पुर माहीं । बसहु सदा कछु संशय नाहीं ॥
 यह हरिवच सुनि भूप ययाती । प्रमुदितमन करि शीतल छाती ॥
 विष्णुप्रसाद पाय त्यहि लोका । बस्यहु तहां सब भौंति अशोका ॥
 नित्य विष्णु सँग विहरत नीके । यथा तहां सब वैष्णव टीके ॥
 उत्तम हरिपुर विगत विबाधा । तहँ दयितायुत नृप सबसाधा ७२।८३

इति श्रीपाद्मस्यमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेषित्
 तीर्थवर्णनेययातिचरित्रेस्वर्गारोहणं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ८३ ॥

चौरासीवां अध्याय ॥

दो० चौरासी अध्याय महं पिता आदि गुरु सेव ॥

पिप्पल सुन्यो सुकर्म सों गयहु स्वर्ग जहँ देव १

सुकर्माजी पिप्पलसे बोले कि दिव्य बहुत पुण्यदायक पुत्रोंको तारनेवाला व पापनाशन यह चरित हमने तुमसे कहा १ जोकि यह ययातिजी का चरित लोकमें प्रसिद्ध है व प्रत्यक्ष में दिखाई देताहै कि पिताकी भक्ति करने से पूरने तो राज्य पाया व अनुने दुर्गति भोगी २ पितृतीर्थ के प्रभाव से व कोपसे जैसे हुये तैसे फिर कहते हैं यह चरित पुत्रोंको तारनेवाला पुण्य यश बढ़ानेवाला व धनधान्य देनेवाला है ३ यहु और अनु दोनों शापयुक्त भये परन्तु पितृतीर्थ मातृतीर्थके तुल्य नहीं है क्योंकि मातृतीर्थ अधिक अभीष्टफल देता है ४ क्योंकि पिता पुत्रको किसी न किसी इच्छाही के लिये बुलाता है व माता जब कभी क्या बार २ पुत्र २ कहकर बुलाया करती है उसके बुलानेपर जानेसे जो पुत्रको फल होताहै वह हमसे सुनो ५ जब माताके बुलानेपर बड़े हर्षके साथ पुत्र उसके समीप जाता है तो पहुँचतेही गंगास्नान का फल पाताहै ६ जो महायशस्वी माता पिताके पांव धोताहै वह उनके प्रसादसे सब तीर्थके फल भोगताहै ७ जो देह चापता है वह अश्वमेध के फल को प्राप्तहोताहै व जो पुत्र गुरुजी को भोजन व वस्त्रदेता व स्नानकराता है ८ उसको पृथ्वी दान करनेका फल मिलता है क्योंकि जैसे गंगाजी सर्वतीर्थमयी हैं ऐसेही माता सर्वतीर्थमयी है इसमें सन्देह नहीं है ९ व जैसे लोकमें बहुत पुण्यमय समुद्रहैं ऐसेही मुख्य पिताभी होतेहैं क्योंकि सब पुराने पण्डितोंने यही कहा है १० व जो पुत्र माता वा पिताको दुःख देताहै वह रौरवनरकमें जाताहै इसमें सन्देह नहीं है ११ जो गृहस्थपुत्र अपने वृद्ध माता पिताका पालन पोषण नहीं करता वह गृहस्थपुत्र नरकको जाता और निश्चय कष्टको पाताहै १२ व जो दुर्बुद्धि पापीपुरुष गुरुको दुःख देताहै उसका निस्तार किसी प्रकारसे नहींहोता यह बात सब पुराण व कविलोग कहते हैं १३ सुकर्माजी

पिप्पलसे बोले कि हे विप्र! ऐसा जानकर भक्तिसे मस्तकभुँकाय हम प्रतिदिन अपने पिता माता की पूजा किया करते हैं १४ हमारे गुरु हम को बुलाकर चाहे करने के योग्य कार्य करने को कहते हैं वा करने के अयोग्य कहते हैं परन्तु हम बिना विचारेही शक्तिसे तुरन्त उसको करते हैं १५ इसीसे हमको यह गतिदायक परमज्ञान होगया है इन्हीं दोनों जनों के प्रसादसे इस संसारमें भूत भविष्य व वर्त्तमान तीनों कालोंके वृत्तान्त हम जानते हैं १६ गृहस्थपुरुष भूमण्डलमें कहीं स्थित होकर कुछभी कार्य करते हैं पर हम यहीं बैठे २ जानजाते हैं मानों सब हमारे आगेही होता है हे पिप्पल ! सो पृथ्वीहीपर के वृत्तान्त हम नहीं जानते किन्तु स्वर्ग में १७ सबसे नीचे नागलोक रहते हैं उनकी भी गति यहीं बैठे हुये हम जानते हैं इन्हीं दोनों जनों के प्रसाद से तीनों लोक हमारे वश में हैं १८ इससे हे विद्याधर श्रेष्ठ पिप्पल ! अब तुम जाओ व भगवान् को पूजो ॥

चौ० इमिपिप्पल कहँ जबहिं प्रबोधा । विप्रसुकर्मा बहुविधिशोधा ॥
आज्ञा लै प्रणाम करि फेरी । पिप्पल गयहु स्वर्ग नहिं देरी ॥
बहुरि सुकर्मा निजगुरु सेवा । करन लगे जिमि पूजत देवा ॥
जिमि नित पूजत रह्यो सदाहीं । तिमिपुनि करत मुदित मनमाहीं ॥
इमि पितृतीर्थ कहा तुमपाहीं । करि विचार कछु संशय नाहीं ॥
कहहुवेन अब काह बखानों । वाञ्छितवर्णहुनि जमनमानों १९।२१ ॥

इति श्रीपाद्मये महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे मातापि

तृतीये माहात्म्यवर्णननाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ८४ ॥

पचासीवां अध्याय ॥

दो० पञ्चाशीत्यध्याय महँ दिवोदास तनयाहु ॥

दिव्या देवीके भये इकइस बार विवाहु १

यह सुनकर राजावेन ने श्रीविष्णुभगवान् जीसे पूँछा कि हे देव-
देवेश भगवान् ! तुम्हारे प्रसादसे हमने भार्यातीर्थ व उत्तम पितृ-
तीर्थ सुना १ व हे हृषीकेश ! बहुत पुण्यका देनेवाला मातृतीर्थ भी तुमने
कहा अब प्रसन्न होकर गुरुतीर्थ हम से कहिये २ श्रीभगवान् जी

बोले कि हे राजन्! सब पापहरनेवाला शिष्यों के गति का दायक उत्तम गुरुतीर्थ हम तुमसे कहेंगे ३ जो कि शिष्योंके लिये परम पुण्य धर्मरूप सनातन परतीर्थ परज्ञान व प्रत्यक्षफल देनेवाला है ४ हे राजेन्द्र! जिसके प्रसाद से इस लोकमें व परलोक में भी परमफल शिष्यलोग भोगते हैं परलोकमें सुख व यहां कीर्ति पाते हैं ५ व हे राजेन्द्र! जिस महात्मा गुरुके प्रसाद से शिष्यलोग प्रत्यक्ष में सचराचर तीनोंलोक देखते हैं ६ व हे नृपनन्दन! सब लोकोंका व्यवहार व आचार व विज्ञान शिष्य पाता है व मोक्षको प्राप्त होता है ७ जैसे सब लोकोंके प्रकाशक सूर्य हैं वैसेही शिष्योंका प्रकाशक व उत्तमगति गुरु होता है ८ हे नृपोत्तम! रात्रिमें चन्द्रमा सर्वत्र प्रकाशकरता है तेज से सब चराचर अधिकारको साधता है ९ व गृहोंके भीतरमें दीपक प्रकाश करता है व तेजसे सब अन्धकारको नाशता है १० अज्ञान तमोरूप से अत्यन्त घिरेहुये शिष्यको शिक्षा व ज्ञानके उपदेशों से सदागुरु प्रकाशित करता है ११ सूर्य दिनमें प्रकाश करते हैं व चन्द्रमा रात्रिमें सदा प्रकाश करते हैं व गृहमें दीपकसे रात्रिमें प्रकाश होता है व सदैव अन्धकार नाशक है १२ व रात्रि दिन व गृहान्तरमें शिष्य के सदा प्रकाशक गुरुलोग होते हैं व शिष्योंके सब अज्ञानान्धकार को दूरकरते हैं १३ इससे हे महीपाल! शिष्यों का परमतीर्थ गुरु है ऐसा जानकर शिष्यको चाहिये कि सदा पूजनकरे १४ क्योंकि गुरु परमपुण्यमय होते हैं इससे शिष्य उनको त्रिविधकर्मसे प्रसन्नकरे क्योंकि गुरुओं के प्रसन्न होने में फिर कुछभी दुर्लभ नहीं होता हे विप्र! इसी अर्थमें महात्मा च्यवनजीका एक बहुत पुराना इतिहास सुनाई देता है जोकि सब पापोंको हरता है भार्गवकुलमें एक मुनियों में सत्तम च्यवनजी हुये १५ । १६ हे नृपोत्तम! उनको एकसमय बड़ी चिन्ता उत्पन्न हुई कि हम महीतलपर कब ज्ञानसम्पन्न होकर विचरेगे १७ इस चिन्तासे वे मुनिश्रेष्ठ ज्ञानकी इच्छा किये दिन रात्रि चिन्तनाकरें इसप्रकार चिन्ताकरते २ उन महात्माकी मति हुई कि १८ अब हम अभीष्ट फल देनेवाली तीर्थयात्रा करें गृह खेत आदि भार्या पुत्र धन सब छोड़कर १९ तीर्थ यात्रा के प्रसङ्ग

से पृथ्वीपर विचरने लगे हे नृप ! उन्होंने उलट पुलटकर कई बार गंगाजी की यात्राकी २० व ऐसेही उन मुनीश्वर ने नर्मदा व सरस्वती नदीकी यात्रा लोम अनुलोम की रीति से की व गोदावरी आदि और सब महानदियों की यात्रा तथा समुद्रकी यात्राकी २१ व हे नृपोत्तम ! ऐसेही सब और पुण्यक्षेत्र व पुण्य तीर्थोंकी यात्रा की व पुण्य देवताओंकी मूर्तियोंके इसी यात्राकेव्याजसे वे मुनि घूमते रहे २२ व सब उत्तम उत्तम तीर्थोंकी यात्रा करडाली इससे उनका शरीरऐसा निर्मल होगया कि सूर्य के तेजके समान प्रकाशित होनेलगा २३ व च्यवनजी दीप्तिसे प्रकाशितहो पवित्रात्मा होगये व उस कर्मसे अतिदेदीप्यमान होगये घूमते घूमते फिर क्षेत्रों में उत्तम २४ नर्मदा के दक्षिणतटपर अमरकण्टक नाम स्थान पर पहुँचे जहां कि सब को गतिदायक महालिंगहै २५ वहां सिद्धिनाथ उन महेश्वरजीके नमस्कार पूजन व स्तुतिकर फिर ज्वालेश्वर के दर्शन करके अमरेश्वरके दर्शन किये २६ फिर ब्रह्मेश कपिलेश व मार्कण्डेयेश्वर के उत्तम दर्शन किये इस प्रकार यात्राकर अंकारनाथ के मुख्यस्थान में आये २७ वहां शीतल व श्रमनाशिनी वटवृक्षकी छाया में पहुँचे व भृगुवंश में उत्तम च्यवनजी सुखसे उस छाया में बैठे २८ व वहां उन्होंने पक्षियों का शब्द सुना वह दिव्य भाषा व दिव्य ज्ञानसे युक्तथा २९ वहां बहुत कालसे उस वृक्षपर एक शुक रहता था कुञ्जल उसका नाम था व धर्मात्मा था चार उसके पुत्रथे व उसकी भार्याभी थी ३० उसके चारपुत्र अपने पिताके आनन्द करनेवाले थे हे राजेन्द्र ! तुम्हारे आगे उन के नाम कहते हैं ३१ ज्येष्ठका तो उज्ज्वल नाम था व दूसरे का समुज्ज्वल तीसरे का विज्वल व चौथेका कपिंजल ३२ हे महामते ! इस प्रकार कुञ्जल के चार पुत्रथे उस पुण्य शुकके वे सब पिता माताके भजनमें परायण थे ३३ व पर्वतों के ऊपर व द्वीपों में यथेष्ट सदा घूमा करते व जब भूँख प्यास लगती तो आप वहां से दिव्य फल खाते व अमृतके समान स्वादुवाला जलपानकर आते ३४ । ३५ व जो परम उत्तम दिव्य फल होते वे अपनी माता और पिताके लिये देते उनमें भी जो अच्छे

परिपक्व व स्वादुयुक्त होते वेही आदरके अर्थ माताको ढूँढ़ २ कर लाते थे व जो अपनी माताके लिये लाते बड़ी भक्तिभाव से लाते व उनको उनके माता व पिता खाकर सन्तुष्ट होते तो उन अपने पुत्रों के साथ बैठकर आनन्द से उस वटवृक्षपर पढ़ते ३६ । ३७ व क्रीड़ा में रत होकर सबके सब विलसित होते व खेल करते व जब सन्ध्या समय आता तो सब अपने पिता के पास आजाते थे ३८ व सबरेजाकर दोपहर के समय अपने पिताके लिये यत्न से भोजन लाते व सन्ध्यासमय में भी लाया करते सो उस दिन महात्मा ब्राह्मण च्यवनजीने देखा ३९ तब सब पक्षी भी पिताके सुन्दर खोलखल में आये व पुत्रोंने अपनी माता व पिता के चरणों में आकर प्रणाम किया ४० और भोजनके फल माता पिता के आगे धर सब पितासे बोले पिताने उत्तम पुत्रोंका मानकिया ४१ और माताने कृपाकर प्रीतिसंयुक्त वचनों से मान किया तब पुत्र माता पिता के ठण्ठी पखनों की हवा करते भये ४२ फिर दोनों पक्षियोंने पुत्रों का खोलखल बनाया और दोनों ने अच्छे पुत्रोंको आशीर्वाद दिया ४३ तब पुत्रोंने अमृत के समान पुष्ट आहार दिया तो दोनों पक्षियों ने प्रीति से भोजन किया ४४ और करोड़ तीर्थोंसे उत्पन्न निर्मल जल पिया अपने स्थान में सुख से संतुष्ट मन होगये ४५ फिर सुन्दर पापनाशिनी कथा कहते भये श्रीविष्णुभगवान् राजा वेनसे बोले कि तब उनका पिता कुंजल अपने ज्येष्ठ पुत्र उज्ज्वल से बोला ४६ कि हे पुत्र ! आज तुम कहांगयेथे व वहां तुमने क्या अपूर्वदेखा व पुण्यकारी सुना हे पुत्र ! वह हमसे कहो ४७ कुंजल नाम अपने पिताका वचन सुनकर वह उज्ज्वल भक्तिसे कांधा भुँकाकर अपने पितासे बोला ४८ और मस्तकसे प्रणामकरके मनोरम कथा कहनेलगा कि हे महाभाग ! मैं वो नित्य प्लक्षद्वीपको जायाकरताहूँ ४९ व बड़े उद्यम से वहां से आहार लेआता हूँ उस प्लक्षद्वीप में अनेक देशहैं ५० व बहुत से पर्वत नदियां व वन तड़ागहैं ग्राम व पत्तन पुर नगरादि बहुतहैं व सब सुप्रजाओं से आनन्दयुक्तहैं ५१ व सदासुखसे सन्तुष्ट हर्षित लोग वहां बसते हैं सब दान पुण्य जप श्रद्धा भक्तिसे संयुक्त

रहते हैं ५२ उस प्लक्षद्वीप में सत्यधर्मपरायण पुण्यमति दिवोदास नाम बड़ा भारी राजा रहता है उस राजा के एक अपत्यरत्न अत्युत्तम कन्या ५३ गुणरूपशीलसे अतिमङ्गलवती है उसका दिव्यादेवीनाम है वरूपमें आजकल उसके तुल्य भूतलपर कोई स्त्री नहीं है ५४ उसको उसके पिताने एक समय देखा तो वह बनाय रूप व तारुण्यसे युक्त होने से सुन्दरमङ्गलवती हो चुकी थी ५५ उसको पतिके योग्य देख कर राजा दिवोदासजीने विचारा कि अब तो यह विवाहके बनाय योग्य हुई यह कन्या हम किसको दें व वरभी जो कोई महात्मा होता उसीको देते ५६ इसप्रकार चिन्तामें तपः होकर उन राजा उत्तमने रूप देशके राजामहात्मा चित्रसेनको रूपदिक में अपनी कन्या के समान देखकर उनको अपने यहां बुलाया उन महात्माने अपनी कन्या बुद्धिमान् चित्रसेनको दी ५७ ५८ परन्तु हे राजन् ! विवाहही के समय किसी कारणसे राजा चित्रसेन मृतक होगये ५९ तब धर्मात्माराम राजा दिवोदासने बड़ी चिन्ता की ब्राह्मणोंको बुलाकर उनसे पूछा ६० कि इस हमारी कन्याके विवाहके समय में चित्रसेन स्वर्ग को चले गये तो अब इस कन्याका कैसा कर्म होना चाहिये आप लोग हमसे कहें ६१ ब्राह्मण लोग बोले कि हे राजन् ! कन्याका विवाह तो वेदविधानसे हो ही गया व पति इसका मृतक होगया है कुछ संग नहीं किया ६२ धर्मशास्त्र में तो यों दिखाई देता है कि किसी महामानसी व्यथा वा व्याधि से युक्त हो वा विवाह करके तुरन्त त्याग करके पति चला जाय अथवा संन्यासी हो जाय ६३ व केवल विवाह ही भरहुआ हो तो वह कन्या विना विवाहिता ही समझी जाती है इससे उसका फिर से विवाह करना चाहिये जब तक वह रजस्वला न हो तब तक उसको दूसरे पतिको देना चाहिये ६४ पिता फिर वेदविधि से उसका विवाह करे इसमें सन्देह नहीं है हे राजन् ! धर्मशास्त्रविशारदों ने ऐसा कहा है ६५ इससे इसका भी विवाह फिर से कर देना चाहिये ब्राह्मणोंने यह राजासे कहा ब्राह्मणों की प्रेरणासे धर्मात्मा दिवोदास ने ६६ कन्या के विवाहके लिये फिर उद्यम किया व दिव्यादेवीको राजा ने फिर दिया ६७ उन महात्मा पुण्यकारी राजाका रूपसेन नाम

था जिनको फिर दिया जैसेही विवाह हुआ कि तुरन्त वह भी राजा मृतक होगया ६८ जब महादेवी दिव्यादेवी का वह भी पति मृतक होगया तो तब राजाने अन्य तीसरे पतिके संग विवाह करदिया वह भी विवाह होतेही मरा यहांतक कि विवाह होतेहीहोते इक्कीस पति उस दिव्यादेवी के मृतकहुये तब वह महाप्रतापी राजा दिवोदास महादुःखीहुआ ६९।७० व अपने मन्त्रियोंको बुलाकर उसने निश्चय किया सबका सम्मतहुआ कि अबकी स्वयंवर करके कन्या दीजाय इस बातको विचारकर ७१ लक्षद्वीपके सब राजालोग इकट्ठे किये गये व उनसे कहागया कि धर्म में तत्पर तुमलोग स्वयंवर के लिये बुलायेगयेहो ७२ उसका रूप व गुण सुनकर मृत्युके भेजेहुये सब राजालोग आये व उस स्त्रीको देखकर परस्पर संग्राम करनेलगे कि जिस में सब मढ़ मारेगये एक भी न बचा ७३ इसप्रकार वहां के महात्मा क्षत्रियों का महानाश हुआ व दिव्यादेवी मारे दुःख से पीड़ित होकर वनमें जाकर ७४ रोदन करनेलगी यद्यपि बड़ी मनस्विनी थी हे तात ! मैंने यह अपूर्व समाचार देखा है ७५ सो हे तात ! इसका कारण हमसे विस्तार सहित कहो ७६ ॥

इति श्रीपाद्म्येमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेनोपाख्यानेगुरु

तीर्थेव्यवनोपाख्यानेपञ्चाशीतितमोऽध्यायः ८५ ॥

छियासीवां अध्याय ॥

दो० छियासी अध्याय मैं दिव्यादेवी केर ॥

पूर्व जन्म वृत्तान्त जहँ कीन पापके ढेर १

तब कुंजल बोला कि हे वत्स ! उस दिव्यादेवीका पूर्व जन्मका कर्म हम कहते हैं जो २ पूर्वजन्म में उसने कियाहै कहतेहुये हम से सुनो १ पापनशिनी महापुण्य वाराणसी पुरी है उसमें महाप्राज्ञ सुवीरनामएकपुरुष रहताथा २ वह वैश्यकी जाति में उत्पन्नबहुत धन धान्यसे युक्तथा उसकी महाभाग्यवती भार्याका चित्रानाम था ३ वह कुलके आचारको छोड़कर अनाचारही करती थी अपने पति को तो नहीं मानती व स्वच्छंदवृत्ति से वर्तती थी ४ धर्म पुण्य से तो वि-

हीन रहती व पापकर्म किया करती अपने पतिको नित्य बकती भकती व गालियां दिया करती व बात में कलह किया करती क्यों कि उसे कलह करना बहुतही प्रिय था ५ व नित्य परायेही गृह में रहाकरे व दिनराति परायेघरों में घूमाकरे व प्राणियों में पराये अवगुण सदा ढूँढ़ाकरे व महादुष्टा थी ६ साधु की निन्दा सदा किया करे व सदा अच्छेलोगों को बहुत अकारण हँसाकरे इसके अनाचार बड़े २ पाप जानकर उस महात्मा सुवीर ने निन्दा की ७ और उस दुष्टा व्यभिचारिणीका परित्याग करदिया एक अन्य वैश्यकी कन्या के संग अपना दूसरा विवाह करलिया व उसके संग वह अपने सब कार्य करने लगा ८ सदा धर्म आचार पुण्य दान अपनी स्त्रीके संग वह धर्मात्मा करने लगा सुवीर की निकाली हुई प्रचण्ड वह चित्रा अब और पृथ्वीपर जहां पावे भ्रमण कियाकरे ९ घूमते घूमते २ पापी दुष्ट पुरुषोंकी अत्यन्त संगति उससेहुई अब वह पापिनी उन लोगों की दूती बनकर १० साधुओं के घर भ्रष्ट करनेलगी पतिव्रता स्त्रियों को लोभमें डालकर उन पापियों के पास पहुँचाया करे ११ ऐसे विश्वास के वचन उन बेचारी छलछिद्ररहित सीधी पतिव्रताओं के पास कह पातिव्रत को भंग कराया करे साधुओं की परमभक्त स्त्रियों को भी ले ले कर और लोगों को सोंप दे १२ इसप्रकार उस महापापिनी चित्राने सैकड़ों गृह महात्माओंके भ्रष्ट करादिये व इसकेविशेष वह महादुष्टा सैकड़ों पति पुत्रों से विरोध कराती फिरे १३ व बहुतसे साधुओं के मन उनके समीप बारबार जा जा कर ऐसे बिगाड़े कि वे भी पाप करनेलगे व ऐसी ऐसी लड़ाइयां सज्जनोंमें भी पहुँचते २ वह दुष्टा करादे कि जिनका कुछ वारा-पार नहीं १४ इसप्रकार सैकड़ोंघर नष्ट भ्रष्ट करके व आप महामहा-भ्रष्ट होकर वह दुराचारिणी मृतकहुई यमराज ने बहुतसे दण्डदेकर उसको अच्छीरीति से सिखलाया १५ यहांतक कि जितने महाघोर रौरवादि नरकथे सबोंमें क्रमसे एकमें से निकालकर दूसरे में डलवाया व नानाप्रकार के दण्ड उस दुष्टा चित्राको उन्होंने दिये १६ सो कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है जो जैसा कर्म करताहै वह वैसा

भोगताही है उसने सैकड़ों गृह उजारडाले उसी पापके अनुसार उसको दण्ड भी दिये १७ व जैसे उसने पूर्वजन्म में सैकड़ों भले मानुषोंके घर उजाड़े थे वैसेही दुःखको भोगतीहै १८ विवाह का समय प्राप्तहोने में भाग्यहीन होने से पति मृत्यु को प्राप्त होजाता है १९ जैसे सैकड़ों घर उजाड़े तैसेही सैकड़ों घर मरे इक्कीस विवाहहुये २० जो तुमने हमसे दिव्यादेवीका वृत्तान्त पूँछाथा वह हमने तुमसे कहा बस यही उसके पूर्वजन्म का कर्म था जिस के कारण ऐसा हुआ २१ यह सुन उज्ज्वल शुक फिर अपने पितासे बोला कि तुमने पूर्वजन्मका कियाहुआ दिव्यादेवीका वृत्तान्त हम से कहा हमने जाना कि उसने गृहभंगनाम महाघोर पाप किया २२ परन्तु अब यह बताइये कि प्लक्षद्वीप के महाराज दिवोदासकी कन्या किस पुण्यसे महाकुलको प्राप्तहुई २३ हे तात ! यह हमको बड़ा सन्देहहै इस से हमसे कहो ऐसी महापापिनी राजाकी कन्या कैसे हुई २४ यह सुन कुंजल उसका पिता उससे बोला कि अब चित्राने जो पुण्यकियाथा वह भी सब तुमसे कहते हैं हे उज्ज्वल पुत्र ! सुनो जो पुण्य पूर्वजन्म में उसने किया था २५ घूमते घूमते एक महा-प्राज्ञ कोई सिद्ध संन्यासी वहां आगया था वह मैलें कुचैले भी कुछ वस्त्र धारण नहीं किये था दण्ड कमण्डलुमात्र उसके पासथा २६ व एक लँगोटीमात्र धारणकिये हाथही उसके पात्रये व नङ्गबड़ङ्ग ऐसा ही था दैवयोग से आते आते चित्राके घरके द्वारपर पहुँचा २७ वह मौनीथा व सब बालमुँड़ाये रहता अपने आत्मा व इन्द्रियों को भलीभाँति जीते था आहार को उसने जीतलिया था इससे निरा-हारही था व सब वेदशास्त्रों के निश्चय अर्थ को जानता था २८ परन्तु कहीं दूरसे आया था इससे बहुतही थकगया था व घाम लगनेसे बहुत व्याकुल होगयाथा व हे पुत्र ! मारे मार्ग के श्रमसे अतिखिद्यमान था इससे बहुतही प्यासा था २९ चित्राके द्वारपर आकर छाया में खड़ाहोगया उस चित्राने भी देखा कि यह कोई महात्मा है व बहुतही इस समय श्रमसे पीड़ित है ३० इससे उस महात्माकी उस चित्राने बड़ी सेवाकी अपने गृह से झट जललाय

उसके पैर धोये व बैठने के लिये उत्तम आसन दिया ३१ व कहा कि हे तात ! इस कोमल आसनपर सुख से विराजिये व क्षुधा दूर करने के लिये उत्तम अन्न भोजन कीजिये ३२ और अपनी इच्छा से परितुष्ट शीतल जल पीजिये ऐसा कहकर बैठाकर देवताओं के समान तिसको पूजकर ३३ अपने हाथों से उसके पैर ऐसे मीजे कि उसका सब मार्ग का श्रम जातारहा पर और उसके कहने से उस महात्मा ने भोजन भी किया व जलपान भी किया ३४ इस प्रकार उसने तत्त्वार्थदर्शी सिद्धको सन्तुष्ट किया व सन्तुष्ट होकर वह सर्वधर्मात्मा कुछ काल तक उसके यहां ठहरारहा ३५ व जब उसकी इच्छा हुई तब उठकर वह महायोगी चला गया उस महात्मा महाभाग सिद्धके चलेजाने पर ३६ थोड़ेही दिनों में अपने कर्मके वश से वह चित्रा मृतकहुई व धर्मराज ने बड़े बड़े ढण्डदेकर बड़े दुःख उसे दिये ३७ व वह चित्रा बड़े बड़े दुःख देनेवाले बहुत से नरकों में पड़ती रही व सहस्रयुगपर्यंत दुःख उसने भोगे ३८ भोग के अन्त में फिर उसने मनुष्य का जन्मपाया व जो कि पुण्यवानोंमें श्रेष्ठ उस महासिद्ध की पूजा उसने पूर्वजन्म में की थी ३९ उसी पुण्यका यह फल हुआ कि पुण्यवान् महाराजके घर में उत्पन्न हुई व क्षत्रियों के उत्तम कुलमें महाराज दिवोदासजी की कन्याहुई ४० व दिव्यादेवी ऐसा उसका श्रेष्ठ नाम हुआ उसने सुन्दर अन्न व मीठा शीतल जल उस महात्मा को बड़ी प्रीति से दिया था ४१ उसी दान का महाफलोदय उसने भोगा जोकि राजकुमारीहो नाना प्रकार के पदार्थ भोजन किये मीठे अन्न व शीतल जल सदा उसको खाने पीने को मिले ४२ व दिव्यभोग भोगती हुई अपने पिताके मन्दिर में विराजती रही व उसी सिद्धही के प्रसाद से राजकन्या भी हुई ४३ व जो उसने गृहभङ्गरूप महापापकर्म किया था उसके प्रभावसे वह दिव्यादेवी सदा विधवाके दुःखभोगतीरही ४४ यह सब हमने दिव्या देवी का कियाहुआ कर्म तुमसे कहा और तुमसे क्या कहें जो पूँछनाहो पूँछो सब हम तुमसे कहेंगे ४५ तब उज्ज्वल अपने पितासे फिर बोला कि अब हमसे यह कहिये कि हमने उसको रोदन करतीहुई महादुःख

से पीड़ित वनमें देखा है सो अब वह बेचारी अकेली वनमें रोती हुई उस महादुःख व शोक सन्तापसे कैसे छूटैगी ४६। ४८ विष्णुजी राजा वैनसे कहने लगे कि अपने पुत्रका उत्तम वचन सुन एकक्षणमात्र तक विचारांशकर महाबुद्धिमान् कुंजल फिर अपने पुत्रसे बोला ४९ कि हे महाभाग वत्स ! सुनो हम सत्यही सत्य कहते हैं हम पापयोनि पक्षी हुये थे तब सब पूर्वजन्म के ज्ञान हमको भूल गये थे ५० कुछ भी ज्ञान नहीं रह गया था परन्तु इस वृक्षके नीचे बैठे हुये इन महात्मा भृगुवंशी च्यवनके प्रसंग से ५१ व नर्मदा नदी के प्रसाद से और श्रीविष्णु महाराजके प्रसाद से हमको फिर ज्ञान हो आया मोक्ष स्थान निवृत्त होगया ५२ अब उत्तम मोक्षमार्ग उपदेश को कहते हैं पाप से छूटकर वह ऐसी होगई जैसे अग्नि से सोना होजाता है ५३ अग्नि के संगसे अपने रूपके समान शुद्ध होजाता है हे महाप्राज्ञ ! भगवान् के ध्यान से शीघ्रही तिस महात्मा के ५४ जपकरने व होम और व्रत करने से पापियों के पाप नष्ट होजाते हैं व जैसे सिंहके भय से सदा हाथी मदको छोड़देता है ५५ वैसेही श्रीकृष्णभगवान् के नामों के उच्चारण करने से पाप नष्ट होजाते हैं व जैसे गरुड़के तेज से बड़े विकराल नाग विषहीन होजाते हैं ५६ वैसेही ब्रह्महत्यादिक पाप चक्रपाणि के नामके उच्चारणसे नष्टहोते हैं और किसी उपायसे नहीं भिटते ५७ इससे यह चित्रा जब पुण्य श्रीविष्णुभगवान्जी के सौ नाम जपेगी जोकि सब पापोंके नाशक हैं सो भी जो चित्तको स्थिर करके काम क्रोधसे रहित होकर ५८ व सब इन्द्रियों का संयम करके अपने शरीरको रक्षितकरके उनके ध्यानमें प्रतिष्ठित होकर एकीभूत हो व एकाग्रचित्तकरके ५९ जब जपेगी तो उसकी मुक्ति होजायगी और परमज्ञान प्राप्तहोगा इससे उसको चाहिये कि विष्णुजी में अपने चित्तको बनाय लगादे व योगयुक्त होकर विष्णुशतनाम जपे ६० इतना सुन फिर उज्ज्वल बोला कि हे तात ! प्रथम हमसे इस समय परमज्ञान कहो पीछे ध्यान व्रत व पुण्य श्रीविष्णुशतनाम कहो ६१ कुञ्जल बोला कि परमज्ञान कहते हैं जिसे किसीने नहीं देखा इससे हे पुत्र ! मलवर्जित केवल मोक्ष सुनो ६२ सूतजी इसी कथा को

शौनकादिकों से कहने लगे कि हे महामते ! जैसे पवनरहित स्थान पर स्थित व वायु से वर्जित दीपक अच्छे प्रकार प्रज्वलित होकर सब अन्धकारको नष्ट करता है ६३ ऐसेही सब दोषों से हीन आत्मा निराश्रय होता है व निराश होकर निर्मल रहता है वह आत्मा न किसी का शत्रु है न किसी का मित्र ६४ न शोक न हर्ष न लोभ न मत्सर अकेला विषाद हर्षों से सुख और दुःखों से छूटजाता है ६५ व सब विषयों से इन्द्रियों को वह आत्मा अलग करदेता है तब वह केवल ज्ञान होजाता है व मोक्षको प्राप्त करदेता है ६६ जैसे अग्निके कर्मके प्रसङ्गसे दीपक तैलको तब अच्छे प्रकार जलाता है जबकि हेराजेन्द्र ! बत्ती के आधारसे निस्सङ्ग पवनसेरहित होता है ६७ व तभी तैलको जलाकर शुद्ध कज्जलको दीपक उगिलता है तब हे महामते ! दीपके आगे एक काली रेखा दिखाई देने लगती है ६८ व अपने तेजसे वह टेम तैलको अपने आप खींचती है इसी प्रकार इस शरीररूप मिट्टीके दीपकमें कर्मही तैल होता है उसेभी शुद्ध करना चाहिये ६९ अर्थात् वह कर्म विषयोंको प्रत्यक्ष करके कज्जलरूप बनाकर दिखादेता है व प्रज्वलित हो निर्मल होकर अपने आप प्रकाशित होने लगता है ७० वह शरीर क्लेशसंज्ञक क्रोध लोभादिक वायुरूपों से रहित होजाता है तब निश्चय व निस्स्पृह हो तेज आप इस शरीर में चमकने लगता है ७१ व अपनेही स्थानपर टिका हुआ अपने तेज से तीनों लोकों को ऐसा ज्ञानी देखने लगता है केवल ज्ञानरूप यह हमने तुमसे कहा ७२ अब उन श्रीविष्णुभगवान् जी का ध्यान कहते हैं वह दो प्रकार का है एक तो केवल ज्ञानरूप ज्ञाननेत्र से दिखाई देता है ७३ उसे परमार्थपरायण योगयुक्त महात्मा लोग निद्रा रहित सबको देखते हुये देखते हैं ७४ जिसके हाथ पांव नहीं हैं पर सब ओर जाता है स्थावर जंगम सब त्रैलोक्य को ग्रहण करता है ७५ नाक और मुखसे हीन है पर सूंघता और खाता है जिसके कान नहीं हैं पर सब सुनता है सबका साक्षी संसार का पति है ७६ रूप नहीं है पर रूपमें संबद्ध है पंचवर्ग के वशमें प्राप्त सबलोक का जो प्राण और चराचरों से पूजित है ७७ जिह्वा नहीं है पर सब कहता

हैं वेद शास्त्रों के पीछे २ चलता है उस के त्वचा नहीं है पर स्पर्श उस का सब कोई करसक्ता है ७८ है वह विरक्त पर सब में आनन्दरूप होकर सदा टिका रहता है पर उसका कुछ आधार नहीं है कि जिसपर वह बैठताहो वह निर्जर ममत्वहीन न्यायी सगुण निर्म्मल अजन्मा ७९ अवश्य पर सबके वश्यात्मा सबकुछ देनेवाला व सब जाननेवालाहै उसका धाता इस संसारमें कोईभी नहीं क्योंकि वह व्यापक होने से सर्व्वमय है ८० इस प्रकार जो उस परमात्मा महात्मा को सर्व्वत्र देखताहै वह अमूर्त अमृतोपम परमस्थानको प्राप्तहोताहै ८१ अब उस महात्मा परमात्माका दूसरा ध्यान कहते हैं जोकि मूर्त्ताकार होने से साकारहै पर जितने साकार होते हैं सब आमययुक्त निराकार होते हैं ८२ व जिसकी वासना से सब अतुल ब्रह्माण्ड वासितहैं व इसीसे उसका वासुदेव नामहै ८३ उस के शरीरका रंग वर्षतेहुये मेघके समान श्यामहै व सूर्य के तेज से भी अधिक प्रकाशित रहताहै चतुर्भुजी उसकी मूर्त्तिहै और सब देवदेवोंका भी ईश्वरहै ८४ उसके दक्षिण हस्त में सुवर्ण व रत्नों से विभूषित शंख रहताहै सूर्य बिम्ब के समान आकारवाले चक्र और कमल स्थितहैं ८५ व महाअसुरों के नाश करनेवाली कौमोदकी नाम गदा बायें हाथ में उसी महात्मा के विराजती है ८६ व अति सुगन्धित महापद्म दूसरे दहिने हाथ में रहताहै वे कमला के प्रिय करनेवाले श्रीविष्णुभगवान् सदा अपने आयुधों से शोभित हुआ करते हैं ८७ गलेमें शंखकेसमान तीनरेखाहैं व उसीकेसमान चढ़ा उतारहै मुख गोलहै व कमलपत्रके समान नेत्रहैं इसप्रकार रत्नोंके समान चमकते हुये दांतों से हृषीकेशजी प्रकाशित होतेहैं ८८ व उनके अधर विद्रुमके समान अरुणहैं हे पुत्रक ! श्रीपुण्डरीकाक्षजी अतिमनोहर किरीटसे शोभित रहते हैं ८९ विशाल रूप व महाप्रकाशित व कौस्तुभमणि से केश जनार्दन भगवान् का रूप चमकता है ९० व सूर्य के तेजके समान प्रकाशित कुण्डल दोनों कानों में धारण किये शोभित होतेहैं व पुण्य श्रीवत्स के चिह्नसे श्रीहरि सदा राजित होतेहैं ९१ केयूर कंकण गजमुक्ताओं के हार से शोभित जो

मुक्ता नक्षत्रों के समान प्रकाशित होता है उनसे युक्त दिव्य शरीरसे सदा शोभित होते हैं विजय और जीतनेवालों में श्रेष्ठ ९२ श्रीगो-विन्दजी पीताम्बर को धारण किये रहते हैं रत्नों से जटित मुँदरियों से सब हाथोंकी अंगुलियां शोभित होती हैं ९३ सब आयुधों से व दिव्य आभरणोंसे श्रीहरि सम्पूर्ण हैं ॥

चौ० वैनतेय आरूढ़ मुरारी । लोक विकर्ता जगदुपकारी ॥
त्रिभुवन नहिं त्यहि उपमा योग । किमि पटतरे मूढ़ यह लोग ॥
इमि अनन्य मनसों नर जोई । ध्यावत पावत सब सुख सोई ॥
छूटत सकल पापसों प्राणी । हरिपुर जात न मृषा बखानी ॥
यह जगदीश ध्यान हम गावा । उभय भेद सुत तुम्हें सुनावा ॥
अब सबपाप निवारणकारी । श्रीहरि व्रत भाषत शुभधारी ९४।९६

इति श्रीपाद्मयेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने
गुरुतीर्थवर्णनेषडशीतितमोऽध्यायः ८६ ॥

सत्तासीवा अध्याय ॥

दो० सत्तासी अध्याय महँ श्रीहरिकर शतनाम ॥

है सुस्तोत्र विचित्र अरु सो सब भांति ललाम १

कुञ्जल अपने पुत्रसे बोला कि अब श्रीहरिके सब व्रत कहते हैं जिनसे श्रीहरिकी आराधना की जाती है जया विजया जयन्ती जोकि सब पापोंको नाशती है १ त्रिष्टुषा, वज्रुली, तिलदग्धा, अपरा, अखण्डा, आचारकन्या, मनोरथा २ ये तो व्रतहुये व एकादशी के तो बहुत से भेद हैं व अशून्यशयनव्रत व जन्माष्टमी ये दोनों महाव्रत हैं ३ इन महापुण्यकारी व्रतोंके करनेसे ब्रह्महत्यादि पाप प्राणियोंके नष्ट होजाते हैं हम यह सत्य २ कहते हैं इसमें सन्देह नहीं है ४ कुञ्जल बोला कि उन महात्मा श्रीविष्णुजी का पापराशियों के नष्ट करनेवाला स्तोत्र अब तुमसे कहते हैं हे पुत्र ! उस स्तोत्रका विष्णुशतनाम नाम है व सब मनुष्योंको गतिदायक है ५ उन कृष्णदेवका उत्तम शतनाम अब कहते हैं हे पुत्रोत्तम ! तिसको सुनो ६ विष्णुशतनामके ऋषि व छन्द सब बताते हैं व हे महाभाग ! सब पातकों के शुद्ध करनेवाला देव

भी बताते हैं ७ विष्णुशतनामके ऋषि ब्रह्मा विष्णु देवता अनुष्टुप् छन्दहै ८ सब कामनाकी सिद्धि के लिये सब पापों के नाशके अर्थ में विनियोग है अस्यविष्णोःशतनामस्तोत्रस्य ब्रह्माऋषिर्विष्णुर्देवतानुष्टुप्छन्दस्सर्वकामनासमृद्धयर्थेसर्वपापक्षयार्थे विनियोगः ९ नमाम्यहंहषीकेशं केशवम्मधुसूदनम् ॥ सूदनं सर्वदैत्यानान्नारायणमनामयम् १० जयन्तं विजयंकृष्णमनन्तं वामनन्ततः ॥ विष्णुं विश्वेश्वरम्पुण्यं विश्वाधारं सुरार्चितम् ११ अनघन्त्वघहन्तारन्नरसिंहं श्रियः प्रियम् ॥ श्रीपतिं श्रीधरं श्रीदं श्रीनिवासम्महोदयम् १२ श्रीरामम्माधवम्मोक्षं क्षमारूपञ्जनार्दनम् ॥ सर्वज्ञं सर्ववेत्तारं सर्वदं सर्वनायकम् १३ हरिम्पुरारिङ्गोविन्दम्पद्मनाभम्प्रजापतिम् ॥ आनन्दञ्ज्ञानसम्पन्नं ज्ञानदञ्ज्ञाननायकम् १४ अच्युतं सबलञ्चन्द्रञ्चक्रपाणिम्परावरम् ॥ युगाधारञ्जगद्योनिम्ब्रह्मरूपम्महेश्वरम् १५ मुकुन्दन्तं सुवैकुण्ठमेकरूपञ्जगत्पतिम् ॥ वासुदेवम्महात्मानम्ब्रह्मण्यम्ब्राह्मणप्रियम् १६ गोप्रियङ्गोहितं यज्ञं यज्ञाङ्गं यज्ञवर्द्धनम् ॥ यज्ञस्यापिसुभोक्तारं वेदवेदाङ्गपारगम् १७ वेदज्ञं वेदरूपन्तं विद्यावासंसुरेश्वरम् ॥ अव्यक्तन्तम्महाहंसं शङ्खपाणिम्पुरातनम् १८ पुरुषम्पुष्कराक्षन्तु वाराहन्धरणीधरम् ॥ प्रद्युम्नं कामपालञ्च व्यासं व्यालम्महेश्वरम् १९ सर्वसौख्यम्महासौख्यम्मोक्षञ्च परमेश्वरम् ॥ योगरूपम्महाज्ञानं योगिनां गतिदम्प्रियम् २० मुरारिलोकपालं पद्महस्तं गदाधरम् ॥ गुहावासं सर्ववासम्पुण्यवासम्महाभुजम् २१ वृन्दानाथं बृहत्कायं पावनं पापनाशनम् ॥ गोपीनाथं गोपसखं गोपालं गोगणाश्रयम् २२ परात्मानं पराधीशं कपिलं कार्यमानुषम् ॥ नमामिनिश्चलं नित्यं मनोवाक्कायकर्मभिः २३ नमामि विष्णुं यक्षित्यन्नारायणमनामयम् ॥

अर्थात् हषीकेश १ केशव २ मधुसूदन ३ सर्वदैत्यसूदन ४ नारायण ५ अनामय ६ । १० जयन्त ७ विजय ८ कृष्ण ९ अनन्त १० वामन ११ विष्णु १२ विश्वेश्वर १३ पुण्य १४ विश्वाधार १५ सुरार्चित १६ । ११ अनघ १७ अघहन्ता १८ नरसिंह १९ श्रीप्रिय २० श्रीपति २१ श्रीधर २२ श्रीद २३ श्रीनिवास २४ महोदय २५ । १२ श्रीराम २६ माधव २७ मोक्ष २८ क्षमारूप २९ जना-

३३६

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

ईन ३० सर्वज्ञ ३१ सर्ववेत्ता ३२ सर्वद ३३ सर्वनायक ३४। १३
हरि ३५ मुरारि ३६ गोविन्द ३७ पद्मनाभ ३८ प्रजापति ३९
आनन्द ४० ज्ञानसम्पन्न ४१ ज्ञानद ४२ ज्ञाननायक ४३। १४ अ-
च्युत ४४ सबल ४५ चन्द्र ४६ चक्रपाणि ४७ परावर ४८ युगाधार
४९ जगद्योनि ५० ब्रह्मरूप ५१ महेश्वर ५२। १५ मुकुन्द ५३ वैकुण्ठ
५४ एकरूप ५५ जगत्पति ५६ वासुदेव ५७ महात्मा ५८ ब्रह्मण्य
५९ ब्राह्मणप्रिय ६०। १६ गोप्रिय ६१ गोहित ६२ यज्ञ ६३ य-
ज्ञाङ्ग ६४ यज्ञवर्द्धन ६५ यज्ञभोक्ता ६६ वेदवेदाङ्गपारग ६७। १७
वेदज्ञ ६८ वेदरूप ६९ विद्यावास ७० सुरेश्वर ७१ अव्यक्त ७२ म-
हाहंस ७३ शंखपाणि ७४ पुरातन ७५। १८ पुरुष ७६ पुष्कराक्ष
७७ वाराह ७८ धरणीधर ७९ प्रद्युम्न ८० कामपाल ८१ व्यास ८२
व्याल ८३ महेश्वर ८४। १९ सर्वसौख्य ८५ महासौख्य ८६ मो-
क्ष ८७ परमेश्वर ८८ योगरूप ८९ महाज्ञान ९० योगिप्रिय ९१।
२० मुरारि ९२ लोकपाल ९३ पद्महस्त ९४ गदाधर ९५ गुहावास
९६ सर्ववास ९७ पुण्यावास ९८ महाभुज ९९। २१ वृन्दानाथ
१०० बृहत्काय १०१ पावन १०२ पापनाशन १०३ गोपीनाथ
१०४ गोपसख १०५ गोपाल १०६ गोगणाश्रय १०७। २२ परा-
त्मा १०८ पराधीश १०९ कपिल ११० कार्यमानुष १११ निश्च-
ल ११२ नित्य ११३ इनको मन काय कर्मों से नमस्कार करते हैं
२३ इस शतनाम स्तोत्रसे जो कोई पुण्यकर्त्ता श्रीविष्णुजीकी स्थिर
मनसे स्तुति करता है वह सब लोक छोड़कर पुण्यसे पवित्र होकर श्रीम-
धुसूदनजीके लोकको जाता है २४ यह नामोंका सैकड़ा महापुण्य व
सब पापोंका शोधक है जो कोई अनन्यमनसे व ध्यान लगाकर इसे
जपता है २५ वह पुण्यात्मा नर नित्य गङ्गास्नान का फल पाता है
इससे सुस्थिर हो एकाग्रमन से इसे जपे २६ जो मनुष्य इन्द्रियों को
अपने वशमें करके नियम में स्थित होकर इस स्तोत्र को तीनों का-
लोंमें जपता है उसको अश्वमेध यज्ञका फल होता है इसमें कुछ स-
न्देह नहीं है २७ व जो कोई एकादशीका व्रत रहकर श्रीमाधवजी
के आगे इस स्तोत्र को पढ़ता हुआ जागरण करता है तिसके पुण्य

को हम कहते हैं २८ पुण्डरीक यज्ञ के फल को मनुष्य पाता है और तुलसी जी के समीप में स्थित होकर मन से जो मनुष्य जपता है २९ वह मनुष्य वर्ष भर में राजसूय यज्ञ के फल को भोगता है शालग्राम की मूर्ति और द्वारका की मूर्ति जहां हो ३० दोनों के समीप में सुख की इच्छा करने वाला जप करे तो बहुत सुख को भोगकर अपने समेत कुल को तार देता है व जो कार्तिक मास में प्रातः काल स्नान करके मधुसूदन जी की पूजा करके ३१ । ३२ यह स्तोत्र पढ़ता है वह परम गति पाता है ऐसे ही जो माघ-स्नानी पुरुष भक्ति से मधुसूदन जी की पूजा करके ३३ हृषीकेश जी को ध्यान कर इस स्तोत्र को पढ़ता है वा सुनता है वह सुराषाणादिक पापों को त्याग कर हे पुत्र ! श्री जनार्दन भगवान् जी के परम पद को निर्विघ्न जाता है जो मनुष्य श्राद्ध के समय ब्राह्मणों के भोजन करते हुये काल में ३४ । ३५ यह शतनाम स्तोत्र जपे तो इस सर्वपातनाशक स्तोत्र के पाठ से उसके पितर सन्तुष्ट हों व तृप्त होकर परम उत्कृष्ट गति को पावें ३६ ॥ चौ० ब्राह्मण पढ़े वेद निधि होई । क्षत्रिय पढ़े लहे महि सोई ॥ वैश्य सदा जो जपत निरालस । धन पावत अरु मन भावत यस ३७ शूद्र पढ़े जो नित चितलाई । यह सुख लहि पुनि द्विज क्लै जाई ॥ जन्मान्तर मैं द्विज तनु पाई । वेद पाठ अधिकारि कहाई ३८ यासों सुखद मोक्ष प्रद यहू । है सुस्तोत्र न तनिक सँदेहू ॥ जो यहि पढ़े रमेश प्रसादा । सर्व सिद्धि लहि विगत विषादा ३९

इति श्रीपाद्मग्रन्थ महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे केनोपाख्यानै गुरु

तीर्थवर्णने च्यवनचरित्रे सप्ताशीतितमोऽध्यायः ८७ ॥

अष्टासीवां अध्याय ॥

दो० अष्टासी अध्याय मैं उज्ज्वल सों सुनि कर्म ॥

राजसुता हरिभजन करि हरिपुर गई अभर्म्म १

कुंजल अपने पुत्र से बोला कि हे पुत्र ! श्री विष्णु भगवान् जी के व्रत स्तोत्र महाज्ञान व ध्यान जो कि सब पापों के नाशक हैं हमने तुम से कहे १ सो ऐसे ही जब वह इन चारों को करेगी तो देवों के दुर्लभ श्री विष्णु भगवान् के लोक को जायगी २ इससे यहां से जाकर तुम विष्णु देवी

से कहो प्रथम तो अशून्यशयन नाम व्रतराजका विधान उससे कहो
 ३ फिर महाज्ञान ध्यानादि भी कहना जिस से उस महायशस्विनी
 राजकन्या का उद्धार हो तुमने पूँछा व हमने पुण्यद पापनाशन व्रत
 कहा ४ अब हे महाभाग ! जावो २ इतना कहकर वह चुप होरहा
 श्रीविष्णु भगवान् राजा वेनसे बोले कि जब उज्ज्वलके पिता कुंजल
 ने ऐसा उससे कहा ५ तो वह महामति धर्मात्मा अपने पिता मा-
 ताके चरणों के प्रणाम करके हे राजन् ! वह उज्ज्वल तुरन्त प्लक्षद्वीप
 को गया ६ व फिर नाना धातुओं से समाकुल सब ओर कल्याणका-
 रक उस पर्वतपर गया जो कि नानारत्नमय ऊँचे शिखरों से शोभित
 होरहाथा ७ व हेनृप ! नानाप्रकारके उज्ज्वल जलोंसे सम्पूर्ण भरनोंके
 प्रवाहोंसे उपशोभित होताथा व उस पर्वतोत्तम पर स्वच्छजलवाली
 बड़ी २ बहुतसी नदियां विद्यमान थीं ८ व किन्नर गन्धर्व वहां
 सुस्वर रागों से गानकरते अप्सराओं से समाकीर्ण व देवसमूहों से
 आकीर्ण था ९ सिद्ध चारणों से संयुक्त व मुनिवृन्दोंसे उपशोभित था
 व नानाप्रकार के पक्षियोंके नादोंसे सर्वत्र परिनादित था १० ऐसे
 पर्वत पर लघुपराक्रमी उज्ज्वल पहुँचकर देखा तो उस पर्वतपर
 बड़े सुस्वर से वह राजकन्या रोदन कररहीथी ११ व बार २ रोदन
 करतीहुई उससे वह यह वचन बोला कि हे कल्याणि ! तुम कौनहो
 व इस समय क्यों रोदन करतीहो १२ हे महाभागे ! तुम किसके
 आश्रितहो व तुम्हारा किसने अप्रिय कियाहै हमसे अपने दुःखका
 सब कारण अभी कहो १३ तब दिव्यादेवी बोली कि हे महाभाग !
 इस समय में हमारेकर्मों का विपाक है विधवा होकर दुःखसे यहां
 स्थितहूं १४ हे महाभाग ! आप कौनहैं कृपाकरके हमारे ऊपर आप
 पीड़ित हैं पक्षीका रूपधारे उत्सवसमेत कहतेहो १५ इसप्रकार रा-
 जकन्याका कहाहुआ सब सुनकर वह उज्ज्वल पक्षी बोला कि हे महा-
 भागे ! हमपक्षी हैं तुम्हारे ऊपर कृपासे पीड़ितहैं १६ हे भद्रे ! पक्षीका
 रूपधारे न हम सिद्धहैं न ज्ञानीहैं तुमको बड़े ऊँचेस्वरसे रोदनकरती
 हुई सुनकर व देखकर १७ अबतुमसे पूँछतेहैं कि हे देवि ! अपने रोने
 का कारण हमसे कहो तब उसने अपने पिताके गृहके सब वृत्त कह

सुनाये १८ जिसप्रकार दुःख देनेवाले भये यथासंख्य सब कह सुनाये
तो संक्षेपरीतिसे सुनकर उस महात्मा उज्ज्वलने १९ उस दुःखित राज-
कन्या से कहा कि जैसे विवाहहीके समय तुम्हारे बहुतसे पति मृतक
होगये हैं २० व तुम्हारे स्वयंवरके निमित्त बहुतसे क्षत्रिय नष्टहुये
हैं यह सब तुम्हारा चेष्टित मैंने पितासे कहा है २१ क्योंकि हे सुलो-
चने ! यह तुम्हारे अन्य जन्म का किया हुआ पाप है हमारे पिताने
बड़ी कृपासे हम से सब कहा है २२ उसी दोषसे संपुष्ट तुमने ये
सब दुःख भोगे हैं यह सब कारण पिता ने कहा है २३ पूर्व जन्मके
कियेहुये कर्मोंका फल तुम भोगती हो जब उज्ज्वलने ऐसा कहा तो
सुनकर वह राजकन्या दिव्यादेवी २४ उस महात्मा पक्षी उज्ज्वलसे
फिर बोली कि अब मैं आपके प्रणाम करती हूँ मुझ दीन के ऊपर
आप कृपा करें २५ अब मेरे पूर्व जन्मके पापकी निष्कृति आपकहें
व कृपा करें व उसका जो कुछ पुण्यकारी हमारे पापों का शुद्ध करने
वाला प्रायश्चित्त हो सो भी आप बतावें २६ जिससे पापों से मैं शुद्ध
होजाऊं व पुण्यरूप होकर शुद्धलोक को चली जाऊं हे महाभाग !
इन मेरे पापोंका प्रायश्चित्त दया करके मुझसे कहें २७ तब उज्ज्वल
नाम पक्षी बोला कि हे महाभागे ! तुम्हारे अर्थ तो हमने अपने पिता
से पूँछा था इससे हमारे पिताने बहुतही उत्तम प्रायश्चित्त बताया है
२८ हे महाभागे ! सब पातकों के शोधक उसको तुम करो प्रथम
हर्षिकेश भगवान्का ध्यान करो फिर उनका शतनामस्तोत्र जपो २९
फिर नित्यही ज्ञानमें पर होकर उनके उत्तम व्रत करो पापनाशन
पुण्यदायक अशून्यशयन व्रत करो ३० यह धर्मात्मा उज्ज्वल ने
महात्मा श्रीविष्णु का सब ज्ञानप्रकाशक महाज्ञान ध्यान व्रत स्तोत्र
उस राजकुमारी से कहा ३१ विष्णुजी राजावेन से बोले कि उससे
सबको अच्छे प्रकार ग्रहण करके उसी निर्जन वनमें सब द्रव्यों से नि-
वृत्त होकर वह तप करने लगी ३२ प्रथम आहारको जीत कर निरा-
धार होकर उसने अशून्यशयन नाम व्रत किया उसके करने में काम
क्रोध से विहीनहुई व सब संयम अपनी इन्द्रियोंके करलिये ३३ हे
महाराज ! इन्द्रियोंके महामोहको तो उसने दूर कर दिया जब चौथा वर्ष

प्राप्त हुआ तब श्रीभगवान् जनार्दनजी प्रसन्नहुये ३४ व उसको वर देनेकी इच्छा से वरनायक वरदाता प्रभु वहां आकर प्राप्तहुये और तिसको ऊपरला रूप दिखाया सूतजी ३५ शौनकादिकों से बोले कि तब इन्द्रनीलमणि व सजलजलदश्याम शंख चक्र गदा धारण किये हुये सब भूषणोंकी शोभासे युक्त कमल हाथ में लिये श्रीविष्णुभगवान् के आगे ३६ हाथ जोड़ थर थर कांपतीहुई एक चरणके बल खड़ी होकर प्रणाम करती हुई गद्गद वचनों से मधुसूदनजी से बोली कि ३७ हे महाराज ! आपके दिव्य तेजसे मैं यहां स्थित नहीं होसکتी इससे आप दिव्य रूप हुये कौन हैं कृपाकर हमारे आगे ३८ प्रसन्न होकर कहो यहां आपका क्या कार्य्य हे महामते ! सब प्रसन्नहोकर कहो ३९ हे जगन्नाथ ! सो भी आपके रूप व नामको तो मैं जानती नहीं इंगितों से व तेजसे जानतीहूं कि आप देवहैं क्या आप ब्रह्माहैं वा विष्णुभगवान् हैं वा शङ्करजी हैं ऐसा कहकर प्रणाम करके पृथ्वी पर दण्डवत् पड़गई ४०।४१ तब प्रणाम करती हुई उस राजकन्या से श्रीजगन्नाथजी बोले कि हे शोभने ! तीनों देवोंमें कुछ अन्तर नहीं दिखाई देता ४२ जिसने ब्रह्माकी पूजाकी वा शङ्करकी पूजाकी उससे हम नित्य पूजित होजाते हैं इसमें विचारणा करनेकी आवश्यकता नहीं है ४३ ये दोनों देव हमसे भिन्न नहीं हैं नित्यही तीनों रूपवालाहूं व जिन्होंने हमारी पूजाकी उनसे वे दोनों भी पूजित होजाते हैं ४४ हम हृषीकेशदेवहैं तेरे ऊपर कृपा करनेको आयेहैं इस पुण्यस्तोत्रसे व इस व्रतसे व तेरे नियम से हम बहुत प्रसन्नहुये ४५ क्योंकि इन के करने से तू अब निष्पाप होगई इससे हे शोभने ! जो चाह हमसे वर मांगले दिव्यादेवी बोली कि हे हृषीकेश ! हे कृष्णदेव ! जयहो हे छेशापहारक ! ४६ आपके चरणारविन्द युगलके प्रणाम करतीहूं हे सुरेश्वर ! मेरा उद्धारकरो हे चक्रपाणे ! जो मुझको वर दिया चाहते हो तो मेरे ऊपर प्रसन्नहोवो ४७ व अपने दोनों चरणकमलकी भक्ति मुझको दीजिये हे पापरहित ! व हे जगन्नाथ ! मुझको रोगरहित मोक्षका मार्ग दिखावो ४८ व हे वैकुण्ठ ! हे जनार्दन ! यदि सन्तुष्ट हुये हो तो दासभाव दीजिये श्रीभगवान् बोले कि हे महा-

भागे ! ऐसाहीहो नू सब पापों से छूटगई इससे योगियों को सदैव
दुर्लभ परम वैष्णवलोकको अभी हमारे प्रसादसे चलीजा ४६। ५०
जब महात्मा माधवजीने ऐसा वचन कहा तो दिव्यादेवी दिव्यहोगई
व सूर्य के तेजके समान प्रकाशित होनेलगी ५१ व सब मनुष्योंके
देखतेही देखते सब आभरणों से भूषित होकर दिव्य माला पहिने
व दिव्यहार धारणकिये ५२ दाह प्रलयसे वर्जित वैष्णवलोकको
चलीगई ॥

चौ० पुनि उज्ज्वलपक्षी गृहआवा। समाचार निज पितहि सुनावा ॥

सो सुनि कुंजलभयहुसुखारी। हर्षितहैहरिनामपुकारी ५३। ५४

इति श्रीपाद्मपुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानं

गुरुतीर्थेव्यवनचरित्रेऽष्टाशीतितमोऽध्यायः ८८ ॥

नवासी अध्याय ॥

दो० नावासीयें महँ कह्यो चारिहंस दुइ व्याध ॥

चारियुवति यकसँग हते तरीं न वे अपराध १

विष्णुजी राजावेन से बोले कि इसके पीछे कुंजल अपने पुत्र
समुज्ज्वलसे बोला कि हे पुत्र ! अब कहो तुमने कहीं क्या अपूर्व
देखाहै १ वह हमसे प्रीतिपूर्वक कहो हमारे इस समय सुननेकी इ-
च्छाहै जब कुंजल ने अपने पुत्रको ऐसी आज्ञादी और आप चुप
होरहा तो वह २ दिनय से शिर झुँकाकर अपने पितासे बोला कि
देववृन्दों से युक्त यह जो हिमवान् पर्वतश्रेष्ठ है ३ हे पिताजी !
मैं अपने वआपके आहारके लिये उसी पर जाताहूँ व वहाँ वह कौ-
तुक देखताहूँ जोकि अन्यत्र कभी देखा न सुनाथा ४ उसपर एक
स्थानहै जो अनेक ऋषिगणों से व अप्सराओंसे शोभितहै व बहुत
कौतुकों की शोभा से युक्त व नाना मांगल्य पदार्थों से युक्त है ५
व बहुत पुण्यफलों से युक्त व नानाप्रकारके वनोंसे शोभित होताहै व
अनेक कौतुकों से निरन्तर परिभासित रहताहै मनका मोहनकर्ता है
६ हे तात ! वहाँ एक अपूर्व मानससर हमने देखा उसमें बहुत से
हंस क्रीड़ा किया करते हैं पर एक दिन एक ऐसा हंस आया ७ वह

कृष्णरंगकाहै व उर्सा प्रकारके फिर तीन और भी हंस वहां आगये बस वे चार तो नीले रंगके हैं अन्य सब श्वेतरंग के हंस जैसे कि होते हैं वैसेहैं फिर शैद्राकार अतिभयंकररूपिणी ८६ करालदंष्ट्रावाली चारस्त्रियां कि जिनके शिर के बाल ऊपरको उठे थे व अतिभयानक लगते थे वहां आई ये उस मानससर में पीछे को आई १० फिर जो कृष्णरंग के हंसथे उन्होंने ने मानससर में स्नान किया व उनमें की तीन स्त्रियों ने भी स्नान किया व और सब हंसों ने मानसमें स्नाननकिया ११ तब वे स्त्रियां उनको हँसीं जिनने कि स्नान नहीं किया था व हँसनेके समय उन्होंने बड़े दारुण दांत निकालेथे तब उस सरसे एक बड़े शरीरका हंस निकला १२ पीछे से तीन और निकले उनको देख परस्पर विवाद करतेहुये अन्य हंस वहांसे आकाश मार्ग होकर उड़े १३ व उन्हीं के संग वे महाभयंकरी स्त्रियां भी उड़ीं व जाकर सब पक्षी तो विंध्याचल के एक पुण्यकारी शिखरपरके एक वृक्षकी छाया में १४ बैठे क्योंकि वे बेचारे दारुणदुःखों से जलेहुये थे उनलोगों के देखतेही देखते वहां पर एक भिल्ल आनपहुँचा १५ वह मृगों को पीड़ा देकर हाथमें धन्वा बाण लिये आकर सुखसे शिला तल पर बैठगया १६ पीछे से अन्न व जललेकर उसकी भिल्ली वहां आई व अपने पतिको देखनेलगी पर पूर्व के लक्षण उसके जाते रहे थे १७ इससे उसने समझा कि यह मेरा पति नहीं है इसलिये दूसरी ओर देखनेलगी व उसका पति तेजस्वी होगया था यह । तब कि जैसे सूर्य आकाश में शोभितहोते हैं वैसेही वह शोभित होनेलगा था १८ उसको अन्य पुरुष जानकर वहां से चलखड़ीहुई तब व्याधा बोला कि हे प्रिये ! यहां आ तू हमको क्यों नहीं देखती है १९ अरे हम तो जुधा से पीड़ित तुझकोही देखरहेहैं उसका वचन सुन वह उसकी व्याधी शीघ्रही लौटी २० व अपने पति के पास पहुँचकर बहुत विस्मित हुई कि यह महातेजस्वी कौन पुरुष है क्या कोई देव तो नहीं है जो मुझको बुलाता है २१ यह विचारकर वह व्याधी प्रकाशयुक्त तेजवाले अपने पति उस भिल्लसे बोली कि हे वीर ! यहां तुमने क्या किया है व तुम दिव्य लक्षण पुरुष कौन हो २२ सूतजी शौनकादिकों

से बोले कि जब व्याधी ने ऐसा कहा तो वह व्याधा अपनी प्रिया व्याधी से बोला कि हे कान्ते ! हम तुम्हारे वल्लभ हैं व तुम हमारी प्रिया हो २३ तुम क्यों हमको नहीं पहिचानती कैसे शंका हुई है अरे हम क्षुधा से पीड़ित होने से जल और अन्न की राह देख रहे हैं २४ व्याधी बोली कि राक्षस के समान काले वर्ण का लाललाल नेत्रवाला काले वस्त्र पहिने सब प्राणियों को भय करनेवाला हमारा पति तो ऐसा था २५ आप कौन हैं जो दिव्य देह धारण किये हुये हैं पर हम भिल्ली को प्रिया कहकर बुलाते हैं यह हमको संशय उत्पन्न हुआ है इससे हमारे आगे सत्य २ कहो २६ तब वह व्याधा बोला कि हमारा यह कुल है व यह नाम यह ग्राम ऐसी २ हम क्रीड़ा करते हैं व ये २ हमारे चिह्न हैं व पुत्र पुत्री हैं जब सब बातें उसने अपनी स्त्री के आगे कहीं तो उसको विश्वास हुआ २७ तब वह व्याधी हर्षित मन हो अपने पति से बोली कि तुम्हारा शरीर ऐसा कैसे होगया कि अब तो तुम उजले वस्त्र धारण किये हो २८ कहिये यह कैसे हुआ इस विषय में हमको बड़ा आश्चर्य है तब पूछती हुई अपनी प्राणप्रिया से वह व्याधा बोला कि २९ सूतजी शौनकादिकों से कहते हैं कि हे प्रिये ! यद्यपि हम सृगों के मारनेवाले व्याधा हैं सो तो तुम जानती ही हो पर इसका वृत्तांत कहते हैं सुनो नर्मदा नदी के उत्तर किनारे पर एक संगम है ३० सो हम घाम से बहुत व्याकुल होकर वहां गये ३१ उस संगम में स्नान किया व जलपान किया व अच्छे प्रकार वहां बैठे उठे फिर वहां से चले आये तब से हमारा शरीर इस प्रकार का तेजस्वी होगया है ३२ व तभी से ये और भी शुक्ल वस्त्र हमारे पास आगये हैं व यह वही नीलका रंगा हुआ चोलन है उसमें स्नान करते ही उजला होगया है व इसी से प्रथम के सब लक्षण बदल जाने ही से कुल और स्थान से तुमने हमको चीन्ह नहीं पाया ३३ तब वह व्याधी अपने पति को लक्षित कर पुण्य का संभव जानकर अपने भर्ता से बोली कि वह संगम हम को भी दिखाओ ३४ तो हम भी भोजन व पीने के पदार्थ पीछे से तुमको देंगी जब व्याधा से उसकी प्रियाने ऐसा कहा तो वह अतिवेग से चला ३५ व जाकर अपनी प्राण-

३४४ पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

प्रिया को वह पापनाशकर्ता संगम दिखादिया व उसीके पीछे २ वे जो कालेरंग के हंस वहां आकर बैठे थे वे भी उस नर्मदाके संगम परको उड़े चले गये व उन सबों के देखतेही देखते और मेरे देखते हुये ३६।३७ प्रथम उसके पतिने स्नान किया फिर उसव्याधीने स्नान किया स्नान करतेही दोनों दिव्य कान्ति समेत दिव्य देह धारे ३८ दिव्य वस्त्र अनुलेपन धारण किये हुये होगये दिव्यमाला और वस्त्रधारे दिव्य चन्दन अरगजादि लगाये ३९ व दोनों वैष्णव विमान पर चढ़के मुनियों व गन्धर्वों से पूजित हो वैष्णवलोकको चले गये व वहांके रहने वाले वैष्णव लोग उन दोनों की पूजा करते भये ४० व और दोनों स्त्री पुरुष महात्माओं की स्तुति की और स्वर्गमार्ग से चले गये और पक्षी शब्द करते भये यह हमने देखा ४१ व जो वे चारों कालेपक्षी उनके पीछे गये थे उनकी ऐसी दशा देख उन्होंनेभी उसमें स्नान किया उनकेभी दिव्य देह होगये क्योंकि वह तीर्थ पापनाशक तो थाही इससे दिव्यदेह धारण किये हुये जल पीकर बाहर निकले ४२।४३ फिर जो चार वे कालेरंगकी महाविकारालरूपवाली स्त्रियां थीं उन्होंनेभी वहां जाकर उसी संगममें स्नान किया परन्तु वे स्त्रियां स्नानमात्रही से उसी समय मरीं बड़ी दूरतक उन के रोदन का शब्द सुनाई देताथा वे यमलोकको गईं हे तात ! यह भी चरित हमने वहां देखा तब वहांसे वे हंस उड़े व अपने स्थानको चले गये ४४।४५ हे तात ! यह हमने प्रत्यक्ष देखा सो आपसे कहा सो वे काले पखनों की बड़ी देहवाली धार्तराष्ट्र वे स्त्रियां कौन थीं ४६ हे तात ! प्रसन्नता से उनके वृत्तांत हमसे कहो व जो मानससरके भीतर से वे कालेकौवों के रंगके हंस निकले थे वे कौन हैं व फिर उनकी कौन दशा हुई होगी हमसे कहो वे प्रथम कृष्णताको कैसे प्राप्त हुये व फिर उस संगममें स्नान करने से शुद्ध कैसे होगये ४७।४८ व वे स्त्रियां स्नान करतेही मृतक होगईं ॥

चौ० यह मम हृदय घोरसन्देहा । भयहु तात जो भाष्यहुं येहा ॥
ज्ञानविचक्षण हौ तुम ताता । यासो नाशहु याहि प्रभाता १
हैं प्रसन्न मम ऊपर आजू । करहु तात अब कृपा समाजू ॥

इमिनिजजनकहिकह्योसमुज्ज्वल । पुनिकीन्होविरामगतसबज्वल ४६।५१ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

गुरुतीर्थवर्णनेव्यवनचरित्रेएकोनवतितमोऽध्यायः ८९ ॥

नब्बे अध्याय ॥

दो० नब्बे के महँ इन्द्रसब तीर्थन काहिं बुलाय ॥

पापनाशकी शक्ति तिन पूँछी है यह गाय १

सूतजी शौनकादिकों से बोले कि इसप्रकार सब अपने पुत्र समु-
ज्ज्वल के वचन सुन धर्मात्मा वह कुञ्जल अपने सुत से बोला कि
१ हे तात ! स्थिरमन करके सुनो हम पापनाशन सब सन्देह विध्वं-
स करनेवाला चरित्र कहते हैं २ वह इन्द्रलोक का वृत्तान्त है जहां
के समाचार प्रायः कौतुकयुक्तही होते हैं एकसमय उन महात्मा
इन्द्रदेवकी सभा में ३ नारदमुनिसत्तम सहस्राक्षदेव पुरन्दर के दे-
खने की इच्छा से अकस्मात् आगये सूर्य के तेज के समान प्रका-
शित उन मुनिसत्तम को आयेहुये ४ देखकर इन्द्र बड़ेहर्ष से अप-
ने आसन परसे उठकर उनको अर्घ्य पाद्य दिये ५ व फिर दोनोंहाथ
जोड़कर प्रणाम किया व पुण्यकारी कोमल आसनमें उन द्विजोत्तम
को बैठाकर ६ अतिप्रणतहो परमश्रद्धा से उनसे पूँछा कि इससमय
आपका आगमन कहां से हुआ व उसका जो कारणहो इससमय
हम से कहें ७ जब देवराज ने ऐसा कहा तो महामुनि नारदजी उन
से बोले कि इससमय पृथ्वी परसे आपके देखने की इच्छासे यहां
आये हैं ८ वहां पर नाना २ देशों में नानाप्रकारके पुण्यतीर्थों में
श्रद्धासे स्नानकिया व देवताओं पितरोंका तर्पण किया और अनेक
तीर्थ देखे ९ जो तुमने पूँछा सब हमने अपने आगमन का वृत्तान्त
कहा तब इन्द्र बोले कि हे महामुने ! आपने तो अनेक पुण्यक्षेत्र
व तीर्थ देखे हैं १० भला ऐसा भी कोई तीर्थ व सुपुण्य क्षेत्र देखाहै
कि जिसमें स्नान करने से ब्राह्मणका मारनेवाला ब्रह्महत्या से छूट
जाय व मदिरा पान करनेवाला पापसे छूटे व गऊ का मारनेवाला
सुवर्ण का चोर उस पापसे छूटे ११ व हे महाभाग ! स्वामी के साथ

द्रोह करने वाला व स्त्रीवध करनेवाला कैसे सुखीहो नारदजी बोले कि हे सुरेश्वर ! गयादिक जितने तीर्थ पृथ्वी पर हैं १२ उनकी विशेषता हम पाप नाशनेकी नहीं जानते हमारे जान तो सब पुण्य हैं व सब दिव्य हैं व सब पापोंके नाशनेके कारण समान हैं १३ हे पुरन्दर ! हम तो सब तीर्थों को ऐसाही जानते हैं अविशेष व विशेष इस समय हम नहीं जानते हैं १४ अबतुम उन तीर्थोंको गतिकादाता विश्वास जैसे बने करलो इसप्रकार महात्मा नारदजी के वचन सुनकर १५ इन्द्रने पृथ्वी परके सब तीर्थों को स्वर्ग को बुलाया जितने तीर्थ भूतल परथे सबके सब मूर्तिधारण करके इन्द्रकी आज्ञा से तुरन्त वहां पहुँचे १६ व सब हाथ जोड़े व भूषण वस्त्रादि दिव्य धारण किये तेजसे युक्त मूर्तियों को धारण किये १७ कोई तीर्थ स्त्री का स्वरूप धारण किये व कोई पुरुषका स्वरूप बनाये सुवर्ण व चन्दन के समान प्रकाशित दिव्यरूप सब किये १८ व कोई कोई तीर्थ मोती के समान झलकतेहुये रूप धारण किये कोई २ तपायेहुये सुवर्ण के रङ्गके रूप बनाये कोई २ उसी सुवर्ण के रङ्गमें कुछ अधिक अरुणता के रूप किये १९ कोई २ शुद्ध रूपों से भासित कोई पीले रूपसे कोई कमलके रङ्गके मूर्ति धारण किये २० सूर्य के तेज के समान प्रकाशित बिजली के तेजके समान और कोई अग्निके सदृश सभा में प्रकाशित हुये २१ सब गहनों की शोभासे युक्त शोभितहुये हार कङ्कण केयरमाला चन्दन २२ धारे सुगन्ध लगाये और कमण्डलु हाथमें लिये सभा में आये २३। २४ गङ्गा, नर्मदा, पुण्या, चन्द्रा, भागा, सरस्वती, देविका, विंविका, कुब्जा, कुञ्जला, मञ्जुला, भानुमती, पुण्या, पारा, सुवर्धरा, शोणा, सिन्धु, सौवीरा, कावेरी, कपिला २५ कुमुदा, वेदनदी, पुण्या, सुपुण्या, महेश्वरी, चर्मण्वती, लोपा, सुकौशिकी २६ सुहंसी, हंसपादा, हंसवेगा, मनोरथा, सुरुथा, स्वारुणा, वेणा, भद्रवेणा, सुपद्मिनी २७ नाहली, सुमरी, दूसरी पुण्या, पुलिन्दिका, हेमा, मनोरथा, दिव्या, चन्द्रिका, वेदसंक्रमा २८ ज्वाला-हुताशिनी, स्वाहा, काला, कपिञ्जला, स्वधा, सुकला, लिङ्गा, गम्भीरा, भीमवाहिनी २९ वद्रीची, वीरवाहा, लक्षहोमा, अघापहा, पाराशरी,

हेमगर्भा, सुभद्रा, वसुपुत्रिका ३० हे नरेश्वर ! इतनी नदियां मूर्तिधारण किये हुये आईं सब सब आभरणों की शोभा से युक्त व कुम्भ हाथों में लिये अच्छेप्रकार पूजित आईं ३१ प्रयाग, पुष्कर अर्घदीर्घ, मनोरथा, महापुण्या, वाराणसी ब्रह्महत्याव्यपोहिनी ३२ द्वारावती, प्रभास, अचन्ती, नैमिषारण्य, चण्डक, महारत्न, महेश्वर, कलेश्वर ३३ कलिंजर, ब्रह्मक्षेत्र, माथुर, मानवाहक, माया, कांती तथा अन्य विविधप्रकार के तीर्थ ३४ अरसठतीर्थ व सौकड़ोर नदियां गोदावरी आदि सब इन्द्रकी आज्ञासे आईं ३५ और भी द्वीप के सब तीर्थ जो कि बड़े थे सब मूर्तिधारण किये हुये आये व सब इन्द्रके आदेशकारी होकर वहां पहुँचे व सबों ने देवताओं के ईश इन्द्रजी के प्रणामकिया ३६ । ३७ सूतजी बोले कि सबों ने देवराज से कहा कि हे देवदेव ! हमसे कहिये तुमने क्यों हम लोगों को बुलाया है ३८ हे देवराज ! हम लोगों से सब कारणकहो तुम्हारे नमस्कार है इसप्रकार सब तीर्थों के वचन सुनकर देवराज उन सबों से बोले ३९ कि हे महातीर्थों ! तुम लोगों में ब्रह्महत्या नाशने में कौन समर्थ है व गोवधनाम महापाप के नाशने में कौन व स्त्रीवध महाघोर पापके विदारण करने में कौन समर्थ है ४० स्वामिद्रोह से उत्पन्न महापाप के व मदिरापान नाम दारुणपापके विनाशने में कौन सुवर्ण चोराने से उत्पन्न व गुरुनिन्दा से समुद्भूत पाप के विदारणमें कौन समर्थ है ४१ व गर्भपात कराने के दोषको कौन समर्थ नाशकरसक्ता है राजा से द्रोह करने से जो महापीड़ा देनेवाला महापाप होता है उसके नाशने में कौन समर्थ है ४२ व मित्रद्रोह करने से जो महापाप होता है व विश्वासघात करने से जो घोरपाप होता है देवमूर्ति तोड़ने में जो महापाप होता है व कहीं का कोई चिह्न बिगाड़डालने में जो पाप होता है ४३ व ब्राह्मणों की जीविका नाश करने में जो पाप होते हैं व गडों के चरने की भूमिके जेतने बोनमें जो महापाप होता है किसी के गृहके जला देने में व देवमन्दिर जला देने में जो दोष होते हैं ४४ व सोलह महापाप व गुरु आदिकी अगम्य स्त्रियों के संग गमनकरने से जो पाप होते हैं स्वामी के त्याग-

ने से जो महापाप होता है व स्नानमें स्वामी को छोड़कर भाग आने से जो अघ होता है ४५ इन पापोंको कौन समर्थ उत्तम तीर्थ नाश करसक्ता है आप लोगों के मध्यमें कौन ऐसा समर्थ है कि इन पापों के करनेवाले प्रायश्चित्त न करें व उनके पापोंको नष्टकरसके ४६ सो सब इन देवताओं के देखते २ व नारदजी के समक्षमें अच्छे प्रकार विचारि करके व संचिन्तन करके आप लोग कहें ४७ जब महात्मा देवराजने ऐसा शुभवचन कहा तो सब तीर्थलोग तीर्थराज से सलाह कर बोले ४८ कि हे देवराज ! सुनो हम लोग कहेंगे तुम्हारे नमस्कार हैं जितने सब तीर्थ हैं सब साधारण रीतिसे सामान्य पापोंको मिटासके हैं ४९ परन्तु ब्रह्महत्या गोहत्या आदि महापापों को नहीं मिटासके उन महाघोर पापों के नाशने में ५० प्रयाग पुष्करादि अर्घ्यतीर्थ समर्थ हैं व महापुण्या वाराणसीपुरी उन पापों के विनाशने में समर्थ है ५१ वस महापातकों के नाशने में प्रयाग पुष्कर वाराणसी अर्घ्यतीर्थ येही चार तीर्थ समर्थ हैं व उपपातकों के नाश करने के लिये चार अमित पराक्रमी हैं ५२ पुष्करादिक महाबली हैं इनको ब्रह्माजीने प्रतिष्ठित किया है तीर्थोंका ऐसा वचन सुनकर देवराजने बड़े हर्षसे युक्त होकर उन तीर्थोंकी स्तुतिकी ५३ । ५४ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने
गुरुतीर्थमाहात्म्येव्यवनचरित्रेनवतितमोऽध्यायः ६० ॥

इक्यानवे अध्याय ॥

दो० इक्यानवे मैं पातकी चारि भये यकठौर ॥

एक दूसरे की कथा पूँछी कही न और १

कुञ्जल अपने पुत्र से बोला कि इसप्रकार तीर्थों से पूँछकर उन को तो बिदा किया जब गौतमजी की स्त्री अगम्या अहल्या के साथ इन्द्रने भोग किया तो उनको ब्रह्महत्या लगी १ उस महापातक के करनेसे इन्द्रको सब देवताओं व ब्राह्मणों ने छोड़ दिया तब निरालम्बवनिराश्रय हो इन्द्र तप करने लगे तब सब देवता यक्ष किन्नर व ऋषिलोगों ने तप करने के पीछे इन्द्रकी पूजाके लिये उनका अभिषेक

किया ३ हे पुत्र ! सब देवादि मालवदेशको इन्द्र को लेगये व वहां कुम्भों में जल भरकर उनसे इन्द्रको स्नान कराया ४ फिर उनको लेजाकर वाराणसीपुरी में स्नान कराया फिर प्रयाग तीर्थराज में स्नान कराया फिर अर्घतीर्थ में स्नानकराया ५ तदनन्तर उन महात्माको पुष्कर तीर्थ में स्नापित कराया इस स्नान कराने में सब ब्रह्मादि देवता व मुनियों के वृन्द संग थे सब स्नान कराते थे वृक्ष, नाग, सर्प, गन्धर्व, किन्नर, वेदमन्त्रों से सब इन्द्र को स्नान कराते फिरते रहे ६ । ७ मुनिलोग भी नानाप्रकारके पापनाशन मन्त्र पढ़ते थे जब इसप्रकार इनचार तीर्थोंमें स्नान कराया तो महात्मा महाभाग इन्द्र शुद्धहुये ८ व अगम्यागमन से जो ब्रह्महत्या हुईथी वह जातीरही व अगम्यागमनका दोष नष्टहोगया ब्रह्महत्याका नाम भी न रहगया जो कि गौतमकीर्त्तवी के सङ्ग भोगकरने से हुईथी ९ उस महापुण्यसे ऐसे शुद्ध हुये कि प्रथमही के समान फिर प्रकाशित होने लगे तब अति प्रसन्न होकर इन्द्रने उन तीर्थों को वरदिया १० कि आप लोग तीर्थों के राजाहैं इसमें कुछ भी संशय नहीं है हमारे प्रसादसे पवित्रहौ जिससे तुम लोगों ने हमारा बड़ाभारी पाप नष्ट करदियाहै इससे अब और भी तुम लोगों का अधिक माहात्म्यहोगा व कैसाही पापी तुम लोगों में आकर स्नान करेगा तो शुद्ध होजाय गा इस प्रकार उन तीर्थोंको वरदेकर फिर मालवदेश को इन्द्रने वर दिया ११ । १२ कि जिससे तुम ने हमारे शरीरका बहुतसा श्रमदायक मल हरलिया इससे तुम अन्न पान धन धान्य से अलंकृतहोगे १३ हमारे प्रसाद से ऐसा होगा इसमें कुछभी सन्देह नहीं है तुममें सदा सुकाल बनारहेगा इससे तुम पुण्यवान् देश कहाओगे १४ इस प्रकारसे मालवदेश को वर देकर देवोंके राजा इन्द्र मालव देशसे सब देवताओं के सङ्ग अपने स्थान इन्द्रपुरी को चले गये क्षेत्र सब तीर्थ मालवदेश भी अपने स्थानोंको गये सूतजी शौनकादिकों से बोले कि तबसे फिर वाराणसीपुरी प्रयाग व अर्घतीर्थ और पुष्कर इन चारों तीर्थों ने उत्तम राजपदवी पाई १७ कुञ्जल बोला कि मालव देशमें एक विदुरनाम क्षत्रिय था उसने मोहके प्रसङ्ग से पूर्वसमय

में एक ब्राह्मण को मार डाला १८ तब वह शिखासूत्ररहित हो तिलक से वर्जित भीखमांगने लगा व कहता किरे कि ब्रह्महत्या किये हुये मदिरा पियेहुये मुझको भिक्षान्न देते जाओ इस प्रकार प्रत्येक गृह के द्वारे द्वारे कहता हुआ वह क्षत्रिय घूमाकरे १९ । २० व ऐसेही वह घूमते घूमते सब तीर्थों में भी हो आया परन्तु हे द्विजसत्तम ! उस की ब्रह्महत्या न भिटी २१ तब एक दिन एक वृक्षकी छाया में बैठकर जलते हुये चित्तसे वह विदुरनाम क्षत्रिय पापी बड़े दुःख व शोकसे युक्त हुआ २२ उन्हीं दिनों में एक चन्द्रशर्मानाम ब्राह्मण महामोह से पीड़ित होकर मगधदेशमें बसता था उस दुष्ट ने मोहसे अपने गुरुको मार डाला था २३ इससे उसके स्वजन वर्गों ने व बन्धुवर्गों ने उस दुरात्मा को छोड़ दिया था वह भी वहां आया जहां कि वह विदुरनाम क्षत्रिय बैठा था २४ वह भी शिखासूत्र से हीन होनेके कारण ब्राह्मण के चिह्नों से रहित था उसे देख प्रथम विदुरदुरात्माने उस ब्राह्मण से पूँछा २५ कि आप कौन हैं जो ऐसे दुर्भाग्ययुक्त दुःखित मन दिखाई देते हैं विप्र के चिह्नों से विहीन हैं सो आप क्यों पृथ्वी पर घूमते हैं २६ जब विदुर क्षत्रिय ने ऐसा कहा तो ब्राह्मणों में अधम उस चन्द्रशर्मा ने जैसा पूर्वकाल में किया था सब कहा २७ व जो महाघोरपाप गुरुके गृहमें बसते हुये ने किया था वह भी कहा जो कि महामोह में आजाने से क्रोधसे आकुलित होकर किया था २८ कि मैंने क्रोध के वशीभूत होकर अपने गुरुजी को मार डाला है उसी पाप से इस समय जलता हूँ यह कहा चन्द्रशर्माने अपना सब वृत्तान्त इस रीति से निवेदित किया व उससे पूँछा २९ कि आप कौन हैं जो दुःखित होकर वृक्षकी छाया में बैठे हुये हैं तब विदुरने भी अपना सब वृत्तान्त संक्षेपसे कहा ३० उसी समय में मार्ग के श्रम से दुःखित कोई तीसरा ब्राह्मण वहां आया उसका वेदशर्मा तो नाम था व वह भी बहुत पाप किये था ३१ तब उससे प्रथम के आये हुये उन दोनों ने पूँछा कि आप कौन हैं जो बहुत दुःखित दिखाई देते हैं तुम पृथ्वी पर क्यों भ्रमण करते हो अपना भाव हम लोगों से कहो ३२ तब वेदशर्मा ने अपना किया हुआ सब कर्म दोनों

से कहा जो कि उस ने अगम्यागमन किया था ३३ व इस से सब अन्य लोग और स्वजन बान्धवों ने उस को धिक्कार दिया था कि जिस पापसे लिप्त होकर पृथ्वीपर घूमताथा ३४ फिर जिसने मदि-रा पान कर लिया था एक बंजुल नाम बनियां वहां आया जोकि विशेषकरगोघातीथा उससे उन तीनोंने पूर्वरीत्यनुसार पूँछा कि तुम कौन हो ३५ तब उसने भी जो पातक पूर्व समय में किया था सब कहा व वहभी उसी स्थानपर बैठगया ३६ इसप्रकार वहांपर चार महापापी इकट्ठे होगये किसीने किसी के भोजन आच्छादन के लिये कुछ न पूँछा परस्पर वार्ता करते भये न एक आसनपर बैठते न एक बिछौने पर सोते ३७ । ३८ इसप्रकारके दुःख युक्त वे चारो नानातीर्थों में संगही संग गये ॥

चौ० पर तिनके अतिघोरसुपापा । नहिं छूटे तनु तापित तापा ॥
नहिं सामर्थ्य तीर्थ महुँ काऊ । जो करतो तिन पाप नशाऊ ॥
विदुरादिक समस्त ते पापी । कालिंजर महुँ गये सतापी ॥
जोगिरिवरचहुँदिशिविख्याता ॥ सबअघहरणसुपुण्यप्रदाता ३६।४० ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरु

तीर्थेव्यवनचरित्रेएकनवतितमोऽध्यायः ६१ ॥

बानवे अध्याय ॥

दो० बानवे के महुँ सकल वे काशीआदि अन्हाय ॥

कुङ्कारे वासङ्ग महुँ भे विशुद्ध यह गाय १

कुंजल अपने पुत्रसे बोला कि कालंजरमें आकर वे सब महा पापोंसे जलतेहुये व विचेतन दुःखितहो हाहाकार करते हुये रहने लगे १ वहां एक महायशस्वी कोई सिद्ध आया उसने उन सबोंसे पूँछा कि तुमलोग किस दुःखसे दुःखितहो २ उन सबोंने अपना वृत्तान्त उस महाप्राज्ञ सिद्धसे कहा भी व वह सब ज्ञानों में विशारद भी था इससे उसने कृपाकर यह कहा कि ३ जब सोमवती अमावा-स्याहो तो प्रयाग वा पुष्कर अर्धतीर्थ अथवा वाराणसीपुरी में ४

तुम सबलोग पहुँचो उनमें भी काशी वा प्रयागमें क्योंकि सोमवती में गंगाका अधिक माहात्म्यहै व इन दोनों तीर्थों में गंगाहैं जैसेही स्नान करोगे तुरन्त मुक्त होजाओगे ५ पाप सब छूटजायँगे व शरीर निर्मल होजायँगे इसमें कुछभी सन्देह नहींहै जब उस सिद्धने ऐसा उपदेश किया तो सबोंने हाथ जोड़कर उसके प्रणाम किया ६ व सबके सब कालंजरसे शीघ्रही चलखड़ेहुये व पापोंसे पीड़ित वे लोग जाकर वाराणसी में पहुँचे व वहां स्नान किया ७ फिर प्रयाग को गये वहांसे पुष्करको गये ऐसेही अर्घतीर्थमें भी घूमते घामते स्नान करते रहे एक समय सोमवारको अमावास्या पड़ी तब महापुरी का-शीजीमें ८ विदुर चन्द्रशर्मा वेदशर्मा व मदिरा पीनेवाला पापी वह बंजुल वैश्यचारो पहुँचे ९ चारो महादुर्द्धर्षपापीथे परन्तु उससोमवतीके पर्वमें गंगाजीमें सबोंने स्नानकिया व स्नानमात्रही से सबके सब गो वध आदिक पापोंसे छूटगये १० क्योंकिवेब्रह्महत्या गुरुहत्या सुरापानादिक पापों से युक्तथे व उनके ये सब पाप नष्ट होगये सो क्यों न वे पापोंसे छूटजाते ११ क्योंकि पापोंसे लिप्त लोगों के अघ मिटानेही के लिये पुष्कर अर्घतीर्थ व पापनाशक प्रयाग तीर्थराज पृथ्वीपर हैं व ऐसेही वाराणसीपुरी भी सबके पापही नाशने के लियेहै १२ व वे चार कृष्णवर्ण के हंस होकर आकाश में उड़नेलगे व फिर उ-न्होंने हंसके शरीर में घूम २ कर सब तीर्थोंमें स्नानकिया १३ पर-न्तु सब तीर्थोंके जलोंमें स्नान करने से उनकी कृष्णता नहीं मिटी तब फिर भी भूतलपर जितने सुन्दर २ पुण्यतीर्थ हैं उनमें उन्होंने क्रमसे स्नानकिया १४ हेमहाराज ! जिन २ तीर्थोंमें उन्होंने स्नान किया वे सब हंस रूपसे अत्यन्त दुःखित तीर्थ जातेभये १५ पातक रूपिणी स्त्रियां चारों ओर घूमती भई अड़सठ अच्छे तीर्थों में हंस रूपसे घूमती भई १६ और तिन महातीर्थों के साथ फिर पापसे आ-कुल मनहोकर मानससर में आये १७ परन्तु हेमहाराज ! वहां स्नान करने से भी पाप न छूटा तब लजित होकर मानससर तीर्थ हंसका रूप धरके १८ वहां से उड़गया हे पुत्र ! जिसको कि तुमने बड़ा भारी एक हंस देखने को बताया था इसके पीछे वे सब काले हंसों

के रूप के पापी नर्मदाके उत्तर तीरपरके उस संगमपरगये जोकि पापोंका नाशक है १९ सो नर्मदा व कुब्जा के उस संगम में स्नानमात्र से सब पापों से सबकेसब निर्मुक्त होगये क्योंकि वह संगम सब देवताओं व सिद्धों से निषेवित रहता है २० वे अपनी कृष्णताको छोड़कर श्वेतताको प्राप्तहोगये व जिस जिस तीर्थ में वे हंसजाते थे सबमें स्नानकरते थे २१ परन्तु जो उन्हींके रंगकी काली वे चारस्त्रियां थीं उनके संग जाती तो थीं पर स्नान किसी तीर्थमें नहीं करती थीं देखकर हंसतीर्थी इसी से पापनहींगया तो-यानल में कुब्जा के श्रेष्ठपाप २२ भस्महोगये तब वे स्त्रियां मृतक होगई ब्रह्महत्या गुरुहत्या सुसपान अगम्यागमनके पाप २३ नर्मदा और कुब्जा के नाशकिये भस्महोगये और जो नदी के किनारे मृतकहुई वेभी हतहुई २४ अड़सठ अच्छे तीर्थों में हंसरूप से हंस के साथ आये तिसको तुम मानससर जानो २५ चारकाले हंस थे उनके नाम मुझसे सुनो प्रयाग पुष्कर उत्तम अर्घतीर्थ २६ चौथी काशीजी ये चारों पापके नाशनेवाले हैं ब्रह्महत्यासे युक्त चारों घूमतेथे २७ ये तीर्थ दुःखसे तीर्थोंमें घूमें परन्तु उनके घूमते हुए भी घोर-पाप न गये २८ कुब्जा के संगम में शुद्ध और निश्चय पाप से छूट गये पुण्य सब तीर्थों में यह संमत है २९ उन में तब से प्रयाग तो सब तीर्थों के राजा होगये क्योंकि जब इन्द्र ने बुलाया था तब वे तीर्थराज न थे सब तीर्थों में घूमते घूमते कुब्जा व नर्मदाके संगम में स्नान करनेही से तीर्थराजहुये क्योंकि अन्य तीर्थ तभीतक गर्जते हैं जबतक कि नर्मदा नहीं देखते ३० जोकि ब्रह्महत्यादि पापोंके नाशने के लिये प्रतिष्ठित है ऐसेही कपिला व नर्मदाका संगमभी सब पापोंके नाशने में समर्थ है ३१ मेघनाद के संयोग में और उरु संगम में भी सबपाप नाशते हैं महापुण्यकारी महाबन्ध और सब ओर दुर्लभ नर्मदा है ३२ उंकारेश्वर में मृगुक्षेत्र में व नर्मदाकुब्जाके संगम में भी मनुष्यों को नर्मदा दुःख से प्राप्त है व साहिष्मतीनाम पुरी के पाससुरोत्तमतीर्थ है ३३ एक ऐसाही वहां बिटकासंगम नाम तीर्थ है व श्रीकण्ठतीर्थ संगलेख

३५४

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

तीर्थ भी हैं बहुत कौन कहे जहां जहां नर्मदा नदी है सब कहीं दुर्लभही है व सब पुण्यों से समाकुल है ३४ ॥

चौ० महापुण्य तीर्थनकी माला । करत विनाश पापके जाला ॥

उभयमध्य जहँ तहँ नर कोई । स्नानकरतबिन पातक होई ॥

जहँ नर्मदा अपरनदि सङ्गम । होय कहँ सुन्दर हृदयङ्गम ॥

तहां स्नान करे जो कोई । अश्वमेध फल पावत सोई ॥

यह तुमसन सुत हम सब भाषा । जो तुमपूँछ्यहुकरि अभिलाषा ॥

इमिकहिदुसरेसुतसोंकुञ्जल । पुनितिसरेसोंबोल्याहुगतबल ३५।३७॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरु

तीर्थेच्यवनचरित्रेद्विनवतितमोऽध्यायः ६२ ॥

तिरानवे अध्याय ॥

दो० तीरानवयें महँ कह्यो यकवन में सरएक ॥

तहँदुइपुनिदुइमिथभखे मांसनकीन विवेक १

कुञ्जल ने अपने तीसरे पुत्र विज्वलसे कहा कि पुत्र पृथ्वीमेंधूमते तुमने क्या अपूर्व आश्चर्य देखा है वह हमसे कहो यहांसे आहारके अर्थ जिस देशको जातेहो व वहां जो कुछ है पुत्र ! शुभ वा अशुभ जो आश्चर्यकी बातदेखते सुनतेहो हमसेकहो १।२ तब विज्वलनाम उसका तीसरापुत्र बोला कि मेरुपर्वतपर एक आनन्द नाम का वनहै वह दिव्य वृक्षोंसे समाकीर्ण व फल पुष्पमय सदा रहताहै ३ देववृन्दों से समाकीर्ण व मुनि सिद्धों से युक्त रहता है सुरुषवती अप्सराओं से व गन्धर्व किन्नर सर्पों से भी उपशोभित रहता है ४ वापी कूप तड़ागों से व नदियों से व झरनों से भूषित है व वह दिव्य आनन्दकानन पुण्यात्मा नानाप्रकारके भावों से प्रकाशितहै ५ व किरौड़ों हंस कुन्दइन्दु के समान उज्ज्वल विमानों से समाकुल रहताहै गन्धर्वादिकों के सुन्दर गानेके कोलाहलोंसे व मेघध्वनियों से शब्दित रहता है ६ व अमरों के निनादों से सर्वत्र निनादित रहताहै व चम्पा चन्दन आम के फूल अनेक वृक्षों से अतिप्रकाशित लगताहै ७ ऐसा वह आनन्दवन उत्तमहै कि नानाजातिके पक्षी उसमें

अनेकप्रकारकी बोली बोलाकरते हैं उनके कोलाहलसे युक्त है ८ इस प्रकारसे शोभित आनन्दवन हमने सुशोभित देखा उसमें एक अति विमल सरहै व सागरके समान शोभित होता है ९ व कमलों की शुभ सुगन्धि से युक्त पुण्यजलों से पूर्ण है नाना प्रकारके जलजन्तुओं से व हंस कारण्डवादि जलपक्षियों से युक्त है १० इस प्रकार का सुन्दरसर उसवनके मध्य में विराजमान है वह देव गन्धर्वों से शोभित व मुनिसमूहों से अलंकृत रहता है ११ किन्नर नाग चारण व गन्धर्वों से अत्यन्त शोभित है हे तात ! वहांपर मैंने आश्चर्य देखा है जो कहने को समर्थ नहीं हूं १२ सुन्दरविमान और कलशों से उपशोभित है छत्रदण्ड और पताकाओं से प्रकाशित रहता है १३ सब भोगसे युक्त है किन्नर गानकरते हैं गन्धर्व अप्सराओं से शोभायमान है १४ वहांपर एक महासिद्ध बैठा है जिसकी स्तुति सब तत्त्ववेदी ऋषिलोग करते हैं रूपमें तो ऐसा अद्वितीय है कि मर्त्यलोक में कोई दूसरा वासी कहीं दिखाई ही नहीं देता १५ वह सब आभरणों की शोभासे शोभित व दिव्यमाला धारण करनेसे अलंकृत है व महारत्नों से बनी हुई एक माला उसकी छातीपर विराजती है १६ उसी सरके समीपमें स्थित एक श्रेष्ठमुखवाली स्त्री देखा कि जिसके सुवर्णकी गुटिकाओं के बीच २ में बड़ी २ मोतियों से १७ गुही हुई माला गले में विराजती है कङ्कणादि अन्य सब भूषणों से भी भूषित है दिव्यवस्त्र धारण किये व चन्दनादि सुगन्धों से अनुलेपित है वह सिद्ध तो बैठा ही था उसी प्रकार का एक और महादिव्य पुरुष विमानपर चढ़ा हुआ वहां आया जिसकी स्तुति नाना प्रकारके लोग करते थे व गीतें गाय गाय सुनाते १८ उसके संग रतिके समान रूपवती एक स्त्री भी उसी विमानपर चढ़ी हुई आई थी जिसके पयोधर व पश्चाद्भाग अति पीन थे व सब भूषणों की शोभा से उसके अङ्ग शोभित थे इस लिये सब प्रकारसे वह भी उसी के आकारकी थी १९ उन दोनों को हमने विमान पर चढ़े हुये आते देखा दोनों रूप लावण्य माधुर्यादि गुणों से व सब शोभा से युक्त थे २० विमान पर से उतरकर दोनों उस नद्या के तटपर आये व हे तात ! उन महात्मा कमलके समान

नयनवाले स्त्री पुरुषों ने उस सरमें स्नान किया २१ फिर दोनों स्त्री पुरुषों ने शस्त्रलेकर परस्पर काटकर एक दूसरे का थोड़ा थोड़ा मांस भक्षण किया जब ये दोनों खाचुके तो उसीप्रकार के दो और आये २२ प्रातःकाल में कमल के समान नेत्रवाले स्त्री पुरुषों ने रूप में वैसेही शव देखे २३ उसमें पुरुष देवों के समान था जैसा रूप उस की भार्याका था वैसेही जो इस दूसरे के सङ्ग स्त्री आई उसका था तो इन दोनों मेंकी जो स्त्री थी शस्त्र से काट काट अपने पति का मांस खानेलगी उसका मांस खाते खाते वह स्त्री बनाय रक्त से भीग गई व वैसेही फिर उस पुरुषने उस स्त्री का मांस भक्षण किया २४।२६ क्षुधासे पीड्यमान होकर उन दोनों नेभी परस्पर मांस भक्षण किया व इतना इतना मांस दोनों ने खाया जिससे दोनों तृप्त होगये २७ व उस सरका जलपीकर फिर दोनों सुखी होगये कुछ काल वहां स्थित रहकर फिर विमान पर चढ़कर चले गये २८ फिर हे तात ! दूसरे दिन हमने एक और आश्चर्य देखा कि रूपसौभाग्यसम्पन्न सुन्दर लक्षणवाली दो स्त्रियां वहां आई २९ तो उन्होंने ने भी मांस खाया व दोनों मांस भक्षणके पीछे अति दारुण शब्द करती हुई हैंसीं ३० फिर नित्यही दोनों अपने मांसोंको खावें स्नानादिककर हमारे देखतेही मांस भक्षण करें ३१ फिर एक दिन हे तात ! भयानक आकार युक्त दो स्त्रियां और आई इनके बड़े विकराल डाढ़ थे व अतिविभीषणरूपथे ३२ ये दोनों आतेही कहने लगीं कि हमको देवो हमको देवो ऐसा बार २ कहने लगीं वनमें बसतेहुये हमने ऐसे चरित्र देखे ३३ कि नित्य वे दोनों आते हैं व एक दूसरेका मांस काट २ कर भक्षण करते हैं व फिर उन दोनों के शरीर पीछेसे पूर्ण होजातेहैं नित्यही उतर कर वे दोनों और और भी हमारे देखतेहुये पूर्वोक्त सदृश चेष्टा करते हैं ३४।३५ सो तो आश्चर्य हमने देखाहै उसका कारण आपसे पूँछतेहैं कि यह सब सन्देहही के करानेवाला वृत्तान्तहै प्रसन्न चित्तसे इसके वृत्त हमसे आपकहें ३६।३७ कि जो पुरुष स्त्री समेत विमानपर चढ़कर वहां आया व दिव्यरूप धारण कियेहुये था वह कमलनयन कौनहै ३८ व वह स्त्री कौनहै जो मांस

भक्षण करती है व वे पुरुष स्त्री कौन हैं जो कि परस्पर एकदूसरे का मांस भक्षण करते ३६ व उनको इस प्रकार मांस खातेहुये देखकर जो दो स्त्रियां हँसती थीं हेतात ! वे कौन हैं हमसे कहो व जो दो स्त्रियां और आई और देवो २ कहती थीं वे कौन हैं ४० उन दोनों महाभयङ्करी स्त्रियों के भी वृत्त बताओ हेतात ! हे सुव्रत ! यह हमारा संशय तुम काटो ४१ हे महाराज ! ऐसा कहकर वह विज्वल नाम पक्षी फिर चुपहोरहा इसप्रकार तीसरे पुत्र विज्वलसे पूछे गये ४२ कुञ्जलजी च्यवनजी के सुनते २ सब वृत्तान्त कहते भये ४३ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थेच्यवनचरित्रेत्रिनवतितमोऽध्यायः

चौरनवे अध्याय ॥

दो० चौरनवे महँ निजतनय सों कुंजल कहयेह ॥

दानसुबाहु महीपसों जैमिनि जिमिसहनेह १

यह सुनकर कुञ्जल शुक अपनेपुत्र विज्वलसे बोला कि हे सुत ! सुनो हम सब कारण कहेंगे जिससे वे दोनों वैसे अपने मांसभक्षी हुये १ सर्व्वत्र शुभाशुभ कर्मही कारण होते हैं इसमें कुछभी संशय नहीं है हे पुत्र ! पुण्यकर्म से पुरुष सुख भोगता है २ व पापयुक्त कर्मसे दुःख भोगता है व सूक्ष्म कार्य्य के विचारमें शास्त्रहीकी द्वारा ज्ञान होता है यों साधारण रीति से नहीं ३ मुनिलोग शास्त्रकी द्वारा अपने २ धर्म को फिर २ विचार कर करते हैं इससे मनुष्यभी निपुण मनसे जानकर तब कर्म करनेका प्रारम्भ करते हैं ४ जिसमें उस कर्मकी पूर्णता व फल अच्छे प्रकारहों देखो इन्धन कैसाही शुष्कहो पर जब अग्निमें डालो तो उसमें सब ओर ज्वालाओंसे ५ जल निकलने लगता है जिससे वह गीला होजाता है ऐसेही हे वत्स ! जैसा अन्न जल मनुष्य खाता पीता है वैसाही उसका रूप उस परिपक्व अन्न के रसके कारण होता है इसमें कुछ संशय नहीं है जो जैसा करता है वैसा भोगता है ६ । ७ कर्मही प्रधान है जो वर्परूपसे वर्त्तमान है जैसा बीज किसान खेतमें बोता है ८ हे तात ! वैसाही फल भी भोगता है इसमें कुछ सन्देह नहीं है ऐसेही जैसा कर्म किया

जाता है वैसा ही फल भी भोगने पड़ता है ९ विना कर्म किये कोई क्षण भर भी नहीं रहसक्ता इससे कर्म ही के वशीभूत पुरुष रहता है संसार में कर्म को भागी और कर्म के सम्बन्धी बांधव हम लोग हैं १० कर्म पुरुष को सुख दुःख में प्रेरित करते हैं सोना वा चांदी जैसा रूप पाते हैं ११ तैसे ही पूर्वकर्म के वश के पीछे चलता हुआ प्राणी भी पाता है आयु, कर्म, धन, विद्या व मरण ये पांच जब प्राणी गर्भ ही में रहता है तभी नियत कर दिये जाते हैं जैसे मिट्टी का पिण्ड हाथ में लेकर कुम्हार जैसा पात्र चाहता है उससे बना लेता है १२ । १३ ऐसे ही जैसा कर्म प्राणी करते हैं उसी के अनुसार देवता मनुष्य पशुत्व पक्षित्व आदि मिलते हैं १४ व सर्पादि योनि को स्थावर भाव को भी प्राणी अपने ही कर्मों से जाते हैं वस वही वह भोगता है जिसने जो किया है १५ वस अपने आप किया हुआ सुख व अपने ही आप किया दुःख प्राणी भोगता है गर्भ की शय्या को ग्रहण कर पूर्व देहिक भोगता है १६ पूर्वदेह के किये हुए कर्म के फल को छोड़कर प्राणी और कुछ भी नहीं भोगसक्ता जैसा जिसने किया है वही भोगेगा पूर्वजन्म के किये हुये कर्म के विपरीत कोई भी पुरुष बलसे वा बुद्धि से नहीं करसक्ता १७ सब अपने ही किये हुये सुख वा दुःख लोग भोगते हैं हेतुओं से व कारणों से जो अन्यथा करने लगते हैं वे आप अहङ्कार से बाधित हो जाते हैं १८ जैसे सहस्रों धेनुओं के बीच में खड़ी हुई अपनी माता ही को बछड़ा चीन्हकर पहुँचता है ऐसे ही शुभ वा अशुभ कर्म करनेवाले को पहिचानकर उसी के पीछे लगता है १९ विना भोग किये कर्म का नाश नहीं होसक्ता इससे पूर्व जन्म के किये हुये कर्म बन्धन से बँधा हुआ पुरुष उसके विपरीत कैसे करसक्ता है २० शीघ्रता के साथ दौड़ते हुये के साथ ही साथ कर्म भी दौड़ता है व उसके बैठ जाने पर कर्म भी बैठ जाता है जैसा कि उसने पूर्व में किया है २१ खड़े हो जाने पर खड़ा हो जाता है व चलते हुये के पीछे २ चलने लगता है कर्म करते हुये के साथ कर्म करने लगता है जैसे छाया सब अनुकरण करती है वैसे ही कर्म भी २२ जैसे छाया व घाम का नित्य परस्पर सम्बन्ध है ऐसे ही कर्म

का सम्बन्ध इस शरीरसे होता है उपसर्ग विषय हैं उपसर्ग वृद्धावस्था-
दि हैं २३ ये सब प्रथम कर्मसे पीड़ित पुरुषको पीछे पीड़ित करते
हैं जिसको जहां दुःख वा सुख भोगना है २४ उसे वहां कर्म बलसे
रस्सी से बांधकर जैसे तैसे पहुँचा देता है ऐसा प्राणियों के सुखदुःखकी
प्राप्तिके उपाय कहे हैं २५ वस इसके अन्यथा नहीं होसक्ता सोते जागते
चलते फिरते कर्मही के अनुसार सब होता है जो भाग्य के विपरीत
किया चाहता है वह आप मारा जाता है २६ जो वस्तु नष्ट होने पर
नहीं होती उसकी रक्षा शस्त्र, विष, दुर्गम स्थानों से भी होती है जैसे
कि पृथ्वी में वृक्ष गुल्म तृणादिकों के बीजोंकी रक्षारहती है २७ ऐसेही
शरीरमें कर्म रहते हैं समयपाकर उत्पन्न हो जाते हैं जैसे तैलके ज्वय
होने पर दीपक बुझजाता है २८ ऐसेही कर्मके ज्वयहोने से शरीर
नष्ट होजाता है व कर्मही ज्वयहोनेपर तत्त्वज्ञानी लोग मृत्युका होना
भी बताते हैं २९ व मृत्युके कारण विविधप्रकार के रोगोंको बताते
हैं इससे मृत्युआदिके होने में कर्महीकी प्रधानता है ३० जो कर्म
पूर्वजन्म में किया जाता है वह इसजन्म में भोगा जाता है हे तात !
जो प्रश्न तुमने हमसे इस समय पूछा है ३१ इस अर्थ में हमने यह
तुमसे कहा कि वे दोनों अपने पूर्वजन्म के कर्मभोगते हैं जिनका
दारुण कर्म तुमने आनन्दवन में देखा है ३२ अब उन दोनोंके पू-
र्वजन्म के कर्म कहते हैं हे वत्स ! चित्तलगाकर सुनो हे तात !
कर्मभूमि यही है अन्य भूमियां भोगके अर्थ हैं ३३ जोकि नागा-
दिकों के लोक हैं उनमें जाकर यहां के कियेहुये पुण्यदानादिकों के
फल प्राणी वहां भोगते हैं कुछ कर्म नहीं करते सूतजी शौनकादि-
कों से बोले कि चौलदेश में महाप्राज्ञ रूपवान् गुणवान् व धीर
एकसुबाहु नाम राजा हुआ उसके समान पृथ्वीपर दूसरा और कोई
राजा नहीं है वह राजा विष्णुजी का महाभक्त महाप्राज्ञ वैष्णवों का
अतिप्रिय करनेवाला ३४ । ३५ व मन वचन कर्म तीनों प्रकार के
कर्मोंसे श्रीमद्भुवनेश्वरजी का ध्यान करता था व अश्वमेधादिक सब
यज्ञ उस राजसत्तम ने किये थे ३६ उस राजाके पुरोहित जैमिनि
नाम ब्राह्मणने राजा को बुलाकर यह वचन कहा ३७ कि

हे राजन् ! सुन्दर २ दान देते रहो जिनसे सुख भोगने को मिले दातालोकों को तरता है व फिर मृतक होकर जन्म नहीं लेता ३८ व दान से सुख पाता है और निरन्तर यशभी पाता है व दानही से मनुष्यों के बीचमें अतुलकीर्ति होती है ३९ व जब तक दाता की कीर्ति मर्त्यलोक में बनी रहती है तब तक कर्ता स्वर्ग में स्थित रहता है इसीसे दान दुष्कर होता है देने में नहीं समर्थ होता है ४० इससे सब प्रयत्नों से मनुष्यों को सदा दान देना चाहिये यह सुन राजा सुबाहु बोला कि हे द्विजोत्तम ! दान व तप दोनों में कौन कर्म सुदुष्कर है ४१ व किसका अधिक फल है सो हमसे कहो तब जैमिनि बोले कि पृथ्वी पर दान करना थोड़ा भी अतिदुष्करतर होता है क्योंकि हे राजन् ! यह बात प्रत्यक्ष लोकमें रहनेवालों में दिखाई देती है कि अपने प्रिय प्राणों को छोड़कर लोभसे मोहित लोग धन के अर्थ ४२। ४३ समुद्र में व अग्नि में भी पैठ जाते हैं व अपनी जीविका के लोभ से बहुत लोग नीचवृत्ति कर लेते हैं ४४ व इसी प्रकार बहुतसे ऐसे कर्म करते हैं जिसमें बहुत क्लेशवाली अनेक जीवों की हिंसा होती है व बहुत लोग खेती करते हैं ऐसे २ दुःखोंसे इकट्ठा किया हुआ धन प्राणोंसे भी अधिक प्रियतर होता है ४५ इससे हे पुरुषव्याघ्र ! धन देना बड़ा दुष्कर कर्म है पर न्यायसे इकट्ठा किया हुआ धन ४६ सो भी श्रद्धापूर्वक देना बहुत ही कठिनतर है सो भी सत्पात्र को देना उससे भी अधिक दुष्कर है क्योंकि धर्मसुता श्रद्धादेवी पवित्र करती है व विश्वभर को तारती है ४७ सबको उत्पन्न करती है व संसारसागर से तारती है व सब पदार्थ श्रद्धा करनेवाले को देती है महात्मा लोग श्रद्धाही से धर्मका साधन करते हैं धनोंसे नहीं ४८ क्योंकि मुनियों के पास एक कौड़ीका भी धन नहीं था पर श्रद्धा धर्मके बलसे स्वर्ग को चले गये हे नृपोत्तम ! नाना प्रकार के भेदोंसे दान अनेक हैं ४९ परन्तु अन्नदान से पर और कोई भी दान प्राणियों को गति देनेवाला नहीं है इससे जलसहित अन्न देना चाहिये ५० मधुर पुण्यकारी वचनसे युक्त अन्नसे अधिक कोई दान न यहीं के लिये उपयोगी है न परलोकही के लिये ५१ न तारनेही के लिये

अन्य कोई दान है न हित व सुख सम्पत्ति के लिये जो निर्मल वित्तसे व श्रद्धासे विधिपूर्वक संपात्र को अन्न दिया जाता है ५२ उस एक अन्न देने का फल पुरुष भोगता है भोजन करने के समय उन कवलोंमें से एक कवल दे देना चाहिये व सूठी भर पसर भर जितनाही हो सके अन्न देता रहे इसमें सन्देह नहीं है ५३ उसका वह एक कवल वा सूठी पसर भर अन्न अक्षय हो जाता है व दाजका महाफल होता है व जो न पसर भर हो सके न सूठी भर हो सके ५४ तो किसी अमावास्या संक्रान्ति पूर्णमासी आदि पर्यमें श्रद्धापूर्वक एक ब्राह्मण को भक्तिसे भोजन करा दे तो हे राजन् ! एक ही प्रदान अन्न के दान से जन्मान्तरमें नित्य अन्न को भोजन करता है ५५। ५६ क्योंकि पूर्व जन्ममें भक्तिसे जिसने थोड़ा भी अन्न दान किया है जन्मान्तरको पाकर नित्य वह प्राणी यथेष्ट अन्न भोजन करता है ५७ व जो कोई नित्य ब्राह्मणोंको अन्न दान करते हैं वे अन्न देनेवाले मनुष्य जन्मान्तरमें सीठे स्वादुयुक्त अन्न भोजन करनेको पाते हैं ५८ ॥

चौ० वेदपाशगामी ऋषिलोगा । अन्न दान कहँ कहँ सुभोगा ॥
प्राणरूप है अन्न न शंका । अमृतोद्भव यह अन्न अनंका ॥
अन्न दान जिन कीन कदापी । प्राण दान तिन कीन अपायी ॥
यासों अन्न दान भूपाला । करहु यत्नसों होहु कृपाल ॥
इमिसुनि जैमिनि वचन महीना । पुनि पूँछाहु सुनि सों कुलदीपा ॥
ज्ञानी परम महात्मा मुनिसों । भली भाँति नृपनिज चित गुनिसों ५९। ६१

इति श्रीवाचस्पतिकापुराणे द्वितीयेऽध्यायेऽष्टमोऽध्यायः ॥

गुरुतीर्थनाहात्म्येऽथ चरित्रे चतुर्नवतितमोऽध्यायः ६४ ॥

पञ्चानवे अध्याय ॥

दो० पञ्चानवयें महुँ कहे स्वर्ग चिह्न अरु दान ॥

जिन्हें सुनत नरवरनको होत वली विधि ज्ञान १

राजा सुबाहु बोले कि हे द्विजवरन ! अब हमसे स्वर्ग के गुण वर्णन करो तब ये सब दान स्वर्गाधिक हम करेंगे १ जैमिनि बोले कि स्वर्ग में विधि अन्नकारके दिव्य नन्दनादिक सब उद्यान रत्न नोहे

काम पूरणकरनेवाले व पुण्यदायक हैं २ सब कालों में फरनेवाले वृक्षों से सब ओरसे शोभित हैं व अप्सराओं से सेवित दिव्यविमान वहां हैं ३ व सब वहां के प्रदेश समान और इच्छा से सर्वत्र जानेवाले हैं व तरुण सूर्य के किरणों के समान मोतियों की झालरें लगी हैं ४ व चन्द्रमा के मण्डल के समान उज्ज्वल सुवर्ण के पर्यङ्कों पर बिछी हुई दिव्य शय्यायें सुख देनेवाली वहां विद्यमान हैं वे अन्य भी सब कामनाओं से समृद्ध व सब दुःखों से विवर्जित हैं ५ व वहां सब पुण्यात्मा लोग सुखसे विचरा करते हैं जैसे पृथ्वी में विचरते हैं वहां न नास्तिक लोग जाते हैं न चोर न अजितेन्द्रिय पुरुष ६ न क्रूरस्वभाव वाले न चुगुली करनेवाले न कृतघ्न लोग न मानी लोग जाते हैं व सत्य बोलनेवाले तप में स्थित दयावान् शूरवीर क्षमा करनेवाले लोग वहां निवास करते हैं ७ यज्ञ करनेवाले और जो पुरुष दान देने का स्वभाव रखते हैं वे सब वहीं जाते हैं वहां रोग, जरा, मृत्यु, शोक, जाड़ा, घाम नहीं हैं ८ वहां किसीको क्षुधा पिपासा तो लगती ही नहीं ग्लानि नहीं विद्यमान होती ये व और भी स्वर्ग के बहुत से गुण हैं हे महाराज ! ९ व वहां जो दोष हैं उनको भी एकाग्रचित्त होकर इस समय सुनो जो कुछ शुभकर्म प्राणी यहां करता है उसी का फल वहां भोगता है १० वहां फिर कुछ कर नहीं सक्ता यही बड़ा भारी दोष है व पराई श्रीशोभा देखकर असन्तोष बनारहता है यह भी दोष है ११ फिर जैसे ही उनका दान पुण्य का फल चुक जाता है कि एकाएकी वहां से पतन हो जाता है यहां जो कर्म प्राणी करता है उसका फल वहीं भोगता है १२ हे राजन् ! कर्म भूमि यही लोक है व फलभूमि स्वर्गभूमि है यह सुन राजा सुबाहु ने फिर पूछा कि स्वर्ग में तो तुमने इतने दोष बताये १३ अब कोई निर्दोष स्थान हों तो बताइये जैमिनिजी बोले कि निर्दोष तो अन्य कोई लोक नहीं है ब्रह्मा के लोक में दोष है १४ इसी से बुद्धिमान् स्वर्ग की प्राप्तिकी इच्छा नहीं करते हैं ब्रह्मा के लोक से ऊंचे विष्णुजी का परमपद है १५ वह शुभ सनातन ज्योति परब्रह्म कहाता है वहां मूढ़ विषयी पुरुष नहीं जाते १६ व न दम्भी भययुक्त द्रोही

पापी लोभी मोही क्रोधीलोग कभी वहां जाते हैं व जो ममताहीन
निरहंकारी निर्द्वन्द्व संयतेन्द्रिय होते १७ व जो ध्यानयोग में रत होते
हैं वे साधुलोग वहां जाते हैं जो तुमने हमसे पूछा सो सब हमने कहा
१८ स्वर्ग के गुणदोष सुनकर राजा सुबाहु कहनेवालों में श्रेष्ठ
महात्मा जैमिनिजी से फिर बोले कि हे मुनिराज ! हमारे स्वर्ग जाने
की इच्छा नहीं है इससे हम वहां न जायेंगे क्योंकि वहां से तो फिर
नीचे को गिरना पड़ता है वह कर्म नहीं हम कर सकते १९।२० इससे
हे महाभाग ! केवल दानही एक कर्म हम न करेंगे क्योंकि उसके
करने से स्वर्गवास होता है फिर वहां से पातभी नीचे को होता है २१
ऐसा कहकर धर्मात्मा राजा सुबाहुने फिर कहा कि ध्यान योग से
हम श्रीविष्णु भगवान् की पूजा करेंगे २२ जिससे कि प्रलय काल
में भी दाहतेरहित उस श्रीविष्णुपदको जायेंगे तब जैमिनिजी फिर
बोले कि हे महाराज ! तुमने सत्य कहा व सब कल्याणसे ही युक्त कहा
२३ इसीसे सब धर्मशील राजालोग श्रीविष्णुकी पूजा महायज्ञों से
करते हैं जिनमें सब प्रकारके दान देते हैं २४ व यज्ञों में सबसे प्रथम
अन्नदान करते हैं फिर वस्त्र ताम्बूल देते हैं फिर कांचन भूमिदान व
गोदान करते हैं २५ इसीसे सुन्दर यज्ञ करने से प्राणी श्रीवैष्णव
धाम को जाते हैं हे राजन् ! दानसे सब तृप्त होते हैं व सन्तुष्ट
होजाते हैं २६ तपस्वी महात्मा नित्यही पूजन करते हैं भिक्षा मांग
कर अपने स्थानको आते हैं २७ फिर भिक्षाके द्रव्य के भागकरते
हैं ब्राह्मण को एक भाग गऊ के घ्रासके समान देते हैं २८ और
तपस्वी मनुष्य परोसियोंको भी एक भाग देते हैं तिस अन्नके दान
से मनुष्यफलको भोगते हैं २९ भूख और प्याससे हीन विष्णुलोक
में जाते हैं हे राजेन्द्र ! तिससे आप भी न्याय से इकट्ठा किया धन
दीजिये ३० दानसे ज्ञान और ज्ञानसे सिद्धिको प्राप्त होगे ॥
चौ० जो नश्यद्वाख्यानपुराण । सुनिहिपदिहिगाइहि करिमाना ॥
सकल पाप तजि हरिपुरजाइहि । नाना सुख तहुँ सो जनपाइहि ३१।३२

इति श्रीपाद्मेमहापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने

शुद्धतीर्थव्यवनचरित्रे पंचनवतितमोऽध्यायः ६५ ॥

छानवे अध्याय ॥

दो० छीयानवर्यें महुँ नरक स्वर्ग जातकरि जोय ॥

पुरुषस्वर्ह वर्णन कियो आनकह्यो नहिँ कोय १

राजा सुबाहुजी ने अपने पुरोहित जैमिनिजीसे फिर पूछा कि कैसे कर्मों के करने से मरनेपर मनुष्य नरक को जाते हैं व स्वर्ग को कैसे कर्मोंके करने से मरनेपर जाते हैं यह हमसे आप कहने के योग्य हैं १ जैमिनिजी बोले कि जो ब्राह्मणलोग पुण्यकारी ब्राह्मणों के कर्म छोड़कर लोभसे मोहित होकर कुकर्मोंके करने से जीविका करते हैं वेभी निश्चय नरकगामी होते हैं २ व जो पुरुष नास्तिक भिन्न मर्यादवाले काम विषयमें उन्मुख दम्भ करनेवाले कृतघ्नहैं वेभी निश्चय नरकगामी होते हैं ३ ब्राह्मणों से धन देने को सुनाकर जे धन नहीं देते हैं और ब्राह्मणोंकी द्रव्य के हरनेवाले हैं वेभी मनुष्य नरकगामी हैं ४ व जो पुरुष चुगुली करते हैं व जो मानी और मिथ्यावादी होते हैं व अतिअनर्थ वचन सदा बोला करते हैं वेभी मनुष्य निश्चय नरकगामी होते हैं ५ जो लोग परधन हरलेते हैं व पराये दूषणों को औरोंसे कहाकरते हैं व पराई स्त्रीके सङ्ग भोगकरते हैं वे भी मनुष्य निश्चय नरकगामी होते हैं ६ व जो मनुष्य प्राणियों के मारडालने में सदा निरत रहते हैं व पराई निन्दा में रत हैं वेभी निश्चय नरकगामी होते हैं ७ कूप तड़ाग पौसरा व बड़े बड़े सरों के विदारण करने व बिगाड़नेवाले मनुष्य निश्चय नरकगामी होते हैं ८ जो लोग अपने स्त्री पुत्र भृत्यवर्गों और अतिथियों को शिक्षादेने को छोड़ रूथा उनके विपरीत करते हैं व पितरों देवताओं की पूजा उत्सवों के कारण नहीं करते वेभी मनुष्य नरकगामी होते हैं ९ जो कोई संन्यासी वैष्णवादि विरक्तों को दूषितकरते हैं व अन्य आश्रमों को भी दूषते हैं व अपने मित्रोंको दूषते हैं वे भी निश्चय नरकगामी होते हैं १० व जो लोग आद्यपुरुष ईशान सब लोकों के महेश्वर श्रीविष्णु भगवान्जीकी चिन्तना नहीं करते वे भी निश्चय नरकगामी होते हैं ११ ब्राह्मण, यज्ञ, कन्या, सुहृद्,

साधुलोग व माता पिता आदि गुरुओं को जो लोग दूषते हैं वे नर-
कगामी होते हैं १२ काष्ठों से, लोहों की शलाकाओं से, शून्य पत्थरों से
वा कांटों से जो लोग मार्ग रूँध देते हैं वे निश्चय नरकगामी होते
हैं १३ जो लोग किसी भी प्राणी का विश्वास नहीं मानते व कामसे
पीड़ित हैं और सब प्राणियों के संग कुटिलता करते हैं वे भी निश्चय
नरकगामी होते हैं १४ जीविका से हीन भोजन करने के लिये आ-
ये हुये ब्राह्मणों को जो निषेध करते हैं वे भी निश्चय नरकगामी होते
हैं १५ व जो पुरुष किसी के खेत जीविका व गृह का छेदन करते हैं व
प्रीति का छेदन करते हैं और किसी की लगी हुई आशा का छेदन
करते हैं वे भी निश्चय नरकगामी होते हैं १६ व शस्त्रों के बनाने
वाले व बाणों के बनाने वाले व धन्वाओं के भी बनाने वाले व हे राजेन्द्र !
इन शस्त्रादिकों के बेचने वाले भी नरकगामी होते हैं १७ अनाथ व्या-
कुल दीन रोगी व वृद्ध को देखकर जिन मूर्खों को दया नहीं आती वे
भी निश्चय नरकगामी होते हैं १८ जो लोग किसी व्रतादिके करने
का नियम कर लेते व वे अजितेन्द्रिय पुरुष चंचलता से पीछे को छोड़
देते हैं व नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं वे भी निश्चय नरकगामी होते हैं १९ हे
राजन् ! इतने हमने नरकगामी मनुष्य कहे अब जो स्वर्गलोक को
जाते हैं उनको कहते हैं सुनो २० सत्यसे तपसे क्षान्तिसे दानसे व
अध्ययन से जो लोग धर्म करते हैं वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं
२१ व जो मनुष्य होम निरत होते ध्यान देवताओं की पूजामें तत्पर
होते हैं दान करते हैं वे महात्मा लोग स्वर्गगामी होते हैं २२ जो
पवित्र होकर पवित्र देशमें बैठकर वासुदेवमें परायण हो विष्णु को प-
ढ़ते व गाते हैं वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं २३ जो मनुष्य माता
पिता की सदा आदर समेत सेवा करते हैं दिन में कभी सोते नहीं वे
मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं २४ जो मनुष्य सब हिंसासे निवृत्त साधु
के संगी सब के हितमें युक्त हैं वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं २५ जो
मनुष्य सब लोभों से निवृत्त रहते हैं सब की सहते हैं व सब किसी के
आश्रयी रहते वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं २६ व हे भारत ! शुश्रू-
षाओं से और तपस्याओं से जो गुरुओं को मानते हैं व दास किसी

का लेते नहीं वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं २७ सहस्रसे व्याप्त सहस्रके देनेवाले और सहस्रों की रक्षा करनेवाले मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं २८ भय पाप घाम शोक दारिद्र्य व व्याधिसे व्याकुल पुरुषोंको जो लोग नहीं छोड़ते वे स्वर्गगामी होते हैं २९ हे भारत ! जो अतिरूपवान् होकर व युवावस्था को पाकर भी जितेन्द्रिय और धीर रहते हैं वे नर स्वर्गगामी होते हैं ३० व हे भारत ! सुवर्णदान करनेवाले गोदान करनेवाले व भूमि देनेवाले व अन्न वस्त्र देनेवाले पुरुष स्वर्गगामी होते हैं ३१ व जो पुरुष मांगने से हर्षित होते हैं व दानदेकर फिर प्रियवचन कहते हैं व दान के फलकी इच्छा नहीं करते वे स्वर्गगामी होते हैं ३२ हे परन्तप ! जो पुरुष मन्दिर धान्य अपने आप उत्पन्न करके दान करते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ३३ व जो लोग अपने शत्रुओंके भी दोष कभी नहीं कहते व गुणोंका कीर्तन करते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ३४ व जो नर पराई लक्ष्मीदेखकर व्यथित नहीं होते न मत्सर करते हैं व हर्षितहो प्रशंसाकरते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ३५ व जो महात्मा पुरुष प्रवृत्तिमार्ग में व निवृत्तिमार्ग में भी वेद व शास्त्रहीके कहने के अनुसार कर्मकरते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ३६ जो लोग छल करनेके अभ्यासको जानतेहीनहीं न अप्रिय बोलनाजानते हैं व सदा प्रियवचन बोलनेहीको मुख्यज्ञान समझते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ३७ जो पुरुष क्षुधा तृष्णा श्रमसे पीड़ित होनेपर भी नामभाग करते हैं व हंतकारके करनेवाले हैं वे नर स्वर्गगामी होते हैं ३८ व वापी कूप तड़ाग पौसरा गृह और पुष्पवाटिका को बनवाते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ३९ जो पुरुष असत्य बोलनेवालों के विषय में भी सत्यही बोलते हैं व सरलता से हीनों के संगभी सरलता रखते हैं व जो शत्रुओं के संगभी हितही करते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ४० व चाहे जिस किसी कुल में उत्पन्न हुयेहों पर उनके सैकड़ों पुत्रहों व सौ वर्षतक जीवें व सब के ऊपर दयाकरतेहैं व सदाचार करतेहैं वे स्वर्गगामी होते हैं ४१ व जो नर दान देनेसे सब दिनों को सफल करते हैं व नित्यही व्रत ग्रहण करते हैं वे स्वर्ग-

गामी होते हैं ४२ जो मनुष्य गालीदेनेवालेको व स्तुति करने वाले को तुल्यदृष्टि से देखते हैं व आप सदा शान्तात्मा व जितात्मा बने रहते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ४३ जो लोग कष्टमें पड़े हुये ब्राह्मणोंकी व स्त्रियोंकी रक्षा करते हैं और नौकरोंकी भी रक्षा करते हैं वे पुरुष स्वर्गगामी होते हैं ४४ गंगाजी के तटपर पुष्करतीर्थ में व विशेष करके गयामें जो लोग पितरोंके लिये पिण्डदेते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ४५ जो नर संयम करके इन्द्रियों के वशमें नहीं पड़ते व लोभ भय क्रोध कभी नहीं करते वे स्वर्गगामी होते हैं ४६ जो पुरुष अपने शरीर में काटते हुये जुआं खटमल डांसआदि जन्तुओं की रक्षा अपने पुत्रके समान करते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ४७ जो लोग विधिपूर्वक ज्ञानका संचय करते रहते हैं व सुख दुःखादि द्वन्द्वों को सहते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ४८ जो पवित्र पुरुष कर्म मन व वचन से पराई स्त्रीके संग भोग नहीं करते व परित्रचित रहते हैं वे सतोगुणी मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं ४९ जो लोग निन्दित कर्म करते ही नहीं जो कुछ करते हैं वेदशास्त्र पुराणसे विहित करते हैं व अपनी शक्तिको जानते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं ५० चौ० यह हम तुम सनसब नृपगावा । अरु निश्चय करि सकल सुनावा ॥ दुर्गति सुगतिसदानरपावत । निज कर्म न सो निज मन भावत ५१ चौपैया ॥ जो नर प्रतिकूला नहि अनुकूल करत आन के संग । सो नर कहि जाई ढोल बजाई यह नहि मृषा प्रसंग ॥ जो करु सब केरो सुहित घनेरो निज जीवन भर प्राणी । सो सब सुख पावत निज मन भावत सत्य सत्य यह वाणी ५२ ॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने गुरुतीर्थ
माहात्म्ये व्यवनचरित्रेषु त्रितमोऽध्यायः ९६ ॥

सत्तानवे अध्याय ॥

दो० सत्तानवयें महँ कह्यो हरिपुरगमन निपात ॥

नृप सुबाहु वमदेव मुनि करि संवाद कुवात १

कुञ्जल अपने तीसरे पुत्र विज्वल से बोला कि राजा सुबाहु

इस प्रकार जैमिनि से अधर्म व धर्मकानिर्णय सुनकर फिर उन मुनिसे बोले कि १ हे द्विजोत्तम ! हम धर्म करेंगे पुण्यकरेंगे जग-
द्योनि वासुदेव भगवान्की सदैव पूजाकरेंगे २ तब सब कामों से
पूजित राजा आनन्दसे होम करने व जप करनेसे मधुसूदनजी को
पूजते भये यज्ञकर तप करके विष्णुभगवान्के लोक को चलेगये
परन्तु वहां पहुँचने पर उन्होंने देवदेव श्रीविष्णुभगवान् को न
देखा ३ । ४ व बड़ी भारी जीवके पीड़ा करनेवाली क्षुधा और तृ-
ष्णा राजाको वहां लगी ५ व राजाकी स्त्री भी वहां संग गई दोनों
राजा रानी तीव्र क्षुधा पिपासासे पीड़ितहुये व जब हृषीकेश भग-
वान्जी के दर्शन न हुये तो बड़े दुःखसे युक्त हुआ ६ सूतजी शौन-
कादिकों से बोले कि राजा स्त्री समेत इसप्रकार क्षुधा से जब
व्याकुल हुआ व अनेक पीड़ाओंसे व्याकुलहुआ ७ व मारे भूख के
इधर उधर घूमने दौड़नेलगा यद्यपि सब आभरणों की शोभासे
युक्त था व सुगन्धित चन्दनादि लगाये था वस्त्रधारेथा ८ पुष्पोंकी माला
धारण किये हारकुंडल कंकणोंसे शोभित था व रत्नोंकी दीप्तिसे शो-
भित था ९ इस प्रकार दुःखित राजा पाठकों से स्तुति को प्राप्त
दुःख शोकसे युक्त होकर अपनी स्त्री से बोला १० कि हे सुशोभने !
तुम्हारे साथ हम विष्णुलोक को प्राप्तहुये ऋषियोंसे स्तुति को प्राप्त
विमानपर चढ़कर आये ११ किस कर्म से यह क्षुधा अत्यंत बड़ी है
और विष्णुलोक को प्राप्त होकर मधुसूदनजी को नहीं देखा १२ हे
भद्रे ! सो क्या कारण है जो बड़े फलको हम नहीं भोगते अपने कर्म
से यह दुःख वर्तमान हुआ है १३ रानी इस प्रकार राजाके वाक्य
सुनकर उनसे यह बोली १४ कि हे राजन् ! आपने सत्य कहा
धर्मका फल नहीं है वेदशास्त्र और पुराणोंमें जे ब्राह्मणलोग पढ़ते हैं १५
कि यहा आनेपर दुःखशोक नहीं होता सब दोषों से प्राणी छूटजा-
ता है जैसेही श्रीविष्णु चक्रधारी भगवान्जी के नामोंका उच्चारण
पुरुष करता है १६ कि पुण्यात्मा महाभाग होजाता है व इसी से
सब महात्मा लोग सदा जनार्दन भगवान् का ध्यान करते रहते हैं व
इसी से तुमने भी देवदेव शंख चक्र गदा धारण कियेहुये श्रीहरिकी

मैं श्रेष्ठ राजा से वामदेवजी बोले ३२ । ३३ कि हे राजेन्द्र ! तुमको हम दिव्य ज्ञान से विष्णुके धर्म जाननेवाले व श्रीविष्णु के भक्त चोलदेशके राजा जानते हैं ३४ इस अपनी ताक्ष्यानाम भार्यासमेत कुशलसहित तो आये राजा बोला कि हे विप्र ! हां हम निरामय हो इस विष्णुलोक में आये ३५ क्योंकि हमने परमभक्तिसे देवदेव जनार्दन भक्तिसे प्रसन्न जगन्नाथजी की आराधना की है पर यहां आनेपर सुरेश्वर देवदेव कमलापति के दर्शन हमको क्यों नहीं होते व हे तात ! हमको क्षुधा व अत्यन्त घोर तृष्णा बहुत बाधित कर रही है ३६ । ३७ उन दोनों से शान्तिको नहीं पाते न सुख पाते हैं हे मुनिसत्तम ! यह दुःख का कारण हमारे उत्पन्न हुआ है ३८ इसका कारण प्रसन्नतासे सुमुख होकर तुम हमसे कहो ३९ वामदेवमुनि बोले कि हे राजेन्द्र ! तुम श्रीकृष्णदेव के भक्त सदैव हो यद्यपि तुमने परमभक्तिसे मधुसूदन भगवान् की आराधना की है व भक्तिके उपचारों से स्नानादिक चंदन पुष्पादिकों से पूजा की है ४० परन्तु सब जगतों के पति श्रीविष्णुजीको नैवेद्य फलोंसे तो तुमने कभी नहीं दी व न कभी दशमीतिथि में तुमने एकभक्त व्रतकिया व न उस दिन ब्राह्मणको अच्छा भोजन दिया एकादशीके दिन तुमने भोजन नहीं किया ४१ ४२ विष्णुको उद्देशकर तुमने ब्राह्मणको भोजन नहीं दिया अन्न सदैव अमृतरूपसे पृथ्वी में स्थित है ४३ किसी ब्राह्मणको कभी तुमने थोड़ा भी अन्नदान किया अन्नदान विशेषकर तुमने किसीको कभी दिया ही नहीं हे महाराज ! पृथ्वीपर जितनी ओषधियां उत्पन्न होती हैं उन ओषधियों के नाना भेद हैं हमसे सब सुनो ४४ कडुये, तीते, कसौले, मीठे, खट्टे व खारी छः प्रकारके रस होते हैं ये सब हींग आदि सामग्रियों के डालनेसे नानारूप होजाते हैं ४५ व सब अन्न अमृतरूप होकर पुष्टि करनेके हेतु होते हैं इससे सब अन्नोका अच्छे प्रकार संस्कार करके औषध व्यंजनयुक्त ४६ विष्णुरूप सब देवताओंको लोग देते हैं व विष्णुरूपी पितरोंको भी ब्राह्मणों के हाथोंपर धराकर अन्नही दियाजाता है ४७ फिर अतिथियोंको देकर घरवाले परिवारोंको दियाजाता है फिर उसके पीछे आप भोजन करता है

जैसाकरे वैसा फलभोगे ६२ पूर्वसमय देवता पितर व ब्राह्मणों को तुमने कभी भीठा अन्न जल सुन्दर मन से नहीं दिया ६३ जो सुन्दर मीठे स्वादुयुक्त अन्न पान होते थे तुम आप खालेते थे कब तुमने किसी को कुछ दिया ६४ वस अमृतसदृश अन्नों से केवल तुमने अपना शरीरही पुष्ट किया है जिससे कि तुमने अपने शरीरही का पालन पोषण किया है इससे अब तुमको क्षुधालगरही है ६५ हे राजन् ! मनुष्यों के सुख दुःख जन्म मृत्यु का कारण कर्मही है इससे तिस कर्म के फलको भोग करो ६६ पूर्वकालमें महात्मा अपने कर्म से स्वर्गको प्राप्त हुये हैं फिर कर्म के नाश होने से पृथ्वी में प्राप्त होगये ६७ नल भगीरथ विश्वामित्र युधिष्ठिर कर्मही से अपने काल से स्वर्गको प्राप्त हुये हैं ६८ भाग्यही पुराना कर्म है तिसी से दुःख और सुखको प्राप्त होता है हे राजन् ! तिसके उल्लंघन करने में कौन ईश्वर समर्थ है ६९ हे नृपश्रेष्ठ ! अब तिसी से स्वर्ग में प्राप्तभी तुम्हारे भूख और प्यास से उत्पन्न वेग है तिसी से दुष्ट तुम्हारा कर्म है ७० हे नृपसत्तम ! जो तुमको भूखका प्रतीकार अभीष्ट हो तो जाकर आनन्दवन में स्थित अपनी देह को भोगो ७१ तुम्हारी यह महारानी भूख से अत्यन्त दुर्बल दिखाई देती है यह सुन राजा सुबाहु बोला कि भला हम यहां से पतित होकर कितने कालतक अपनी स्त्री समेत मर्त्यलोक में रहेंगे ७२ व कब हमारे ऊपर भगवान् का अनुग्रह होगा हे महाभाग ! यह हम से कहो हे मुनिसत्तम ! किस द्रव्य के दानसे क्या पुण्यहोता है ७३ हे महाप्राज्ञ ! जो इससमय प्रसन्न हो तो कहो वामदेवजी बोले कि हे महामते ! अन्नदान से महासुख जलदान देने में है ७४ वे मनुष्य स्वर्गही भोगते हैं कभी पापों से पीड़ित नहीं होते जो मनुष्य कभी दाननहीं देते ७५ वे सबभी मरण के समय अवश्य देते हैं पहिलेही से अन्न जलदान देना योग्य है ७६ व छतुरी जूता खराऊँ सुन्दर लोटा पृथ्वी सोना वधेनु ये आठ दान जो दे ७७ स्वर्ग में फिर उसे क्षुधा तृष्णा नहीं लगती सो सुन्दर अन्नदान करनेसे तो क्षुधा नहीं लगती वह तृप्तियुक्त रहता है ७८ व जलदान करने से तीव्र तृष्णा फिर उसमें नहीं लगती सदैव तृप्त रहता है

खड़ाऊं व छत्रदान करने से ७९ वहां छाया पाताहै व जूता देने से वाहन वहां मिलताहै जूताके दान सेभी वाहनही पाताहै और भी कहते हैं ८० व भूमिदान करने से सब कामों को प्राणी पाता है व हे महाराज ! गोदान करने से पुरुष सदैव रसों से पुष्ट होता है ८१ व सबसुख भोगताहुआ स्वर्गलोकमें निवास करताहै व गोदानकरने से दाता अच्छे प्रकार वहीं तृप्तहोताहै इसमें कुछभी संदेह नहीं है ८२ व गोदानहीके करने से पुरुष नीरोग रहता है सुखयुक्त संतुष्ट और धनवान् होता है व सुवर्ण दान करने से प्राणी के देहका रंग व रूप बहुत अच्छा होजाता है इस में संदेह नहीं है ८३ व श्रीमान् रूपवान् दानी और रत्नभोक्ता वह प्राणी होताहै व मृत्युकाल में भी जो कोई तिलदान करताहै ८४ वह सब भोगों का पति होकर विष्णुलोक को जाता है इसरीति से दान विशेष करने से परम सुख यह प्राणी पाताहै ८५ गोदान भूमिदान अन्न जलदान हे राजन् ! जब तुम जीते थे कभी ब्राह्मणों को नहीं दिया ८६ फिर मरणके समयमेंभी नहीं दिया इसीसे तुमको यहां क्षुधा लगतीहै हे तात ! कर्म के वशीभूत यह कारण तुमसे हमने वर्णन किया ८७ जैसा कर्म तुमने कियाहै वैसाही फलभोगो राजा सुबाहु बोला कि हे मुनिसत्तम ! अब हमारी क्षुधाकी शान्ति कैसेहो ८८ इसक्षुधाने शरीर को शुष्क करदिया और अत्यन्त तापित करतीहै हेद्विजश्रेष्ठ ! क्षुधा मिटनेकेलिये कुछ प्रायश्चित्त बताओ ८९ जैसे इस हमारे घोरकर्म की शांतिहो वामदेवजी बोले कि हेनृपोत्तम ! बिना भोगकिये इसका प्रायश्चित्त कुछ नहीं है ९० इससे अपने कर्मका फल स्वस्थहोकर आप सब भोगें अब जहां तुम्हारा वतुम्हारी स्त्रीका शरीर पतितहुआ है ९१ वहां यहांसे शीघ्रही जाओ इसमें संदेह नहींहै दोनोंजने उस अपने शरीर का अक्षय मांस भक्षण करो ९२ वस अपना २ दोनों जने शरीर भक्षणकरो इसमें संदेह नहींहै राजा बोला कि भला हम अपना २ मांस कितने समयतक भक्षण करेंगे ९३ हे महाभाग ! सो कहिये वह वचन हमारे प्रमाणहै वामदेवजी बोले कि जब तुम किसीके मुखसे महापातकनाशन वासुदेवस्तोत्र सुनोगे तब तुम्हारी

मुक्तिहोजायगी हे राजन् ! यह सब हमने तुमसे कहा अब जाकर अपना २ मांस भोजनकरो ९४ । ९५ यह सुनकर राजा सुबाहु वहां से चला व अपनी स्त्री सहित अपने २ शरीर का मांस खाने लगा ९६ नित्य अपने २ शरीर का मांस राजा रानी खालियाकरें व नित्य शरीर पूरा होजायाकरे इसप्रकार नित्य राजा व रानी शरीरका मांसही भक्षणकरे ९७ जैसे २ भक्षिसे राजा अपने शरीरको भक्षणकरे वैसे २ वहां स्त्रियां हँसती जायँ इसका भेद हम तुमसे बताते हैं ९८ वे स्त्रियां प्रज्ञा व महासाध्वी अनपायिनी श्रद्धा थीं सो दोनों राजा के चरित्रको नित्यही हँसती थीं ९९ क्योंकि जब प्रज्ञा प्रेरणाकरती थी तब श्रद्धायुक्त विष्णुके लिये उद्देशकर ब्राह्मणोंको अन्न देनेको सङ्कल्प कर नहीं दिया था १०० इस प्रकार अपने शरीर का मांस नित्य अमृत सदृशरसों से राजा रानी खाते थे १०१ हे सुव्रत ! फिर सौ वर्ष के अन्त में महामुनि वामदेवजी को स्मरणकर आत्माकी निन्दा करनेलगे १०२ कि न देवताओं को कभी दिया न पितरों को न ब्राह्मणों को न अतिथियों को व न अन्य वृद्धोंकोही विशेषकर दान दिया १०३ व दीनों को भी नहीं दिया कृपा करके आतुरको भी नहीं दिया इसीसे राजा अपने शरीरका मांस खाताथा और अपने कर्मकी निन्दा करताथा १०४ स्त्री समेत अपना २ मांस खातेहुये राजा का कर्म देखकर श्रद्धा व प्रज्ञा बार २ हँसती थीं कि हे पाप चेतन ! हे राजन् शुभात्मा ! तिस कर्मविपाकको हँसताहै हमारे सङ्गके प्रसंगसे आपने न दान दिया १०५ । १०६ राजासे प्रज्ञा हँसतीहुई कहे कि हे महाराज ! वह ज्ञान तुम्हारा कहां गया जिससे मोहित होगये १०७ लोभ मोहसे ऐसे युक्तहुये कि अब तमोगर्त में गिरा दियेगये अब दुःखसागर में पतित तुम्हारी रक्षा वह नहीं करता १०८ कि जिससे तुम दानमार्गको छोड़कर लोभमार्गको प्राप्तहुये अब क्षुधायुक्त होकर भार्यासहित आनन्दसे अपना २ मांस भक्षणकरो १०९ इसप्रकार भार्यासमेत राजा सुबाहुको वह प्रज्ञा हँसे हे पुत्र ! यही उन दोनों स्त्रियोंके हँसनेका कारणथा ११० जब राजा अपना देह भक्षणकरनेलगे व तब दो दारुणरूप धारणकरके

स्त्रियां सदैव कहती थीं कि देओ देओ १११ हे महाप्राज्ञ ! वे भीम वदारुणरूप धारण किये क्षुधा व तृष्णार्थी जलसहित अन्न राजासे बार बार मांगती थीं ११२ जो तुमने पूँछा हमने सब तुमसे कहा अब और तुम से क्या कहें सो कहो ११३ तब विज्वल बोला कि हे तात ! वासुदेवाभिधान स्तोत्र हमसे कहो जिसके सुननेसे राजा सुबाहु की मुक्ति होगी व राजा विष्णुजीके परमपद को जायगा ११४ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

गुरुतीर्थमाहात्म्येच्यवनचरित्रेसप्ततितमोऽध्यायः ६७ ॥

अष्टानवे अध्याय ॥

दो० अट्टनये मैं स्तोत्र श्री वासुदेव अभिधान ॥

प्रज्वलकह्यो सुबाहुसों नहिं यामहैं कुछ आन १

सूतजी शौनकादिकों से बोले कि जब उसके महात्मापुत्र प्रज्वल ने ऐसा पूँछा तब कहनेवालों में श्रेष्ठ कुंजल ने श्रीविष्णुजीका पुण्यकारी स्तोत्र कहा १ प्रथम शान्ति देनेवाले व पुष्टि बढ़ानेवाले सब कामों के दाता ज्ञानवर्द्धन सर्व क्लेशनाशन श्रीहृषीकेशजीका ध्यानकरके फिर नमस्कार करके वासुदेवजी का स्तोत्र जो कि सब कल्याणदाता है वासुदेवनाम परमेश्वर को परमप्रिय व पुण्य बढ़ानेवाला २ । ३ ऐसा कुंजल का कहाहुआ वासुदेव नाम स्तोत्र विज्वल के लिये प्रकाशित हुआ ४ वासुदेवजी का नाम अप्रमेय पुण्य बढ़ानेवाला है पञ्चियोंमें श्रेष्ठ विज्वल पितासे सब प्राप्तकर ५ तहां जानेका विचार करता भया इसप्रकार जाने को बुद्धिकिये ज्ञानके पारगामी उपकारमें उद्यत पुत्रसे धर्मात्मा कुंजल बोला ६ । ७ कि हे पुत्र ! जिससे राजा का पाप जायगा उसका उपाय करो अब यहां से शीघ्रही जाकर राजा सुबाहु के आगे जो स्तोत्र हमने कहा है पढ़ो ८ जैसे २ राजा उत्तम स्तोत्र सुनेगा वैसेही वैसे ज्ञानमय होगा वह स्तोत्र वही है जो कि हमने तुमसे कहा है इसमें संदेह नहीं है ९ यह सुन अपने पिताकी आज्ञाले अतिवेग से वहांसे उड़कर विज्वल पुण्य आनन्दवन में पहुँचा १० व वृक्षकी शाखापर बैठकर स्तोत्र पढ़ने के लिये उद्यत

हुआ देखा तो राजा विमान पर चढ़ाहुआ वैकुण्ठ से चलाआता था ११ प्रथम मनमें विज्वल विचारता था कि देखें स्त्रीसमेत राजा कब आवे और इस स्तोत्र से कब हम पापसे छुड़ावें १२ तबतक किंकिणी जालसे मंडित विमान प्राप्त होगया जो कि घंटाके शब्दसे युक्त वीणा और वेणुसमेत १३ गंधर्वोंके स्वरसे शब्दयुक्त अप्सराओं सहित सब काम देनेवाला अन्न वा जलसेहीनथा १४ तिस विमानमें स्त्रीसमेत राजा सुबाहु स्थित थे फिर सुतार्च्यनाम अपनी स्त्रीके साथ राजा आकर विमान परसे उतरे १५ तीक्ष्ण शस्त्रलेकर जबतक उस पड़ीहुई अपनी लोथको काटाचाहे कि तबतक विज्वलने पुकारा कि १६ हे हे पुरुषशार्दूल ! आप देवता के तुल्यहैं व ऐसा निर्घृण कर्म करते हैं कि क्रूरोंसे भी न होसके १७ हे पुरुषशार्दूल ! यह क्या भाग्यके विपर्यय का कर्महै यह ऐसा दुष्कृत साहसका कर्म सर्वदा लोकमें निन्दित है १८ वेदाचार से विहीन शव मांसभक्षण करना आप कैसे करते हैं इसका कारण सब हमसे जैसेबने वैसे कहें १९ इसप्रकार महात्मा उस विज्वलका वचन सुनकर राजा अपनी स्त्रीसे बोला कि २० हे प्रिये ! सौवर्ष बीतगये व प्रतिदिन मुझपापीने यही मांस खाया पर जैसा यह आज कहता है ऐसा कभी किसीने नहीं कहा २१ व हमारा हृदय क्षुधा के मारे अतीव पीड़ित होरहाहै अब हमारी उत्कण्ठा इसके वचन के सुनने में लगगई है चित्तमें शान्ति होगई है २२ जबसे सब दुःखका शांति देनेवाला इसका वाक्य सुना व तबसे हमारे चित्तमें बड़ा आह्लाद हुआ है २३ नहीं जानते यह कोई गन्धर्व है कि देवताहै वा इन्द्र आपही तो नहीं हैं जो पूर्वसमयमें मुनिने कहा था वह मुनियों का वचन सत्यहै २४ यह अपने पतिका प्रिय वचन सुनकर पतिव्रता रानी बोली २५ कि हे नाथ ! तुमने सत्य कहा यह उत्तम आश्चर्य है हे कांत ! जैसे तुम्हारे चित्त में वर्तमान है वैसेही मेरे भी चित्तमें वर्तमान है २६ हितकारी की नाई पक्षीका रूप धारे यह कौन पूछता है इसप्रकार राजा प्रियाका वचन सुनकर २७ हाथजोड़कर पक्षी से बोला कि हे महाप्राज्ञ ! तुम्हारा आना अच्छेप्रकार तो हुआ पक्षीका रूप धारण किये हे

महाराज ! २८ हम अपनी स्त्रीसहित तुम्हारे चरणकमलों में शिरसे प्रणाम करते हैं हमारे ऊपर आपका प्रसादहो २९ पक्षीके रूपसे आप अतिपुण्यवचन कहते हैं पुरुष जैसा पूर्वजन्ममें करताहै ३० चाहे पुण्यकरे वा पाप वही इस जन्म में भोगता है इतना कह अपना सब वृत्तान्त संक्षेप रीतिसे सुबाहुने विज्वल से कहा ३१ जैसा कि कुंजलने विज्वल से बताया था जो अब आप बतावें कि आप कौन हैं जो ऐसे धर्म की बात कहते हैं ३२ यह सुन पक्षियों में श्रेष्ठ विज्वल सुबाहु राजासे बोला कि शुकों की जाति में उत्पन्न कुंजल हमारे पिता का नामहै ३३ उनके हम तीसरे पुत्र हैं व विज्वल हमारा नामहै हे महाभुज ! न हम देवता न गन्धर्व और सिद्धभी नहींहैं ३४ तुम्हारा यह दारुण कर्म हम नित्य देखते हैं कहो कबतक यह बड़ा कर्म साहस तुमकरोगे यह हमसे कहो राजा सुबाहु बोले कि जब वासुदेवाभिधान स्तोत्र जो पूर्व समय में ब्राह्मणों ने कहाहै ३५।३६ हम सुनेंगे तब हमारी मुक्ति होगी यह पुण्यात्मा संयतात्मा मुनिने कहा है ३७ तब हम पाप से निस्सन्देह मुक्तहोंगे यह सुन विज्वल बोला कि मैंने तुम्हारे लिये पितासे पूछा उन्होंने जो मुझ से कहा ३८ वह वासुदेवाभिधानस्तोत्र सुनाते हैं सावधान होकर सुनो ३९ इस वासुदेवाभिधान स्तोत्रका अनुष्टुप् तो छन्दहै नारद ऋषि हैं अङ्कार देवता सब पाप नाशने के लिये व अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष सिद्ध होनेके लिये इसका विनियोगहै अन्न-सोमगवते वासुदेवाय ॥ पावन परमपुण्य वेदज्ञ वेदमन्दिर विद्याधार भवाधारव प्रणवके हम नमस्कार कातेहैं ४० निरावात निराकार सुप्रकाश महोदय निर्गुण गुण सबद्ध व प्रणवरूप तुम्हारे नमस्कार है ४१ महाकान्त महोत्साह महामोहविनाशन सब जगत् के विस्तार करनेवाले गुणों से अतीत तुम्हारे नमस्कार है ४२ जो सर्वत्र होकर प्रकाशितहोताहै प्राणियोंके ऐश्वर्यको बढ़ाताहै अभयहै भिक्षुसंबद्ध शिवअङ्काररूपीके नमस्कारहै ४३ जिसको गायत्री सामवेदसदागा-याकरता है व जो सब गीतरूपहै व जिसको गीत बहुतप्रियहै शुभ है व जो गन्धर्वरूप गीतका भोक्ता है उस प्रणवरूप के नमस्कार

है ४४ विचार वेदरूप यज्ञस्थ व भक्तोंके ऊपर कृपा करनेवाले व सब लोकोंकी उत्पत्ति के स्थान उन अंकाररूपी के नमस्कार है ४५ जो संसाररूपी समुद्रमें मग्न सब प्राणियों के तारने के लिये नौकारूप से विराजमान होता है उस अंकाररूपीके प्रणाम है ४६ जो सब लोकोंमें एक रूपसे बसता है व एक प्रकारका नहीं है धाम मोक्षरूपसे उन अंकाररूपी शिवके नमस्कार है ४७ सूक्ष्म सूक्ष्मतर शुद्ध निर्गुण गुणनायक प्राकृत भावोंसे वर्जित वेदके स्थानके हमारा नमस्कार है ४८ देव दैत्य वियोगों से और तुष्टियों से व कर्मों से सदा वर्जित रहता है देवताओं व योगियों से जो ध्यान करने के योग्य है उस अंकारके नमस्कार है ४९ जो व्यापक है इससे विश्वके वृत्तको जानता है व परमशुभ विज्ञानरूप है शिवशिवगुण शान्तस्वरूप उस प्रणव ईश्वरके नमस्कार है ५० व जिसकी मायामें प्रवेश करके ब्रह्मादिक देवता व असुर परमशुद्धरूप मोक्षके द्वारको नहीं जानते उस अंकाररूपी के नमस्कार है ५१ आनन्दकन्द विशुद्धबुद्धिशुद्धहंसपर और गुणनायक उन वासुदेवजी के निरन्तर नमस्कार है जिनकी महाप्रभा है ५२ व जो श्रीपांचजन्य नाम शंखसे विराजमान व सूर्यकीसी प्रभा से प्रकाशित सुदर्शननाम चक्रहाथमें लिये व गदा कमलहाथोंमें लिये उन वासुदेवजीके हम सदा शरणमें हैं ५३ वेदगुह्यसगुण चराचरके गुणोंके आधारभूत सूर्य अग्निके समान तेजस्वी उन वासुदेवजीके शरणमें हैं ५४ जिनको क्षुधाके निधान विमलसुरूप आनन्दके प्रमाणसे विराजमान पाकर देवादि तीनों लोक जीते हैं उन वासुदेवजी के शरणमें हैं ५५ अन्धकार घनोंको अपने हाथोंसे नाश करते हैं नित्यही परिकर्म हेतु हैं उदयको प्राप्त सूर्यके समान प्रकाशित तेजस्वी हैं तिन वासुदेवकी हम शरणमें प्राप्त हैं ५६ जो सब जगह सूर्य प्रभावों से प्रकाशित होता है सुखाता और रसको देता है जो प्राणियों के भीतर प्राप्त वायु है तिन वासुदेवकी हम शरणमें प्राप्त हैं ५७ वे देवदेव अपनी इच्छाके अनुरूप से सब लोकों और राजाओंको पालते हैं और तारनेमें जो नावरूप से वर्तमान हैं तिन वासुदेवकी हम शरणमें प्राप्त हैं ५८ अन्तर्गत लोकमय सदैव स्थावर जंगमोंको पचाता है स्वाहा

मुख और देवसमूहों के हेतु तिन वासुदेवकी हम शरण में प्राप्त हैं ५९ अच्छे पुण्यकारी सबरसों से साथही पुष्ट करता है सौम्यलोकमें गुणका देनेवाला और जो निर्मल तेजसे अन्नोंको पुष्ट करता है तिन वासुदेव की हम शरणमें प्राप्त हैं ६० सबजगह विनाशका हेतु है सबके आश्रय सर्वमय सर्व और इन्द्रियोंके विना विषयोंको जो भोगता है तिन वासुदेव की हम शरण में प्राप्त हैं ६१ जीव स्वरूप से स्वमूर्त सचराचर लोकों को पालन करते निःकेवल ज्ञानमय सुशुद्ध तिन वासुदेवकी हम शरणमें प्राप्त हैं ६२ दैत्यों के नाश करनेवाले दुःख के नाश का मूल शान्त परशक्तिमय विशाल हैं जिनको देवता प्राप्त होकर विनयको प्राप्त होते हैं तिन वासुदेव की हम शरणमें प्राप्त हैं ६३ सुख सुखान्त सुखके दाता सुरेश ज्ञानके समुद्र मुनियों के रक्षा करनेवाले देवोंके ईश सत्य के आश्रय सत्य गुणमें बैठे हुये तिन वासुदेव की हम शरण में प्राप्त हैं ६४ यज्ञांगरूप परमार्थरूप मायायुक्त लक्ष्मी के पति उग्रपुण्य विज्ञान में एक और संसारोंके निवास तिन वासुदेवकी हम शरण में प्राप्त हैं ६५ समुद्रके बीच में शेषजी की विशाल शय्या में जो सोते हैं तिन वासुदेवजी के दोनों चरणकमल हम नित्यही नमस्कार करते हैं ६६ पुण्यसे युक्त नित्यही कल्याण करनेवाले अनेकों तीर्थोंसे सेव्यमान तिन वासुदेवजी के पापनाश करनेवाले दोनों चरणकमल हैं ६७ जो चरणकमल लालकमलकी दीप्तिके समान कमल अच्छा चिह्न और जयसे युक्त घुंघरू और मुँदरियों से अलंकृत श्री वासुदेवजीके हम नित्यही नमस्कार करते हैं ६८ देवता सिद्ध मुनि सत्त्वोंके स्वामी भक्तिसे सदैव नमस्कार करते हैं तिन श्री वासुदेवजी के पुण्यकारी चरणकमलों को हम नित्यही नमस्कार करते हैं ६९ जिनके चरण के जलमें मज्जन करते हुये पवित्र पापरहित प्रसन्न मुनि मोक्षको प्राप्त होते हैं तिन वासुदेवकी हम शरणमें प्राप्त हैं ७० जहां विष्णुजीका चरणजल रहता है तहां सदैव गङ्गादिक तीर्थ रहते हैं पापदेह युक्त भी जो अब पीते हैं वे शुद्ध होकर मुरारिजी के मन्दिरको जाते हैं ७१ चरणजल से अभिषेक भये मनुष्य जो उग्र पापों से युक्त देह भी हों तो भी वे मुक्तिको प्राप्त होते हैं तिन परमे-

श्वर के चरणों को हम निरंतर नमस्कार करते हैं ७२ महात्मा चक्रधारी की नैवेद्यमात्र खाने से मनुष्य सब अर्थयुक्त होकर श्रीवाज-पेययज्ञके फलको पाते हैं ७३ नारायण नरकके नाशनेवाले मायास हीन सकल गुणजाननेवाले हैं जिनको ध्यान करतेहुये अच्छी गतिको प्राप्तहोतेहैं तिन वासुदेवकी हम शरण में प्राप्तहैं ७४ जो ऋषि सिद्ध और चारणगणों से वन्दना के योग्यहैं देवों से सदा पूजितहैं जो संसार के सृष्टि हेतुकरने में ब्रह्मादि देवोंका प्रभुहैं जो संसाररूप महासमुद्र में गिरेहुये का उद्धार कर्त्ता है वत्सल है तिन के श्रेष्ठ पवित्र चरणों को भक्तिसे हम नमस्कार करते हैं ७५ जो यज्ञ के मण्डप में देवताओं से देखेगये सामवेद के जाननेवाले सामवेदके गाने में कुतूहल युक्त तीनों लोकमें एकही प्रभुहैं और राजा बलिको कल्याण करनेवाले नेत्रों से पापहीन करते हैं तिनके परम पवित्र दोनों चरणकमलों को हम वन्दना करते हैं ७६ ब्राह्मणों के मण्डलमें यज्ञ में प्रकाशित होरहे ब्रह्म की शोभा से शोभित दिव्य तेजसे करमय इन्द्रनीलके समान देवों के हितकी कामना से अच्छी देहसे उत्पन्न राजा बलिसे तीन पद मांगतेहुये कि हमको तीनपद दीजिये ऐसे प्रभु वामन की हम वन्दना करते हैं ७७ तिन वामन जी के देखने के लिये सूर्यमण्डल में मुनिगण प्राप्त हुये और आकाश चन्द्रमा और सूर्यको पांवसे आच्छादित करतेभये तिन चक्रधारी के देवता उससमय नाशको प्राप्तहोरहे थे और देह संसारभर का निवासस्थान है तिन अतुल भगवान् के विक्रमको हम नमस्कार करते हैं ७८ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरु तीर्थमाहात्म्येच्यवनचरित्रेऽष्टनवतितमोऽध्यायः ६८ ॥

निम्नानवे अध्याय ॥

दो० निम्नानवे अध्याय में हरिदर्शन लहि भूप ॥

स्तोत्रपाठ सुन देवतनु भयहु बहोरि अनूप १

विष्णुजी राजावेन से बोले कि पवित्र परमपुराण पापना-

शन पुण्यमय कल्याणरूप धन्य सुसूक्तरूप परमसुजाप्य स्तोत्र सु-
नकर राजा अत्यन्त सुखीहुआ १ क्षुधा तृष्णा दोनों जातीरहीं इस
से वह देवकी उपमाका होगया व भार्याभी उसकी रूपसे शोभित
होनेलगी व दोनों पापनिबन्धन से छूटगये २ देवों से परिवारित
हरिभक्तियुक्त सुसिद्ध विप्रोंसे युक्त शंख चक्र कमल गदा और तल-
वार के धारणकर्ता श्रीविष्णु देवदेव वहां आये व पापरहित राजाके
समीप पहुँचे ३ उनकेसङ्ग नारद भार्गव व्यास पुण्यात्मा मार्कण्डेय
बाल्मीकि नाम विष्णुभक्त मुनि व ब्रह्माजीके पुत्र वशिष्ठजी भी आये
४ व और भी पुण्य महात्मा लोग श्रीहरिके चरणारविन्दकी भक्तिसे
युक्त गर्ग महात्मा हरिभक्तियुक्त जाबालि रैभ्य कश्यपआदि श्रीहरि
के सङ्ग सब आये ये सब विष्णुकेप्यारे भागवतों में श्रेष्ठ धन्य और
पापरहित थे व श्रीवासुदेवजी की चारोंओर खड़ेहोकर राजा सुबाहु
की अनेक प्रकारोंसे स्तुति करनेलगे ५ । ६ अग्निआदि सब देवता
ब्रह्मा हरि व सब देवियां मिलकर सुन्दर मधुर मनोहर गीतगानेलगे
व गन्धर्वराजादि सुन्दर गान करनेवाले लोग आये और वेभी गाते
भये ७ मुनिलोग सुन्दर वेदयुक्त परमार्थ समेत सुन्दर पुण्यकारी
स्तोत्रोंसेस्तुति करतेभये तब देव हरि राजाको देखकर मनोहर वचन
बोले ८ कि हेराजन् ! जो इष्टहो वह वरमांगो हम तुमकोदेगे क्योंकि
तुमने प्रसन्न किया है हरिजीके वचन सुनकर राजा श्रीमुरारिजीको
आगे कहतेहुये देखकर ९ जोकि नीलकमल सम श्यामस्वरूप मुर
राक्षस के मारनेवाले पुरुषों के अधिनाथ शंख चक्र तलवार गदा
धारण किये थे व लक्ष्मीसमेत रत्नोंसे प्रकाशित कङ्कण हारादिकों
से भूषित परमेश्वरको १० जिनकी रविकीसी प्रभाथी देवसमूहों से
सेवित थे बड़े मोलके हार और गहनों से भूषित थे व दिव्यगन्ध
अनुलेपन किये थे ऐसेश्रीहरिको देखकर राजाने सुन्दर भक्तिभावोंसे
पृथ्वी पर गिरकर दण्डवत् प्रणामकिया व कहा कि आपके निरन्तर
प्रणामहैं आपकी जयहो हे भगवन् ! मैं तुम्हारा दासहूँ व सदाका
भृत्यहूँ मैं आपके उत्तम भावसे युक्तभक्ति नहीं जानता स्त्रीयुक्त आये
हुये शरणमेंप्राप्त मेरी रक्षाकरो हे माधवजी ! ब्राह्मण मनुष्य धन्यहैं

जोकि सदैव आपके ध्यानमें मनलगायेहुये रहते हैं ११। १३ शिव माधव ऐसा उच्चारण करतेहुये अत्यन्त निर्मल वैकुण्ठ को जाते हैं और आपके चरणकमल से निकलेहुये पुण्यकारी जलको जो शिरमें लगाते हैं १४ वे मनुष्य सब तीर्थों से उत्पन्न जलमें स्नानकर हरिजीके सुन्दर धामको जाते हैं १५ मेरे योग भक्ति ज्ञान क्रिया कुछ भी नहीं है किस पुण्यके सङ्गसे हमको वरदेते हो १६ श्रीहरि बोले कि महापातकनाशन वासुदेवाभिधान स्तोत्र तुमने पुण्यात्माविज्वलके मुखसे सुना है इससे पापरहित १७ और मुक्तिके भागी हुये इसमें कुछ सन्देह नहीं है अब चलकर हमारे लोकमें मनोरम दिव्यभोग भोगो राजा सुबाहु यह सुनकर बोला कि हे देव ! जो मुझदीनको आप वरदिया चाहते हैं तो प्रथम उत्तम वर इन प्रज्वलजीको दें १८। १९ श्रीहरिजी बोले कि विज्वलका पिता कुञ्जल बड़ा पुण्यात्मा व ज्ञानवान् है हे महाराज ! वासुदेव महास्तोत्र नित्य पढ़ता है २० इससे पुत्रों व स्त्रीसमेत वह हमारे लोकको जायगा क्योंकि जोई कोई इस स्तोत्र को जपता है उसको हम सदैव फल देते हैं २१ जब ऐसा शुभवचन कहा तो राजा श्रीकेशवजीसे बोला कि हे केशव ! इस महापुण्यस्तोत्र को आप सफल करें २२ श्रीहरिजी बोले कि हे महाराज ! सत्ययुग में जो मनुष्य इसे सुनेंगे तो तुरन्त मोक्ष पावेंगे इसमें कुछभी संशय नहीं है २३ व त्रेतामें एक मासभर सुननेसे व द्वापरमें छः मासतक श्रवणकरने से व एक वर्षभर तक सुनने से मनुष्य कलियुगमें २४ स्वर्गको वा गतिदायक वैष्णवलोक को जायेंगे जो कोई ब्राह्मण स्नानकर तीनोंकाल वा एककालमें इस स्तोत्रको पढ़ेगा २५ जो २ चाहेगा सबकाम उसके होंगे क्षत्रिय जयको पावेगा और धन धान्य से अलंकृत होगा २६ वैश्य सुनकर लक्ष्मीयुक्त होगा जो कोई शूद्र इसे सुनेगा वह सुखी होगा व जो कोई अन्त्यज को सुनावेगा तो पापसे मुक्त होगा व सुनानेवाला तो कभी घोर नरकको नहीं देखेगा हमारे इसस्तोत्रके प्रसादसे सर्वसिद्ध होगा २७। २८ व जो कोई श्राद्ध में ब्राह्मणोंके भोजन के समय इसे पढ़ेगा हे महाराज ! उसके पितर तृप्त होकर श्रीवैष्णवलोक को जायेंगे २९ व तर्पण करने के पीछे

ब्राह्मण वा क्षत्रिय जप करें तो उसकै पितर जो कोई इस हर्षितमन होकर अमृत पावेंगे ३० जो कोई होमोंके करनेके समय यज्ञोंमें भाव से इसे पढ़ेगा तो वहां विघ्न न होंगे व सब कार्यों की सिद्धिहोगी ३१ पर्वतादि विषम दुर्गमस्थान में वा व्याघ्रादि के संकट में व चौरोंके संकटमें जो कोई इस स्तोत्रको पढ़ेगा तो ३२ वहां शान्ति होजायगी हे महाराज ! इसमें कुछभी संशय नहीं है अन्य सब से-वकोंको चाहिये कि जब राजद्वार को चले ३३ तो इसे पढ़कर चले इस वासुदेवाभिधान स्तोत्र को ब्रह्मचर्य्य से स्नानकर क्रोध लोभसे वर्जित होकर मनुष्य दशहजार जपे ३४ वासुदेवको पूजनकर प्रयत्न मनहोकर तिल तण्डुल घी मिलाकर दशांश हवन करना चाहिये ३५ व जितने श्लोक स्तोत्रमें हैं प्रतिश्लोक होमकी आहुति ध्यान से मनुष्यों को डालनी चाहिये ऐसा करनेवाले के समीप हम नित्य ही दासकी नाई टिकेरहते हैं ३६ कलियुग में यह स्तोत्र दास्यको प्राप्त होजायगा वेदके भङ्ग प्रसंग से जिस किसीको न देवे ३७ परन्तु जहां कहीं इसका पाठहोगा सब कार्योंकी सिद्धिहोगी हे भूप ! सुनो हमने इसप्रकार इसस्तोत्रको सफल किया ३८ इसको ब्रह्माने रचा फिर रुद्रने जपा तब ब्रह्महत्या से मुक्तहुये व इन्द्रभी इसीके जपने से पापोंसे छूटे ३९ ॥

चौ० देव सिद्ध ऋषि गुह्यकआदी । विद्याधर नर विगतविवादी ॥
सब यह स्तवन पढ़त करिछोहू । मनवाञ्छित पायहु गतमोहू ॥
जो मम पढ़िहि कबहुँ सुस्तोत्रा । पुण्य पुत्र धन धान्य सुगोत्रा ॥
सो पाइहि यामहँ न विचारा । करनचही सुनिबचन हमारा ॥
इमि कहि भूपति सों भगवाना । कह्यहु भूप अब करहुपयाना ॥
गहहु हमार पाणि पुनि चलहू । बसहुलोक ममसदा अचलहू ॥
जब हरि निजकर भूपहि दीना । देव स्वर्गमहँ अतिमुदकीना ॥
दीन दुन्दुभी बहुत बजाई । किन्नर गन्धर्व्वन तब गाई ॥

श्रेष्ठ अप्सरा नाचनेलगीं फूलों की वर्षा देवता सब ऋषि करते भये और वेदके स्तोत्रों से स्तुति करनेलगे तब स्त्रीसहित राजा हरि लोक को जाता भया ४० । ४४ तो देवसमूहों से स्तुति कियेहुये

राजा को देखकर विज्वल प्रसन्न मन होकर महाप्रभाव युक्त होकर
शीघ्रतासे जहां माता पिता थे वहां आगया ४५ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थे
च्यवनचरित्रेनवनवतितमोऽध्यायः ९९ ॥

सौ अध्याय ॥

दो० सौ अध्यायमहैं किय तृतीय सुत कैलास बखान ॥

यक नारी यक पुरुष की भाषी कथा महान १

विष्णुजी राजावेनसे बोले विज्वल उसी नर्मदा नदीके सुन्दर तट
परके वट वृक्षपर आया कि जहां उसका पिता था व आकर पिता
के प्रणामकरके १ वासुदेवाभिधान स्तोत्रकी महिमा उस महामति
धर्मात्माने अपने पिता से सब यथाक्रम कही २ कि जैसे श्रीविष्णु
भगवान्जी ने आकर सुन्दर वर दिया सब प्रसन्न मनहोकर उसने
वर्णन किया ३ व कुञ्जलने अच्छे प्रकार ध्यान देकर सब वृत्तान्त
सुना तब बड़े हर्ष से युक्त होकर विज्वल पुत्रको आलिंगन कर ४
उसे कहा कि हे वत्स ! तुमने महात्मा राजाके लिये पुण्यकिया
जोकि वासुदेवजी के कीर्तनसे महापुण्यकारी उपकार किया ५ इस
प्रकार तिस पुत्रसे कहकर आशीर्वाद देकर देव समान पुत्रकी बार
बार स्तुति करते भये ६ और च्यवनजी के देखते ही देखते सुन्दर
नदी के किनारे स्थित रहे यह सब तिन महात्मा वैष्णवों का वृत्तान्त
तुमसे कहा ७ हे महाराज ! और क्या तुमसे कहें इतनी कथा सुनकर
राजावेन ने श्रीविष्णु भगवान्जी से कहा कि शंख पात्रमें अमृत
हमारे पीने के लिये आपने दिया ८ तो पृथ्वी में उसके पीने की
श्रद्धा किस मनुष्य को न हो इससे उत्तम वैष्णव ज्ञान सदैव जो
आपने कहा उसके सुनने में हमारी तृप्ति नहीं हुई है अमृतरूप
पान किया है सुनने में हे देवदेवेश ! हमारी श्रद्धा बढ़ती है ९।१० अब
प्रसन्न होकर कुञ्जलका चरित हमसे कहिये कि वह वृत्तान्त सुनकर
उस महात्माने अपने चौथे पुत्रसे फिर क्या कहा ११ हे देव ! वह
हमसे विस्तारपूर्वक कृपाकर कहिये श्रीभगवान्जी बोले कि सुनो

हम कुञ्जलका चरित तुमसे कहेंगे १२ व च्यवनमुनिका भी बहुत कल्याण युक्त चरित्र कहेंगे हे नरश्रेष्ठ ! यह पुण्य बढ़ानेवाला पाप-नाशनेहारा आख्यान १३ जो कोई मनुष्य भक्तिसे सुनता है वह सहस्र गोदानका फलपाता है १४ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणे भूमिखण्डे वेनोपाख्याने गुरुतीर्थमाहात्म्ये च्यवन
चरित्रेशततमोऽध्याय १०० ॥

एकसौएक का अध्याय ॥

दो० एकसौएक अध्यायमहं कुञ्जल सुन्यो विचित्र ॥

निजचौथेसुत शिवचरित पितृसों कह्योसुचित्र १

सूतजी शौनकादिकों से बोले कि देवदेव हृषीकेशजी नृपोंमें उत्तम अंगके पुत्र राजावेन से पापनाशन बड़े कल्याण युक्त आख्यान को कहते भये १ कि कल्याणदायक कुञ्जलमहात्मा और च्यवन ब्राह्मण का वृत्तान्त हमसे सुनो हम कहते हैं २ त्रिष्णुजी बोले कि धर्ममात्मा कुञ्जलने आनन्द युक्त हो अपने चौथे पुत्रको बुलाकर उससे कहा कि जिसका कपिञ्जल नाम था ३ कि हे पुत्र ! तुम जब भोजन के लिये जाते हो तो क्या अपूर्व देखते हो व कहां जाते हो ४ हे महाभाग ! जो कुछ पुण्यदायक चरित्र तुमने देखा हो हम से अवश्य कहो यह सुनकर कपिञ्जल बोला कि हे तात ! जो आपने पूँछा है तो हम अपूर्व कहते हैं ५ जोकि किसीने न देखा होगा न सुना होगा न हमनेही कभी किसीसे सुनाया वह अब हम इस समय आपसे कहते हैं हे पिताजी ! सुनिये ६ व ये सब हमारे भाईलोग भी सुनें व माताजी तुमभी सुनो चन्द्रमा के समान इवेत कैलास नाम पर्वत श्रेष्ठ है ७ जोकि नानाप्रकार के धातुओं से समाकीर्ण व नानाप्रकार के वृक्षोंसे उपशोभित है व पुण्यशुभ गङ्गाजलसे सब ओरसे शालित होता है ८ व दिव्य सहस्रों नदियों के प्रवाह उसपर चलते हैं जिनसे अनेक प्रकारके जल उत्पन्न हैं ९ महागिरिमें जल समेत सहस्रों तालाब हैं सुन्दरी नदियाँ हैं जोकि हंस और सारसों से सेवित हैं १० पुण्यदेनेवाली और पापनाशनेहारी हैं तिसपर्वत श्रेष्ठ

मैं अनेकप्रकार के फलेफले वनहैं ११ जोकि अनेकप्रकारके वृक्षों
 से युक्त शुभहरेहैं और पर्वत किन्नरों के समूहों से युक्त अप्सराओं
 से आकुल १२ गन्धर्व चारण सिद्ध देवसमूहों से सुशोभित दिव्य
 वृक्षवनोंसे युक्त दिव्यभावोंसे आकुल १३ सुन्दरशोभा युक्त दिव्य
 गन्धों और अनेकप्रकार के रत्नोंसे युक्तहै स्फटिकमणियों की सफेद
 शिलाओंसे उपशोभित १४ व हे राजन्! सूर्यके तेजके समान तेजोंसे
 विराजमान व मनोहर गन्धवाले चन्दन के वृक्षोंसे और नीले पुष्पों
 वाले बकुलोंसे १५ व और भी नानाप्रकारके पुष्पमय वृक्षोंसे सब
 ओर अलंकृत व पक्षियोंके दिव्य मधुरनादोंसे नादित १६ भ्रमरों
 के शब्दों से शब्दायमान वृक्षसमूहों से शोभित कोकिलों के नादसे
 वनसमेत पर्वतशोभित होरहाथा १७ कोटि गणोंसे समाकीर्ण वहां
 पर शिवजी का मन्दिर है जोकि किरणों से उज्ज्वल पुण्यकारी पुण्य
 राशिके पत्थरोंकाहै १८ सिंह गर्जरहे हैं सैरिभहाथी और दिशाओं
 के हाथियों के सुन्दर शब्दों से चारोंओर शब्द युक्त १९ अनेकप्र-
 कारके मृग और वानरगणों से आकुल गुहाओं में मुरैलोंकी वाणी
 से शब्द समेत २० नानाप्रकारकी लेपनकूट कन्दराओं से शोभित
 व कँगूरोंसे विराजमान नानाप्रकारके झरनों व ओषधियों से विरा-
 जित २१ इस प्रकारके दिव्य सुन्दर गुणयुक्त पुण्यकारी पुण्यस्थानों
 से युक्त पुण्यकीराशि महापर्वत पुण्यकारी मनुष्यों से सेवित है २२
 व पुलिन्द भिल्लकोलों से भराहुआ व विकट शिखरों और कोटों से
 पर्वतराज प्रकाशितहै २३ व अन्य नानाप्रकारके पुण्य शुभ कौतुक
 मङ्गलोंसे विराजमान व गङ्गाजीके बहुतसे प्रवाहोंसे शब्दायमान २४
 ऐसेमहादेवजी के गृहयुक्त कैलास पर्वत पर हे तात ! हमगये वहां
 पर जो आश्चर्य्य हमने देखा वह कभी न देखाथा न सुनाथा २५
 सो हे तात ! अब सब सुनिये तुमसे कहतेहैं उस पर्वतराजका एक
 बड़ाभारी शिखर है जोकि पुण्यकारी बड़ेउदयवाला है २६ हेमहा-
 भाग ! वहांसे गंगाजी का पाला दूधके समान सुन्दर वर्णवाला प्र-
 वाह वेगसे पृथ्वीपर गिरता है जोकि शब्दसे भूषितहै २७ कैलास
 के शिरको पाकर विस्तृत दशयोजन का बड़ाभारी गंगाजी का सर

है २८ जोकि पुण्यकारी विमल बहुत जलसे विराजित है सबओर कल्याणभावको प्राप्त बड़े हंसों से शोभित है २९ हंस पुण्यकारी दिव्य मीठे सामवेद के उच्चारसे वहांपर शब्दकरते हैं तिससे सर विराजमान है ३० तिसके किनारे शिलामें हिमवान् की कन्या रूप द्रविणशालिनी शिरके बाल खोले हुई बैठी थी ३१ दिव्यरूपसे युक्त गुणों से सम्पन्न व दिव्य लक्षणों से युक्त दिखाई देती दिव्यअलङ्कारों से भूषित विराजमान होती थी ३२ नहीं जानते कि वे पर्वत राजहिमवान् की कन्या पार्वती हैं वा समुद्रकी कन्या लक्ष्मीजी हैं कि तो ब्रह्माजी की पत्नी ब्रह्माणी हैं वा अग्नि की भार्या स्वाहा ३३ वा महाभाग्यवती इन्द्राणी वा चन्द्रमा की स्त्री रोहिणी हैं हे तात ! इस प्रकारकी रूपकी सम्पत्ति और सुन्दर स्त्रियों के नहीं दिखाई देती जैसा रूप सम्भाव व गुण शील उस स्त्रीका दिखाई देता है ३४ । ३५ वैसा रूप लक्षण अप्सराओं का भी नहीं है कि जैसा विश्वमोहन अंग हमने देखा ३६ शिलामें बैठी दुःख समेत भी थी उसका कोई बन्धु उसके समीप नहीं था इससे बड़े स्वरसे रोदन करती थी ३७ व मोतियों के समान निर्मल बहुत से आंसु सरमें गिराती थी ३८ वे आंसुओं के बिन्दु मोती के समान उस बड़े जल में गिरते उनसे दिव्यकमल वहां उत्पन्न होते चले जाते जिनमें कि महासुगन्ध आता है ३९ इस प्रकार उन सब आंसुओं से कमलही उत्पन्न होते हैं व फिर वे असंख्य पुष्प गङ्गाजी के जलमें उतराते हैं ४० फिर वेगसे जितने कमलके पुष्प गिरते हैं वे गङ्गाजी के प्रवाहमें बहते हैं वह गङ्गाजीके प्रवाहका मध्य हंसचन्दों से सुसेवित है ४१ गङ्गाजी का प्रवाह तिसी स्थान से निकला है कैलास के सुन्दर कन्दरावाले रत्ननाम शिखरको प्राप्त होकर ४२ दो योजन का विस्तृत जलसे पूर्ण वर्तमान प्रवाह है जो कि हंसचन्दों से युक्त जल के पक्षियों से आकुल है ४३ हे तात ! मुनिसमूहों से सेवित निर्मल प्रवाहमें अनेक वर्णवाले कमल हैं ४४ जो प्रातःकाल आंसुओं से उत्पन्न कमल होते हैं वे बहुत सुगन्धित गङ्गाजल में डूबते ४५ निर्मल जल भरे हुये प्रवाहमें उतराते हैं मध्यमध्यमें सुन्दर हंस और जलके पक्षी शब्द

करते हैं ४६ सूतजी शौनकादिकों से कहते हैं और हे पिताजी ! मैं आपसे कह रहा हूँ तिस रत्नपर्वत में रत्नेश्वर महादेवजी देवता दैत्यों से पूजित सदैव स्थित रहते हैं ४७ तहांपर मैंने किभी पुण्यात्मा मुनि को देखा जो कि जटाभारसे युक्त वस्त्रहीन दण्डधारे ४८ निराधार निराहार तपस्या से अत्यन्त दुर्बल दुर्बल अङ्ग हाडसमूहों से युक्त त्वचामात्र से आच्छादित थे ४९ महात्माजी के सब अङ्गों में भस्मलगी थी सूखे गिरेहुये पतौवा भोजन करते थे ५० शिवभक्ति में बैठेहुये दुराधार महातपस्वी आंसुओं से जो सुगन्धित कमल उत्पन्नहों ५१ उनको गंगाजी के जलसे लेकर देवदेव रत्नेश्वर महादेवजी को पजनकरता है वह गीत और नाचमें निपुण ५२ महादेवजी के द्वारमें स्थितहोकर गाता नाचता और मठमें आकर धर्मात्मा सुन्दर स्वरोसे रोता है ५३ हे तात ! हे कहनेवालों में श्रेष्ठ ! यह मैंने अपूर्व देखा है प्रसन्न होकर जो आप कारण जानतेहों तो मुझसे कहें ५४ वह महाभाग्यवती कौन स्त्री थी और हे तात ! क्यों रोती थी और वह देव पुरुष क्यों देव महेश्वरजी को पूजता था ५५ यह सब सन्देहकारण हम से विस्तारसे कहिये जब कपिजल पुत्रने मड़ा बुद्धिमान् कुंजलजी से इस प्रकार कहा तो कुंजलजी मुनि के सुनतेही सुनते विस्तारसे कहने लगे ५६ । ५७ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेनोपाख्यानेगुरु
तीर्थमाहारस्येव्यवनचरित्रेएकाधिकशततमोऽध्यायः १०१ ॥

एकसौ दोका अध्याय ॥

दो० अधिकसर्वे महँ पितु कह्यो सुतसों नन्दनगाथ ॥

जहँ शिवसँग गिरिजाप्रकटकिय यक नारिसनाथ १

कुंजलजी बोले कि हे पुत्र ! जो तुमने हमसे पूँछा सब हम इस समय तुम से कहते हैं जिससे कि उन दोनों का ज्ञान तुमको होगा १ स्त्रियों में उत्तम महादेवी पार्वतीजी एक समय क्रीड़ा करतीहुई महात्मा महादेवजी से यह वचन बोलीं कि २ हे महादेवजी ! हमारे पेटमें गर्भ है इससे उत्तम वन हमको आप दिखावें ३ महादेवजी

बोले कि बहुत अच्छा ऐसाही होगा हे महादेवि ! अब देवताओं से युक्त पुष्पदायक द्विजसिद्धों से सेवित नन्दन नाम वन तुमको दिखावेंगे ४ ऐसा उन देवीजी से कह उनके व अपने सब गणों के सङ्ग महादेवजी नन्दनके चलने में उत्सुक हुये ५ इस लिये सर्वग सुन्दर, दिव्य, पुष्ट व आभरणों से युक्त घण्टा माला पहिने किंकिणी जालों की माला धारे ६ चामर व पुण्य वस्त्रों और मोतियों की मालाओं से शोभित हंस व चन्द्रमा के समान उज्ज्वल सुन्दर लक्षण युक्त अपने नन्दीश्वर नाम वृषभपर ७ आरूढ़हुये उनके सङ्ग किरोड़ा गण थे जैसे कि नन्दी, भृङ्गी, महाकल, स्कन्द, चण्ड, महोदर ८ वीरभद्र, गणेश, पुष्पदन्त, मणीश्वर, अतिबल, सुबल, मेघनाद, घटावह ९ घण्टाकर्ण, कालिन्द, पुलिन्द, वीरबाहुक, केशरी, किङ्कर, चण्डहास, प्रजापति १० इन गणोंको छोड़ औरभी सनकादि महा तपस्वी लोग व अन्य भी किरोड़ों गणों से युक्त होकर शिवजी ११ देवता किन्नरों से सेवित उस नन्दनवन में इन बहुतसे गणों से युक्त पार्वती समेत पैठे १२ व देवेश महादेवजी ने पार्वती जीको सब नन्दनवन दिखाया जो कि अति सुन्दर नानाप्रकारके वृक्षों से संयुक्त बहुत पुष्पादिकों से भराहुआ १३ दिव्य केलोंके वनोंसे युक्त व फूलेहुये चम्पाके वृक्षों से विराजमान पुष्पित मल्लिका व मालतियों से शोभित १४ नित्य पुष्पित पाड़रकी शाखाओंसे शोभित व चन्दनादि सुगन्धित महावृक्षों से विराजमान १५ देवदारुओं के वनोंसे सेवित व अन्य बहुत बड़े ऊँचे २ वृक्षों से समाकुल, सरल, नारियल, सुपारी १६ खजूर, कटहल के फलभार से झुकेहुये वृक्षों से शोभित परिमल, कृतमाल, तमाल, शालके पुण्यवृक्षोंसे समाकुल १७ अग्निके तेजके तुल्य प्रकाशित सप्तपुष्पी के वृक्षों से सुशोभित तालके व और भी बहुत से सुगन्धित पुष्पों की शोभासे सदैव शोभित १८ जामुन, नींबू, मातुलिंगादि वृक्षों से समाकुल, नारंगी, सिन्धुवार, प्रियाल, शाल, तिन्दुक १९ गूलर, कैथा, राजजम्बूके वृक्षोंसे शोभित बड़हल आदि महकतेहुये वृक्षोंकी शोभा व सुगन्धिसे समाकुल २० व आम फलराजादि मेघों के समान नीलवृक्षोंसे युक्त नीलदिव्य शालके और

जालाओं के वनों से शोभित २१ सूर्य के समान विशाल तमालों से सेवित था ऐसे पुण्यकारी नन्दनवनको शिवजीने दिखाया २२ व बहुत घने जोकि और सब नीलवनके समान वृक्षोंसे शोभित सब काम फलसे युक्त कल्याण फल देनेवाले २३ महापुण्यकारी कल्पवृक्षों से शोभित नन्दनवन है और अनेकप्रकारके पक्षियोंके मीठेस्वरोंसे नाद युक्त है २४ कोकिलाओं के पुण्यकारी मीठे शब्दों समेत है मकरन्द के लोभी पक्षियों के शब्द से नादित है २५ अनेकप्रकार के वृक्षों और अनेकप्रकार के मृगसमूहोंसे भी युक्त है वृक्षोंसे अनेकप्रकारके सुगन्धित फूल पृथ्वीमें गिरते हैं २६ तब सुगन्धों से पूजितहुई की नाई पृथ्वी वह प्रकाशित होती है वहांपर महापुण्यकारिणी कमलकी सुगन्ध से निर्मल बावली हैं २७ जोकि जलोंसे पूरित हंस चकई चकवासे सेवित जलकी सुगन्ध से पूजित सागरके समान तालाबों से २८ सबओर नन्दनवन प्रकाशित है अप्सराओंके समूह विमान सुन्दर कलश और सुशोभन सोनेके दण्डोंसे युक्त है २९ नन्दनवन राज अमृतयुक्त महलों से जहां तहां प्रकाशित है किन्नरोंके महागणोंसे ३० गन्धर्व्व सुरूपवती अप्सराओं से देवताओं के विनोदोंसे मुनिवृन्दों से सुन्दर योगियों से ३१ सब जगह नन्दनवन शोभित है इस प्रकार देवी समेत महानुभाव महात्मा शिवजी पुण्यवानों के निवासके स्थान सुखकी खानि शान्ति गुणोंसे युक्त ३२ । ३३ सूर्य तेजकेतुल्य प्रकाशित इस प्रकारके नन्दनवन में पार्वतीजी सहित श्रीमहादेवजी ने सबओर उनको दिखाकर फिर सूर्यतेज से प्रकाशित पुष्पों व फलोंसे युक्त कल्पवृक्ष नाम महावृक्षको देखा ३४ व ऐसे कल्पवृक्षको देखकर पार्वतीजी श्रीशिवजीसे बोलीं कि हे नाथ! इस वृक्षकानाम बताओ क्या है क्या यह पुण्यवानोंकी मूर्ति है ३५ वा तेजस्वियोंमें श्रेष्ठ सूर्य है यह सुनकर शिवजी देवीजी से बोले कि इसकी प्रतिष्ठा बड़ी शुभ है जैसे देवताओं में मधुसूदन भगवान् श्रेष्ठ हैं ३६ नदियोंमें गंगाजी श्रेष्ठ हैं व जैसे सब सृष्टि करनेवालोंमें ब्रह्मा श्रेष्ठ हैं व अमृतसाव होनेके कारण जैसे चन्द्रमा सबतारागणों में श्रेष्ठ है व धारण पोषण करनेवालों में जैसे पृथ्वी श्रेष्ठ है ३७ व

जैसे सब हाथियों में ऐरावत नाम हाथी श्रेष्ठ है वैसे सब जला-
शयोंमें समुद्र श्रेष्ठ है हे देवि ! जैसे सब महौषधियोंमें अन्न श्रेष्ठ है व
पर्वतों में जैसे हिमवान् श्रेष्ठ है ३८ सब विद्याओं में जैसे ब्रह्मविद्या
श्रेष्ठ होती है वैसे सब मनुष्यों में राजा श्रेष्ठ होता है वैसेही यह
सब वृक्षोंमें श्रेष्ठ कल्पवृक्ष है सबका अतिथि व देवराज का परमप्रिय
है ३९ यह सुन पार्वती जी बोलीं कि हे महाराज ! वृक्षराज कल्प-
वृक्ष के सब शुभ पुण्यकारी गुण हमसे कहो ऐसा सुन महादेवजी
अपनी प्रिया पार्वतीजीसे बोले कि ४० जो २ लोग भूतलपर पुण्य
करते हैं व स्वर्ग को आते हैं वे देवरूप होकर इसी कल्पवृक्ष के
प्रसादसे यहां वाञ्छितपद भोगते हैं व सब सुखकरते हैं ४१ और
इसीसे पुण्यकारी तपस्वी सब होते हैं यह जीवाधिक रत्नमय दिव्य
और यहां भी दुःखसे प्राप्त होने योग्य है महाप्रधान देवता इसको
पाकर सुख भोगते हैं ४२ शिवजीका वचन सुनकर व आश्चर्यभूत
समझकर पार्वतीजीने अपने मनसे संकल्प किया कि इसमेंसे जो
दिव्य एकस्त्री निकलती तो अच्छा था ४३ यह संकल्प करतेही सब
दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित अतिरूप शील गुणवती एक स्त्री उस
कल्पवृक्ष से निकल आई व पार्वतीजी ने उसको ग्रहण किया उस
का रूप ऐसा था मानों विश्वभर के मोहनेके लिये व कामकी सहा-
यता करने ४४ व क्रीड़ा करने के लिये सुख सिद्धिरूप उत्पन्न होकर
वहां आई थी व उसके नयन कर चरण सब कमलके तुल्य कोमल
बड़े आदि थे व सब सिद्धिरूप थी व उसका मुख कमलके तुल्य कर
पङ्कज के समान देहकारंग तपाये हुये सुवर्ण के रंगका ४५ व सब
विमलतेज केशनील व घूंघुरवाले बड़े लम्बे पर बहुतही पतले और
चीकने नम्र व लालेरेशम से अच्छे प्रकार बंधे सुगन्धित पुष्पगुहे व
सुगन्धित लेपअंतर इत्यादि लगाये हुये ४६ पाटी उसकी ऐसी दृढ़
व चीकनी बनी थी कि देखतेही बनता था केशपाशों में मोतियों की
माला पुही थी जैसे वृक्षोंपर ओसके बिन्दु प्रातःकाल शोभित होते हैं
४७ व पाटीके नीचे मस्तकपर पीततिलक बृहस्पति के समान शोभि-
त होता वह तिलकके सर व कस्तूरी घिसकर लगाया गया था व अपने

तेजों से विराजित होता था ४८ व केशपाशके नीचेका तिलक उत्तम शोभाको प्रकाशित कराता था व केशोंके बीच २ में जो मोतियोंकी लड़ें लगी थीं अत्यन्त शोभित होती थीं ४९ जैसे पूर्णमासी का चन्द्रमा प्रकाशित होता है वैसेही मुख प्रकाशित होता था मुखकी गोलाई व प्रकाश पूर्णमासी के चन्द्रमाके समान शोभित होता था पूर्णमासी के चन्द्रमा में भी कलङ्क रहता है व दिनमें उसका कुछ प्रकाश नहीं रहता पर उसका मुख निष्कलंक व रात्रि दिन सदा प्रकाशित रहता क्योंकि सदा हृष्टपुष्ट बनारहता था व चन्द्रमा कृष्णपक्षमें प्रतिदिन कलाहीन हुआकरता है व वह सदा कलाओंसे पूर्ण था वह सकलंक व मुख निष्कलंक था कमलमुखी सब गुणोंसे उपपन्न उसको देखकर व अपना गन्ध उसमें देखकर कमल पवन लगतेही कांपने लगे कि हम में ऐसा गन्ध नहीं है ५० । ५३ इससे सहसासे लज्जित होकर वह जाकर सदैव पानीमें रहने लगा कोई २ नियत मतिवाले कहते हैं कि कामका कोश समुद्रमें रहता है ५४ इसीसे वह अपनी कलाओंसे सुन्दर दाँतोंको रत्नरूप दिखाता हुआ मानों हँसता था ओष्ठ पक्के कुंदुरु के समान अरुण उससे शोभायमान मुख था ५५ सुन्दर भौंहें सुन्दर नासिका सुन्दर कान रत्नोंसे भूषित सुवर्णकी कान्तिके समान दीप्ति संयुक्त कपोल थे ५६ ग्रीवामें तीन रेखा शोभित थीं वे रेखा सौभाग्य शील शृङ्गारों से थीं ५७ कठिनपीन व गोले उसके कुचकुम्भ मानों कामराज के अभिषेक के लिये निर्मित हुये थे ५८ कन्धे दोनों ऐसे समान शोभायुक्त थे कि वैसे कहीं दिखाईही नहीं दिते भुजभी दोनों समान चढ़ा उतार सब शुभलक्षण युक्त थे ५९ कर कमलोंकी अँगुलियां पांच पांचोंके समान थीं व सब दिव्यलक्षण संयुक्त थीं ६० नख युक्त अँगुलियां सब सीधा व मध्यमासे दोनों ओरोंको कुछेक यथाक्रम नीचेको झुकती गई थीं तीक्ष्ण नख जलबिन्दुके समान थे ६१ उसके अङ्गों का रंगभी पद्महीके समान था इससे जान पड़ता था कि मानों सब प्रकार से वह पद्मिनीही थी ६२ सब अङ्ग सब लक्षणों से सम्पन्न होनेके कारण परमसुन्दर लगते थे चरण दोनों अति कोमल लाले कमलके सदृश नम्र थे ६३ व चरणोंके नखोंकी ज्योति रत्नोंके प्रकाश

कै समान प्रकाशित थी जैसे शास्त्रों में कहा है तैसे उसके अंगों में सब रूपथे ६४ व सब आभरणों की शोभा से शोभित हार कङ्कण नूपुरयुक्त क्षुद्रघण्टिका से शोभित ६५ नीले रेशमी वस्त्रों से भूषित दिव्य लाल कंचुकधारे थी इससे बड़ी शोभाको प्राप्त थी ६६ ऐसी स्त्रीको पाकर कल्पवृक्षसे प्रसन्न होकर पार्वतीजी फिर महादेव जीसे बोलीं ६७ कि हे स्वामिन् ! जैसा तुमने इस कल्पवृक्षका माहात्म्य कहा कि जो कुछ चाहो सब देसक्ता है हमने सब देखा क्यों कि हमारे संकल्प करते ही यह स्त्री उत्पन्न होगई वस जैसा प्रभाव है हमने सब देखा ६८ सूतजी शौनकादिकों से बोले कि ऐसा पार्वतीजी महादेवजी से कहती ही थीं कि इतने में उस स्त्रीने आकर उन दोनों के भक्तिसे चरणकमलोंमें प्रणाम किया ६९ व बोली कि आप ने हमको क्यों उत्पन्न किया इसका कारण कहिये ७० श्रीपार्वतीजी बोलीं कि वृक्षका कौतुक देखने के लिये व महत्त्व जानने के लिये हमने तुमको उत्पन्न कराया है ७१ हे भद्रे ! तुम्हारे रूपकी सम्पदा से शीघ्र ही फलको प्राप्त भई लोकमें अशोकसुन्दरी तुम्हारा नाम होगा सब सौभाग्यसम्पन्न होकर तुम हमारी पुत्री कहाओगी इस में कुछ भी सन्देह नहीं है ७२ ॥

चौ० सोमवंश भूषण महिपाला । नहुषनाम जो परमविशाला ॥
जो पुनि होइहि इन्द्र पुनीता । तापत्नी तुमहोत्र विनीता ७३
इमि है वरगिरिजा निज धामा । शिवयुतगई परमअभिरामा ॥
गिरि कैलास सुहावन पावन । जो सबभांति विचित्रवनावन ७४

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्याने

गुरुतीर्थमाहात्म्येच्यवनचरित्रेद्व्यधिकशततमोऽध्यायः १०२ ॥

एकसौतीनका अध्याय ॥

दो० तीन अधिक सवयेंमहें हुण्ड शैलजा कन्य ॥
वार्त्तातातप दैत्य कर है विचार नहीं अन्य १
आयु भूपतप अत्रिसुत सों पायहु वर पूत ॥
यहवर्णित यामहैं सकल बहुत भांति मजबूत २

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जलसे बोला कि वह सब स्त्रियों में श्रेष्ठ अशोकसुन्दरी सब काम गुणोंसे युक्त पुण्यकारी नन्दनवनमें विहार करने लगी १ व उसके संग और भी बहुतसी पुरुषवती देवताओंकी कन्या भी खेलती थीं उनके संग मन्द २ हँसती हुई गाती नाचती सब भोगोंको भोगने लगी २ एक समय विप्रचित्तिनाम दैत्यका पुत्र स्वेच्छाचारी महाकामी अतितीव्रस्वभाव हुण्डनाम दैत्य नन्दनवन में आया ३ उसने सब आभरणों से भूषित अशोकसुन्दरी को देखा व उसके देखनेसे वह दैत्य कामबाणोंसे अतीव व्याकुल हुआ ४ व उससे बोला कि हे शुभे ! तू कौन है व किसकी स्त्री वा कन्या है व किस कारणसे इस नन्दनवनमें आई है ५ इतना सुनकर अशोकसुन्दरी बोली कि सुनो हम अतिपुण्य शिवजीकी कन्या हैं व कार्तिकेयजीकी भगिनी हैं व पार्वतीजी हमारी माता हैं ६ व बालभाव से क्रीड़ा करनेके लिये इस नन्दनवनमें आई हैं आप कौन हैं और किसलिये हमसे ऐसा पूछते हैं ७ तब हुण्डबोला कि हम विप्रचित्ति दैत्यके पुत्र हैं सब गुण लक्षणों से युक्त हैं हुण्ड ऐसा हमारा नाम है व बलवीर्य मद से उद्धत हैं ८ हम दैत्योंमें सबसे श्रेष्ठ हैं देवलोक व मर्त्यलोक में भी तप व यश करने में हमारे तुल्य और कोई नहीं है ९ अन्य नागलोकादिकों में भी हमारे समान रूपवान् कोई नहीं है सो हे विशालनयने ! हम तुमको देखतेही कामके बाणोंसे मारे गये १० अब तुम्हारे शरण में हैं प्रसन्नतासे सुमुखी होओ व हमारी प्राणप्यारी तुम अपने आप होओ ११ इतना सुनकर अशोकसुन्दरी बोली कि सुनो सब सम्बन्धका कारण हम तुमसे कहेंगी इसलोकमें जितनी स्त्रियां वा पुरुष उत्पन्न होते हैं उनको पति वा स्त्री जो मिलनेवाले होते हैं वेही मिलते हैं १२ हे हुण्ड ! संसारमें यही व्यवस्था है परन्तु ऐसा होतानहीं जिसका जिसके संग विवाह होनेवाला होता है होता है कुछ किसीके चाहने से नहीं होता १३ परन्तु एक कारण है जिससे हम तुम्हारी स्त्री नहीं होती हे दैत्यराज ! वह वृत्तान्त हमसे चित्त लगाकर सुनो १४ हे महामते ! जब हम वृक्षराज कल्पवृक्ष से उत्पन्न ई तब पार्वती हमारी माताने हमारे लिये यह सङ्कल्प कर दिया १५ व

वह सङ्कल्प महादेवजी के सम्मतसे भी उन्होंने किया था वह यह है कि महाप्राज्ञ धर्मात्मा सोमवंश में १६ बड़े विजयी वीर्य में विष्णु भगवान् के ही समान तेजसे अग्निके तुल्य सर्वज्ञ सत्यवादी व धनमें कुबेरके समान १७ यज्ञ करने में तत्पर महादानी सुरूप में कामके तुल्य धर्मात्मा गुणशील में महानिधि नहुष नाम महाराज हैं १८ सो महादेवजी के सम्मतसे पार्वतीजी ने हमारे लिये उन्हीं नहुष को पति नियत कर दिया है व कहा है कि उनसे सब गुणयुक्त सुन्दर पुत्र तुम पाओगी १९ तिससे महादेवजी के प्रसादसे संसारमें इन्द्रोपेन्द्र के समान मनुष्यों के प्यारे रजमें श्रीर ययातिजी को प्राप्त होंगी २० हम पतिव्रता स्त्री हैं इससे अब यहां से चले जाओ व सर्वथा भ्रांति छोड़ो २१ तब हँसकर हुण्ड बोला कि देवी व महादेव ने तुम्हारे लिये योग्यपति नहीं नियत किया न उचित वचन ही कहा २२ क्योंकि धर्मात्मा राजा नहुष तो बहुत दिनों के पीछे सोमवंश में उत्पन्न होंगे फिर आप तो उनसे बहुत जेठी होंगी व वे अवस्था में बहुत बड़े होंगे फिर तुम्हारा उनका विवाह कैसे होगा २३ बोटी स्त्री श्रेष्ठ होती है पुरुष छोटा श्रेष्ठ नहीं होता हे भद्रे ! वह पुरुष तुम्हारा कब स्वामी होगा २४ इसी प्रकार तुम्हारी युवावस्था नारा हो जावेगी युवावस्था ही के बलसे सदैव स्त्रियाँ रूपवती होती हैं २५ पुरुषों को प्यारी होती हैं हे श्रेष्ठमुख और वर्णवाली ! स्त्रियों की युवावस्था ही महामूल है २६ तिसीके आश्रयसे सब मनीषा कानना भोगती हैं भला यह कौन जानता है कि कब राजा आयु के पुत्र नहुष होंगे २७ युवावस्था अब वर्तमान है सब ठूठा हो जायगा वही तो वह स्वामी नहीं आया जब आवेगा उत्पन्न होगा फिर नामक देगा तुम्हारा वस्था रहेगी २८ कब वह युवावस्थासे युक्त तुम्हारे योग्य होगा इससे अब यौवन के प्रभावसे माधुर्य ललता मधुपान करो २९ व हे भिक्कुविक ! हमारे सङ्ग सुखसे क्रीड़ा करो हुण्डके ऐसे वचन सुनकर महादेवजी की क्रम्या अशोक सुन्दरी ३० साहस करके फिर दानवेन्द्र से बोली कि देखो अज्ञानतई यौगुणी के द्वारपुत्र में ३१ देवजी के आश्रय धर्मात्मा नलदेवजी वसुदेवके पुत्र होंगे वे राजा रेवतकी कन्या रेवती

को अपनी भार्या बनावेंगे ३२ जोकि प्रथम चौयुगी के सत्ययुग में उत्पन्नहुई है वह तो उनसे तीनयुगों की जेठी है ३३ पर बलदेवकी प्राणप्रिया भार्याहोगी सो भविष्य द्वापर युगके अन्तमें ऐसा होगा ३४ इसके विशेष एक गन्धर्वकी कन्या मायावती नाम हुई उसको दानवों में उत्तम शम्बरासुर हरलेगया ३५ उसके पति श्री कृष्णजी के पुत्र बड़े बलवान् प्रद्युम्नवीर यादवेश्वरों के आनन्द देनेवालेहोंगे ३६ यह बात महाभाग महावेदवादी व्यासादिकमहात्माओंने लिखाहै ३७ हे दैत्य ! ऐसा देखाजाताहै हिमवान्की कन्या संसारके रक्षाकरनेवाली पार्वतीजी ने हमसे कहा है ३८ तुम जो ऐसा कहतेहो तो केवल कामातुर होनेके कारण हमारे पानेके लोभ सेही कहतेहो यह बड़े पापकी वार्ता है पापसे युक्त व वेद शास्त्र से रहितहै ३९ शुभ वा अशुभ जो जिसके लिये भाग्य में लिखाहै पूर्व कर्म के अनुसारसे वही उसको मिलताहै ४० देवताओं व ब्राह्मणों के मुखसे जो सत्य वचन निकलता है वह अन्यथा नहीं होता ४१ हमारे भाग्यको पार्वतीजी ने जान लिया है तब उन्होंने ने कहा है कि तेरा विवाह राजा नहुषके साथ होगा सोभी अपने आप नहीं महादेवजी के भी सम्मत से कहाहै ४२ हे दैत्य ! ऐसा जानकर चलेजाओ अपने मनकी भ्रान्ति मिटादेओ तुम मन चलायमान न करो तुमको सामर्थ्य नहीं है जो हमारे संग ऐसा करसको ४३ क्योंकि पतिव्रता चित्तमें दृढ़होती हैं इससे कौन हमारा मन चलायमान करनेमें समर्थहै हम महाशापसे भस्मकरदेंगी यहांसे अभी चलाजा ४४ ऐसा उसका वचन सुनकर बली दानवेन्द्र हुण्डनेभी मन से चिन्तना किया कि अब यह हमको कैसे मिले ४५ यह मायावीहुण्ड चिन्तना कर वेगसे उस स्थान से निकल कर अशोकसुन्दरी को वहीं छोड़कर अंतर्धान होगया दूसरे दिन फिर तमोमयी मायाकरके ४६ दिव्य मायामय स्त्रीका रूप कर मायाही से कन्या रूप होगया ४७ श्रेष्ठकरिहांववाली हास्य लीला से युक्त वह माया रूपी कन्या अशोकसुन्दरी के पास आई ४८ और उनसे स्नेहयुक्त ही की नाई बोली कि हेसुभगे ! तुम कौनहो और किसकीहो जो कि

तपो वनमें स्थितहो ४६ हे बाले ! हे सुभगे ! किस लिये अत्यन्त दुष्कर काम सुखानेवाला तपकरतीहो सो हमसे कहो ५० तब मायारूपी अभिलाष समेत दानव के कहेहुये शुभवचन सुनकर शीघ्रही ५१ अत्यन्त दुःखयुक्त अशोकसुन्दरीने अपनी उत्पत्ति का सुन्दर वृत्तान्त जैसे पूर्वसमयमें हुआ और सब तपस्याका कारण कहा ५२ परन्तु उस दुरात्मा दानवकी माया का रूप नहीं जाना अच्छे हृदय होने से उसने कहा ५३ तब हुण्ड फिर उससे बोला कि हे देवि ! तुमतो पतिव्रताहो साधु व्रतमें परायण साधुशील समाचार से युक्त साधुचारा महापतिव्रताहो ५४ हे भद्रे ! हम पतिव्रता पातिव्रत धर्म में परायण रहती हैं हे सुभगे ! महापतिव्रता हम स्वामी के लिये तप करती हैं ५५ हमारे पतिको दुरात्मा हुण्ड दैत्य ने मारडालाहै व उसके नाश करने के लिये हम घोर बड़ातप करती हैं ५६ सो अब पुण्यकारी हमारे स्थानपर चलो गङ्गातीर में हमारा आश्रम है इसके विशेष औरभी विश्वास कराने के लिये बहुतसे वचन उस स्त्रीरूपधारी हुण्डने कहे ५७ तब हुण्ड के साथ सखीका भावकरके शिवजी की कन्या मोहितहुई तब मोहित उस शिवकुमारी को हुण्ड माया से अतिमनोहर अपने स्थानपर लेगया हे पुत्र ! प्रथम तो उसने गङ्गाके समीप अपना पुर बतायाथा परन्तु जब वह संग चली तो लेजाकर वह मेरुके शिखर पर वैदूर्य नाम पुरमें पहुँचा ५८ । ५९ जोकि सब गुणों से युक्त सब सुवर्णही से बनाहुआथा बड़े २ ऊँचे धवरहरोसे समाकुल था व कलश दण्ड चामारादि नानाप्रकारके पदार्थोंसे वह पुर शोभितथा ६० नानाप्रकारके वृक्षोंसे भरेहुये मेघों के समान नील वनोंसे शोभित होराथा वापी कूप तड़ाग व नदी आदि जलाशयों से शोभित होताथा व नाना प्रकारके चित्रविचित्र मन्दिर महारत्न और सुवर्ण संयुक्त और भी बहुतसे वहाँ बने थे व सब कामोंसे समृद्ध दानवके ६१ । ६२ उस पुरको अशोकसुन्दरीने अतिसुन्दरता के साथ बनाहुआ देखा फिर पूँछा कि हे सखे ! यह किस देवताका स्थानहै हमसे कहो ६३ तब वह स्त्रीवेषधारी हुण्डदैत्य बोला कि यह स्थान दानवेन्द्र हुण्डका है

जिसको कि तुमने पूर्वकाल में देखा है हे महाभागे ! उसीका यह है हम वही हुण्डही हैं ६४ हे वरवर्णिनि ! हम मायासे तुमको यहां लाये हैं ऐसा अपना नाम कहकर फिर से ने से बने हुये अपने मन्दिर में अशोकसुन्दरीको ले गया ६५ जो कि नाना प्रकारके मन्दिरोंसे युक्त कैलास के शिखर के तुल्य था वहां ले जाकर सिंहासन पर बैठाकर कामसे पीड़ित होकर ६६ वह दैत्य हाथ जोड़कर अति विनयसे बोला कि ६७ हे भद्रे ! जो २ वस्तु तुम चाहोगी सब तुमको देवेंगे इसमें कुछ भी संशय नहीं है इससे कामसे पीड़ित हमको हे विशालाक्षि ! भजो ६८ अशोकसुन्दरी बोली कि दानवेश्वर तुम हमको चलायमान नहीं कर सकते हम मनसे नहीं यहां आई तुम मायासे हमको यहां लाये हो ६९ हे दानवाधम ! तुम ऐसे महापापियोंको वा देवोंको हम बड़े दुःख से मिलने के योग्य हैं इसमें सन्देह नहीं है इससे बार २ नवक ७० तप तेजसे जाज्वल्यमान स्कन्दजी की भगिनी बड़े शेषोंसे जलाती हुई व उस दानवके नाश करने की इच्छासे कालकी जीभही के समान अपनी जिह्वा लपलपाती हुई ७१ फिर बोली कि हे पाररूप दानवाधम ! तूने यह उग्र कर्म अपने नाशके लिये किया है ७२ व अपने वंश व परिवारके भी विनाशनेही के लिये किया है तूने प्रज्वलित अग्निकी शिखाके समान हमको अपने गृहमें पहुँचाया है ७३ जैसे कि अशुभ कुक्कुटपक्षी सब शोकोंसे युक्त होता है व जिसके गृहमें रहता है उसका नाश करता है ७४ ऐसेही हम पतिव्रताओं का हाल होता है कि जो दुष्ट हमलोगों को छलसे अपने घरको लेजाता है पहुँचतेही उसके धन समेत कुल व परिवार वंशका नाश कर डालती हैं इससे जो कोई हमको अपने गृहमें रखना चाहता है वह अपने गृहका नाश चाहता है ७५ सो हम वैसेही तुम्हारा नाश चाहती हुई तुम्हारे गृहमें आई हैं इससे तुम्हारे पुत्र धन धान्य सब का इस समय नाश करेंगी ७६ व जीव कुल धन धान्य पुत्र पौत्रादिक सबोंको नाश करके तब अब हम तुम्हारे घरसे जायँगी इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ७७ हे दुष्ट ! हमको आयुके पुत्र नहुषजी के लिये परम दुष्कर तप करती हुई को जैसे तू यहां लाया है ७८ वैसेही हमारा भर्ता आकर तेरा

नाश करेगा क्योंकि हमारे निमित्त जो उपाय तूने किया है उस को पूर्व समय देखने देखा था ७८ यह लोक की कथा सत्य है जिसे बुद्धिमान लोग गाया करते हैं व प्रत्यक्ष लोक में दिखाई देता है परन्तु कुबुद्धिवाले लोग नहीं देखते ८० जिसको जहां सुख वा दुःख भोगना होता है वही वहां जाकर भोगता है इसमें सन्देह नहीं है ८१ इससे अब अपने इस कर्म का फल महीतल में जाकर भोग करो व पीछे परस्त्रीगमन करनेवाले जिस नरकमें जाते हैं उसमें जापड़ो ८२ सुतीक्ष्ण व सुन्दर धारवाले खड्ग के ऊपर जैसे कोई नहीं अँगुली धरसक्ता वैसी ही हमको इस समय जानो ८३ भला गर्जते हुये क्रुद्ध विकराल सिंहके मुखके बाल साहसके आकारसंयुक्त कौन प्राणी सम्मुख जाकर उखाड़ सकता है ८४ सत्याचारयुक्त दम समेत नियत चित्त तप करती हुई हमारे सङ्ग भोगकरनेकी इच्छा जो तुम ने की है वह अपने नाशहीकी इच्छाकी है ८५ क्योंकि जो कालेनाग के जीतेही जीते कोई मणि लेनेकी इच्छा करता है तो वह कालही की प्रेरणासे चाहता है ८६ सो हे मूढ़ ! कालकी प्रेरणाही से मोहित तुम्हारी ऐसी कुमति हुई है उसे क्यों नहीं देखते ८७ आयुके पुत्र नहुषको छोड़कर कौन हमको देख सकता है और हमारे रूपके देखने से नाशको प्राप्त होगा ८८ इस प्रकार तिससे कहकर शोक दुःखयुक्त नियत नियमयुक्त वह पतिव्रता गङ्गाजीके किनारे गई ८९ पूर्वसमय में तो पति पानेकी इच्छासे उसने परमतप किया था परन्तु अब तुम्हारे वधकरने के लिये फिर दारुणतप करेंगी ९० जब तुमको महात्मा नहुषजी से मारेहुये देखेंगी क्योंकि हमारे सङ्कल्परूप बाण काले नागके दांतों के समान हैं ९१ रणमें रक्ततमेत केश खुलेहुये मृतक तुमको पड़ेहुये देखकर फिर हम अपने पति नहुषजी के समीप को जायेंगी ९२ ऐसा निषमकरके गङ्गाजीके उत्तम तटपर स्थित होकर अशोकसुन्दरी हुण्ड के नाश करने के लिये तप करनेलगी ९३ ॥

हरिगीतिका ॥

जिम्हि अनल ज्वालाकी सुमाला सकललोक सँहारई । नहिं तनिक छोड़त प्रलय दिगनहिं तुरत सकल विदारई ॥ तिम्हि क्रोध

युत त्रिदशेशपुत्री हुण्डनाशन के लिये । तपकरनलागी सुरनदी तट समझिकै सब निज हिये ९४ ॥

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि ऐसा कहकर शिवजी की कन्या अशोकसुन्दरी गङ्गाजी के तीरपर जाय स्नानकर अपने पुर काञ्चनपुरके समीप ९५ तप करनेलगी व सङ्कल्प करदिया कि यह तप हम हुण्डदैत्यके नाश के लिये करती हैं इस प्रकार बाला अशोकसुन्दरी सत्यवादिनी होकर तप करने लगी ९६ हुण्डभी दुःखित होकर शापसे जलेहुये चित्तसे अत्यन्त वचनरूप अग्नियों से जलताहुआ अपने मन में चिन्तना करनेलगा ९७ व फिर उस ने कम्पननामदैत्य को बुलाकर कहा कि हमको बड़ा भारी शाप हो गयाहै क्योंकि हमने एक स्त्रीका पातिव्रत भङ्ग करना चाहा था ९८ इससे उसशिवकी कन्या अशोकसुन्दरी नाम स्त्रीने शापदिया कि तू मेरे पति नहुष के हाथों से मरेगा ९९ परन्तु अभी नहुष उत्पन्न नहीं हुआ आयुकी स्त्री अभी गर्भिणीही है जैसा करने से वह नहुष उत्पन्नही न हो वैसा उपायकरो १०० यहसुनकर कम्पन दैत्य बोला कि किसी युक्ति से आयु की भार्या तुम यहां हरलाओ बस इसी प्रकारसे तुम्हारा शत्रु न उत्पन्न होगा १०१ नहीं यदि वहां जानेपर आयुकीस्त्री गर्भिणी समझपड़े तो उसका गर्भही डरवाकर पातितकर डालो इसी प्रकारसे तुम्हारा शत्रु न उत्पन्नहो १०२ दुष्टात्मा नहुष के जन्म कालकी राह देखतेरहो आयुकी स्त्रीको यहां लेआकर पापी नहुषको पेटहीमें मारडालो १०३ इसप्रकार कम्पनसे सम्मतकरके वह दानव हुण्ड नहुषके मारडालने के यत्नमें उद्यत हुआ १०४ श्री विष्णुभगवान् राजा वेनसे बोले कि ऐलके पुत्र महाभाग आयु नाम राजाहुये ये धर्मात्मा पृथ्वीभरके महाराज सत्यव्रत में परायणहुये १०५ उपेन्द्रके समान तपस्या यश और बलमें थे अत्यन्त पुण्यकारी दानयज्ञों से सत्य और नियम से १०६ एक छत्रसे सब धर्म जाननेवाले राजा पृथिवी में राज्य करते भये पर सोमवंशका भूषण १०७ पुत्र कोई इनके न था इससे बड़े दुःखीहुये व उन धर्मात्मा ने चिन्तना की कि हमारे पुत्र कैसे हो १०८ जब राजा आयु को

ऐसी भिन्ताहुई तो एकाग्रचित्त होकर उन्होंने पुत्रके लिये बड़ी २
युक्तियां कीं १०९ अत्रिके पुत्र महात्मा महामुनि दत्तात्रेयजी के
समीपगये परन्तु उस समय वे मदिरा पान करने से अरुण नेत्र
किये एक स्त्री के संग क्रीड़ा कर रहे थे ११० वरन वारुणी से मत्त
बहुतसी स्त्रियों के मध्यमें विराजमान एक सब स्त्रियों में श्रेष्ठ शुभ
स्त्री को अपने क्रोड़पर बैठायेहुये १११ बड़ी प्रीति से गाते नाचते
थे मदिरा बारबार पीते थे यज्ञोपवीत भी निकाल डालाथा क्योंकि
महायोगीश्वरों में उत्तम तो थेही ११२ दिव्य पुष्पों की माला व
मोतियों का हार पहिने थे दिव्य चन्दन लगायेहुये सुनीश्वरजी वि-
राजते थे ११३ उनके आश्रम पर जाकर व उन सुनीश्वरजी को
देखकर राजाने शिर झुँकाय पृथ्वीपर गिरकर दण्डवत्प्रणाम किया
११४ पर वे धर्मात्मा अत्रिके पुत्र योगिराज दत्तात्रेयजी राजा
को भक्तिसे आगे आये देख ध्यानमें स्थित होगये ११५ इसीप्रकार
तिस राजाको सौवर्ष बीतगये तो उसकी निश्चल शान्तियुक्त मानस
भक्ति देखकर ११६ बुलाकर बोले कि हे नृप ! तुम किस लिये छेश
करतेहो हम तो ब्रह्माचारसे हीनहैं ब्राह्मणता हमारे कभी नहीं है
११७ हमतो मदिरा पीनेवाले मांसखानेवाले हैं एक स्त्री में सदैव
आसक्त हैं इससे वर देनेमें हमको शक्ति नहीं है तुम अन्य किसी
ब्राह्मण की शुश्रूषा करो ११८ यह सुन महाराज आयु बोले कि हे
महाभाग ! आपके समान ब्राह्मणोत्तम परमेश्वर तीनों लोकों में कोई
नहीं है जो सब काम देसके ११९ आप अत्रिके वंशमें गोविन्द पर-
मेश्वर आकर अवतरे हैं ब्राह्मण का केवल रूपही धारणकियेहैं पर
हैं साक्षात् गरुडध्वज भगवान् १२० हे देवदेवता ! हे परमेश्वर ! तु-
म्हारे नमस्कार है हे शरणागतवत्सल ! हम तुम्हारे शरणमें हैं १२१
हे हृषीकेश ! हमारा उद्धारकरो तुम मायाकरकेही इस संसार में स्थित
हो व इस विश्वमें स्थित प्रजाओं के तुम धारण करनेवाले व विश्वके
नायकहो १२२ जगन्नाथ मधुसूदन आपको हम जानतेहैं हमारी रक्षा
करो व हे विश्वरूप ! तुम्हारे नमस्कार है १२३ कुञ्जल अपने पुत्र
कपिञ्जलसे बोला कि बहुत कालके पीछे दत्तात्रेयजी वत्सल से राजा

से बोले कि हमारा वचन करो १२४ मनुष्यकी खोपड़ीमें मदिराका
 अदहन देकर मांस पकाओ वह हमको भोजन करनेको देओ ऐसा
 वचन सुनकर पृथ्वी के पति आयु राजाने १२५ खोपड़ी उठाकर
 उसमें मदिरा भरकर शीघ्रही मांसकाटकर अच्छेप्रकार परिपक्वकरके
 अपने हाथसे १२६ ब्राह्मणको दिया तब प्रसन्न होकर वे ब्राह्मणस-
 त्तम १२७ भक्ति का प्रभाव तथा गुरुशुश्रूषा देखकर नम्रमन राजा
 से बोले कि १२८ हे राजन् ! जो फल पृथ्वीपर दुर्लभहो वह वर
 हम से मांगो जो २ चाहतेहो हम सब तुमको इस समय देवेंगे १२९
 इतना सुनकर राजाआयु बोले कि हे मुनिसत्तम ! जो आप कृपाकर
 सत्य वर दिया चाहते हैं तो गुणोंसेयुक्त सर्वज्ञ पुत्र हमको दें १३०
 जिसके देवताओं के समान वीर्य और अच्छा तेजहो व समर में
 देवता दानव उसको न जीतसकें क्षत्रिय घोर राक्षस दानव किन्न-
 रादि कोई उससे जीत न सकें १३१ फिर वह देवता ब्राह्मणों का
 भक्तहो व प्रजाओं के पालने में विशेषहो यज्ञ करनेवाला दानपति
 शूर व शरणागतवत्सलहो १३२ सब कुछ देनेवाला व सुख भोगने
 वाला महात्मा वेदशास्त्रों में पण्डितहो धनुर्वेदमें निपुण व सब शास्त्रों
 में परायण १३३ अनाहतमति व धीर संग्राममें सदा अपराजित इस
 प्रकारके गुणोंसेयुक्त सुन्दर रूपवाला व हमारे वंश के धारण करने
 वाला पुत्र हमको दीजिये हे विभो ! जो कृपाकरके वरदान दिया
 चाहतेहो तो ऐसही पुत्र दीजिये १३४।१३५ दत्तात्रेयजी बोले कि ॥
 चौ० एवमस्तु भूपति सुत तोरे । ऐसो होय अनुग्रह मोरे ॥
 गृहकुलवंशकारि अतिचातुर । पुण्यकर्म करवरदन आतुर ॥
 वैष्णव अंशसहित गुणधारी । होइहि तनय विप्रहितकारी ॥
 सार्वभौम भूपति सुरराजा । सरिसहोयगो सब गुणभ्राजा ॥
 ऐसो तनय नहीं सन्देह । भूपति दीन त्वरित तुम लेहू ॥
 यहफल लै निज नारिहि देहू । दशयेंमास पुत्र शुभलेहू ॥
 इमि दै वर फल नृपहि मुनीशा । आशिषदीन कीन नहिं रीशा ॥
 अन्तर्दान भयहुं त्यहिधामा । सब नारिनयुत पूरणकामा १३६।१३९
 इति श्रीमच्छेषपुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरु
 तीर्थमाहात्म्येच्यवनचरित्रेऽधिकशततमोऽध्यायः १०३ ॥

एकसौचारका अध्याय ॥

दो० वेदोत्तरशततम महें राज्ञी स्वप्न प्रभाव ।

कहशौनक नृपसों यही सकलवृत्तवर गाव ॥

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जलसे बोला कि जब महाभाग महामुनि दत्तात्रेयजी चलेगये तो महाराज आयु अपने पुरको आये १ व हर्षित होकर इन्दुमती के गृहमें प्रविष्टहुये जोकि लक्ष्मीयुक्त सब सामग्री से भरेपुरे के कारण इन्द्रभवनही के तुल्यथा २ आकर अपने राजकाज करने लगे जैसे इन्द्रपुरीका राज्य इन्द्र करते हैं व स्वर्भानुकी कन्या अपनी भार्या इन्दुमती रानीके संग राज्य करने लगे ३ महाराज से फलपाकर खाकर दत्तात्रेयके वचनसे महारानी इन्दुमतीने दिव्य तेजयुक्त गर्भ धारणकिया ४ उसीके दूसरी रात्रि मेंरानीने स्वप्नमें उत्तम बहुत मङ्गलदाता रात्रि में देखा ५ फिर सूर्य के समानप्रकाशित एक पुरुषको रात्रिमें अपने गृहको आतेहुये देखा फिर मोतियोंकी माला पहिने श्वेतवस्त्र धारण किये ६ व श्वेतही पुष्प की माला कण्ठमें धारणकिये सब भूषणों से भूषित दिव्य गन्ध अनुलेपन किये ७ शङ्ख चक्र गदा तलवार हाथोंमें लिये चतुर्भुजी मूर्ति धारण किये चन्द्रमाके बिम्बके समान छत्रधारे ८ महातेजस्वी शोभा से शोभित दिव्य आभरणों से भूषित हार कङ्कण बहूँटानूपुर धारण किये ९ चन्द्रमा के बिम्बके अनुकरण करनेवाले दो कुण्डलों से विराजमान कोई इसप्रकार महाप्राज्ञ पुरुष आया १० व इन्दुमतीको बुलाकर पूर्णमासीके चन्द्रमाके समान उजले सम्पूर्ण शङ्खसे जोकि रत्न व काञ्चनसे बँधाहुआ था उससे इन्दुमतीको जलसे स्नानकराया फिर एकसहस्र शिरका सुन्दररूपवाला सहेदनाग १११२ महामणियुक्त धाम ज्वालासे आकुल इन्दुमती के मुखमें बौड़ा फिर मोतियोंका माला कण्ठमें पहनाया फिर महायशस्वी कमल हाथमें देकर अपने स्थानको चलागया जोकि महामणि गठित सब भूषणों से भूषित १३१४ इसप्रकारके उत्तम महास्वप्न उसने देखे व सबके सब अपने पति आयुजीसे कहे १५ यह सुनकर महाराज चिन्तना करने

लगा व गुरुजी को बुलाकर उनसे उत्तम स्वप्नका वृत्तान्त कहा १६ और महाभाग सर्वज्ञ ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ शौनक गुरुसे राजा बोले कि हे महाभाग ! हे द्विजोत्तम ! आज रात्रि में मेरी स्त्रीने १७ ब्राह्मणको घरमें जातेहुये देखाहै यह स्वप्नका कारण क्याहै तब शौनकजी बोले कि हे राजन् ! तुमने जो बुद्धिमान् दत्तात्रेयकी सेवा करके वरपायाहै भला जो सुन्दरगुणयुक्त पुत्रके हेतु फल तुमने दत्तात्रेयजीसे पायाथा उसे क्याकिया किसको दिया १८ । १९ राजाने कहा वह तो हमने अपनी स्त्रीको देदिया था ये राजाके वचन सुनकर महाबुद्धिमान् द्विजश्रेष्ठ शौनकजीने कहा २० कि दत्तात्रेय के प्रसादसे अब तुम्हारे घरमें उत्तम पुत्र उत्पन्न होगा वह श्रीविष्णुजी के अंशसे युक्तहोगा इसमें कुछ संशय नहींहै २१ हेराजेन्द्र ! स्वप्न का कारण तुमसे कहा और कुछ नहीं व इन्द्र उपेन्द्र के समान दिव्य वीर्यवाला पुत्र होगा २२ व वह धर्मात्मा सोमवंशका बढ़ानेवाला होगा धनुर्वेद व वेद का पण्डित होगा २३ ऐसा कहकर शौनक अपने गृहको चलेगये व राजा रानी वड़ेहर्ष से युक्तहुये २४ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुशादेवेनोपाख्यानेगुरु तीर्थमाहात्म्येव्यवनचरित्रेचतुरधिकशततमोऽध्यायः १०४ ॥

एकसौपांचका अध्याय ॥

दो० एकसौपाँचवें महँ नहुष जन्महरण प्रतिपाल ॥

जिमिभोसोवर्णितकियोकुञ्जलबहुतविशाल १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि यहांकी तो यह व्यवस्था हुई कि राजा रानी वरदान पाकर अपने घरकोआये व फिर रानी सहित राजाभी आनन्दपूर्वक नन्दनवनमें क्रीड़ाकरनेके लिये गये वहांपर हुण्डका भेजाहुआ कम्पन दैत्य आया उसने पिता से बड़ा दुःखदायक वचनसुना जिसको आनन्द से चारण और सिद्ध कहतेथे कि राजा आयुके ऐसा पुत्र होनेवालाहै जो पराक्रममें विष्णुके तुल्य होगा व हुण्डका नाश करडालेगा ऐसा अप्रिय दुःखदायक वचन १।३ सुनकर उस कम्पनने आकर हुण्डकेआगे सबकहा सब

वृत्तान्त दुःखदायक संक्षेप से अपने मित्रके मुख से सुनकर हुण्ड विस्मित हुआ व अशोकसुन्दरी के पहले दियेहुये शापका स्मरण किया ४।५ कि इसीलिये वह अशोकसुन्दरी तपस्या कर रही है व उस दानवेन्द्र हुण्डने इन्दुमती रानीके गर्भ नाशकरनेका ६ बड़ा भारी उद्यम किया व जाकर रूप बदलकर नित्यही छिद्रदेखताहुआ वह दैत्य रानी के समीप रहने लगा ७ व रूप गुण उदारतासे युक्त रानीको देखने लगा व दिव्य तेजसे युक्त विष्णुजीके तेजसे सदा महाराज्ञी को रक्षित देखने लगा ८ दिव्य तेजसे युक्त सूर्यविम्ब की समान तिसके समीपमें रक्षा करनेके लिये सदैव स्थित रहे ९ और दुष्ट दानव तिसको दूरही से अनेक प्रकार की बड़ी उग्र अत्यन्त भयानक बहुत विद्या दिखलावे १० गर्भ के तेजसे युक्त विष्णुके तेज से रक्षित इन्दुमतीके मनमें कभी भय न हो ११ तब दानव विफल हुआ व उसका उद्यम निरर्थक हुआ उस दुष्ट हुण्ड के मनका इष्ट न पूरा हुआ १२ इसप्रकार सौ वर्ष पूरेहोगये व गर्भ बनाय पूरा हो गया तब स्वर्भानुकी कन्या इन्दुमती ने रात्रि में श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न किया उस पुत्रकी शोभा आकाश में सूर्य के समान हुई १३ । १४ सूतजी शौनकादि ऋषियोंसे बोले कि महादुष्ट कोई दासी सूतिका घरसे आई वह अपवित्र आचार संयुक्त महामंगल कहती थी १५ तिस दासी से सब जानकर दानवों में अधम वह हुण्ड दासी के अङ्गों में प्रवेश करके राजात्रायुके मन्दिर में चला गया १६ उसकी माया से मोहित होकर सबके सबलोग वहां सो रहे थे तब हुण्ड उस देवगर्भ के समान पुत्रको लेकर चल दिया १७ व वह दानवायन अपने काञ्चन नाम पुरमें पहुँचा व अपनी प्रिय विपुला भार्या को बुलाकर उससे बोला १८ कि शत्रुरूप इस महापापी बालक को अभी मार डालो व फिर भोजन बनानेवाले को देवो १९ कि वह यही मांस आज हमारे भोजन के लिये बनावे इस में नाना प्रकार के सुगन्धित पदार्थ लगाकर मांस भटपट तैयार करे हे महाभाग ! आज हम पाककर्ता के हाथोंका बनायाहुआ इसी बालक पापी का मांस भक्षण करेंगे इसमें कुछभी संशय नहीं है २० अपने पतिके ऐसे

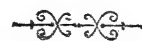
४०६ . पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

वचनसुनकर दैत्यकी स्त्री अत्यन्त विस्मित हुई कि आज हमारा भर्ता कैसे निर्घृणता को प्राप्त होकर निष्ठुर हो गया २१ जोकि सब लक्षणों से सम्पन्न देवगर्भके तुल्य प्रकाशित किसीके इस बालकके खानेमें उद्यत हुआ है नहीं जानती किसीके इस लड़केको निर्घृण होकर क्यों भक्षण किया चाहता है व कैसे कृपाहीन हो गया है २२ ऐसा अपने मनमें विचारांश करके दयायुक्त हो फिर अपने पतिसे कारण पूछने लगी कि तुम इस बालकको क्यों भक्षण किया चाहते हो २३ व बड़े क्रोधसे अत्यन्त निर्लज्ज होकर क्यों ऐसा कहते हो हे दानवेश्वर ! इसका सब कारण तत्त्वसे हमसे कहो २४ यह सुनकर दुरात्मा हुण्ड ने अपनी स्त्रीसे सब अपना दोष वृत्तांत व अशोकसुन्दरी का श्राप सब संक्षेपरीतिसे २५ उसे सुनकर उसकी स्त्रीने विचार किया कि इस बालक का वध सत्य किया जाय नहीं तो पतिही का वध होगा २६ यह विचारकर मारे क्रोधके मूर्च्छित होकर विपुला नाम हुण्डकी भार्या मेकला नाम अपनी दासी को बुलाकर उससे बोली कि २७ हे मेकले ! इस दुष्टमनवाले बालकको शीघ्र लेजा व भोजन बनाने वाले को दे कि वह आज हुण्डके भोजनके लिये इसीका मांस रींधे २८ मेकला बालक को लेजाकर भोजन बनानेवाले को बुलाकर उससे बोली कि राजाकी आज्ञा करो आज इसी बालक का मांस बनाओ २९ तब उसका ऐसा वचन सुनकर उस महात्मा पाककर्त्ता ने बालक को हाथसे लेकर शस्त्र निकालकर उसके मारने पर उद्यत हुआ ३० तब देवदेव श्रीदत्तात्रेयजी के तेजने उस बालककी रक्षा करली तब वह बालक बार २ हँसने लगा ३१ उसको हँसते हुये देख कर वह पाककर्त्ता कृपायुक्त हुआ तब वह कृपायुक्त दासी उससे बोली कि ३२ हे महामते ! यह बालक तुमसे अवध्य है क्योंकि देखो तो कैसे दिव्य लक्षण इसके हैं हम जानती हैं कि किसी अच्छे कुलका यह बालक है ३३ यह सुनकर वह पाककर्त्ता जिसका सूदभी नाम होता है उस दासी से बोला कि हे भद्रे ! तुमने सत्य कहा यह वचन तुम्हारा कृपायुक्त है राजलक्षणयुक्त रूपवान् किसी का पुत्र है ३४ फिर दुरात्मा दानवाधम हुण्ड इसको क्यों भक्षण किया चाहता है

जिसकी रक्षा पूर्वजन्म के सुकर्म से होती है ३५ वह सब आपदों से बचजाता है व नाना प्रकारके दुर्गम स्थानों में जाकर भी जीताही रहता है जिसका कर्म सहायक होता है वह अग्निके बीचमें गिर कर व समुद्रमें डूबकर भी बचजाता है ३६ इससे धर्म पुण्यसमेत सदा कर्म करना चाहिये इस में सन्देह नहीं है ३७ क्योंकि ऐसेही कर्म से पुरुष आयुष्मान् होता है व सुखभी ऐसेही कर्म से पाता है कर्मही सब का तारक व पालकभी है व कर्मही जागते हुयेकी रक्षा किया करता है ३८ कर्मही नित्यमुक्ति देता है व मित्रोंका स्थानभी कर्मही देता है पुण्य दानयुक्त कर्म व प्रियवचनयुक्त कर्म ३९ सदा उपकार करता है इस से बुद्धिमान्को चाहिये कि सदा पुण्यादिसहितही कर्मकरे क्योंकि उसकी रक्षा सदा कर्मही करता है इसमें सन्देह नहीं है ४० अपने कर्महीसे प्रेरित और योनि को प्राप्त होता है पिता माता अन्य स्वजन बान्धव क्या करसके हैं ४१ जो कर्म से निहत होता है वह नष्टही होजाता है सूतजी बोले कि कर्मका रक्षित किसी का मारा मरताही नहीं ४२ उसी कर्मसे वह बालक रक्षित था इस से उस पाककर्ता के मन में दया आगई नहीं तो जो पूर्वकर्म का वश न होता तो उस दुष्टके मनमें क्यों कृपा आती व उसी बालक के कर्मकी प्रेरणा से वह दासीभी कृपायुक्त होगई ४३ इस से उन दोनों ने राजा आयुके सुन्दर लक्षणवाले पुत्रकी रक्षाकी रात्रिमें हुण्डसे छिपाकर वे दोनों ब्रह्माजी के पुत्र वशिष्ठजी के पुण्यकारी आश्रमपर उस बालक को लेगये पुण्यकर्म करनेवाली उस दासी ने उन महात्मा के द्वारपर बालकको पौड़ाकर आप अपने स्वामीके स्थान पर चलीआई व उस पाक करनेवाले से हरिण का वधकराके उस का मांस परिपक्व कराके ४४ । ४६ हुण्ड को भोजन कराया तब दुष्ट हुण्ड बहुत हर्षित हुआ कि अब तो शत्रु मारा गया व अशोक-सुन्दरी का शाप व्यर्थहुआ ४७ यह विचारांश करके दानवों का ईश्वर हुण्ड अतीव हर्षितहुआ कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि जब त्रिमल प्रभात हुआ तो मुनिसत्तम वशिष्ठजी ४८ अपने आश्रम से बाहर निकले तो देखा सब देव लक्षणों से युक्त सुवर्ण व

चन्द्रमा के समान प्रकाशित सुन्दर लोचनवाला पुत्र पड़ा है उसे देख बोले कि हे मुनिलोगो ! यहां आकर देखो तो यह किसका बालक है व रात्रिमें कौन हमारे द्वारपर फेंक गया है यह देव गन्धर्वों के गन्धर्भ के समान प्रकाशित राजलक्षणसंयुक्त ४९ । ५१ करोड़ कामके सदृश है मुनिलोगो देखो तो उसको देखकर सब द्विजवर कौतुकसंयुक्त प्रसन्न हुये ५२ और महात्मा आयुके पुत्र को देखते भये धर्मात्मा वशिष्ठजी ने जो ज्ञानदृष्टि से बालक को देखा ५३ तो विदित हुआ कि सत्य २ यह राजा आयुका पुत्र है व ऐसे चरित्रसे यहां तक पहुँचा है व उस दुष्ट हुण्डकी प्रवृत्तिभी मुनिने जानली कि वह लाया है ५४ बस झटपट मुनिराज ने कृपा करके दोनों हाथों से उस बालक को उठा लिया ५५ जैसेही दोनों हाथों से द्विजवर वशिष्ठजी ने उस बालक को उठाया है कि देवताओं ने बालक के ऊपर पुष्पों की वर्षा की व गन्धर्व किन्नरादि ललित सुन्दर स्वरयुक्त गीत गाने लगे ५६ व ऋषि लोग मन्त्रों से उस महाराज कुमारकी स्तुति करने लगे वशिष्ठजी तिसको देखकर तिसी समय वर देते भये ५७ कि नहुष यह नाम तुम्हारा संसारमें प्रसिद्ध होगा बालभावों से हृषित नहीं होता ५८ तिससे नहुष तुम्हारा नाम होगा और देवोंमें पूज्य होंगे फिर द्विजोत्तम वशिष्ठजी तिसका जातकर्मादिक कर्म करते भये ५९ व्रतदान विसर्ग गुरु शिष्यादि लक्षण सम्पूर्ण वेद पद क्रमसमेत षडङ्ग ६० और सब शास्त्रों को वशिष्ठजी से पढ़ता भया फिर महाबुद्धिमान् बालक रहस्यसमेत धनुर्वेद ६१ ग्राहमोक्तयुक्त दिव्य शस्त्र अस्त्र ज्ञान शास्त्रादिक न्याय राजनीति गुणादिकों को भी ६२ वशिष्ठजी से शिष्यरूप से भक्तियुक्त होकर सीखता भया इसप्रकार अत्यन्त सुन्दर नहुष सब विद्याओं से युक्त हुआ ६३ और वशिष्ठजी के प्रसादसे धनुष और बाण धारण करनेवाला भया ६४ ॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने गुरुतीर्थ
माहात्म्ये ज्यवनचरित्रे पञ्चोत्तरशततमोऽध्यायः १०५ ॥



एकसौ छः का अध्याय ॥

दो० यकसै छठयें महुँ नहुष विद्यापठन बहोर ॥

ताजननी अरुजनककर अतिविलापकहघोर १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोले वहां जब पुत्र तुरन्तही सूतिकागृह से उठागया तो स्वर्भानुकी कन्या महाभाग्यवती आयु की भार्या देवताओं के समान रूपवाले अपने पुत्रको न देखकर १ महाहाहाकार करके वह वरवर्णिनी रोदन करनेलगी व कहने लगी कि सब राजलक्षणयुक्त हमारा बालक कौन हरलेगया २ हे वत्स ! तुमको हमलोगोंने तपस्या दान यज्ञों बड़े २ दुष्कर नियमों व दारुण कष्टों से पाया ३ व महात्मा दत्तात्रेयजी ने सन्तुष्ट होकर अपने पुण्यप्रसादसे दिया था हाय ! उस पुत्रको कौन हरलेगया करुणाहुत होकर इसप्रकार रोनेलगी ४ हा ! पुत्र हा ! वत्स हा ! तात हा ! बाल हा ! गुणमन्दिर कहां हो व कौन तुमको लेगया हमसे पुकारकर कहो ५ तुम सब सोमवंशके भूषण हो इस में कुछ सन्देह नहीं है सो हमारे प्राणों समेत तुमको कौन यहां से हरलेगया ६ हे वत्स ! सब राजलक्षणों से युक्त दिव्य लक्षणों से विभूषित कमलदलनयन तुमको कौन हरलेगया अब हम कहां जायँ व क्या करें ७ हम यह स्पष्ट जानती हैं कि अन्य जन्मके किये हुये कर्म नहीं मिटते बिना भोग किये छुट्टी नहीं मिलती नहीं जानती कि पूर्वजन्ममें हमने किसकी धरोहर खाई है तिससे हमारा पुत्र हरगया है ८ वा पापिनी मैंने पूर्वजन्ममें किसीसे छल किया है तिस कर्मका दुःख भोगती हूं अन्यथा नहीं है ९ हम रत्न की अपहारिणी हुई इससे हमारा पुत्र रत्न उठागया हम जानती हैं कि भाग्यहीने दिव्य अनुपम गुणोंकी खानि इस हमारे पुत्र को हरलिया है १० अथवा उन ब्राह्मणदेव ने हमारे कर्मकी वितर्कणा अच्छे प्रकार नहीं की उसी से हमने ऐसा महादारुण पुत्रशोक पाया है इस में सन्देह नहीं ११ अथवा जन्मान्तर में हमने किसी बालक के सङ्ग विरोध किया है उसी पापसे यह दारुण पुत्रशोक हमने पाया है १२ अथवा वैश्वदेवकर्म के समय ब्राह्मण

लोग व्याहृतियों से हवन करते होंगे तब कोई ब्राह्मण आया होगा उसको अन्न न दिया होगा १३ इसप्रकार अपने भाग्यसे कहकर स्वर्भानुकी पुत्री इन्दुमतीरानी महादारुण शोक से करुणा से व्याकुलहुई १४ व शोकही से विह्वल होकर पृथ्वीपर गिरकर मूर्च्छित होगई व फिर ऊधीश्वास लेतीहुई विना बछड़ेकी धेनुके समान रोदन करनेलगी १५ ऐसेही बालकको हरगया सुनकर राजा आयुभी बड़े शोकसे दुःखितहो धैर्य छोड़ रोदन करनेलगे १६ व कहने कि जो इसप्रकार पुत्रहरगया तो इसमें कुछभी सन्देह नहींहै कि तपका कुछफल नहींहोता व दानका भी कुछफल नहींहोता १७ ॥

चौ० दत्तात्रेय परममुनि ज्ञानी । हूँ प्रसन्न मनवच अरुबानी ॥
सब गुणयुतसुत दीन विचारी । किमिसोमृषाभयहुयकवारी १८
ता वरमहँ किमि विघ्न दिखाई । विधिगतिकछुनहिपरतलखाई ॥
इति चिन्तापर भयहु महीपा । अतिदुःखितविलपतकुलदीपा १९

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरु

तीर्थमाहात्म्येव्यवनचरित्रेषडधिकशततमोऽध्यायः १०६ ॥

एकसौसातका अध्याय ॥

दो० यकसौ सतयें महँ कह्यो नारद आयु महीप ॥

नहुषतनय आगमन ज्यहि सुनिदम्पतिभेदीप १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि तब नारदमुनि स्वर्गसे राजा आयुके यहां आये व आकर उन्होंने ने कहा कि राजन् क्यों शोचकर रहे हो १ हां तुम्हारा पुत्र हर तो गया है पर वह कुशल पूर्वक है हम अच्छेप्रकार जानते हैं हे महामते ! वह तो देवादिकों काभी राजाहोगा ऐसा जानकर तुम शोच न करो २ वह सर्वज्ञ व गुणी व सब विज्ञान संयुक्त व सब कलाओं से सम्पूर्ण होकर फिर तुम्हारे गृहको आवेगा ३ हे महाराज ! जो तुम्हारे देवोंकेगुण समान बालकको हरलेगया है वह अपने घरको अपना काल लेगया है इसमें कुछभी संशय नहींहै ४ सो उसका नाशकरके वह महावीर्य पराक्रमी होकर तुम्हारापुत्र शिवजीकी कन्याके साथ तुम्हारे समीप

आवेगा ५ व तुम्हारा पुत्र अपने तेजसे इन्द्र व उपेन्द्रके समानहोगा अपनेही कर्मोंसे इन्द्रपदवी भोगेगा ६ ऐसा राजा आपुने कहकर अनुग समेत राजाके देखतेही नारदजी सहसा से चलेगये ७ फिर महाभाग देव नारद के चलेजाने पर राजाने पुत्रके समाचार नारद के कहने के अनुसार अपनी रानी से कहे ८ कि हे भद्रे ! जो देव श्रेष्ठ के समान उत्तम पुत्र हमको दत्तात्रेयजी ने दिया है वह विष्णु के प्रसादसे कुशलपूर्वक है ९ हे वरानने ! जो हमारे गुणयुक्त पुत्र को हरलेगया है उसका शिर काटकर यहां लावेगा १० यह हमसे नारदजी ने कहा है इससे हे भद्रे ! अब शोच न करो कार्य व धर्म के नाशनेवाले इस महामोहको छोड़देओ ११ पति के ऐसे वचन सुनकर इन्दुमती रानी पुत्रका आगमन सुनकर महाहर्षवती हुई १२ क्योंकि उसने समझा कि जैसा नारदजी ने कहा है वह वैसाही होगा व दत्तात्रेय ने हमको जरामरणरहित पुत्र दिया है सो वह अर्थभी सत्यहीहोगा इसमें सन्देह नहीं है ऐसा चिन्तवन करके मनसे द्विजपुङ्गव दत्तात्रेयजी के नमस्कारकिया १३ । १४ ॥

चौ० अत्रितनय दत्तात्रेयजी के । वरणकमल विनवों करिठीके ॥
जामु प्रसाद लह्यो सुतचारु । पुण्यपराक्रम सहित विचारु १५
यह कहिरही मौनगहि रानी । दुःखितहै मनमहँकरि ग्लानी ॥
सुत आगमन सुने पुनि सोई । नहुषनाम जान्यहु मुनिगोई १६

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषालुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थ

माहात्म्येच्यवनचरित्रेनाहुषाख्यानेसप्तोत्तरशततमोऽध्यायः १०७ ॥

एकसौआठका अध्याय ॥

दो० यकसै अठयें महँ कश्यो मुनि नृपसुतसों वृत्त ॥

आयु नहुष शिवकीसुता हुण्डआदि शुभनृत्त १

कुञ्जलजी अपने पुत्र कपिञ्जल से बोले कि ब्रह्माजी के पुत्र महातेजस्वी तपस्वियोंमें श्रेष्ठ वशिष्ठजी नहुषको बुलाकर उनसे यह वचन बोले कि १ अब तुम शीघ्र वनकोजाओ व बहुतसे फलपुष्प लाओ मुनिका वाक्यसुन नहुष वनको जातेभवे २ वहांपर बलवान्

नहुष कुछ अच्छा वृत्तान्त सुनतेभये कि आयुके पुत्र धर्मात्मा महा बुद्धिमान् जिनका वियोग बाल्यावस्थाही से माताका रहा व इन्हीं के अतिवियोगसे आयुकी भार्या रोदन कियाकरती ३।४ व इसी के लिये अशोकसुन्दरी ने परमदुष्कर तप किया व कहती थी कि इन्दुमती अपने पुत्रको नहीं जानती कब देखे ५ जो कि धर्मज्ञ नहुषनाम उसके पुत्रको दानव हर लेगया है ऐसा विचारती हुई शिवजीकी श्रेष्ठपुत्री बाला अशोकसुन्दरी आयुके पुत्रके सुखीरहने के विचारसे आलम्बरहित होकर बराबर तप करती रही सो आयुके पुत्र नहुषजी से कब मिलेगी ६।७ इस प्रकारका सांसारिक वचन आकाश में चारणोंसे भाषित धर्मात्मा नहुष ने सुना इससे वे वि-
 अमयुक्त होगये ८ व वशिष्ठजी के आश्रमपर लौट आये व सब महात्मा वशिष्ठजी से उन्होंने निवेदन किया ९ कहने के समय में दोनों हाथजोड़ भक्तिसे शिर झुँकाकर तपस्वियों में श्रेष्ठ महाप्राज्ञ वशिष्ठजी से बोले कि १० हे भगवन् ! चारणों के कहेहुये अपूर्व व-
 चन हमसे सुनो यह नहुष आयुका पुत्रहै व अपनी माता इन्दुमती से अलग करलियागया है सो दुष्ट दानव इन्दुमती माता से इसे वियोजित किया है व शिवकीपुत्री बाला अशोकसुन्दरी इसीकेलिये अत्यन्त दुश्चर तप करती है ११।१२ उसका अन्य कुछ प्रयोजन नहीं है केवल धीरे नहुषही के लिये तप करती है यह सब हमने सुनाहै १३ अब आपसे पूँछते हैं कि धर्मात्मा आयु कौनहैं और कल्याणकारिणी इन्दुमती कौन है अशोकसुन्दरी कौन है व नहुष कौन कहाता है १४ यह हमको संशय हुआहै उसे आप मिटानेके योग्यहैं भला अन्यभी कोई महाप्राज्ञ नहुष यहांहै १५ हे तात ! यह सब व और भी जो कारणहो हमसे कहो वशिष्ठजी बोले कि आयु धर्मात्मा बली सप्तद्वीपवती पृथ्वीका आजकल महाराजाधिराज है १६ व सत्यरूपा यशस्विनी इन्दुमती उनकी भार्या है उस में उन प्रतापी राजा ने गुणके मन्दिर आपको पुत्र उत्पन्न किया है जो तुम सोमवंशके भूषणहो व महादेवजी की कन्या गुणों से भूषित व रूप समन्वित सुभगा मनोहर हैंसनेवाली अशोकसुन्दरी है वह तुम्हारे

लिये आलम्बरहित होकर तपोवन में तपकरती है १७।१९ उसके भर्ता आपको ब्रह्माजीने योगसे उत्पन्न किया है वह गङ्गाजी के तीर पर योगाभ्यास करनेमें तत्पर होरही है २० उसको अकेली पतिव्रता तप करती हुई देखकर जो कि रूप गुण उदारतामें युक्त सुभगा व कमलक्षणाधी हुण्डनाम दानवेन्द्र कामबाणों से पीड़ित हुआ व उसके समीप जाकर कहा कि हमारी स्त्री होवो २१। २२ इस प्रकार उसका वचन सुन उस तपस्विनी ने कहा कि हे हुण्ड ! साहस न कर व बार २ न बक २३ हे वीर ! हम तुम्हारे प्राप्त होने योग्य नहीं हैं विशेषकर पराई स्त्री हैं क्योंकि देवदेव ब्रह्माजीने हमारे लिये आयुके पुत्र महाबली २४ नहुष नाम मेधावीको भर्ता नियत किया है इसमें सन्देह नहीं है जोकि देवोंसे दिये गये व महातेजस्वी हैं सो तू इस बातको अन्यथा किया चाहता है २५ इससे हम तुम्हें शाप देंगी जिससे तू भस्म होजायगा ऐसा उसका वचन सुन कामबाणों से पीड़ित २६ वह दुष्ट आपभी एक स्त्री बनकर छलसे अशोकसुन्दरी को अपने स्थानपर ले गया तब हे महाभाग ! जैसेही उसने जाना कि यह हुण्ड दैत्य है वैसेही उसने उस दानवाधमको शाप दिया २७ कि महाराज नहुषके हाथ से तेरी मृत्यु होगी जब तुम उत्पन्नही नहीं हुये थे तभी उसने ऐसा कहाथा २८ सो हे वीर ! आयुके पुत्र तुमको जन्म पातेही हुण्ड पापी अपने यहां डंठालाया व अपनी जान मार रींघकर खाभी लिया परन्तु उसके पाककर्त्ता ने तुम्हारी रक्षा करके दासीने तुमको हमारे स्थान पर पहुँचा दिया २९ जब तुम वनको गये तो तुमको देखकर चारण किन्नरों ने तुमसे यही वृत्तान्त कहा हे वत्स ! वही हमने तुमसे वर्णन किया ३० इससे अब पापी दानवाधम हुण्डको जाकर तुम मारो व दोनों नेत्रों से आंसुओं की धारा छोड़ती हुई उस अशोकसुन्दरी के आंसु पोंछो ३१ फिर अपने पिताके गृहको जाकर अपनी माता इन्दुमतीका प्रबोध करो उस दानवेन्द्रके निपातसे मानों अपने माता पिताको वन्दीखानेसे छुड़ाओ और अशोकसुन्दरीके भर्ता होओ यह हमने तुम्हारे इस प्रश्नका कारण कहा ३२।३३ ऐसा नहुषसे कह कर महामति वशिष्ठजी विश्राम कर रहे फिर ३४ ॥

इमि मुनि बानी सब सुखखानी सुनिकै नहुष महाना ।
 गुनिके मनमाहीं अतिहर्षाहीं बहु तिनअचरज माना ॥
 पुनिकरिअतिकोपा अतिहिसुचोपा तावधहितनृपनन्दा ।
 मुनिआयसुपाई अतिमुखदाई मनमहँभयहु अनन्दा ३५

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थ
 माहात्म्येच्यवनचरित्रेनाहुषाख्यानेऽष्टोत्तरशततमोऽध्यायः १०८ ॥

एकसौनवका अध्याय ॥

दो० यकसैनवयें महँ कह्यो विद्वर किन्नरराज ॥

शिवतनयासों नहुषके गुणयशवंशससाज १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बले कि बाण हाथमें ले धनुष्
 धारण कर नहुष तपस्वियों में श्रेष्ठ वशिष्ठ के नमस्कारकर प्रसन्न
 कर जाते भये १ जो कि आयुके पुत्र गुणसमेत सुरूपवान् देवों के
 समान देवगुणों से युक्त हैं जब नहुष बालक को वशिष्ठजी के आ-
 श्रमपर पहुँचाकर मृगका मांस परिपक्वकरके उस दुष्ट हुण्डदैत्य को
 उसके पाककर्त्ता ने खिलाया तो उस मांस के रससे अतिपुष्टहोकर
 दैत्यने अपने शत्रुका मांसजानकर बड़ी प्रसन्नता और हर्ष से भक्षण
 किया फिर परमानन्दित होकर अशोकसुन्दरी के समीप गया २।४
 व कालसे उपहतचित्त होकर उस महापतिव्रता स्त्रीसे बोला कि हे
 भद्रे ! आयुके पुत्र तुम्हारे पति को हमने भक्षण करलिया ५ इससे
 हे पवित्रअङ्गवाली ! अब हमींको भजो व अपने मनमाने भोगभोगो
 आयुहीन उस मनुष्यको लेकर तुम क्याकरोगी ६ यह सुनकर तप-
 स्विनी शिवजी की कन्या अशोकसुन्दरी बोली किहमारा भर्त्ता देव-
 ताओं का दिया हुआहै इससे अजर व दोषरहित है ७ उस हमारे
 पतिकी मृत्यु तो महात्मा देवताभी नहीं देखसके ऐसा उसका वचन
 सुनकर उसदुरात्मादानव ने ८ बड़े जोरसे हँसकर उसविशालाक्षीसे
 कहा कि हेसुन्दरि ! हमने तो आजही आयुके पुत्रका मांस खायाहै ९
 उस दुरात्मा नहुषको तो हम उत्पन्नहोतेही उठालाये उसका ऐसा

वचन सुनकर अतिदारुण कोपकरके १० सत्यप्रतिज्ञा करनेवाली त-
पस्या से महातेजस्विनी अशोकसुन्दरी बोली कि हमारे सत्यनियम
व तपसे आयुका पुत्र चिरजीवीहोगा ११ हेदुराचार! यदि जीनाचा-
हताहै तो यहांसे अभी चलाजा नहीं तो हम फिर तुझको शापदेगी इ-
समेंकुछभी संशय नहीं है १२ पाककर्त्ता ने राजासे कहा कि हे महाराज!
इसको छोड़कर औरको आश्रय करो १३ पाककर्त्तासे भेजाहुआ पापी
हुण्ड दैत्य शीघ्रतासे अपनी प्यारी स्त्रीके पास गया १४ और उस
प्रिया से सब वृत्तांत कहा और दासी और पाककर्त्ता ने जो किया
उसको नहीं जाना १५ सूतजी शौनकादि ऋषियों से बोले कि वह
तपस्विनी अशोकसुन्दरी बड़ी तपस्या करतीहुई बड़े शोक व दुःख
संतप्त होकर बनाय दुर्बल होगई १६ व अपने प्रिय कान्तकी चि-
न्ता व ध्यान बार २ करनेलगी कि दैत्यलोग विविध प्रकारके उपा-
यों से क्या नहीं करते हैं १७ उपाय जाननेवाला अपनी बुद्धि से
उद्यमसे अनेक प्रकारके भावोंसे सदा सब कार्य्य सिद्धकिया करता
है १८ मायाकेही उपायसे वह पापी पूर्वकालमें हमींको हरलेगया
था ऐसेही आयुके पुत्रकोभी माया से उसने मारडाला हो तो क्या
आश्चर्य्य है १९ भाग्यके कारण जो पदार्थ होनेवाला होताहै वह
कभी २ उद्यम करने से नष्टभी होजाताहै व कभी नहींभी नष्टहोता
२० कभी २ उद्यम का फल श्रेष्ठहोजाताहै कभी २ कर्मकाफल पर-
न्तु जो भावी भावहै वह कैसे नष्ट होसक्ताहै व यहभीहै कि जिसको
भाग्य मारा चाहतीहै वह नहीं ठहरसक्ताहै २१ व जो विशेषरीतिसे
हमारी माता पार्वतीजी ने कहाथा तेरा नहुष पतिहोगा यह बात
कैसे मिथ्याहोसक्ती है वह महाभाग्यवती इसप्रकार बार २ चिन्तना
करतीथी २२ कि इतनेमें विद्वरनाम किन्नर बड़ा शरीर धारण किये
नाभीके ऊपरका शरीर तो उसकाथा पर नीचेका नहीं २३ द्विभुजी
उसकी मूर्तिथी वंशी हाथ में थी हार और कंकण से शोभित था
अङ्गों में दिव्य गन्ध लगायेथा वह अपनीस्त्री समेत अशोकसुन्दरी
के पास आकर २४ उस निरानन्दा महादेवजी की कन्या से यह
बोला कि हे देवि ! तुम चिन्ता किसलिये करतीहो आयेहुये हमको

विहरनाम किन्नर जानो हम विष्णुजी के भक्त हैं इससे देवताओं ने तुम्हारे समीप हमको भेजा है अब आपको नहुषके विषयमें कुछभी दुःख न करना चाहिये २५।२६ क्योंकि पापी हुण्डने उन बुद्धिमान् के मारडालने के लिये उद्यम किया था व आयुके पुत्रको हरभीला-याथा २७ परन्तु देवताओंने विविध प्रकार के उपायों से आयुपुत्र की रक्षाकी पर हुण्ड यही जानता है कि आयुके पुत्रको हमने हर लिया है २८ व भक्षणभी करलिया है हे विशालाक्षि ! हे शुभे ! आपको सुनाकर वह अधम दानव चलागया २९ व अपने पूर्वजन्म के कर्मके विपाकसे महापुण्यात्मा व यशस्वी नहुष पूर्वजन्मके इकट्ठे कियेहुये कर्म से तुम्हारे भर्ता जीते हैं ३० पुण्यहीके बलसे जिनकी जितनी आयु बनाई जाती है उतनी होती है परन्तु पाप के बल से वही आयु नष्टहोजाती है व पुण्यात्माओं की आयु जो पापात्मा घातक पुरुष नष्ट किया चाहते हैं ३१ वे दुरात्मा महापापी पराये तेजके नाशक आप नष्टहोजाते हैं ३२ पर नहीं मानते महात्माओं का यश मिटाने के लिये बार २ यत्न कियाकरते हैं व विष शस्त्रादि नाना प्रकारके उपायों से उनका वध किया चाहते हैं यह नहीं जानते कि यह अपने पुण्यकर्मों से रक्षित है ३३ हुण्डादिक महापापी अनेकप्रकारके भेदबलयुक्त मोहन स्तम्भनादिकों से पीड़ा देते हैं ३४ हे महाभागे ! सुकृतके प्रयोग से पूर्वजन्मके इकट्ठे हुये से पुण्यवान् रक्षित रहता है ३५ परन्तु उन पापियोंके सब उपाय पुण्यात्माओंके विषयमें विफल होते हैं देवता व पुण्यों से रक्षित महात्मा पुरुषों को मन्त्र यन्त्र तन्त्र विष अग्नि शस्त्र बन्धन घातक कुछभी नहीं दुःख देसके जो उसके विषय में कुछ करते हैं वे भस्म होजाते हैं व वह पुण्यात्मा तो जहांका तहां स्थित रहता है ३६ । ३७ हे शुभे ! वीर आयुपुत्र के रक्षक देवतालोग हैं कि यह नहुष वीर सब पुण्योंका सञ्चय व सब तपस्याओं का निधान है ३८ इसी से बलवानों में श्रेष्ठवीर नहुष की रक्षा हुई सत्य तप पुण्य संयम दमादिकों से उनकी रक्षाहोगई ३९ अब तुम रुथा क्यों दारुण दुःख सहती हो अकारण शोक को छोड़ो वह धर्मात्मा बिना माता-पिताके भी वन

मैं जीता हूँ ४० व तपोबलसे तपस्वी वशिष्ठजी पालन करते हैं व वह वेदवेदाङ्गों के निश्चय को जानता है व धनुर्वेदमें अतीव विचक्षण है ४१ जैसे चन्द्रमा अपनी कलाओं से सदा शोभित होता है वैसेही अपने तेज व कलाओं से नहुष शोभित होता है ४२ व विद्या महापुण्य तप व यशों से रिपुवीरोंके मारडालनेवाला व देवताओं को अतीवप्रिय महात्मा नहुष है ४३ हुण्ड दैत्य को मारकर वह वीर तुम्हारे समीप आवेगा व विवाहकरेगा पीछे से पृथ्वी में एक राजा होगा ४४ और महायोगी होगा जैसे स्वर्ग में इन्द्र हैं हे भद्रे ! तुम तिससे इन्द्रके समान अच्छे पुत्रको प्राप्त होगी ४५ ययाति नान पुत्र होगा वह धर्म्मज्ञ प्रजापालन में तत्पर होगा रूप उदारता गुण युक्त सौ कन्या भी होंगी ४६ हे देवि ! पुण्य विक्रम नहुष महाराज जिनके पुण्यों से इन्द्रलोक को जावेंगे और इन्द्रपदवी को भोगेंगे ४७ व धर्म्मात्मा ययाति नाम पुत्र तुम्हारे होगा वह महाराज होकर प्रजाओं का पालन सबजीवों के ऊपर दयामें पर होकर करेगा ४८ उसके महापराक्रमी चार पुत्रहोंगे सबके सब बलवीर्य्य से युक्त व धनुर्वेदके पारगामी होंगे ४९ एकका अनु नाम होगा दूसरेका पूरु तीसरेका दुह्य व चौथे का वीर्य्ययुक्त यदुनाम होगा ५० ये सब पुत्र महावीर्य्य महाबली महात्मा सब प्रकार के तेजों से युक्त होंगे ५१ उन में यदु के वीर पुत्र सिंहके समान पराक्रमी होंगे अब यदुके महापराक्रमी पुत्रों के नाम कहतेहुये हमसे सुनो ५२ भोज भीमक अन्वक कुञ्जर धर्म्मात्मा और सत्य के आधार वृष्णि पांच ये ५३ छठां श्रुतसेन सातवां श्रुताधार कालदंष्ट्र जोकि समरमें कालको भी जीतेगा और महाबलीहोगा ५४ हे वरानने ! यदुके महावीर्य्य सबपुत्र यादव कहावेंगे उनके पुत्र पौत्रादि सहस्रोंहोंगे ५५ हे देवि ! तुम्हारा व नहुषका ऐसा वंशहोगा इससे अब ऐसा दुःखझोड़ कर मुझसे स्थित होओ ५६ हे शुभानने ! वह महाप्राज्ञ नहुष तुम्हारा स्वामी तुम्हारे लिये अवश्य आवेगा हुण्ड दानव का व्यवहारक किर तुम्हारे संग विवाह करेगा ५७ दुःख से उत्पन्न उष्ण तुम्हारे नेत्रों से गिरेहुये आंसुओं के बूँद वह मान का देनेवाला अपने हाथों से आकर पीछेगा ५८

व आयु राजाके दुःखको उच्चारकर अपने सबकुलको तारेगा व अपने पिताको सुखित करके पीछे आप प्रजापालहोगा ५६ हे शुभे ! यह सब हमने देवताओंका वचन तुमसे कहा अब सब दुःख शोक छोड़कर सुख से बैठो ६० यह सुनकर अशोकसुन्दरी बोली कि ॥ चौ० देवविहितनिजपतिगुणधामा । कब देखब हम पूरणकामा ॥ धर्मधीर यह कहहु विचारी । सब सुख जासों होयकरारी ६१ विद्वरबोल्यो सुनि यह वचना । बहुत शीघ्र लखिहोयहरचना ॥ इमिकहि विद्वर गो सुरलोका । जो सबविधिसौरहतअशोका ६२ अरु अशोकसुन्दरी सुवाला । करन लगी तप तहां विशाला ॥ काम क्रोध मद लोभ विहाई । अरुमनकी सिगरी दुचिताई ६३

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरु तीर्थेव्यवनचरित्रेनाहुषाख्यानेनवाधिकशततमोऽध्यायः १०६ ॥

एकसौदशका अध्याय ॥

दो० एकसै दशयें महँ कह्यो जिमि देवन निज शस्त्र ॥

दीन नहुष महाराजकहँ हुण्डवधनहित अस्त्र १

कुञ्जलजी अपने पुत्र कपिञ्जलसे बोले कि जब वशिष्ठजीने हुण्ड के मारने की आज्ञा नहुषकोदी तो सब मुनियों व मुनियों में व तप करनेवालों में श्रेष्ठ वशिष्ठजी से पूँछकर नहुष उस दानव के मारने में उत्सुक हुये १ तब तपस्वी वशिष्ठादिक उन मुनियोंने आयुके महाबली पुत्रको बहुतसे आशीर्वाद दिये २ व आकाशमें सब देवताओंने नगारे बजाये व नहुषके शिरपर पुष्पोंकी वर्षा की ३ व फिर सब देवताओंको सङ्गलिये इन्द्रदेव वहां आये व सूर्यतेजोपम अपने २ शस्त्र अस्त्र नहुषको दिये ४ हे द्विजसत्तम ! तब देवताओं से कृपसाईल नहुषने उन दिव्यअस्त्रोंको ग्रहण किया उनके ग्रहणकरने से औरभी अधिक महाराजकुमार शोभितहोनेलगे ५ फिर सब देवगण इन्द्रजीसे बोले कि हे सुरेश्वर ! इन राजाको अपनारथ आप दें ६ देवताओं के मनका अभिप्राय जानकर देवराजने अपने सारथि मातलिको बुलाकर आज्ञादी कि ७ तुम इन महात्मा के पास

जाओ व रथपर इनको चढ़ाओ व ध्वजासहित रथपर चढ़ेहुये इन महाराजकुमार को समर में लेजाओ ८ सारथिने कहा बहुत अच्छा ऐसाही हो हे सहस्रक्षत्र ! आपका कहा करेंगे यह कहकर युद्ध करने पर उद्यत नहुषके समीप रथलेकर मातलि गया ९ व इन्द्रके वचन राजा नहुषसे उसने कहे कि हे धर्मज्ञ ! इस रथपर चढ़कर समरमें विजयीहोओ १० हे नृपतीश्वर ! इन्द्रजीने तुमसे यह कहा है कि अब तुम पापी हुण्डदानवको समरमें मारडालो ११ यह सुनकर राजेन्द्र नहुषजी के मारेहर्ष के सबअङ्गों में पुलकावली छागई व कहा कि देवदेव महात्मा वशिष्ठजी महाराजके प्रसाद से १२ समर में उस पापी दानव को मारेंगे क्योंकि वह दुष्ट देवताओं के साथ बहुत पाप करताहै १३ जब महात्मा नहुषजी ने ऐसा वचन कहा तो देवताओं के भी देव शङ्ख चक्र गदाधर श्रीविष्णुभगवात् आप वहां प्राप्तहुये १४ व अपने चक्रसे सूर्य तेजके समान दूसरा चक्र निकालकर तेजसे प्रज्वलित शुभ देनेवाला वह चक्र बड़े हर्षसे युक्त होकर देवदेव ने राजा नहुषजीको दिया फिर महादेवजीने आकर अतिप्रज्वलित तीक्ष्ण अपना त्रिशूल राजाको दिया १५ १६ जि-ससे समर करनेको उद्यत राजा बहुतही शोभित हुये मानो त्रिपुरा-सुरके मारनेवाले दूसरे महादेवही के समान दिखाई दिये १७ फिर ब्रह्माजीने आकर ब्रह्मास्त्र दिया व वरुणने आकर उत्तम फांसी व चन्द्रतेज के समान प्रकाशित शब्दमें मङ्गलदाता शंख दिया १८ फिर इन्द्रने वज्र और शक्ति दिया वायुने धन्वावाण दिये व अग्नि-जीने अपना आग्नेयास्त्र महात्माको दिया १९ व विविध बहुत दि-व्य अस्त्र शस्त्र अन्य महात्मा देवताओंने महापराक्रमी राजा को दिये २० कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि फिर देवताओं से मानित व तत्त्ववेदी मुनियों की आशिषों से अभितन्वित महा-राजकुमार वीर नहुषजी २१ घण्टाके शब्द से शब्दापमान छोटी २ घण्टाओंसे नादित दिव्यप्रकाशित रत्नों की मालायुक्त उस रथपर चढ़े २२ व उस दिव्य रथपर चढ़ने से नृपतन्दन ऐसे शोभित हुये कि जैसे अपने तेजों से स्वर्ग में सूर्य शोभितहोते हैं २३ व जैसे

सूर्य सब के ऊपर अपने तेजसे तपते हैं वैसेही वे महाराजकुमार
दैत्यों के मस्तकों पर तपनेलगे व ऐसे वेगसे चले जैसे कि महावेग
से प्रचण्ड पवन चलता है २४ जहां वह पापीदानव अपने बलसे
युक्त था वहां उस मातलिमहात्मा सारथिके साथ जातेभये २५ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थ
माहात्म्येव्यवनचरित्रेनहुपाख्यानेदशादिकशततमोऽध्यायः ११० ॥

एकसौग्यारहका अध्याय ॥

दो० यकसै ग्यरहें महँ नहुष समर गमन लखि आप ॥

देवादिक युवती तहां आई कीन अलाप १

कुञ्जल अपने पुत्रसे बोला कि जब सुरराजके समान विराज-
मान महाराजकुमार वीर नहुषजी चले तो सुन्दर कौतुकों और
मङ्गलगीत युक्त सब देवताओंकी स्त्रियां भी वहां आई १ देवताओं
की सब श्रेष्ठ स्त्रियां व रम्भादिक सब अप्सरायें किन्नरोंकी स्त्रियां ये
सब मारे कौतुक की उत्सुकता से स्वरसे गानेलगीं २ व ऐसेही रूप
आभूषणयुक्त गन्धर्वोंकी सब स्त्रियां कौतुकार्थ वहां आई जहां कि
राजारथपर चढ़े चलेजातेथे ३ जाते २ हुण्डदैत्यके महोदयनाम पुर
में राजा पहुँचे जोकि सब ओरसे आनन्ददायक वनोंसे शोभित हो
रहाथा ४ जिसमें सात कच्चायें थीं सब सोने चांदीके कलशोंसे शोभित
होती थीं व महादण्डयुक्त पताकाओंसे शोभितवह उत्तम पुर होता
था ५ व कैलास पर्वतके शिखरोंके आकारके शिखरोंसे शोभितथा
और भी सब शोभाओंसेयुक्त नानाप्रकारके उत्तम पदार्थों से शोभाय-
मान होताथा ६ सागरके तुल्य तड़ागों से व वन उपवनों से उपशो-
भितथा तड़ाग सब जलसे भरेथे और कमल लालकमलों से अतीव
शोभितथे ७ महारत्नों के प्राकारों से शोभित व सैकड़ों अँटारियों से
युक्तथा स्वच्छ जलोंसे परिपूर्णस्त्राओंसे शोभित था ८ अश्वरत्न गज-
रत्नों से शोभित होरहाथा अतिप्रकाशित रूपवती स्त्रियों से व सुरू-
पवान् पुरुषोंसे समाकीर्ण ९ व नाना प्रभाववाले दिव्य पदार्थों से
उसका महोदय शोभायमान होरहाथा राजाओं श्रेष्ठ महाराज नहु-

षजी जब ऐसे पुरको देखते भये १० तो पुरके समीप एक दिव्य वृ-
क्षों का वन था उसमें महाराजने प्रवेश किया जैसे कि नन्दन वनमें
इन्द्रजी प्रवेश करते हैं ११ वहीं वे धर्मात्मा उस मातलि सारथि के
साथ ठहरे व उसी वनमें एक बड़ी भारी नदीथी इसलिये फिर वहां
उतरे १२ वहां सब रूपसम्पन्न वे दिव्य स्त्रियांभी आईं गीत नृत्य
में चतुर गन्धर्वलोगभी आये व राजाके आगे गाने लगे १३ सून
मागधादि नृपोत्तम आयुके पुत्र सूर्य के समान प्रकाशित राजा की
स्तुति करनेलगे १४ तब राजा नहुषजी किन्नरों के गायेहुये मधुर
गीत सुनते भये १५ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थमाहा-
त्म्येव्यवनचरित्रेनहुषाख्यानेएकादशाधिकशततमोऽध्यायः १११ ॥

एकसौबारहका अध्याय ॥

दो० यकसै बरहैंमहँ कश्यो जिमि शिवसुता सुगीत ॥

सुनि पहुँचीढिग नहुषके कीन्हें तर्क विनीत १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि जब राजाके आगे वे
सब गाने बजाने स्तुति करनेलगे तो सुन्दर स्वरसहित मधुरगीत व
तालसहित बाजे पुण्यरूप स्तुतियां उस स्थानसे थोड़ेही दूरपर तप
करतीहुई शिवजीकी कन्या अशोकसुन्दरी सुनकर चिन्तना करनेल-
गी १ व आसन परसे तुरन्त उठकर महाउत्साहसे युक्त होकर अपने
तपोभावसेयुक्त वहां शीघ्रही आगई २ व दिव्यरूप धारणकिये देव
समान प्रकाशित दिव्यचन्दनादि गन्वलगाये दिव्यमाला पहिने ३
दिव्यवस्त्र भूषणोंसे भूषित अतिशोभित महाराजकुमार नहुषजी को
दिव्य लक्षणसंयुत सूर्यसमान देदीप्यमान देखकर ४ विचारनेलगी
कि क्या यह कोई महाबुद्धिमान् देवहै वा गन्धर्व वा यह कोई नाग
कुमारहै वा कोई विद्याधरहै ५ ऐसा रूपवान् तो हम देवताओंमें भी
किसी को नहीं देखतीं फिर यक्षों में कौन कहै इसी लीला से तो स-
हस्राक्ष देवभी दिखाई देते हैं ६ कि शम्भुजी तो नहीं हैं कि कामदेव
है रूपधारण करके आयाहै कि हमारे पिताके सखा कुबेरजी हैं ७ ॥

इमिजव्रतक बाला नयनविशाला चिन्ता करन सुलागी ।
 तव्रतक वररूपा परमअनूपा रम्भादिक अनुरागी ॥
 अतिप्रहसित होई तनिके न गोई बोली मधुरी बानी ।
 निज मनमहँजानी त्यहिअकुलानी सो सब भांति सयानी ८

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थ
 माहात्म्येच्यवनचरित्रेनहुषाख्यानेद्वादशाधिकशततमोऽध्यायः ११२ ॥

एकसौतेरहका अध्याय ॥

दो० एकसौ तेरहयें महँ रम्भा कह सब ज्ञान ॥

सुनि अशोकसुन्दरिचरित कीन्ह्यो नहुष प्रमान १

उन सब स्त्रियोंमेंसे रम्भा अप्सरा बोली कि हे शुभे ! तपकरना
 छोड़कर यहां क्या देखती हो तप पुरुषके चिन्तन से भी चूजाता
 है १ यह सुन अशोकसुन्दरी बोली कि नहुषकी कामना से हमारा
 मन तपस्या में लीन है हमको चलायमान करने में देव असुर ना-
 गादि कोई भी पुरुष समर्थ नहीं हैं २ परन्तु हे महाभाग ! इन को
 देखकर हमारा मन अत्यन्त चलायमान हुआ है इससे यही मनमें
 आता है कि इनके सङ्ग विहार करें ३ परन्तु हे वरानने ! ऐसा
 हमारा मन विपरीत हुआ है यदि तुमको इसविषयमें उत्तम ज्ञानहो
 तो हमसे इसका कारण बताओ ४ महात्मा देवताओं ने हमको
 आयु महाराज के पुत्रकी भार्या होनेके लिये आज्ञादी है फिर कैसे
 हमारा चित्त रमण करने में उत्सुक है ५ रम्भाबोली कि हे भामिनि !
 सब देहरूप प्राणियों में ज्ञानरूप सनातन ब्रह्म आत्मा आप बसता
 है ६ यद्यपि अपकारिणी इन्द्रियां अपने अपने विषयोंकी द्वारा लींच
 कर आत्माको मोहित कराती हैं तथापि वह सबों में सदैव रहता है
 ७ हे सुन्दरि ! प्रकृति ज्ञान विज्ञानकी कला को नहीं जानती परन्तु
 यह शुद्धात्मा धर्मज्ञ आत्मा अच्छेप्रकार जानता है ८ तथापि इन
 महामति को देख मन तापको प्राप्त है इसीप्रकार पापको छोड़कर
 सत्यही को धावता है ९ ये आयुराजा के पुत्र तुम्हारेही भर्ता हैं इस

मैं कुछभी सन्देह नहीं है अन्य पापीपुरुष को देखकर तुम्हारा आ-
त्मा शङ्का करता १० क्योंकि देवताओं ने सत्यकी फांसी से तुम्हारे
आत्माको इन महात्मा नहुषमें बांधदिया है जिससे कि जब कभी
अपने पतिको देखे उसी के पास चलीजावे ११ हे सुन्दरि ! तुम्हारे
आत्मा ने इस निबन्धन को सुन लियाथा इसी से भाव के सत्य स-
म्बन्ध को ग्रहणकर अपने आप स्थितहुआ १२ अन्यभाव को वह
जानताही नहीं बस अपने आयुपुत्रके समीप चलाआया पर हे देवि!
तुम्हारी प्रकृति इन राजाको आयेहुयेनहीं जानती १३ ऐसा जानकर
तुम्हारा प्रधान आत्मा इन्हीं के पीछे दौड़ताहै बस आत्मा सब कुछ
जानताहै क्योंकि वह सनातन देवहै १४ येही वीर्यवान् वीरोंमें श्रेष्ठ
नहुष महाराजहैं इससे तुम्हारा चित्तगयाहै सत्य सम्बन्धकी इच्छा
करताहै १५ हे भद्रे ! आयुके पुत्रको जानकर अन्यके पास नहीं गया
यह सब शाश्वत तुम्हारे मनमें प्राप्त को मैंने कहा १६ किलड़ाई में
महाघोर दानवोंमें अधम हुण्डको मारकर तुमको अपने उत्तमस्थान
आयुके गृहको लेजावेंगे १७ वीरेन्द्र दैत्य से हरलिया गया था परन्तु
अपनी पुण्य से बचगयाहै बाल्यावस्था से लेकर स्वजनों से वियुक्त
रहा है १८ पिता माता से हीन महावनमें वृद्धि को प्राप्त हुआ है
और तुम्हारे साथ इस समय पिताके घरको जावेगा १९ इसप्रकार
शिवपुत्री अशोकनन्दी रम्भा के वचन सुनकर बड़े आनन्द से
युक्त रम्भा से बोली २० कि यह सत्यात्मा अत्यन्त वीर्यवान् हमारा
स्वामी है हमारा शोकसे आकुल विह्वल मन चलायमान है २१
चित्तके समान कोई देव नहीं है क्योंकि वह सब निश्चित पदार्थ
जानताहै हे चारुहासिनि ! सत्य २ हमने अपना चित्त ऐसाही देखा
२२ कि काम सदृश अन्य पुरुषको देखकर कभी यह चित्त चलाय-
मान न हुआ व इन महात्माको अपना जानकर चलउठा २३ हे
भद्रे ! जैसे इनको देखकर चित्तने बाधाकी है वैसा अन्य पुरुष को
देखकर कभी नहींकी इससे अब हम व तुम दोनों सखियां सझही
सझ इनके गृह चले २४ जब ऐसा अशोकसुन्दरी ने कहा तो रम्भा
चलने केलिये उद्यतहुई नहुषके समीप जाने के लिये उत्सुक अशोक-

सुन्दरी को जानकर २५ रम्भा बोली कि अब क्यों नहीं चलती सूत जी शौनकादिकों से बोले कि अशोकसुन्दरी रम्भा सखी के साथ वीर लक्षण नहुष २६ के समीप प्राप्त होकर रम्भा सखी को भेजा और कह दिया कि हे महाभाग ! इन देवरूपी नहुष के पास जाओ २७ व इस सब कथा को कहो कि तुम्हारे लिये जिससे आई है तब फिर रम्भा बोली कि हे सुव्रते ! हे सखि ! ऐसा प्रिय हम तुम्हारा करेंगी २८ ऐसा कहकर महाराजनन्दन नहुषजी के पास रम्भा गई व धनुर्व्याण धारण किये दूसरे इन्द्रही के समान स्थित वीर नहुष जी से २९ अपनी सखी का उत्तम वचन बोली कि हे आयुपुत्र ! हे महाभाग ! हम रम्भा हैं तुम्हारे समीप आई हैं ३० हे वीर ! शिवकी कन्याने हमको तुम्हारे समीप भेजा है व तुम्हारे ही लिये देवदेव श्री महादेवजीने और पार्वतीजी ने पूर्वकालमें ३१ तुम्हारे अनुरूप श्रेष्ठ भार्या उत्पन्न की है यह लोकों में दुर्लभ नरश्रेष्ठों इन्द्रादिक तपस्वी देवों ३२ गन्धर्व नागादिकों पुण्यात्मासिद्ध चारणों को दुष्प्राप्य है वह तुम्हारे लिये अपने आप आई है उसके स्वभावादि हम से सुनो ३३ हे महाप्राज्ञ ! यह स्त्रीरत्न पुण्यसे निर्मित सम्पूर्ण है अशोकसुन्दरी उसका नाम है व तुम्हारे ही लिये तपकरती है ३४ व तुम्हारे अर्थ उस ने अत्यन्त तपकिया है व तुम्हीं को सदैव चाहती है ऐसा जानकर हे महाभाग ! भजती हुई उसको भजो ३५ तुमको छोड़ अन्य किसी को वह वरारोहा पुरुषही नहीं मांगती जब ऐसा रम्भा ने अपनी सखीकी ओर से वचन कहा ३६ तो राजा ने प्रत्युत्तर दिया कि हे रम्भे ! हमारा वचन सुनो जो तुमने हमारे आगे कहा है वह सब हम प्रथमही से जानते हैं ३७ क्योंकि पूर्वसमय हमारे आगे महात्मा वशिष्ठजी ने कहा है व सब इसके उत्तम तपको हम जानते हैं ३८ हे भद्रे ! कारण सुनिये जैसे सुख होगा विना इस हुण्डदानव को मार डाले हम इस वराङ्गना के पास न जावेंगे ३९ यह सब वृत्तान्तभी हम जानते हैं कि हमारे ही अर्थ वह उत्पन्न हुई है व तपभी हमारे ही अर्थ करती है ४० व वह हमारी ही भार्या ब्रह्मा से बनाई गई है इस में सन्देह नहीं है व हमारे ही अर्थ

निश्चयकर तपकरने में उद्यतहुई है ४१ फिर नियमयुक्त उसे दुष्ट पापी हुण्ड हरलेगया था ववह दानवाधम अपने गृहको सूतिका गृह से हमें लेगया था ४२ व बालावस्थाही में विना पिता माता का कर दिया था इससे उस दानवाधम हुण्डको मारकर ४३ तब उसको वशिष्ठजीके आश्रमपर लेजायँगे हे रम्भे ! तुम्हारा कल्याणहो हमारे प्रिय करनेवाली से ऐसा कहो ४४ ऐसा कहकर रम्भाको विदा किया वह अतिवेग से चली गई ॥

चौ० कह्यो अशोकसुन्दरी पार्हीं । सबसँदेश रम्भा शक नाहीं ॥
जो भाषा नृप नहुष विचारी । क्रमसोंसो निजमतिअनुसारी ॥
सुनि अशोकसुन्दरी सुवाला । भाषित नहुष केर गतजाला ॥
हर्षित भई बहुत सुख पावा । वीरप्राणपति अतिमनभावा ॥
रम्भासहित तहां सुखपूर्वक । रहनलगी तपकरतअपूर्वक ॥
इमि अशोकसुन्दरी कहानी । कहींभूपतुमसन प्रियजानी ४५।४८

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थ
माहात्म्येच्यवनचरित्रेनहुषाख्यानेत्रयोदशाधिकशततमोऽध्यायः ११३ ॥

एकसौचौदहका अध्याय ॥

दो० एकसौचौदहयें महें हुण्ड नहुष को जानि ॥

युद्धकरनगोक्रोधसोंसमर अरम्भ्यो मानि १

कुञ्जलजी अपने पुत्र कपिञ्जल से बोले कि इसके पीछे हुण्ड के परिवारक सब दानवों ने जैसा रम्भा व नहुषका संवाद सुना था १ सब ज्योंकात्यों जाकर दैत्येन्द्र हुण्डसे कहा उसे सुनकर बड़ा क्रोधकरके वह दूत से बोला कि २ हे वीर ! हमारे आदेशसे जाओ हमने तिसपुरुषको जाना है कि वह अशोकसुन्दरी के साथ वार्त्ता करता था ३ स्वामी की आज्ञापाकर वह लघु दानव वीर नहुषजी के पास गया व एकान्त यह वचन बोला कि ४ सारथि घोड़े सहित रथपर चढ़कर दिव्य धनुर्बाणादि धारणकिये सभा में भयकराते हुये ५ तुम कौनहो व किसकेहो व किसने तुमको किस कार्यके लिये भेजा है व इस रम्भासे और इस अशोकसुन्दरी से ६ तुमने स्पष्टता

पूर्वक क्या कहा था हमारे आगेभी कहो व देवताओं के मर्दन करनेवाले हुण्डसे आप कैसे नहीं डरते ७ जो जीने की इच्छा हो तो यह सब हमसे कहो व शीघ्र वहाँसे चलेजाओ यहाँ न रहो क्योंकि दानवों का स्वामी बड़ा दुस्सह है ८ यह सुन नहुषजी बोले कि जो सप्तद्वीपवती पृथ्वी के बड़ेबली महाराज आयुजी हैं सब दानवों के विनाशक हमको उनके पुत्र जानो ९ नहुष हमारा नाम विख्यात है व देवता ब्राह्मणों के हम पूजक हैं हे दानव ! हमको बालकपनहीमें तुम्हारा स्वामी हुण्ड हरलाया था १० व शिवजीकी इस कन्याको भी यह दैत्य पूर्वकालमें हरलाया था इसलिये हुण्डके वध के निमित्त इसने अतिघोर तप किया है ११ जैसेही हमारा जन्म हुआ कि सूतिका गृहसे तुम्हारा स्वामी हमें उठालाया और अपनी दासी को और पाककर्त्ता को दिया हे पाप ! अब सुन हम वही हैं उस दुष्ट पापकर्म करनेवाले हुण्ड दैत्यके वधके लिये आये हैं १२।१३ व यहाँ के औरभी घोर दानवोंको यमपुरको भेजेंगे हे पापिष्ठ ! हमको ऐसा जान कर दानव से ऐसाही जाकर कहदे १४ नहुष महात्माके ऐसे वचन सुनकर वह दुष्टात्मा वहाँ गया हुण्ड से जैसेका तैसा उसने कहा १५ दूतके मुखसे जैसेही ऐसा सुना कि दानवेन्द्रने बड़ा भारी क्रोध किया व कहा कि उस पापी सूदने व उस दुष्टा दासीने क्यों नहीं उस बालकको मार डाला १६ अब देखो हमारा मरणरूप वह बढ़कर फिर आनपहुँचा हम अभी अशोकसुन्दरीसहित उस १७ आयु के दुष्ट पुत्रको जाकर मारते हैं समरमें मारेतीखे बाणोंसे मारकर उड़ा देंगे फिर ऐसा कहकर अपने सारथिसे बोला कि तुम अच्छे सीखेहुये घोड़ेजोतकर रथलाओ फिर आतुर उसने सेनापतिको बुलाकर उससे यह कहा कि १८।१९ हमारी सबसेना अभी तैयार करो व सब अन्यशूरोंकोभी आज्ञादेओ कि युद्ध करनेको उद्यतहों घोड़े व सवार योधा सब तैयारहों पताका चामर छत्र सब हमारे रथके ऊपर लगायेजायें २० हमारी चतुरंगिणी सेना योजितकरो पर बहुतही शीघ्र विलम्ब न हो ऐसा हुण्डका वचन सुनकर तुरन्त २१ महाप्राज्ञ सेनापतिने यथाविधि सबक्रिया चतुरङ्ग महासैन्यसे वह

असुर युक्तहुआ २२ व बाणचाप धारण कियेहुये नहुषवीरके सङ्ग युद्धकरनेके लिये वह गया हुण्ड उन नहुषजीके सामने पहुँचा जोकि इन्द्रके रथपर चढ़े सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ २३ समरमें उद्यन्तवीर सुर असुरों से दुःखसे प्राप्तथे इनका युद्ध देखने के लिये विमानोंपर चढ़कर सब महापराक्रमी देवगणभी आकाश में स्थितहुये २४ नहुषको सब तेजोज्वालासे समाकीर्ण दूसरे सूर्यहीकेसमान सबोंने देखा सूतजी शौनकादिकोंसे बोले कि फिर वे सब दानवलोग नहुषके ऊपर उत्तम बाणोंकी वर्षा करनेलगे २५ शक्ति, महाशूल, खड्ग, परशु, फँसरी आदि अस्त्र शस्त्र चलानेलगे व समर में उन महात्मा नहुषजीके सङ्ग युद्ध करने लगे २६ व क्रोधसे ऐसे गर्जने लगे जैसे वर्षाकालमें मेघ पर्वत में गर्जतेहैं उन दैत्योंका विक्रम देखकर आयुकेपुत्र महाप्रतापी नहुषजीने २७ अपने इन्द्रके आयुधके समान धनुषको उठाकर उसकी प्रत्यञ्चा चढ़ाई व उन महात्माने वज्रके शब्दके समान धन्वा का शब्दकिया २८ हे विप्रो ! नहुषजीने ऐसा चाप शब्दकिया कि जिससे सब दानवों को भय पहुँचा ॥ चौ० महाघोररवसुनिसबदानव । कम्पितभेजिगिकातरमानव ॥ कश्मलसहित भग्नसब अङ्गा । सुनतशब्द सारेअँगभङ्गा २९॥३०

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेशुक्तीर्थ
महात्म्येव्यक्तचरित्रेनहुषाख्यानचतुर्दशदिकशततमोऽध्यायः ११४ ॥

एकसौपन्द्रहका अध्याय ॥

दो० यकसैपन्द्रह महुँ कथ्यो हुण्ड नहुषकर युद्ध ॥

जामें दानव सकलनृप सारे हैंके क्रुद्ध १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जलसे बोला कि तदनन्तर धनुर्वीण धारण किये महात्मा महाराज नहुषजी संग्राम में विराजमान हो अतिक्रोध से दानवोंके नाशकरने में ऐसे उद्यतहुये जैसे प्रलयकाल में काल क्रुद्धहोकर सबलोकों का नाशकरताहै १ रविके तेजके समान दीप्तिमान् अस्त्रोंके जालोंसे उन महात्माने दानवोंको ऐसाभारा जैसा कि प्रचण्डपवन वृक्षोंको उखाड़डालताहै २ वजैसे पवन अपने

बल तेजसे दिव्य मेघसमूहों को उड़ालेजाताहै वैसेही महाराज ने अत्यन्त तीक्ष्ण श्रेष्ठ बाणोंसे मार २ कर सब मदोत्कट असुरोंको नाशकरदिया ३ यहांतककिउन महात्माकी बाणवृष्टि कोईभी दानव न सहसके कोई तो मरगये कोई घायल हुये व बहुतसे समर छोड़ कर भागखड़ेहुये ४ सुतजी शौनकादिकों से बोले कि महातेजस्वी महाप्राज्ञ बड़े दानवोंके विनाशनेवाले महाराज नहुषको देख दुष्टात्मा हुण्डने क्रोधकिया ५ व सम्मुख जाकर बोला कि हे आयुपुत्र ! रणमें खड़ेरहो खड़ेरहो तुमको अभी यमराजके पास भेजेदेते हैं ६ तब नहुषजी बोलेकिदेख हम समरमें स्थितहैं व तुम्हारे मारने के लिये आये हैं हम तुझ पापी दानवको मारडालेंगे ७ यह कह धन्वाले अग्निकी शिखाकेसमानलपलपाते हुये बाण चढ़ाकर छत्र लगाये हुये राजा समर में शोभित हुये ८ व इन्द्र के दिव्य सारथि मातलि से वचन बोले कि आप हमारा रथ हुण्ड के सम्मुख लेचलें ९ जब वीर नहुषजीने ऐसा कहा तो मातलि ने महावायु के वेगके समान अतिशीघ्र चलनेवाले घोड़ों को हांका १० व ऐसे उड़े कि जैसे आकाश में हंसउड़ते हैं व चन्द्रमा के रङ्ग के छत्र पताकासहित उस रथपर चढ़े ११ राजानहुष ऐसे शोभितहुये जैसे आकाश में सूर्य शोभित होतेहैं ऐसेही तेजसे व विक्रमसे आयुके पुत्र रणमें शोभित हुये १२ व उधर हुण्डभी अपने रथपर चढ़ाहुआ व अपने तेजसे विराजमान सब आयुध धारण किये वीरव्रत में स्थित हुआ १३ व दोनों वीरोंका दारुण भयङ्कर युद्ध होने लगा जिससे कि देवताओं कोभी विस्मयहुआ हे महाप्राज्ञ ! तब अतितीक्ष्ण कङ्कपत्र लगेहुये बाणोंसे हुण्डने नहुषराजा की छातीमें ताड़ित किया १४। १५ और पांच बाण नहुष के मस्तक में मारे तब बाणोंसे बिछराजा क्रुद्धहुआ व उस समय बाणोंके लगनेसे अधिक शोभितहुआ १६ जैसे अपने किरणों से अरुणसहित उदयहुये सूर्य शोभित होते हैं ऊपर से रुधिर की धारा बहरही थी व सुवर्ण की फोंकवाले बाण देह में घुस गये थे १७ इससे सूर्य के समान राजा भूमिपर शोभित हुये और तिसके पौरुष को देखकर दानव से बोले १८ हे दैत्य !

खड़े होकर हमारी शीघ्रता देख ऐसा कहकर समर में दैत्य के दश बाण मारे १९ वे सब बाण मुख व ललाटही में लगे इससे महाबली मूर्च्छित होकर सब देवताओं के देखतेही देखते रथके ऊपर पतित हुआ २० तब देवों चारणों सिद्धोंने आकाश में बड़े हर्ष का शब्द किया जय २ महीपाल ऐसा कह सर्वोंने शंख बजाये २१ वह देवताओं का किया हुआ तुमुल कोलाहल हुआ व मूर्च्छित हुण्ड के कानों में पड़ा २२ सुनतेही धन्वा व सर्पोंके समान बाण लेकर बोला कि समर में खड़े होवो खड़े होवो अभी तुम्हारे मारनेसे नहीं मराहूँ २३ ऐसा कह फिर उठकर अतिवेगसे इक्कीस बाणों से नहुष को मारा २४ उनमेंसे एक बाण से तो मूठी के मध्यमें मारा व चार बाणों से छाती में प्रहार किया व अन्य चारबाणों से चारो घोड़ोंको मारा व एकसे छत्रको २५ व पांच बाणों से मातलिको मारकर सातबाण रथमें मारे व उस दानवने मोरके पंख लगेहुये तीनबाणों से ध्वजा के दण्डमें मारा २६ बाणों का लेना चढ़ाना व छोड़ना अति वेग से दुरात्माका देखकर सब देवगण बहुत विस्मित हुये २७ व उसका पौरुष देखकर राजाने दानवोत्तम से कहा कि तुम शूर हो धनुर्विद्या भी पढ़े हो धीर व रणमें पण्डितहो २८ ऐसा उस दानव से कह व धन्वाकी टङ्कौर दे महाराज ने दश बाण दानव के ऊपर चलाये २९ तीन बाणों से ध्वजा काटकर पृथ्वीमें गिरादिया चारबाणों से तिसके घोड़ों को गिराया ३० पराक्रमी राजाने एक बाण से तिसके छत्रको काटा दश बाणोंसे उसके सारथिको वनराज के मन्दिर भेजा ३१ दशबाणों से उसके दाँतों को गिराया तीस बाणों से दनुजेश्वर के सब अंगों में मारा ३२ जब घोड़ा मर गया और रथ टूट गया तो वह राक्षस बाण और धनुष हाथमें लेकर वेगसे तीक्ष्ण बाण बरसाता हुआ दौड़ा ३३ फिर तलवार और शूल धारण कर दैत्य राजापर दौड़ा तब दौड़ते हुये हुण्डकी तलवार ढाल को राजाने तीक्ष्ण बाणों से काटडाला तब दुरात्मा हुण्ड ने चारों ओर देखकर ३४ । ३५ मुद्गर को शीघ्र ग्रहण कर छोड़ा राजा ने वज्र के समान वेगवाले मुद्गरको आते हुये देखा ३६ और दश तीक्ष्ण बाणों

४३० पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

स अपने पराक्रम से शब्दयुक्त मुद्गर को आकाश से गिराया ३७ तब हुण्ड दश खण्ड मुद्गर के पृथ्वी में गिरे देखकर वेगसे गदा लेकर राजा पर दौड़ा ३८ फिर राजाने उसके उसी हाथ में एक तीक्ष्ण धारवाला खड्ग ऐसा मारा कि गदा बहूँटा सहित उसका वह हाथ कट कर अलग पृथ्वी में गिरा ३९ तब उसने वज्रपात के समान बड़ा भारी शब्द किया व रुधिर से सर्वांग भीगा हुआ वह रण में इधर उधर दौड़ने लगा ४० व बड़े क्रोध से युक्त होकर उसने राजा को ली-ल लेना चाहा इससे राजा के सम्मुख दौड़ा ४१ कि महाराज ने ऐसी महाशक्ति हृदय में मारी कि उसके लगते ही वह दानव सहसा से पृथ्वी पर गिर पड़ा जैसे कि वज्र से मारा हुआ पर्वत गिरे ४२ ॥ चौ० जब सो दैत्य गिर्यो महिमा हीं । प्राण रहित कुब्र संराय नाहीं ॥ शेष दैत्य भागे चहुँ ओरा । करत पुकार महारव घोरा ॥ सुर गन्धर्व सिद्ध मुनि चारण । हर्षित भये असुर हतिकारण ॥ नहुष महात्मा जब त्यहि मारा । सब देवन जयजयति उचारा ॥ आशिष दीन देवगण आई । जीवहु भूपति सब सुख पाई ॥ यह सुनि हर्षित भयहु महीपा । मनमहँ बिहँस्यो सो कुल दीपा ४३ । ४५

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे नोपाख्याने गुरुतीर्थ
माहात्म्ये च्यवनचरित्रे नहुषाख्याने पंचदशाधिकशततमोऽध्यायः ११५ ॥

एकसौ सोलहका अध्याय ॥

दो० एकसौ सोलहवें महें नहुष युवतियुत गेह ॥

मुनि आज्ञासों आयगे त्यहिल खिन्न पकियनेह १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि हुण्ड के मार जाने पर पुण्यरूपिणी तपस्विनी अशोक सुन्दरी अति हर्षित होकर रम्भा के साथ आकर नहुष वीर से बोली कि १ हे वीर मैं आपकी धर्म से स्त्री हूँ देवों से दिष्टा और तपस्विनी हूँ यदि धर्म की इच्छा करते हो तो अब हमारे संज विवाह करो २ क्योंकि हम सदा से तुम्हारी चिन्ता करती हुई तप करती हैं हे नृपोत्तम ! आपको धर्म के प्रसाद से हमने पाया है ३ यह सुन नहुष जी बोले कि हे भद्रे ! जो तुम हमारे ही निमित्त बहुत दिनों से तप

करती हो तो हमभी गुरुजीके कथनानुसार जब मुहूर्त्त आवेगा तब तुम्हारे पतिहोंगे ४ हे भामिनि ! अब इस रम्भाके साथ हम तुम चलोचलें यह कह उसको व मनोरमा रम्भाको रथपर चढ़ाकर ५ उसी श्रेष्ठ रथकी द्वारा वशिष्ठजीके आश्रमपरको अतिशीघ्रता से महायशस्वी नहुष वीर चलेगये ६ वहां पहुँच वशिष्ठजी को स्थान में देखकर प्रणाम करके स्त्री के साथ महातेजस्वी राजा बड़े आनन्दसे युक्तहुये ७ व मुनिराजके आगे उसयुद्धमें जो २ वृत्तान्त हुये थे जैसे कि उस दानवाधमको मारा सब समाचार महात्मा वशिष्ठ मुनिसे कहे ८ वशिष्ठजीने भी नहुषके वृत्तान्त सुनकर अतिहर्षितहो राजाको बहुतसी आशिषें दीं ९ व जब शुभतिथि और लग्न आई तब मुनिराजने उनदोनोंका विवाह अग्नि व ब्राह्मणोंके सम्मुख कराया १० व बहुतसे आशीर्वाद देकर स्त्रीसहित राजा नहुष से कहा कि हे महामतेराजन् ! अब तुम शीघ्रतासे जाकर अपनी माता व पिता को देखो ११ हे सुव्रत ! तुम दोनों को देखकर तुम्हारी माता व पिता बहुत हर्षित होंगे जैसे कि पूर्णमासी के चन्द्रमा को देखकर समुद्र बड़े हर्षसे प्रसन्न होता है १२ इसप्रकार ब्रह्माजीके पुत्र वशिष्ठमुनि ने उन दोनों को भेजा व मुनि के प्रणामकर रथपर चढ़के सारथि समेत दोनों गये १३ जब इसप्रकार पिता माताके देखनेको अपनी स्त्रीसमेत नहुषचले १४ सूतजी शौनकादिकोंसे बोले कि इतनेमें देवताओंने मेनकानाम अप्सराको भेजा तो मेनका मारे दुःखसे व्याकुल राजा आयुकी स्त्री को शोकके समुद्रमें गिरीहुई १५ महाभागा देवी इन्दुमती रानी से बोली कि हे महाभागे ! अब शोक को छोड़ो व पतोहू समेत अपने पुत्र को देखो १६ कि तुम्हारे पुत्रके हरलेजाने वाले पापी दानव को मारकर वीर श्री से युक्त सभामें आया हुआ है १७ फिर मेनिकाने तिस इन्दुमतीसे नहुषने हुण्डके संग्राममें जैसा वृत्तान्त कियाथा सब निवेदित किया १८ मेनिकाके वचन सुनकर बड़े आनन्दसे युक्त रानी मेनिकासे गद्गद समेत वचन बोली कि हे सखि ! तुम सत्यही कहती हो १९ अमृत समेत अत्यन्त प्रिय मनके उत्साह करनेवाला कहां है यदि सत्य है तो हम अपने प्राणादिक सब इस

प्रियवचनकी न्योछावर करसक्ती हैं २० ऐसा मेनकासे कहकर इन्दु-
मती अपनेपतिसे बोली कि सुनतीहैं महाबाहुतुम्हारापुत्र इसीसमय
आताहै २१ हेमहाराज ! यह श्रेष्ठ अप्सरा मेनिका कहती है यह
स्वामी से कहकर अत्यन्त हर्षयुक्त रानी चुपहोरही २२ यह सुनकर
आयुराजा तिसप्रियासे बोले कि हेमहाभागे ! हमसे यह बात नारद
मुनि पहले कहगयेथे कि २३ हे राजन् ! तुम पुत्रकेलिये कभी दुःख
न करना तुम्हारा पुत्र अच्छे पराक्रमसे उस दुष्टहुण्ड दैत्यको मारकर
आवेगा २४ सो पहलेका मुनिका कहाहुआ अब सत्यहुआ हे देवि !
उन मुनिका वचन अन्यथा कैसे होसक्ताथा २५ व इसके विशेष
मुनियों में श्रेष्ठ साक्षात् जनार्दनरूप दत्तात्रेयजी की सेवा पहले
हमने व तुमने बहुत दिनोंतक तपसे कीथी २६ तब उन्होंने विष्णु
केतेजसे युक्त पुत्ररत्न दियाथा कि वह पुत्र भी दानव को सदैव
मारडाले २७ दत्तात्रेयजीने सब दैत्योंका प्रहर्ता प्रजाओंका पालक
महाबली वैष्णवअंश धारणकरनेवाला उत्तम पुत्र तो हमको दिया
हीथा २८ राजाआयुजीने अपनी इन्दुमती स्त्रीसे ऐसा कहकर अपने
पुत्रके आनेका बड़ाभारी उत्सव किया २९ व बड़े आनन्दसे युक्तहो
कर फिर राजाने विष्णुभगवान् का स्मरण किया जोकि सबपदार्थों
सेयुक्त देववर्गसमेत आनन्दरूप एक परमार्थ रूप अच्छे वैष्णव
मनुष्योंके क्लेश नाशनेवाले व सुखदेनेवाले मोक्षरूप ३०।३१ ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थ
माहात्म्येव्यवनचरित्रेनहुषाख्यानेषोडशाधिकशततमोऽध्यायः ११६ ॥

एकसौसत्रह का अध्याय ॥

दो० एकसौ सत्रहयें महीं नहुष राज्य अभिषेक ॥

तापितुजननीस्वर्गहरिपुरगतिसहितविवेक १

कुञ्जल अपनेपुत्र कपिञ्जलसे बोला किमहाराजकुमार नहुष अ-
पनी उस अशोकसुन्दरी भार्या व रम्भानाम अप्सरा समेत इन्द्रके
दियेहुये उस श्रेष्ठ दिव्यविमानपर आरूढ़ १ सब शोभायुक्त हस्ति-
नापुरमें पहुँचे जो कि दिव्य मङ्गलयुक्त दिव्यमंदिरों से उपशोभित

होरहा था २ व सुवर्ण के तोरणसे युक्त और पताकाओंसे अलंकृत होरहा था व नानाप्रकारके बाजों से व बन्दीगण चारणादिकोंसे शोभित था ३ व देवरूपोंके समान रूपवाले पुण्यकारी मनुष्योंसे उपशोभित व दिव्यरूपवती स्त्रियोंसे और गज अश्व रथादिकोंसे भूषित होरहा था ४ नानामङ्गलशब्दोंसे व वेदध्वनियों से युक्त था गीत वादित्रोंके शब्दोंसे व वीणावंशीके सुस्वरोंसे पूरण होरहा था ५ इसीप्रकार अन्यसब शोभाओंसे समाकीर्ण उत्तमपुरमें उन्होंने बड़े शक्तिताले वेदमङ्गल पढ़तेहुये ब्राह्मणोंने पूजा ६ उन वीरने अपने पिता व पुण्यरूपिणी माताके दर्शन किये व बड़े हर्ष से युक्त होकर पिता के चरणों के प्रणाम किया ७ व फिर श्रेष्ठमुखवाली अशोकसुन्दरी ने अपने इवशुर इवश्रूके चरणोंपर बार२ गिरकर भक्तिभावसे प्रणाम किया ८ फिर प्रीति दिखाती हुई रम्भा ने भी रानी राजा दोनों के प्रणाम किया इसप्रकार जब प्रणाम कर चुके तो नहुष महाराजकुमार ने अपने गुरु ९ व माता पितासे कुशल पूँछी तब राजा आयु आनन्दकी पुलकावली समेत आंसु छोड़तेहुये बोले कि १० अर सब व्याधि नष्ट हुये व शोक दुःख दोनों जातेरहे हे पुत्र ! तुम्हारे देखनेसे अच्छी प्रसन्नतासे सब जगत् आनन्दमय है ११ व तुम महापराक्रमी के उत्पन्न होने से हम कृतार्थ हुये क्योंकि अपने वंशका उद्धारकर हमको तुमने उद्धार किया १२ फिर उनकी माता इन्दुमती बोली कि हे महाभाग ! हे तात ! जैसे पर्वतासी के चन्द्रमाके तेजको देख कर समुद्र बढ़ता है ऐसेही तुम्हारे देखने से हम १३ बढ़ी हैं व बड़े आनन्द से समाकुल होकर हर्षको प्राप्त हुई हैं हे महाप्राज्ञ ! हे मान के देनेवाले ! तुम्हारे दर्शन से हम धन्य हुई १४ इसप्रकार पुत्र से कहकर फिर छाती से लपटाकर शिरसूँघा जैसे कि बाहरसे आकर धेनु अपने बछड़े को सूँघती है १५ देवरूपी नहुषनाथ पुनः कोराकर अत्यानन्द युक्त हो पुण्यकारिणी इन्दुमती देवीने बहुतसी आदिषों से पुत्रको युक्त किया १६ सूतजी शौनकादिकों से बोले कि तब नहुष ने अपनी पुण्यवती माता देवी इन्दुमती से अपने सब वृत्तान्त जिसप्रकार दैत्य उठा लेगया था १७ व अपनी भार्या की उत्पत्ति

व प्राप्ति व जैसे फिर हुण्ड से युद्ध हुआ व जैसे हुण्डको मारा १८
 सब संक्षेप रीति से कह सुनाया व जिसके सुनने से माता पिता को
 परमानन्द हुआ १९ व माता पिताभी अपने पुत्रका विक्रम सुन
 कर बड़े हर्षित हो आनन्दसे पूर्णमन होगये २० फिर इन्द्रके रथपर
 से धनुषले नहुषने देश सहित सप्तद्वीपवती सब पृथ्वी को जीतकर
 २१ सब धन धान्य से पूर्ण पृथ्वी अपने पिताके समर्पण करदी व
 दान पुण्यादि सुकर्मोंसे नित्य पिताको हर्षित कराते हुये नहुषजीने
 २२ अपने पितासे राजसयादि नानाप्रकारके यज्ञ कराये महायज्ञों
 दानों व्रतों नियमों संयमों २३ अच्छे दानों यश व पुण्यों से व पु-
 ण्ददायक अन्य महोदय वाले यज्ञों से पिता माता को पूर्ण किया
 २४ फिर देवगणों ने उत्तम हस्तिनापुरमें आकर वीरमर्दन महात्मा
 नहुषजी का अभिषेक अपने हाथों से किया २५ व मुनियों सिद्धों
 व राजा आयुसे भी अभिषेक करवाया अशोकसुन्दरीसमेत नहुषजी
 का राज्यसिंहासन पर अभिषेक कराके २६ फिर राजा आयु महा-
 यशस्वी धर्मात्मा अपनी भार्यासमेत स्वर्ग को चलेगये व उनकी
 देवताओं सिद्धोंने बड़ी वहां पूजाकी २७ कुछ दिन इन्द्रलोकमें रह
 कर उसे छोड़कर राजा आयु ब्रह्मलोकको गये फिर मुनियों व देवों से
 पूजित होतेहुये राजा वहांसे शिवलोक को गये २८ अपने कर्मोंसे
 व अपने पुत्रके तेज पुण्यसे महाराज विष्णुलोकमें बसते भये २९
 व हे महाभाग ! पुण्यकर्म करनेवाले पुरुषोंको ऐसेही उत्तम पुण्यकर्म
 करने चाहियें अन्य शोक देनेवाले कर्मोंके करनेसे क्या है ३० जैसे
 नहुष धर्मात्मा अपने पितृके तारक हुये क्योंकि ज्ञान से पण्डित
 नहुष अपने सब कुलके धर्ता हुये ३१ यह हमने नहुष का सब चरित्र
 तुमसे कहा हे पुत्र कपिञ्जल ! कहो अब और तुमसे क्या कहें ३२॥
 जीपैया॥ इमि नहुषचरित्रं परमविचित्रं जो नर सुनै सुनावै ।

सोसब सुखभोगै रहै निरोगै निज वाञ्छितफलपावै ॥

पुनि सुरपुर जावै अतिहरषावै तायश किन्नर गावै ।

देवन मनभावै सदा सुहावै तिन्हें सुमतसमझावै ३३

इति श्रीपाद्मभाषानुवादेगुरुतीर्थमाहात्म्येसप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः १७ ॥

एकसौअठारहका अध्याय ॥

दो० यकसै अठारहयें महीं कह विहुण्डकी गाथ ॥

जोमाया हरिरूपलखि मोहित भयहु अकाथ १

कपिञ्जलने अपनेपिता कुञ्जलसे प्रश्नकिया कि हे तात ! प्रथम गङ्गामुखके समीप एक श्रेष्ठस्त्री रोदन करतीथी उस के दोनों नेत्रों से आंसुओंके बिन्दु गङ्गाजल में गिरते १ व गङ्गाजलके मध्य गिरतेही कमलहोते थे उन कमलोंमें बहुत दिव्य रूप व सुगन्धित बहुत पुष्प फुलातेथे २ सो हे तात ! हे महाभाग ! तिसके सुन्दर नेत्रों से निर्मल आंसुओं के बिन्दु गङ्गाजलमें किसलिये गिरते ३ उनको केवल जिसके शरीरमें हड्डी व चमड़ाही रहगयाथा जटा चीर धारण किये वह एक पुरुष तोड़ाकरताथा ४ व सुवर्णमय उन दिव्य पुष्पों से शिवकी पूजा करताथा हे महासते ! वह नारी कौनथी व पुरुष कौनथा ५ महादेवकी पूजाकरके फिर पीछेको वह रोदन क्यों करता जो हम प्रिय सुतहों तो यह सब हमसे कहो ६ तब कुञ्जल बोला कि हे वत्स ! सुनो देवनिर्मित वृत्तान्त हम तुम से कहेंगे वह सब पापनाशन चरित्र महात्मा विष्णु भगवान् का है ७ जिस महावीर्य हुण्ड दैत्य को राजा नहुष ने समरमें माराथा उसके पुत्रका विहुण्ड नाम हुआ वह तप करने लगा ८ जब उसने सुना कि मन्त्री और सेना समेत हमारे पिता को वीर बलवान् आयुके पुत्र नहुषने रणमें मारडाला ९ तो उसने क्रोधसे बड़ा तप किया व तप करने से उस दुष्टका पौरुष बहुत बढ़ा फिर वह देवताओं के मारने में उद्यतहुआ १० सब देवता रणमें उसको दुःसह जानते भये वहां तक कि हुण्ड का पुत्र विहुण्ड तीनोंलोकों के मारने में उद्यतहुआ ११ व पितृके वैरका पलटा लेने के लिये हम देवताओं मनुष्यों को मारडालेंगे इसप्रकार समुद्यत होकर वह पापी देवताओं ब्राह्मणों का कण्ठक हुआ १२ वह उपद्रव व प्रजाओंको पीड़ादेता तब इन्द्रादि सब देवगण तिसके तेजसे जलते भये १३ देवदेव महात्मा श्रीविष्णु भगवान् के शरणको गये जोकि देवदेव जगन्नाथ शंख चक्र गदाधारी

हैं १४ उनसे देवता कहते भये कि विहुण्डके महाभयसे हमारी नित्यही रक्षाकरो श्रीविष्णु बोले कि हे देवगणो ! सुखसे तुम्हारी बढ़ती हो १५ देवताओं के कण्ठक पापी विहुण्डको हम मारेंगे इसप्रकार उन देवताओं से कहकर फिर माया करके श्रीहरि महायशस्वी १६ अपने आप अपना मायामय सुरूप बनाकर एक दिव्य रूप की गुणयुक्त स्त्री बनकर नन्दनवनमें जा पहुँचे १७ कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोला कि देवताओंके वधके लिये विहुण्ड दिव्यमार्गको गया १८ १९ व नन्दनवन के समीप उसने माया देखा व देखतेही वह दैत्य तिससे ऐसा मोहित हुआ कि कामवाणों से पीड़ित होकर २० उसने कालरूप श्रेष्ठ स्त्री को अपना नाश न जाना व रूप लावण्यसमेत उस नवीन सुवर्ण के समान स्त्री को देखकर २१ पापात्मा विहुण्ड अति कामातुर होकर श्रेष्ठ स्त्रीसे बोला कि हे वरारोहे ! तुम कौन हो कौन की हो जो हमारे चित्तको मथती हो २२ हे वरानने ! हमको सङ्गमदेवो हमारी रक्षाकरो रक्षाकरो हे देवेशि ! जब हमारा सङ्गम करोगी तब जिस २ कामकी इससमय इच्छा करोगी २३ वह सब हम तुमको देंगे चाहे देवता दैत्योंको भी दुर्लभ क्यों न हो तब वह मायामयी स्त्री बोली कि हे दानव ! जो हमारे सङ्ग भोग किया चाहते हो तो यह करो भाग हमको दो २४ किरोड़ कामोदके दिव्य सुगन्धित देवोंके दुर्लभ पुष्पोंसे महादेवकी पूजाकरो २५ उन सुगन्धित पुष्पोंकी माला बना कर फिर आकर हमारे गले में अपने हाथोंसे पहिनाओ हे महाभाग ! यही भाग हमको देओ २६ तब हम तुम्हारी सुप्रिया भार्या होंगी इसमें कुछ संशय नहीं है तब विहुण्डने कहा हे देवि ! ऐसाही करेंगे ऐसे पुष्पोंकी माला तुमको देंगे २७ ऐसा कहकर वह दानवेश्वर सब पुण्यकारी दिव्य वनों में घूमने लगा काम बाणसे व्याकुल वह वृक्ष उसने कहीं न देखा २८ जहां कहीं जाय पूछे कि कामोद का वृक्ष कहां है तब सब महाजन कहें कि कामोद नाम वृक्ष तो नहीं है २९ इस प्रकार कामवाणों से पीड़ित वह दुष्टात्मा सबसे पूछते २ एकदिन जाकर बड़ी भक्तिसे मस्तक झुँकाकर भार्गवमुनिसे पूछा ३० कि आप सुन्दर पुष्पयुक्त कामोदकनाम वृक्ष हमसे बतावें तब शुक्राचार्यजी

बोले कि हे दानव ! कामोद वृक्ष तो नहीं है पर स्त्री है ३१ जब वह हर्षित होकर किसी प्रसंगसे हँसती है तब हे दैत्य ! उसके हास्य करने से श्रेष्ठ सुगन्धित दिव्य हृदय को प्रिय सुगन्ध युक्त पीले पुष्प उत्पन्न होते हैं इसमें सन्देह नहीं है ३२ । ३३ उनमेंसे जो कोई एकपुष्प से भी महादेवजीको पूजन करता है उसका वाञ्छित महादेवजी पूर्ण करते हैं ३४ हे दैत्य ! उस स्त्रीके रोदन करनेसे भी होते हैं इसमें सन्देह नहीं है तैसेही लोहित बहुत पुष्प होते हैं ३५ विना सौरभके हे दैत्य ! तिन पुष्पों को न छुवै जब ऐसा शुक्राचार्य का वचन विहुण्डने सुना ३६ तो फिर उनसे बोला कि शुक्रजी कामोदा नाम स्त्री कहाँ है शुक्र बोले कि महापातक नाशनेवाले महा-पुण्य गङ्गाद्वारपर ३७ कामोदाख्यपुर है वह विश्वकर्माका बनाया हुआ है उसी पुरमें दिव्य भोगों से शोभित ३८ आभरणों से शोभित सब देवों से पूजित कामोदा नारी रहती है उसकी पूजा जाकर तुम करो सो इस रीतिसे कि जैसा करने से वह श्रेष्ठ अप्सरा हैंसे वही पुण्यकारी उपायकरो ॥

चौ० इमिकहियोगिराजभार्गवमुनि । कीनविरामकामअपनोपुनि ॥
करनलगे करिमानसपावन । जो सबभांतिसुहावनगावन ३६।४१

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थे

व्यवनचरित्रेकामोदाख्यानेऽष्टादशाधिकशततमोऽध्यायः ११८ ॥

एकसौउन्नीसका अध्याय ॥

दो० यकसैउन्निस महँ कह्यो जिभि विहुण्डकी दौष्ट्य ॥

लखिहरियुवतीहैविधिज कहँतहँ पठव सपौष्ट्य १

कपिञ्जलने अपने पिता कुञ्जलसे पूँछा कि हे तात ! जिसके हँसने से दिव्य गन्धयुक्त व सुरासुरों को भी दुर्लभ सुहृद पुष्प उत्पन्न होते हैं १ हे महामते ! उन पुष्पों को सब देवगण वाञ्छाकरते महा-देवजी हास्य के पुष्पों से पूजित सुखको प्राप्त होते हैं २ उस पुष्प का क्या गुण है हमसे विस्तारसहित कहो व कामोदा कौन है व वह वरांगना किसकी पुत्री है ३ हे महाभाग ! उसके हँसने से सुन्दर पुष्प

क्यों होते हैं व उन पुष्पों में कौनसा गुण है यह सब कथा हमसे विस्तारपूर्वक कहो ४ कुञ्जल बोला कि जब देवताओं व महादैत्यों ने उद्यत होकर बड़ी उत्तममित्रताकरके अमृतके लिये क्षीरसागरको मथा ५ तब उन सुरासुरों के मथने से क्षीरसागरसे अतिदिव्य चार कन्या निकलीं उन कन्याओंको प्रथम वरुणने दिखाया फिर चन्द्रमा ने दिखाया ६ फिर कलशमें भरा हुआ पुण्यकारी अमृत निकला वे चारो कन्या देवोंके ही हितकी इच्छा करती भई ७ उनमें एकका लक्ष्मीनाम था दूसरी का वारुणी तीसरी का ज्येष्ठा व चौथी का कामोदा नाम हुआ ८ हे महामते ! उनके मध्यमें पहले उत्पन्न हुई वह श्रेष्ठ ज्येष्ठा हुई क्योंकि उसमें सबसे अधिक गुण थे इससे उस ज्येष्ठा की पूजा सदा हुआ करती है ९ व क्षीरसागरसे निकलेहुये पय के फेनेसे वारुणीनाम कन्या हुई व अमृतकी लहरी से कामोदा हुई १० लक्ष्मी व चन्द्रमा ये दोनों अमृतही से उत्पन्न हुये हैं चन्द्रमा तीनों लोकों के भूषण हुये मुख्यकर शिवजी के तो प्रिय हुये ११ व ज्येष्ठा मृत्युरोग हरनेवाली हुई तैसेही देवों को वारुणी हुई ज्येष्ठा कल्याणकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंको अत्यन्त पुण्य देनेवाली भई १२ व जो अमृतसे पुण्य देनेवाली कामोदा नाम देवी उत्पन्न हुई उसने श्रीविष्णुही की प्रीतिके लिये वृक्षरूप धारण किया १३ वह सदैव विष्णुके प्रीति करनेवाली होगी वही पुण्यकारिणी कामोदा तुलसी होगी इसमें सन्देह नहीं है १४ तिसके साथ जगन्नाथ जी रमण करेंगे इसमें भी संशय नहीं है जो तुलसी का एक पत्र श्रीहरि को चढ़ावेगा १५ श्रीभगवान् उसका उपकार मानेंगे कि हम इसके बदले में इसे क्या दें ऐसा नित्य चिन्तन करते २ फिर उसकी प्रीति करने लगेंगे १६ सो इस प्रकार पूर्वकालमें कामोदा समुद्र से उत्पन्न हुई जब वह कभी हर्षसे गद्गद वचन कहती हुई हैंसती है १७ तब उसके मुखसे सुगन्धित दिव्य पुष्प निकलने लगते हैं व कभी सुन्दर पुष्प सूखते नहीं जो कोई उद्यत होकर उन फूलोंको ग्रहण करता १८ और उनसे शङ्करदेव ब्रह्मा वा श्रीविष्णु की पूजा करता है उसके ऊपर ये तीनों देव प्रसन्न होते हैं व जो कुछ वह मांगता है उसको देते हैं १९

व जब किसी दुःख से दुःखित जब यह रोती है तो उसके नेत्रों से जलकी धारा बहती है उससे भी वैसेही दिव्यपुष्प बहुत उत्पन्न होते हैं वे सुगन्धहीन होते हैं उनसे जो महादेवजी को पूजता है २० । २१ उससे दुःख व सन्ताप होते हैं इसमें सन्देह नहीं है जो पाप-बुद्धि सुगन्धहीन उन पुष्पों से एक बार भी देवोंको पूजता है २२ तो देवता उसको दुःख करते हैं इसमें सन्देह नहीं है हे पुत्र ! यह तुम से हमने सब कामोदा के जन्मकी उत्तम कथा कही २३ यही चिन्तना करके श्रीविष्णु भगवान् जीने पापी विहुण्डका विक्रम सा-हस व उद्यम देखकर २४ श्रीनारदसुनिको उसके समीप भेजा कि तुम जाकर उसदुष्ट विहुण्डको मोहित करो फिर महात्मा श्रीविष्णुजी के वचन सुनकर नारदजी २५ चले व कामोदा के समीपको जाते हुये उस दुष्टात्मा विहुण्ड के पास पहुँचे व हँसतेही से उस दुष्ट दै-त्येन्द्रसे बोले २६ कि हे दैत्येन्द्र ! अतिआतुरहोकर बड़ी शीघ्रता से कहांको जाते हो व इस समय किस कार्यके लिये और किसके भेजेहुये जाते हो २७ तब वह नारदजी के नमस्कारकर हाथ जोड़ कर बोला कि हे द्विजसत्तम ! हम कामोद पुष्पकेलिये जाते हैं २८ तब धर्मात्मा नारदजीने उससे कहा कि उन पुष्पों से तुम्हारा कौन प्रयोजन है तब उसने विप्रवर्य्य नारदजी से अपने कार्यका कारण कहा २९ कि नन्दनवनमें एक अतिश्रेष्ठ स्त्री है उसके दर्शनमात्र से हम कामके वशीभूत होगये ३० हे विप्रश्रेष्ठ ! उसने हमसे कहा कि कामोदा से उत्पन्न पुष्पों से महादेवजी की पूजाकरो सो सात कि-डोर पुष्पों से ३१ तब हम तुम्हारी प्रियाहोंगी इसमें सन्देह नहीं है सो हम उन्हीं पुष्पोंके लिये अब कामोदपुरको जाते हैं ३२ व समुद्र से उत्पन्न उस कामोदाको हम लेआवेंगे सो उसके मन को ऐसा उ-ल्लासित करेंगे और महाहासों से फिर हँसावेंगे ३३ वह महाप्रसन्न होगी तो बारबार हँसेगी हे विप्र ! उसका गह्वर हास्य हमारा कार्य बढ़ावेगा ३४ तिससे कि वह अपने हास्यसे दिव्य पुष्प गिरावेगी उनसे इसी समय शिवकी पूजा करेंगे ३५ वे पूजा के देने से सन्नुष्ट होकर उत्तम कल हमको देंगे क्योंकि महादेवजी सब प्राणियों के

४४०

पद्मपुराण भाषा भूमिखण्ड द्वि० ।

स्वामी व कल्याणकर्त्ता लोकभावनहैं ३६ यह सुनकर नारदजी बोले कि हे दैत्य ! तुम कामोदनाम उत्तम पुरको कभी न जाना क्योंकि वहां सब दैत्यों के नाशक अत्यन्त बुद्धिमान् विष्णुजी रहते हैं ३७ हे दानव ! जिस उपायसे कामोद नाम पुष्प तुम्हारे हाथ लगेंगे वह उपाय हम तुमसे कहते हैं ३८ गङ्गाके जलमें वे दिव्य पुष्प गिरते हैं इसमें सन्देह नहीं है वे पुण्य जलों में बहते हुये इस समय यहां आवेंगे ३९ उन दिव्य बहुतसे पुष्पोंको लेकर तुम अपना मनोवाञ्छित साधन करना ४० यह दानव श्रेष्ठसे कहकर फिर मोहितकर धर्मात्मा नारदजी ने चिन्तनाकी ४१ कि अब वह कामोदा कैसे रोदनकरे किसदुःखसे दुःखितहो इस विषयमें एक क्षणभर विचारांश कर ४२ फिर बुद्धिसे समझकर आप कामोदनामपुरको चलेगये ४३॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणेद्वितीयेभूमिखण्डेभाषानुवादेवेनोपाख्यानेगुरुतीर्थे
च्यवनचरित्रेकामोदाख्यानेएकोनविंशत्याधिकशततमोऽध्यायः ११६ ॥

एकसौबीसका अध्याय ॥

दो० एकसौ बीस अध्यायमहैं कामोदा सों भाष ॥

नारदमुनि पैत्तिक प्रमुख स्वप्न सकलसहसाष १

कुञ्जल अपने पुत्र कपिञ्जल से बोले कि नारदजी सब कामोंसे समृद्ध व देवताओं से समाकुल दिव्य कामोदाख्यपुर देखतेभये १ व द्विजोत्तमजी कामोदाके घरमें प्रविष्टहुये व सब कामों से समाकुल कामोदा को देखकर २ उससे अर्घ्य पायाचमनीय व स्वागतादिक सुवाक्योंसे पूजितहुये फिर दिव्य आसनपर बैठकर उस स्त्रीसे बोले ३ कि हे विष्णु तेजसे उत्पन्न कल्याणयुक्तवाली ! सुखसे तो रहती हो तुम्हारा अनामय तो है ऐसा कहकर बहुतसे आशीर्वाद दिये ४ तब कामोदा देवर्षिजी से बोली कि तुम्हारे व श्रीविष्णुभगवान् के प्रसाद से हम सुखसे हैं हे महाभाग ! प्रश्नोत्तर का कारण हमसे कहिये ५ व हे मुनिपुङ्गव ! हमारे अंगमें महामोह उत्पन्नहुआ है कि हमारी भतिका नाशकरता है वह सब लोगों में भी व्याप्त रहता है ६ उसी महामोहके कारण हमको निद्रा आरही है जैसे मनुष्यादिकोंको आती है हे मुनि

जी ! आज हम सोगई थीं तब हमने एक दारुण स्वप्न देखा ७ कि किसीने आकर हमसे यह कहा कि ये अव्यक्त हृषीकेश भगवान् संसारको जावेंगे ८ तबसे हम बड़े दुःखसे दुःखित हैं आप ज्ञानवानों में श्रेष्ठ हैं इसका कारण हमसे कहें ९ नारदजी बोले कि हे भद्रे ! मनुष्यों में वात पित्त कफ और सन्निपातसे उत्पन्न स्वप्न सदा हुआ करते हैं इसमें संदेह नहीं है १० परन्तु देवताओं में ये स्वप्न कभी नहीं होते सो हे सुन्दरि ! जो उत्तम स्वप्न सूर्योदय के समयमें दिखाई देता है ११ वह अच्छा स्वप्न मनुष्योंको पुण्य फलदायक होता है हे शुभे ! अब और भी स्वप्न का कारण तुमसे कहते हैं १२ हे यशस्वने ! जब प्रचण्ड पवन चलता है तो उससे सब जल चलायमान होते हैं उनसे सूक्ष्म जलकण निकलने लगते हैं १३ वे निर्मल जलकण बाहर निकलकर जापड़ते हैं व फिर आकर उन्हीं जलोंमें लीन हो जाते हैं इससे कभी दृश्य कभी अदृश्य होजाते हैं १४ ऐसेही स्वप्न का भाव है सो कहते हैं हे भामिनि ! सुनो यह आत्मा शुद्ध और विरक्त है इससे राग दोषों से विवर्जित रहता है १५ व यह शरीर पृथ्वी जल अग्नि पवन आकाश पांच तत्त्वों से बना है इससे छब्बीस तत्त्वों के बीचमें यह रहता है १६ यह शुद्धात्मा केवल नित्य है पर प्रकृतिके साथ इसका सङ्गम होजाता है उसी प्रकृतिके वायुरूप भावों से प्रेरित होकर स्थानसे जब इधर उधर चलायमान होने लगता है १७ तब वह आत्मा तेजके संग प्रचलित होने लगता है वास्तव में इस अन्तरात्मा का शुभनाम है जैसे पवनके प्रसङ्गसे जल में जलकण उठने लगते हैं फिर फेना निकलने लगता है ऐसेही प्रकृत्यादिकों के संयोगसे यह आत्मा कभी कभी चलायमान होता है १८ । १९ नहीं तो यही आत्मा पृथ्वी है यही वायु यही आकाश यही तेज यही जल ये पांचों पहले किये गये हैं २० ये आत्माके तेजसे संयुक्त होने के कारण पञ्च महाभूत कहाते हैं व उसीके संगको पाकर फिर ये पांचो एक होजाते हैं २१ तब आत्माके साथ पांचो ऐसे मिल जाते हैं कि दिखाई भी नहीं देते कि कहाँ हैं हे यशस्वने ! फिर इसी प्रकार बार २ अपने निमित्तकी इच्छा किया करते हैं २२ व इन्हीं तत्त्वोंकी

क्रीड़ा के रूपसे यह सब सृष्टि होती है जैसे जलमें तरङ्ग उठते हैं फिर उसीमें लीन होजाते हैं २३ ऐसेही इन पांच महाभूतों से सृष्टि होती है फिर उन्हींमें लीन होजाती है जैसे जलका व तरंगका दृष्टान्त है वैसेही सृष्टिकारूप है इसमें संदेह नहीं है २४ हे देवि! आत्मा तेज वायु पृथ्वी आकाश जल ये नाश नहीं होते हैं २५ सो हे भद्रे! आत्माके साथ तो ये पृथिव्यादि पञ्चमहाभूत नित्य हैं इसमें संशय नहीं है २६ केवल इनके इकट्ठे होने से जो पिण्ड बनजाता है उसीका नाश होता है व इनके विषयों का नाश राग द्वेषादिकों से होजाता है २७ तब सब वे प्रलयको प्राप्त होजाते हैं व पिण्डीभूत वह शरीरभी नष्ट होजाता है व इन पञ्च महाभूतों में पिण्डके नाशहोनेपर भी अन्तरात्मा सदा प्रकाशित रहता है २८ जैसे अग्नि जब प्रज्वलित होता है तब उससे चिनगारियां निकलती हैं ऐसेही इनके संग आत्मा प्रकाशको प्राप्त होता है कभी दृश्य कभी अदृश्य रहता है २९ परन्तु वह शुद्धात्मा परब्रह्म नित्य सदैव जागता है अंतरात्मा प्रकृति के महागुणों से बँधा है ३० अन्नके आहार से पुष्टों से अंतरात्मा सुखको प्राप्त होता है तिससे मनमोहित होजाता है ३१ पीछे से तामसीलय बढ़ानेवाली निद्रा उत्पन्न होती है सो जबतक सूर्य्य सुमेरु पर्वतके उस पार जाकर उदय नहीं होते तबतक हे वरानने! यह आत्मा विषयान्धकारों से घिरारहता है अर्थात् तबतक रात्रि होती है ३२ । ३३ व तबतक पञ्च तत्त्वों से प्रतोषित आत्मा योगनिद्राको ग्रहण करके आनन्द करता है व पूर्वजन्मके स्थित पिण्डमें निशावसानमें फिर आत्मा प्राप्त होता है ३४ व वह आत्मा फिर ऊँचे नीचे पिण्डोंमें प्रवेश करता है व आत्मा संसारमें दोषोंसे बँधा प्राप्त होता है ३५ व जीवात्मा देहकी रक्षाकरता पीछे मध्य में प्राप्त होकर स्थित होता है जब उदानवायु स्फुरित होता है तो उससे शब्द उत्पन्न होता है ३६ जैसे सूखी धौंकनी वायु से पूरित श्वास करती है तैसेही शब्दके वश से उदान बलसे श्वासकरता है ३७ व आत्माकेही प्रभावसे जब प्रेरित होता है तब उदान पवन बलवान् होता है व इसीप्रकार शरीर मोहको प्राप्त होता है मृतकके समान होजाता है ३८ तब इसको महामाया

निद्रा आजाती है वह हृदय कण्ठ मुख नासिकामें स्थित होता है ३९ और बाहुको संकुचित करा देता है व नाभिमण्डलमें हृदय में स्थित होता है तब आत्माके प्रभावसे उदान नाम पवन ४० महातीव्र उत्पन्न होता है इससे वह जाकर बलको रोक देता है जैसे काठका कील रस्सी से बांधने से टढ़ हो जाता है ४१ ऐसे ही आत्माकी प्रेरणासे बद्ध होकर प्राणवायु टढ़ होता है इसमें सन्देह नहीं है हे शुभानने ! अन्तरात्मा में प्रसक्त प्राणवायु है ४२ व हे भद्रे ! इस प्रकार महानिद्रा अर्थात् मरणके पीछे अन्तरात्मा फिर अपने दूसरे शरीरमें प्रवेश करता है व पूर्वजन्मका स्मरण करता हुआ उस शरीर में इधर उधर दौड़ता रहता है ४३ व वहां रहकर वह महाप्राज्ञ अपनी इच्छा से रमता है व इसी प्रकार नाना प्रकार के स्वप्न अन्तरात्मा देखा करता है ४४ कर्म से युक्त उत्तम व अपने विरुद्ध स्वप्न देखता है ऊँचे नीचे नाना प्रकार के पर्वत दुर्गमस्थान देखता है ४५ सो बातसे जानो यह कफकी नाई है तिसको कहते हैं जल नदी तड़ाग और जलके स्थान ४६ अग्नि उत्तम बहुत सुवर्णको स्वप्न में देखता है ये सब पित्तके कारण स्वप्न देखता है अब भाव्यको कहते हैं ४७ व हे वराहो ! जो स्वप्न प्रभात समय प्राणी अच्छा वा बुरा देखता है वह लाभ अलाभका दायक अपने फलके अनुसार होता है ४८ ॥
चौ० इमिपैत्तिक सब स्वप्न बखाने । जिनकर फल नहिं होत प्रमाने ॥
वातजहू नहिं सफल कदापी । होत स्वप्न नहिं मृषा अलापी ॥
विष्णुप्रसाद पाय सब सपना । सफल होत देवत फल अपना ॥
तुम देखा दुस्स्वप्न करारी । हरिप्रसाद होइहि फलकारी ४६।५०
इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने गुरुतीर्थ
माहात्म्ये च्यवनचरित्रे कामोदाख्याने विंशधिकशततमोऽध्यायः १२० ॥

एकसौ इक्कीसका अध्याय ॥

दो० यकसै इक्कीसयें महें देवी मायारूप ॥

धरिमारो सुविहुण्डकहैं कहा स्वमति अनुरूप १

नारदजी के वचन सुनकर कामोदा बोली कि जिस परमेश्वरका

अन्त सब देवगण नहीं जानते व न जिसका रूप जानते हैं व जिस में यह सब संसार लीन रहताहै वही आत्मा कहाताहै १ व हे नारद ! सुनो जिसकी मायाका प्रपञ्च यह सब संसारहै वह हमारा स्वामी जगत्पति संसारको कैसे प्राप्तहोताहै २ व मनुष्य पाप पुण्य कर्मों से बँधा रहताहै फिर हे विप्र ! श्रीहरि संसार में क्यों प्राप्तहोते हैं इसका कारण हमसे कहो ३ नारदजी बोले कि हे देवि ! सुनो श्रीहरि जिस कारण इस संसार में जन्म लेते हैं उसका हेतु तुमसे कहते हैं आगेकी बातहै कि भृगुमुनि यज्ञकरनेलगे तब श्रीहरिने प्रतिज्ञाकी कि हम यज्ञकी रक्षाकरेंगे ४ जब भृगु यज्ञ करनेलगे तो उसी बीचमें देवताओं दैत्योंका संग्राम होनेलगा तब इन्द्रकी रक्षाकेलिये श्रीहरि भृगु के यज्ञकी रक्षा छोड़कर चलेगये ५ जब श्रीहरि चलेगये तो पापी दानवोंने आकर भृगुमुनि के यज्ञका विध्वंस करडाला ६ तब श्रीहरिको योगीन्द्र भृगुजीने शाप दिया कि अच्छा हमारे शाप से मलिनहोकर मर्त्यलोकमें तुम दश बार अवतार लेवो ७ वस तबसे जन्मलेकर श्रीजनार्दनजी अपने कर्मों का फल भोगते हैं सो हे देवि ! यह तो हमने तुमसे कहा हमको उन्हीं श्रीहरिने तुम्हारे निमित्त यहांको भेजाहै ८ इतना कहकर नारदजी तो ब्रह्मलोकको चले गये और श्रीविष्णुभगवान् के दुःखसे कामोदा अतिव्याकुलहोकर ९ हाहा कहकर वह बाला करुणापूर्वक बारबार रोदन करनेलगी रोदनके समय गङ्गाजी के तटपर जलके बनाय समीप बैठीथी १० दोनों नेत्रोंसे मारे दुःखके आंसु गिराने लगी वे आंसु सब गङ्गाजी केही जलमें गिरे ११ व जल में जाकर डूबगये हे तात ! फिर सब वे भी कमलरूप होगये १२ फिर वे आंसु सुन्दर फूलहोकर गङ्गाजी के जलमें बहनेलगे फिर विष्णुभगवान्की मायासे मोहित उस विह्वल दानवने उन पुष्पों को देखा १३ मुनि ने कहाथा कि कामोद पुष्प अभी गङ्गाजलमें बहकर आवेंगे इससे उस दानवने न जाना कि ये पुष्प दुःखके आंसुओं से उत्पन्नहैं इससे दुःखद व नाशक हैं आनन्दके आंसुओंसे उत्पन्न नहीं हैं इसलिये बड़े हर्ष से युक्तहोकर उस दैत्य ने उन फूलों को गङ्गाके भीतर से निकाल लिया १४ व

उन्हीं फूलों कमलों से गिरिजापति शङ्करजीकी पूजा उसने की विष्णु की मायासे अतिमोहित उसने सात किरोड़ फूलों से महादेवजी को पूजा १५ यह वृत्तान्त देखकर देवीजी अत्यन्त क्रुद्धहोकर महादेव जी से बोलीं कि हे महामते! इस दानवके कर्म आपने देखा १६ कि शोक से फूलेहुये पुष्प गङ्गाके जलमें बहतेहुये कामसे आकुलचित्त १७ यह दुष्ट लेआताहै व उन शोक सन्ताप करनेवाले पुष्पोंसे आप की पूजा करता है फिर दुःख देनेवाले शोकसे उत्पन्न उन पुष्पों से पूजा करने से इसका कल्याण कैसे होगा १८ जैसे भावसे हमको पूजा तैसे भावसे इसकी सिद्धि होगी १९ यह कामोदा में मन लगाये हैं इससे सत्य ध्यानसे विहीन हैं इससे महापापात्मा हैं हे देवि! तुम अपने तेजसे इसको मारडालो २० महात्मा शम्भुजी की ऐसी वा-क्यसुनकर देवीजी बोलीं कि हे शम्भुजी! तुम्हारी आज्ञासे हम इस दुष्टका नाशकरेंगी २१ ऐसा कहकर फिर देवीजी उस विहुण्डके वध के विषय में चिन्तना करनेलगीं कि कैसे इसका वध करें २२ फिर सोचकर उन्होंने ने महात्मा ब्राह्मणका मायामयरूप बनाया व पारि-जात के सुन्दर पुष्पों से शङ्करकी पूजा करनेलगीं २३ तब पापी दानवने आकर उस ब्राह्मणकी कीहुई दिव्य पूजा का नाशकरदिया क्योंकि वह तो काम के मारे व्याकुल था उसका भाव उसी मायामय विष्णुरूप स्त्री में लगाथा २४ व विष्णुजीकी मायासे वह दुष्ट मो-हितथाही इससे कामबाणों से पीड़ित होकर उस दुष्टने उसी स्त्रीका स्मरण किया २५ व उसके स्मरणमात्रसे बलवान् कन्दर्प से व्या-कुलित होगया मदन ने बनाय उस समय उसे पीड़ित किया बार बार रोने लगा २६ इसी से कालके मारेहुये उस दुरात्मा ने उन शोकसे उत्पन्न पुष्पों से शिवजी की पूजाकी २७ व बहुत से पुष्प इकट्ठे किये व दिव्य पुष्पों से जो पूजा वह ब्राह्मणरूप देवी करतीथी उसे तो अत्यन्त लोभसे नष्ट करदिया व आप उन्हीं शोकज पुष्पों से पूजने लगा २८ व शोकज पुष्पों से पूजन करने के कारण उस दुष्ट के नेत्रों से भी आंसुओंकी धारा बहती चली जातीथी व शिवजी के ऊपर पड़तीथी २९ तब ब्राह्मण का रूप धारण किये हुई देवी

जी उससे बोलीं कि हे महामते ! आप कौन हैं जो इस प्रकारके शोक से युक्त होकर सदैव शिवजी की पूजा करते हैं ३० व शोकसे उत्पन्न आंसुओं के बूँद देवताके शिरपर गिरते हैं ये आंसुओं के बिन्दु अपवित्र हैं इसका कारण हम से कहो ३१ विहुण्डा बोला कि पूर्व काल में सब सौभाग्य सम्पदासे सब लक्षणयुक्त बड़ा काम का घर एक स्त्री हमने देखी है ३२ उसके मोहसे सन्तप्त होनेके कारण हम कामसे व्याकुल हैं उस स्त्रीने कहा कि भोगमें हमको उत्तम भागदो ३३ कामोदाख्य पुष्पों से शङ्करजीकी पूजा करो तिनके ऊपरके चढ़े हुये पुष्पों की माला हमारे गले में डालो ३४ सो जब सातकोटि पुष्पों से पूजा करो बस इसी अर्थ फलदायक शिवकी पूजा करते हैं ३५ ये कामोद सम्भव पुष्प देवताओं व दैत्यों कोभी दुर्लभ हैं तब देवीजी बोलीं कि हे दुष्ट ! तेरा भाव कहां है व तेरा ध्यान कहां है व तेरा ज्ञान कहां है ३६ ईश्वरका कुछभी सम्बन्ध तेरा नहीं है कामोदाका श्रेष्ठरूप कैसा है प्रथम हम से कह ३७ व उसके हँसने से उत्पन्न पुष्प तूने कहां पाये विहुण्ड बोला कि भाव व ध्यान हम नहीं जानते न हमने कभी कामोदा को देख है ३८ गङ्गाजी के जलमें प्राप्त पुष्पों को नित्यही ग्रहण करता हूँ तिनसे शङ्कर एकही को पूजन करता हूँ यह मैं कहता हूँ ३९ हे विप्र ! हमारे आगे महात्मा शुक्रजीने भी कहा है तिसके वचनसे हम प्रतिदिन महादेवजी को पूजते हैं ४० जो तुमने हमसे पूँछा सब हमने तुम से कहा देवीजी फिर बोलीं कि कामोदाके दुःख से उत्पन्न पुष्पों से ४१ तुम नित्य प्रभात समय शिवलिङ्ग की पूजा करते हो सो जैसे भावों से व जैसे पुष्पों से तुमने ४२ शिवकी पूजा की है वैसेही फलोंको भोगो दिव्य पूजा का नाश करके शोक के पुष्पों से पूजन किया ४३ इससे तुम को यह बड़ा दारुण दोष उत्पन्न हुआ तिससे हम तुमको दण्ड देंगे अब अपने कर्म से उत्पन्न फलको भोगो ४४ उस मायारूप ब्राह्मण के ऐसे वचन सुनकर कालके वशीभूत होकर वह दुष्ट दैत्य यह बोला कि रेरे दुष्ट रे दुराचार रे हमारे कर्म के दूषण करनेवाले ४५ हम इस खड्गसे तुझको मारते हैं इसमें संशय नहीं है ऐसा कहकर

उस ब्राह्मणके मारनेकी इच्छासे उसने अतितीक्ष्ण खड्गलिया ४६ व वह दुष्टात्मा दानव उसके मारने के लिये दौड़ा परन्तु विप्ररूप धारण कियेहुये वह परमेश्वरी देवी क्रुद्धहुई ४७ जब उसको अपने स्थानमें आते देखा तो हुङ्कार शब्द किया उन देवीजीके हुङ्कारके शब्दसे वह दानवों में अधम पतित होगया ४८ व वज्रसे मारेहुये पर्वतके समान चेष्टारहित होकर गिरपड़ा जब सब लोकों का नाशक वह दानव पतित होगया ४९ तो सब लोक दुःख तापसे रहित होकर स्वस्थ होगये हे वत्स ! गङ्गाजीके तीरपर इसीलिये वह वरा-रोहा कामोदा दुःख से व्याकुल मन होकर रोदन करती है यह सब तुमसे कहा जो तुमने पूंछा ५०।५१ ॥

चौ० इमिनिजसुतसों कहिखगराजा । कुञ्जलसबविधिसाजिसमाजा ॥

कीनविराम न पुनिकुछ बोला । भूपति तुमसन हम यहखोला ॥

इति श्रीपाद्मेमहापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने गुरुतीर्थमाहा-
त्म्ये च्यवनचरित्रे कामोदाख्याने एकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२१ ॥

एकसौबाईसका अध्याय ॥

दो० यकसैबाइसयें महे च्यवन कुंजल सों पूँछ ॥

तिनभाष्यो निजपूर्वजनि कथा औरनहिं कूछ १

श्रीविष्णुभगवान् राजावेनसे बोले कि धर्मयुक्त बड़ा बुद्धिमान् कुञ्जलपक्षी ऐसा अपने सब पुत्रोंसे कहकर जब चुप होरहा उनसे फिर और कुछ न बोला १ तब उस वटवृक्षके नीचे बैठेहुये च्यवन मुनिने उस कुञ्जलसे कहा कि आप पक्षीका रूप धारण किये ऐसे धर्मवक्ता कौनहैं २ क्या कोई देव हैं वा गन्धर्व वा विद्याधर हैं किसके शापसे इस सुयेकी पापयोनिमें उत्पन्न हुयेहैं ३ तुम्हारा ऐसा दिव्यज्ञान कैसे है यह किस सुन्दर पुण्य वा तपका फलहै ४ अथवा हे महामते ! कोई सिद्ध वा देवहीहो इस रूपमें छिपे हुयेहो इसका कारण हमसे कहो ५ तब कुञ्जल च्यवनसे बोला कि हे सिद्ध ! उत्तम गोत्र कुल तो हम जानते हैं विद्या तपका प्रभाव जानते हैं जिससे तुम पृथ्वीपर घूमतेहो ६ हे विप्र ! हे सुव्रत ! सब तुमसे कहतेहैं अच्छे

प्रकार तो तुम्हारा आगमन हुआ अब अच्छे प्रकार इस वृत्तकी
 छायामें उस पुण्यकारी आसन पर विराजिये ७ अव्यक्तब्रह्मसे ब्रह्मा
 जी उत्पन्न हुये उनसे प्रजापति ब्राह्मणद्विज भृगुजी उत्पन्नहुये जो
 कि ब्रह्माकेही गुणोंसे युक्त होनेके कारण उन्हींके समानहैं ८ व उनके
 पुत्रका भार्गव नाम हुआ ये सब धर्म जाननेवालों में बड़े श्रेष्ठ
 हुये उन्हीं के वंशमें आप उत्पन्न हुये हैं व च्यवन आपका अतिप्र-
 सिद्ध पृथ्वीमें नामहै ९ हम न देवहैं न गन्धर्व न विद्याधर हे विप्र!
 जो हमहैं कहते हैं कहते हुये हमसे सुनो १० कश्यपके कुलमें उ-
 त्पन्न वेदवेदाङ्गपारंग सर्वकर्मप्रकाशक एक उत्तम ब्राह्मण था ११
 विद्याधर उसका नामथा व कुल शील गुणोंसे संयुतथा व आचार
 तप करने के कारण शोभासे वह प्रकाशित था १२ उस विद्याधरके
 तीन पुत्र हुये वसुशर्मा नामशर्मा धर्मशर्मा ये तीन भये १३
 उनमें सबसे छोटा धर्मशर्मा हुआ जोकि गुणसे वर्जितथा सो वह
 में था वसुशर्मा हमारा भाई वेद शास्त्रके अर्थका जाननेवाला १४
 आचार से और विद्यादि अच्छे गुणोंसे युक्त हुआ नामशर्मा महा
 बुद्धिमान् तैसेही गुणों में अधिकहुआ १५ मैं एक महामूर्ख हुआ
 हे सत्तम! सुनो हे विप्र ! विद्याओंका उत्तम भाव शुभ अर्थ कभी
 १६ न सुनूं न उत्तमगुरुजी के घरको जाऊं तब मेरेपिता हमारे लिये
 चिन्तना करतेभये १७ कि धर्मशर्मा पुत्रका नाम निरर्थकहै पृथ्वी के
 मध्य में विद्वान् और गुणखानि न हुआ १८ यह चिन्तनाकर ध-
 र्मात्मा अत्यन्त दुःखित हमसे बोला कि हे पुत्र ! गुरुजी के घरको
 विद्या पढ़नेके लिये जावो १९ इस प्रकार पिताके शुभ वचन हमने
 सुनकर कहा कि हे तात ! अत्यन्त दुःखदायी गुरुजी के घरको हम
 न जावेंगे २० हे सत्तम! जहाँ नित्यही ताड़न भौंहें टेढ़ीकर बुलानाहै
 कर्मसे अन्न नहीं दिखाई देता सो सुनो २१ दिन रात्रि नींद नहींहै
 सुखका साधन नहींहै हे तात ! तिससे दुःखमय गुरुजीके मन्दिरको
 न जावेंगे २२ क्रीड़ाके अर्थमें उत्सुक विद्याका कार्य न करेंगे हे पिता
 जी! भोजन सोना खेलना आपके प्रसादसे बालकोंके साथ अतंद्रित
 होकर दिन रात्रि सुखसे करेंगे तब धर्मात्मा अत्यन्त दुःखित हमको

मूर्खजानकर बोले २३।२४ कि हे पुत्र ! साहस न करो विद्याके लिये
उद्यमकरो विद्या से सुख यश अतुल कीर्ति ज्ञान स्वर्ग और मोक्ष
प्राप्त होता है तिससे विद्याको पढ़ो पहले दुःखकी मूल होती है
पीछे से विद्या सुख देती है २५।२६ तिससे हे पुत्र ! तुम विद्याको
साधन करो गुरुजी के घरको जावो तब हम पिताके वचन न
करतेहुये दिन दिनमें २७ जहाँ तहाँ स्थित और नित्यही द्रव्यकी
हानि करते भये हे विप्र ! मनुष्यों ने उपहास और निन्दाकी २८ तब
हमारे जीवके नाश करनेवाली लज्जा उत्पन्न हुई कि विद्या के अर्थ
में उद्यत हम किस गुरुजीकी प्रार्थना करें २९ इससे मारे दुःख व
शोकके मुझको बड़ी चिन्ता हुई कि मैं विद्या कैसे जानूँ व गुणोंको
कैसे पाऊँ ३० मुझको स्वर्ग कैसे हो व फिर मोक्ष कैसे हो ऐसी
चिन्ता होनेसे मैं वृद्धावस्था को प्राप्त हुआ ३१ दुःखित मैं एकदिन
एक देवमन्दिर में बैठाथा कि इतने में मेरे भाग्यों की प्रेरणासे एक
सिद्धवहां आया ३२ वह निराश्रय जिताहार सदा आनन्दरूप सब
वाञ्छारहित व जितेन्द्रिय योगयुक्त एकान्तमें आकर बैठगया ३३
व ज्ञान ध्यान समाधि युक्तहो ब्रह्ममें लीनहुआ हेविप्र ! मैं उस ज्ञान
रूप महामतिके समीप गया ३४ व शुद्धभाव भक्तिसे मस्तक झुँका-
कर महात्माके नमस्कारकरके उनके आगे बैठगया ३५ व मन्दभाग्य
होने के कारण उसके आगे अत्यन्त दीनहोकर स्थित रहा तब उस
सिद्धब्राह्मण ने मुझसे कहा कि आप क्यों शोच करते हैं ३६ व किस
अभिप्रायके भावसे ऐसा दुःख भोगते हैं हे विप्रेन्द्र ! जब उस ज्ञानी
योगी ने मुझ से ऐसा कहा तो ३७ मूर्ख मैंने अपना सब पूर्व का
वृत्तान्त उससे कहा कि मैं सब जाननेवाला कैसे होजाऊँ ३८ इससे
अत्यन्त दुःखी रहताहूँ अब इस विषय में आपही मेरी सदैवगति
हैं तब वह महात्मा हमसे सब ज्ञान का कारण कहता भया ३९ ॥

इति श्रीपाद्मेच्यवनचरित्रेद्वाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२२ ॥

एकसौतेईसका अध्याय ॥

दो० एकसौ तेइसयें महें ज्ञानोत्पत्ति बखान ॥

पुनिष्ठुके अरुवेनके चरितकहेशुभदान १

सिद्ध बोला कि सुनो ज्ञानरूप हम तुम्हारे आगे कहेंगे ज्ञानके देह नहीं है हाथ पांव नेत्र १ नाक कान और हाडों का संग्रह भी ज्ञानके नहीं है किसने ज्ञान देखा है तिसके कौन बिह्व है २ नित्यही आकारोंसे रहित है वह सर्ववित् सबको जानता है दिनका प्रकाशक सूर्य है व रात्रि का प्रकाशक चन्द्रमा ३ व गृहका प्रकाशक दीपक है ये तीनों लोक में स्थित रहते हैं वह पद किस तेजसे देखा जाता है हे सत्तम ! सुनो ४ विष्णुकी मायासे मोहित वे मूर्ख देहके मध्यमें स्थित ध्यानसे प्रकाशित उपमारहित ज्ञानको नहीं जानते हैं ५ वह पद चन्द्रमा और सूर्यादिकों ने भी नहीं देखा यद्यपि ज्ञानके हस्त पाद कर्ण नेत्र कुछभी नहीं हैं ६ परन्तु वह सब कहीं जासक्ता है सबको ग्रहण करता है व सब कुछ देखता है सब सूँघता है व सब सुनता है हे विप्रेन्द्र ! इसमें सन्देह नहीं है ७ इस ज्ञानके समान सब अन्धकार नाशने में दीपक नहीं है पर ज्ञान का स्थान स्वर्ग में दिखाईदेता है भूमिपर पातालमें स्थान २ में दिखाता है ८ इसी शरीरके मध्यमें ज्ञान सदा स्थित रहता है परन्तु कुबुद्धिलोग उसे नहीं देखते अब हम ज्ञानका स्थान कहते हैं जिससे ज्ञान उत्पन्न होता है ९ हे द्विज ! ज्ञान सदा प्राणियोंके हृदयमें नित्य स्थित रहता है व कामादिक महाभोगों को और महामोहादिकों को १० विवेक रूप अग्निसे सबको सदा जलाना चाहता है व सर्व शान्तिमय होकर इन्द्रियों के अर्थोंका मर्दनकिया करता है ११ तो वह ज्ञान सब अङ्गोंमें प्राप्तहोकर सब तत्त्वके अर्थोंको देखने लगता है तत्त्वका मूल निर्मल सर्वदर्शक यह ज्ञान है १२ तिससे सब सुखकी बढ़ानेवाली शान्ति तुम करो शत्रु मित्र अपनेमें व परमें समदृष्टि करो १३ व नित्य नियतहोकर जितेन्द्रिय व जिताहारहोवो न किसीसे बहुत मैत्री करो और वैरतो कभी किसीसे करो नहीं १४ निस्स्पृह निस्सङ्गहोकर एकान्त में बैठो वस ऐसा करनेसे सर्वप्रकाशक ज्ञानी सर्वदर्शी हो जावोगे १५ हे वत्स ! एकही स्थानपर ठिकेहुये तुम तीनों लोकोंमें जो कुछ वृत्तान्त होंगे हमारे प्रसादसे सब देखाकरोगे इसमें कुछभी संशय नहीं है १६

कुञ्जलबोले कि हे धिप्र ! तिससिद्धने हमारे ज्ञानरूप प्रकाशित किया तिसी भावसे भावित तिसके वाक्य में नित्यही स्थित रहता हूँ १७ इससे तीनों लोकोंके वृत्तान्तोंका ज्ञान हमको एकही स्थानपर बैठे पर तिस सद्गुरुके प्रसादसे रहता है १८ यह हमने अपना सब वृत्तान्त तुमसे कहा है द्विजसत्तम ! और क्या तुमसे कहो सो कहें १९ च्यवन मुनि बोले कि ज्ञानवानोंमें श्रेष्ठ आप सुखकी योनिको कैसे प्राप्त हुये सर्व सन्देहनाशन इसका कारण तुम हमसे कहो २० कुञ्जल बोला कि संसर्गसे पाप उत्पन्न होता है व संसर्गहीसे पुण्य उत्पन्न होता है इससे विद्वान् को चाहिये कि अभव्योंका संसर्ग न करे २१ एकपापी लुब्धक एक शुकका वस्त्रापकड़कर बेचनेके लिये एकसमय लाया २२ वह तोतेका वस्त्रा बड़ा सुन्दर प्रियवचन बोलता था इससे उसको देखकर एक ब्राह्मणने मोललिया व आकर फिर प्रीतिसे हमको दे दिया २३ हे द्विजोत्तम ! हम तो नित्य अपने ज्ञानध्यानमें स्थित रहते थे परन्तु बालस्वभाव से कौतुक से सुयेको हाथमें लिया २४ उसके कौतुक युक्त वाक्योंसे हम मोहित होगये इसलिये उस शुकके वस्त्रे को हम अपना पुत्र समझने लगे व नित्यही सुयेमें मन लगा रहे २५ व वहभी हमको तात पद कहकर बोलाकरे कहे कि हे महाभाग ! बैठो अब स्नान करने जावो अब पूजन करो २६ इत्यादि बहुतप्रिय मधुरवचन सदा हमसे कहाकरे उसके वाक्य के विनोदसे हमको धीरे २ उत्तम ज्ञान विस्मरण होगया २७ एक दिन हम पुष्पलेनेके लिये व भोजनके लिये फल लेनेको वनको गये व उसी बीचमें एक विडाल हमारे दुःखके हेतु उस शुकको पकड़ले भागा २८ समान उमरवाले सज्जन हमारे संसर्गी लोगोंले चाहा कि इससे हम इस बस्त्रेको छीन लें परन्तु उनका श्रम वृथा हुआ उस विडालने मारकर उस पक्षीको खालिया २९ जब हम आये तो चाटुकारक उस पक्षी का मरण सुनकर हम बड़े भारी दुःखसे अत्यन्त दुःखित हुये ३० व उसके महादुःखसे ऐसे पीड़ित हुये कि वनाय विजित से होगये हे द्विजपुङ्गव ! हम महामोहजालमें फँस गये ३१ मोहसे चलायमान मन होगया रामचन्द्र शुकराज अतिपंडितश्लोक रोज कहा करें ३२

और अपने कर्म से हम दुःखसे संतप्तहोगये व हे विप्रेन्द्र ! उस शुकके वियोग से ३३ हमको उस सिद्धका कहाहुआ सबज्ञान भूल गया वस दिन रात्रि उसी शुकका स्मरणकर २ शोकसे व्याकुलचित्त बनेरहें ३४ व हे वत्स ! हे वत्स ! पुकाराकरें सो गद्यपद्यमय संस्कृत वाक्योंसे पुकारें ३५ कि हे वत्स ! तुम्हारेविना अब हमको कौन इस समय समभावेगा व नानाप्रकारकी विचित्र कथायें कौन हमसे कहेगा हे पक्षिराज ! हमको प्रसन्न करो ३६ हे वत्स ! इस निर्जन वन में हमको छोड़कर आप कहां चलेगये तुम किसदोषसे लितहोगये हो हमसे आकर इस समय कहो ३७ इसप्रकारके नानामोहमय वचन दीनतापूर्वक कहतेहुये हम अत्यन्त मोहित होगये इसीप्रकार के अनेक वचन कहतेहुये मारेशोकके अत्यन्त पीड़ित ३८ तिस मोहसे तिसभावसे मोहित हम मृतक होगये मरणकालमें जिसका जैसा भाव और जैसी मति होतीहै ३९ हे द्विजसत्तम ! वह वैसाही भावसे उत्पन्न होताहीहै इससे एक शुकी के गर्भ को प्राप्तहुये व सबज्ञान स्मरण बनारहा ४० व पूर्व का अपना कियाहुआ कर्म स्मरण करतारहा कि हम अकृतात्मा मूढ़ने यह क्या किया ४१ गर्भकेयोगमें आरूढ़ फिर तिसको चिन्तना करता भया इसी से हमको सर्वदर्शक निर्मल ज्ञान होगया ४२ यह उत्तम ज्ञानशुकहोनेपरभी उन्हीं गुरुजीकेही प्रसाद से हमको हुआ व उनके स्वच्छ जलरूप वाक्योंसे हमारे शरीरका मल दूरहोगया ४३ भीतर बाहर निर्मल होगया सुयेकी जातिसे उत्पन्न तिर्यक् योनि मैंने पाई ४४ जो कि मरण के समयमें शुकका ध्यानभावकिया और तिसभावसे भावित तिसीसमयमें मरा ४५ इसी से हम उसीप्रकारके शुक पृथ्वीपरहुये मरणसमयमें प्राणियों का जैसा भाव होताहै ४६ तैसेही वे प्राणी वैसाही रूप तिसीमें परायण तैसेही गुण और तैसेही स्वरूपभावभूत होतेहैं ४७ हे विप्रेन्द्र ! हे महामते ! मृत्युकालके भाव से हम यहां अतुल ज्ञान को प्राप्तहुये इसमें सन्देह नहींहै ४८ हे महामते ! हे महाप्राज्ञ ! तिसज्ञानसे भूत भविष्य वर्तमान सब हम देखतेहैं ४९ और यहां स्थित सबको जानतेहैं इसमें संदेह नहींहै संसारमें वर्तमान मनुष्यों के तारने के लिये ५०

बन्ध छेदन करनेवाला गुरु समान तीर्थ नहीं है हे भार्गव नन्दन ! हे द्विज ! यह सब तुमसे कहा ५१ हे विप्र ! जो तुमने पूँछा वह तुमसे सब प्रकाशित किया स्थल के उत्पन्न जल से सब बाहर का मल नाश हो जाता है ५२ जन्मान्तर के किये हुये पापों को गुरु तीर्थ नाश करता है संसार तारण के लिये उत्तम जंगम तीर्थ है ५३ विष्णुजी बोले कि हे राजाओं में उत्तम वेन ! महाबुद्धिमान् शुक महात्मा च्यवनजी से तत्त्व प्रकाशित कर चुप हो रहा ५४ यह उत्तम सब जंगम तीर्थ तुमसे कहा तुम्हारा कल्याण हो और जो मन में वर्तमान हो वह वर मांगो ५५ तब वेनजी बोले कि हे जनार्दनजी ! मैं राज्य की कामना नहीं करता और न कुछ कामना करता देह समेत तुम्हारे देह के जाने की इच्छा करता हूँ ५६ जो यहां देने की इच्छा है तो यही वर हम मांगते हैं फिर जगन्नाथ श्रीनारायणजी राजा वेन से बोले कि हे भूते ! अब तुम अश्वमेध और राजसूय यज्ञ करो ५७ गऊ पृथ्वी सोना जल और धान्यों का दान करो क्योंकि दान से तुरन्त पाप नष्ट होते हैं व दुर्गति का भी तुरन्त ही नाश होता है व हे राजन ! ब्रह्महत्यादिक घोर पाप दान से नष्ट होते हैं इससे दान सदा देते रहो ५८ दान देने से धर्म अर्थ काम मोक्ष सिद्ध होता है इसमें संशय नहीं है इससे हे नरोत्तम ! हमारे उद्देश से नित्य दान करना चाहिये ५९ हमारे उद्देश से जिस भाव से कोई दान करता है उसको हम उसी प्रकार के भाव से सत्य ही युक्त करते हैं ६० ऋषियों के दर्शन करने व स्पर्श करने से पातक समूह तुम्हारा भ्रष्ट होगया यज्ञ के अंत में हमारी देह को प्राप्त होगे इसमें सन्देह नहीं है ६१ ऐसा कहकर श्रीभगवान् अन्तर्धान होगये ६२ ॥
इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने गुरु तीर्थ माहात्म्य सम्पूर्ति वर्णने च्यवन चरित्र समाप्तौ च त्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२३ ॥

एकसौ चौबीसका अध्याय ॥

दो० यकसै चौबिसयें महें पृथुतप कीन्ह अपार ॥

ब्रह्मासों वरदान लहि तब आये आगार १

सूतजी शौनकादिकों से बोले कि महाबुद्धिमान् राजा वेन विष्णु

जीके अन्तर्धान होनेमें देवदेवेशजी कहांगये इस चिन्ता में परायण भये १ व राजा बड़े हर्षसे युक्तहोकर चिन्तना करके अपने पुत्र महाराज पृथुजी को मधुर अक्षरों से बुलाकर २ उन महात्मा से बड़े हर्षसे बोले कि हे पुत्र ! तुमने हमको इसलोक के पापोंसे तारदिया ३ व हमारे वंशको तुमने उज्ज्वल किया हमने इस वंशको दोषोंसे विनाशित कियाथा व तुमने गुणोंसे प्रकाशित किया ४ अब हम अश्व-भेध यज्ञकरें व विविधप्रकार के अनेक दानदें तो तुम्हारे प्रसाद से शरीरसहित श्रीविष्णुके लोकको इस समय जायँ ५ हे महाभाग ! इससे अब तुम यज्ञ करनेकी सब सामग्री इकट्ठीकरो व हे महाभाग ! वेदपारगामी ब्राह्मणों को बुलावो ६ जब महात्मा राजा वेनने पृथु को ऐसी आज्ञादी तो वे महात्मा पृथुजी अपने पिता राजा वेनसे आदर से बोले ७ कि हे महाराज ! अभी आप राज्यकरें व दिव्य पुण्यकारी मनुष्योंके वाञ्छित भोगभोगे व यज्ञोंसे श्रीविष्णुभगवान् की पूजा करतेरहें ८ ज्ञानमें तत्पर पितासे ऐसा कहकर प्रणामकर पृथुजीने धन्वाबाण यत्नपूर्वक उठाकर ९ सब भटों को आज्ञादी कि पृथ्वी में हमारी आज्ञा सुनावो किमन वचन कर्म से पाप नहीं करना चाहिये १० जो वेन राजाकी आज्ञा उल्लङ्घन कर पाप करेगा वह नाश को प्राप्तहोगा इसमें सन्देह नहीं है ११ भगवान् में मनलगा कर मत्सरहीन हो सब मनुष्य दान देवें यज्ञों से जनार्दनजीको पूजें १२ इसप्रकार सब प्रजाओं को शिक्षा देकर व राज्यकार्य अपने मन्त्रियों को सौंपकर राजा पृथुजी तप करने को वनको चले गये १३ वहां सब दोषोंको छोड़ इन्द्रियों को उनके विषयों से रोक सौवर्षतक निराहार तप करतेरहे १४ उनके तपसे सन्तुष्टहोकरब्रह्मा जी आकर पृथुसे बोले कि तुम क्यों तप करतेहो इसका कारण हमसे कहो १५ यह सुनकर पृथुजी बोले कि कीर्त्ति बढ़ानेवाले हमारे महाप्राज्ञ पिताजी राज्य में जो कोई पुरुषाधम पापकरे १६ उसका शिर श्रीविष्णुभगवान् काटडालें महाचक्र न देखपड़ें उनसे श्रीहरिजी आपही दण्ड देवें १७ मनसे कर्म से व वचनसे जैसेही कोई पाप करनाचाहें वैसेही उनके शिर पके फलके समान पृथ्वीपर

गिरपड़ें १८ हे सुरेश्वर ! बस यहीं वर हम तुमसे मांगते हैं जिसमें प्रजाओं के दोषों से हमारे पिता न लिप्त हों १९ हे देवेश ! वैसा आप करें जो वर देने की इच्छा हो और उत्तम काम दो हे ब्रह्माजी ! आपके नमस्कार हैं २० ब्रह्माजी बोले कि हे महाभाग ! ऐसा ही हो पिता तुम्हारे पवित्र होगये हे वत्स ! हे पृथो ! तुम्हारे पिता को विष्णुजीने और तुम्हें पुत्रने भी शिक्षा की थी २१ ऐसा पृथुको आज्ञा दे वर देकर ब्रह्माजी तो चले गये व राजापृथु अपने स्थान पर आये अपना राज्यकर्म करने लगे २२ तबसे पृथुके राज्य में कोई पाप नहीं करता था जो कोई मनसा वाचा कर्मणा पाप करने की चिन्ता करता था २३ उसका शिर कटकर गिरपड़ता था जैसे कि चक्रसे काटने पर गिरता है इससे तबसे फिर उस राज्य में किसीने कुछ पाप किया ही नहीं २४ महात्मा पृथुकी भी यही आज्ञा होगई थी कि हमारे राज्य में नित्य ही सबलोग सदाचार ही करते रहें २५ ॥

चौ० दानदेहिं सब प्रजानिरन्तर । धर्मपरायण होहिं समन्तर ॥

सब सुख भोगें जन सब भरे । पाप न आवहिं तिनके नेरे २६

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने

चतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२४ ॥

एकसौपच्चीसका अध्याय ॥

दो० एकसौ पच्चिसयें महें वेनस्वर्ग पृथुराज्य ॥

कही फलस्तुति विघ्नहति हितहुति तिलयवञ्चाज्य १

सूतजी शौनकादिकों से बोले कि राजा वेनकी यज्ञ करनेकी आज्ञा पाकर परमधार्मिक उनके पुत्र महाराज पृथुजीने नाना प्रकार के पुण्यकारी सब यज्ञसम्भार एकत्र कराये १ व नाना देशों के रहनेवाले सब ब्राह्मणोंको निमन्त्रण देकर बुलाया तब वेन राजा अश्वमेध यज्ञ करता भया २ ब्राह्मणोंको नाना प्रकारके अनेक दान राजा ने दिये इसलिये महाराज वेन इसी पाञ्चभौतिक शरीरसे वैकुण्ठको सीधे चले गये ३ व वे धर्मात्मा विष्णु भगवान् के सङ्ग नित्य वहाँ बसने लगे यह हमने उन महात्मारजाका चरित्र तुमसे कहा ४ जो

इसप्रकार जो नहीं करता तिसकेविघ्नको हम कहते हैं बहुत पीड़ा का देनेवाला तिसके अंगमें रोग होता है ३३ स्त्री का शोक पुत्रका शोक धनकी हानि और नानाप्रकारके महारोगोंको भोगता है इसमें सन्देह नहीं है ३४ जिसके घरमें द्रव्य नहीं है वह एकादशी का व्रत कर भावयुक्तचित्तसे सोलहों उपचारोंसे भगवान् की पूजनकरै पीछेसे जैसा द्रव्य हो उसके अनुसार ब्राह्मणोंको भोजन करावे ३५। ३६ स्त्रीयुक्त सङ्कल्प केशवजीको देकर फिर बुद्धिमान् मनुष्य बान्धवों पुत्रों और स्त्री समेत आप भोजनकरै तब सिद्धिको प्राप्त होवे सम्पूर्ण पुराणसंहिता धर्मतत्पर मनुष्य को सुननी चाहिये ३७ । ३८ तब सुननेवाले को धर्म अर्थ काम मोक्षकी सिद्धि होती है अन्यथा नहीं होती सवालज ब्रह्मनाम पुष्करको सुनो ३९ हे द्विज! सतयुग में पापहीन मनुष्य सब पद्मपुराण बावन हजार लोकयुक्त को सुनते भये त्रेतायुग में जो मनुष्य सुनते हैं ४० । ४१ वे धर्म अर्थ काम मोक्ष फलको भोगकर फिर भगवान् को प्राप्त होते हैं बाईस हजार पद्मपुराणकी संहिता ४२ ब्रह्मापरमात्मा ने द्वापरयुग में कही है बारह हजार पद्मपुराण की संहिता ४३ कलियुगमें विष्णुमें तत्पर मनुष्य पढ़ेंगे एक अर्थ एकही भाव चारोंमें वर्तमान है ४४ संहिताओं में शेष आख्यानका विस्तार है हे विप्रेन्द्र! हे सत्तम! कलियुगमें बारह हजार नाशको प्राप्त होगये भूमिखण्डको मनुष्य सुनकर सब पापोंसे छूटजाता है ४५। ४६ सब दुःखों और सब रोगोंसे भी छूटजाता है और सब जप दान और सुनने को छोड़कर ४७ पाप नाशनेवाला पद्मपुराण यत्नसे सुनना चाहिये प्रथम सृष्टिखण्ड द्वितीय भूमिखण्ड ४८ तृतीय स्वर्ग खण्ड चतुर्थ पाताल खण्ड पंचम सब पाप नाशनेवाला उत्तर खण्ड है ४९ जो मनुष्य भक्तिसे क्रमसे पांच खण्डों को सुनता है वह हजार गोदान के फलको पाता है ५० हे ब्राह्मणो! बड़ी भाग्यसे पांच खण्ड मिलते हैं ये पांचों सुनने से सत्य सत्य निरसन्देह मोक्ष देते हैं ५१ ॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे द्वितीये भूमिखण्डे भाषानुवादे वेनोपाख्याने

पञ्चविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः १२५ ॥

समाप्तमिदं भूमिखण्डं द्वितीयम् ॥